तेतिरीय ब्राह्मणम्

Colophon

This document was typeset using X=MEX, and uses the Siddhanta font extensively. It also uses several MEX macros designed by H.L. Prasād. Practically all the encoding was done with the help of Ajit Krishnan's mudgala IME (http://www.aupasana.com/).

Acknowledgements

The initial ITRANS encodings of some of these texts were obtained from http://sanskritdocuments.org/ and https://sa.wikisource.org/. Thanks are also due to Ulrich Stiehl (http://sanskritweb.de/) for hosting a wonderful resource for Yajur Veda, and also generously sharing the original Kathaka texts edited by Subramania Sarma.

See also http://stotrasamhita.github.io/about/

FOR PERSONAL USE ONLY
NOT FOR COMMERCIAL PRINTING/DISTRIBUTION

अनुक्रमणिका

अनुऋमणिका

| अप्टकम् १ | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 1 |
|----------------|--------------|----|----|----|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|-----|
| प्रथमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 1 |
| द्वितीयः प्रश् | ا : . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 22 |
| तृतीयः प्रश्न | : . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 36 |
| चतुर्थः प्रश्न | : . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 53 |
| पञ्चमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 71 |
| षष्ठमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 88 |
| सप्तमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 108 |
| अष्टमः प्रश्न | : . | | • | | | | | | | | | | • | | | | | | • | • | | | | • | • | • | | 126 |
| अष्टकम् २ | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 137 |
| प्रथमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 137 |
| द्वितीयः प्रश् | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 153 |
| तृतीयः प्रश्न | : . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 173 |
| चतुर्थः प्रश्न | : . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 187 |
| पञ्चमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 208 |
| षष्ठमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 222 |
| सप्तमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 250 |
| अष्टमः प्रश्न | : . | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | 269 |
| अष्टकम् ३ | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 293 |
| प्रथमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 293 |
| द्वितीयः प्रश् | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 312 |
| तृतीयः प्रश्न | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 335 |
| चतुर्थः प्रश्न | : . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 356 |
| पञ्चमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 361 |
| षष्ठमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 370 |
| सप्तमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 384 |
| अष्टमः प्रश्न | : . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 419 |
| नवमः प्रश्नः | | | • | | | | | | ٠ | | | | • | | | | | | • | • | | | | • | • | • | | 446 |
| तैत्तिरीय अ | ार्ष | 1य | वि | ٦Ļ | Į | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 473 |
| प्रथमः प्रश्नः | | | | | | : | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 473 |

अनुऋमणिका

| द्वितीयः प्रश्नः | 508 |
|-----------------------------------|-----|
| तृतीयः प्रश्नः | 523 |
| चतुर्थः प्रश्नः | 537 |
| पञ्चमः प्रश्नः | |
| षष्ठः प्रश्नः | |
| सप्तमः प्रश्नः — शीक्षावल्ली | |
| अष्टमः प्रश्नः — ब्रह्मानन्दवल्ली | 612 |
| नवमः प्रश्नः — भृगुवल्ली | |
| द्शमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत् | 622 |
| 10 20 0 | |
| कृष्णयजुर्वेदीयतीत्तरीय-काठकम् | 659 |
| प्रथमः प्रश्नः | 659 |
| द्वितीयः प्रश्नः | 672 |
| ततीयः प्रश्नः | 687 |

॥ अष्टकम् १॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

ब्रह्म सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। क्षत्र सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। इष् सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। ऊर्ज् सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्टि सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्टि सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्टि सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृजा सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृश्रून्थ्सन्धंत्तं तान्में जिन्वतम्। स्तुतोऽसि जनधाः। देवास्त्वां शुक्रपाः प्रणयन्तु॥१॥

सुवीराः प्रजाः प्रजनयन्परीहि। शुक्रः शुक्रशोविषा। स्तुतोऽसि जनधाः। देवास्त्वां मन्थिपाः प्रणयन्तु। सुप्रजाः प्रजाः प्रजनयन्परीहि। मन्थी मन्थिशोविषा। सञ्जग्मानौ दिव आपृथिव्यायुः। सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। प्राण सन्धंत्तं तं मे जिन्वतम्। अपान सन्धंत्तं तं मे जिन्वतम्॥२॥

व्यान सम्यंत्तं तं में जिन्वतम्। चक्षुः सन्यंत्तं तन्में जिन्वतम्। श्रोत्र सन्यंत्तं तन्में जिन्वतम्। मनः सन्यंत्तं तन्में जिन्वतम्। वाच् सन्यंत्तं तां में जिन्वतम्। आयुंः स्थ आयुंर्मे धत्तम्। आयुंर्य्ज्ञायं धत्तम्। आयुंर्य्ज्ञपंतये धत्तम्। प्राणः स्थः प्राणं में धत्तम्। प्राणं युज्ञायं धत्तम्॥३॥

प्राणं यज्ञपंतये धत्तम्। चक्षुंः स्थश्चक्षुंर्मे धत्तम्। चक्षुंर्यज्ञायं धत्तम्। चक्षुंर्यज्ञपंतये धत्तम्। श्रोत्रङ्ं स्थः श्रोत्रंं मे धत्तम्। श्रोत्रंं युज्ञायं धत्तम्। श्रोत्रं युज्ञपंतये धत्तम्। तौ देवौ शुक्रामन्थिनौ। कुल्पयंतुं दैवीर्विशंः। कुल्पयंतुं मानुषीः॥४॥

इष्मूर्जम्स्मास् धत्तम्। प्राणान्पशुषुं। प्रजां मियं च् यजंमाने च। निरंस्तः शण्डंः। निरंस्तो मर्कः। अपंनुतौ शण्डामर्कौ सहामुनाँ। शुक्रस्यं समिदंसि। मृन्थिनंः समिदंसि। स प्रंथमः सङ्कृतिर्विश्वकंमा। स प्रंथमो मित्रो वर्रुणो अग्निः। स प्रंथमो बृह्स्पितिश्चिकित्वान्। तस्मा इन्द्रांय सुतमा जुंहोमि॥५॥

कृत्तिकास्वग्निमादंधीत। पृतद्वा अग्नेर्नक्षंत्रम्। यत्कृत्तिकाः। स्वायांमेवैनं देवतांयामाधायं। ब्रह्मवर्चसी भवति। मुखं वा पृतन्नक्षंत्राणाम्। यत्कृत्तिकाः। यः कृत्तिकास्वग्निमांधृत्ते। मुख्यं एव भवति। अथो खलुं॥६॥

अग्निन्क्षत्रमित्यपंचायन्ति। गृहान् ह् दाहुंको भवति। प्रजापंती रोहिण्यामृग्निमंसृजत। तं देवा रोहिण्यामादंधत। ततो वै ते सर्वात्रोहांनरोहन्। तद्रोहिण्यै रोहिणित्वम्। यो रोहिण्यामृग्निमांधृत्ते। ऋध्नोत्येव। सर्वात्रोहांत्रोहित। देवा वै भद्राः सन्तोऽग्निमाधिंथ्सन्त॥७॥

तेषामनाहितोऽग्निरासींत्। अथैंभ्यो वामं वस्वपाकामत्। ते पुनर्वस्वोरादंधत। ततो वै तान् वामं वसूपावर्तत। यः

पुराऽभुद्रः सन्पापीयान्थस्यात्। स पुनेर्वस्वोर्ग्निमादंधीत। पुनेर्वैनं वामं वसूपावंतित। भुद्रो भवति। यः कामयेत् दानकांमा मे प्रजाः स्युरितिं। स पूर्वयोः फल्गुंन्योरग्निमादंधीत॥८॥

अर्यम्णो वा एतन्नक्षंत्रम्। यत्पूर्वे फल्गुंनी। अर्यमिति तमांहुर्यो ददांति। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। यः कामयंत भगी स्यामितिं। स उत्तंरयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत। भगस्य वा एतन्नक्षंत्रम्। यद्त्तंरे फल्गुंनी। भृग्यंव भंवति। कालुकुञ्जा वै नामासुरा आसन्॥९॥

ते सुंवर्गायं लोकायाग्निमंचिन्वत। पुरुष इष्टंकामुपांदधात्-पुरुष इष्टंकाम्। स इन्द्रौं ब्राह्मणो ब्रुवांण इष्टंकामुपांधत्त। एषा में चित्रा नामेतिं। ते सुंवर्गं लोकमा प्रारोहन्। स इन्द्र इष्टंकामावृंहत्। तेऽवांकीर्यन्त। येऽवाकींर्यन्त। त ऊर्णावभंयोऽभवन्। द्वावुदंपतताम्॥१०॥

तौ दिव्यौ श्वानांवभवताम्। यो भ्रातृंव्यवान्थस्यात्। स चित्रायांमग्निमादंधीत। अवकीर्येव भ्रातृंव्यान्। ओजो बलंमिन्द्रियं वीर्यमात्मन्धंत्ते। वसन्तौ ब्राह्मणौंऽग्निमादंधीत। वसन्तो व ब्रौह्मणस्युर्तुः। स्व एवेनंमृतावाधायं। ब्रह्मवर्चसी भंवति। मुखं वा एतदंतूनाम्॥११॥

यद्वंसुन्तः। यो वसन्ताऽग्निमांधृत्ते। मुख्यं एव भंवति। अथो योनिमन्तमेवैनुं प्रजातमार्थत्ते। ग्रीष्मे राजन्यं आदंधीत। ग्रीष्मो वै राजन्यंस्युर्तुः। स्व एवैनंमृतावाधायं। इन्द्रियावी भंवति। शुरदि वैश्य आदंधीत। शुरद्वे वैश्यंस्युर्तुः॥१२॥

स्व एवैनंमृतावाधायं। पृशुमान्भंवति। न पूर्वयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत। एषा वै जंघन्यां रात्रिः संवथ्सरस्यं। यत्पूर्वे फल्गुंनी। पृष्टित एव संवथ्सरस्याग्निमाधायं। पापीयान्भवति। उत्तरयोरा दंधीत। एषा वै प्रंथमा रात्रिः संवथ्सरस्यं। यदुत्तरे फल्गुंनी। मुख्त एव संवथ्सरस्याग्निमाधायं। वसीयान्भवति। अथो खलुं। यदैवैनं यज्ञ उपनमैत्। अथादंधीत। सैवास्यर्ष्टिः॥१३॥ खलाध्यम् फल्गुंग्रिमाधाव्यावाम्मवन् वश्यस्यर्क्षम प्रं॥ [२]

उद्धंन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। अपोऽवाँक्षिति शान्त्यै। सिकंता निवंपति। एतद्वा अग्नेर्वेश्वान्रस्यं रूपम्। रूपेणैव वैश्वान्रमवं रुन्थे। ऊषां निवंपति। पृष्टि्वा एषा प्रजननम्। यदूषाः॥१४॥

पृष्ट्यांमेव प्रजनंनेऽग्निमाधंते। अथों संज्ञानं एव। संज्ञान् इं ह्येतत्पंशूनाम्। यदूषाः। द्यावांपृथिवी सहास्तांम्। ते वियती अंब्रूताम्। अस्त्वेव नौं सह यज्ञियमितिं। यद्मुष्यां यज्ञियमासींत्। तदस्यामंदधात्। त ऊषां अभवन्॥१५॥

यद्स्या युज्ञियमासीत्। तद्मुष्यांमदधात्। तद्दश्चन्द्रमंसि कृष्णम्। ऊषांन्निवपंत्रदो ध्यांयेत्। द्यावांपृथिव्योरेव युज्ञिये-ऽग्निमाधंत्ते। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। आखू रूपं कृत्वा। स पृंथिवीं प्राविंशत्। स ऊतीः कुंर्वाणः पृंथिवीमनु समंचरत्। तदांखुकरीषमंभवत्॥१६॥

यदांखुकरीष सम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावं रुन्धे। ऊर्जं वा एत रसं पृथिव्या उपदीका उदिहिन्ति। यद्वल्मीकम्। यद्वल्मीकव्पा सम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवं रुन्धे। अथो श्रोत्रमेव। श्रोत्र ह्यंतत्पृथिव्याः। यद्वल्मीकंः॥१७॥

अबंधिरो भवति। य एवं वेदं। प्रजापंतिः प्रजा अं-सृजत। तासामन्नमुपाकष्टीयत। ताभ्यः सूदमुपप्राभिनत्। ततो वै तासामन्नं नाक्षीयत। यस्य सूदंः सम्भारो भवंति। नास्य गृहेऽन्नं क्षीयते। आपो वा इदमग्रं सिल्लमांसीत्। तेनं प्रजा-पंतिरश्राम्यत्॥१८॥

कथिमदि स्यादितिं। सोऽपश्यत्पुष्करपूर्णं तिष्ठंत्। सोऽमन्यत। अस्ति वै तत्। यस्मिन्निदमिष् तिष्ठतीतिं। स वराहो रूपं कृत्वोप न्यमञ्जत्। स पृथिवीम्ध और्च्छत्। तस्यां उपहत्योदंमञ्जत्। तत्पुंष्करपर्णेंऽप्रथयत्। यदप्रथयत्॥१९॥

तत्पृंथिव्यै पृंथिवित्वम्। अभूद्वा इदिमितिं। तद्भूम्यैं भूमित्वम्। तां दिशोऽनु वातः समंवहत्। ताः शर्कराभिरदृश्हत्। शं वै नोंऽभूदितिं। तच्छर्कराणाःश शर्कर्त्वम्। यद्वंराहविंहतः सम्भारो भवंति। अस्यामेवा- छंम्बद्वारमग्निमाधंत्ते। शर्करा भवन्ति धृत्यै॥२०॥

अथों शन्त्वायं। सरेता अग्निर्धिय इत्यांहुः। आपो वरुंणस्य पत्नंय आसन्। ता अग्निर्भ्यंध्यायत्। ताः समंभवत्। तस्य रेतः परांऽपतत्। तिद्धरंण्यमभवत्। यद्धिरंण्यमुपास्यंति। सरेतसमेवाग्निमाधंत्ते। पुरुष इन्नै स्वाद्रेतंसो बीभथ्सत् इत्यांहुः॥२१॥

उत्तर्त उपाँस्यत्यबींभथ्सायै। अति प्रयंच्छति। आर्तिमेवाति प्रयंच्छति। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। अश्वो रूपं कृत्वा। सोंऽश्वत्थे संवथ्सरमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वंत्थः सम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावं रुन्थे॥२२॥

देवा वा ऊर्जुं व्यंभजन्त। ततं उदुम्बर् उदंतिष्ठत्। ऊर्ग्वा उदुम्बरंः। यदौदुंम्बरः सम्भारो भवंति। ऊर्जमेवावं रुन्थे। तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयत्र्याऽहंरत्। तस्यं पूर्णमंच्छिद्यत। तत्पूर्णोऽभवत्। तत्पूर्णस्यं पूर्णत्वम्॥२३॥

यस्यं पर्णमयंः सम्भारो भवंति। सोमपीथमेवावं रुन्धे। देवा वै ब्रह्मन्नवदन्त। तत्पूर्ण उपाश्रणोत्। सुश्रवा वै नामं। यत्पंर्णमयंः सम्भारो भवंति। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। प्रजापंतिरग्निमंसृजत। सोऽबिभेत्प्र मा धक्ष्यतीतिं। त॰ शम्यां-ऽशमयत्॥२४॥

तच्छुम्यैं शमित्वम्। यच्छंमीमयंः सम्भारो भवंति। शान्त्या

अप्रदाहाय। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आँच्छित्। यद्वैकंङ्कतः सम्भारो भवंति। भा एवावं रुन्धे। सहंदयो-ऽग्निराधेय इत्यांहुः। मुरुतोऽद्भिर्ग्निमंतमयन्। तस्यं तान्तस्य हृदंयमाच्छिन्दन्। साऽशनिरभवत्। यद्शनिहतस्य वृक्षस्यं सम्भारो भवंति। सहंदयमेवाग्निमा धंत्ते॥२५॥

ऊषां अभवन्नभवद्वल्मीकौंऽश्राम्युदप्रथयुद्धृत्यै वीभथ्सत् इत्यांहू रुन्धे पर्णुत्वमंशमयदच्छिन्दुङ्क्षीणि च॥———[३]

द्वादशस्ं विकामेष्वग्निमा दंधीत। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरादेवैनंमवरुद्धा धंत्ते। यद्वांदशस्ं विकामेष्वा दधीत। परिमित्मवं रुन्धीत। चक्षुंर्निमित् आदंधीत। इयद्वादंश विकामा(३) इति। परिमितं चैवापंरिमितं चावं रुन्धे। अनृतं वै वाचा वंदति। अनृतं मनंसा ध्यायति॥२६॥

चक्षुर्वे सृत्यम्। अद्रा(३)गित्यांह। अदंर्श्वमितिं। तथ्सत्यम्। यश्वक्षुंर्निमितेऽग्निमांधत्ते। सृत्य एवैन्मा धंते। तस्मादाहिताग्निर्नानृतं वदेत्। नास्यं ब्राह्मणोऽनांश्वान्गृहे वसत्। सत्ये ह्यंस्याग्निराहितः। आग्नेयी वै रात्रिः॥२७॥

आग्नेयाः प्शवंः। ऐन्द्रमहंः। नक्तं गार्हंपत्यमा दंधाति। पृश्नेवावं रुन्धे। दिवांऽऽहवनीयम्। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। अधींदिते सूर्यं आहवनीयमा दंधाति। एतस्मिन्वे लोके प्रजा-पंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। अथों भूतं चैव भंविष्यचावं रुन्धे॥२८॥

इडा वै मान्वी यंज्ञानूकाशिन्यांसीत्। साऽशृंणोत्। असुंरा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। त आंहवनीयमग्र आदंधत। अथ गार्हंपत्यम्। अथाँन्वाहार्यपर्चनम्। साऽब्रंवीत्। प्रतीच्येषा् श्रीरंगात्। भुद्रा भूत्वा परां भविष्यन्तीतिं॥२९॥

यस्यैवम् ग्निरांधीयतें। प्रतीच्यंस्य श्रीरंति। भ्रद्रो भूत्वा परांभवति। साऽश्वेणोत्। देवा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। तेंऽन्वाहार्यपचंनमग्र आदंधत। अथ् गार्हंपत्यम्। अथांऽऽहवनीयम्। साऽब्रंवीत्॥३०॥

प्राच्येषाड्ड श्रीरंगात्। भुद्रा भूत्वा सुंवर्गं लोकमेंष्यन्ति। प्रजां तु न वेंष्ट्यन्तु इतिं। यस्यैवमुग्निराधीयतें। प्राच्यंस्य श्रीरंति। भुद्रो भूत्वा सुंवर्गं लोकमेंति। प्रजां तु न विंन्दते। साऽब्रंवीदिडा मनुम्। तथा वा अहं तवाग्निमाधांस्यामि। यथा प्र प्रजयां पृश्भिर्मिथुनैर्जनिष्यसें॥३१॥

प्रत्यस्मिँ होके स्थास्यसिं। अभि सुंवर्गं होकं जेष्यसीतिं। गार्हंपत्यमग्र आदंधात्। गार्हंपत्यं वा अनुं प्रजाः पृशवः प्रजायन्ते। गार्हंपत्येनैवास्मैं प्रजां पृश्नन्प्राजनयत्। अथौन्वाहार्यपर्चनम्। तिर्यिङ्किंव वा अयं होकः। अस्मिन्नेव तेनं होके प्रत्यंतिष्ठत्। अथोऽऽहवनीयम्। तेनैव सुंवर्गं होकमभ्यंजयत्॥३२॥

यस्यैवम् ग्निरांधीयतें। प्र प्रजयां पृश्निर्मिथुनैर्जायते। प्रत्यस्मिँ ह्योके तिष्ठति। अभि सुंवर्गं लोकं जयति। यस्य वा अयंथादेवतम् ग्निरांधीयतें। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यस्यं यथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते।

वसीयान्भवति॥३३॥

प्रजापंतिर्वाचः स्त्यमंपश्यत्। तेनाग्निमाधंत्त। तेन् वै स आधाति। भूर्भुवः सुविरित्यांह। पृतद्वै वाचः स्त्यम्। य पृतेनाग्निमाध्ते। ऋधोत्येव। अथो स्त्यप्रांशूरेव भंवति। अथो य एवं विद्वानंभिचरंति। स्तृणुत पृवैनम्॥३५॥

भूरित्यांह। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। भुव इत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। सुव्विरत्यांह। सुव्र्ग एव लोके प्रतिं तिष्ठति। त्रिभिरक्षरैर्गार्हंपत्यमा दंधाति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेवैनं लोकेषु प्रतिष्ठितमाधंत्ते। सर्वैः पश्चभिराहवनीयम्॥३६॥

सुवर्गाय वा एष लोकायाधीयते। यदाहवनीयः। सुवर्ग एवास्मै लोके वाचः सत्य सर्वमाप्नोति। त्रिभिर्गार्हंपत्यमा दंधाति। पुश्चभिराहवनीयम्। अष्टौ सम्पंद्यन्ते। अष्टाक्षरा गायत्री। गायत्रौंऽग्निः। यावांनेवाग्निः। तमाधंत्ते॥३७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्। ताभ्यो ज्योतिरुदंगृह्णात्। तं ज्योतिः पश्यन्तीः प्रजा अभि स्मावर्तन्त। उपरीवाग्निमुद्गृह्णीयादुद्धरन्। ज्योतिरेव पश्यन्तीः प्रजा यजमानम्भि स्मावर्तन्ते। प्रजापंतेरक्ष्यंश्वयत्। तत्परां-ऽपतत्। तदश्वोऽभवत्। तदश्वंस्याश्वत्वम्॥३८॥

पुष वै प्रजापंतिः। यद्गिः। प्राजापत्योऽश्वः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। स्वमेव चक्षुः पश्यंन्य्रजापंतिरनूदेति। वृज्री वा पृषः। यदश्वः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। जातानेव भातृंव्यान्त्रणुंदते। पुनुरा वर्तयति॥३९॥

ज्निष्यमाणानेव प्रतिनुदते। न्यांहवनीयो गार्हंपत्य-मकामयत। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। तौ विभाजं नाशंक्रोत्। सोऽश्वंः पूर्ववाङ्गृत्वा। प्राश्चं पूर्वमुदंवहत्। तत्पूर्ववाहंः पूर्ववाद्मम्। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। विभक्ति-रेवैनयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवैनौ कुरुते॥४०॥

यदुपर्युपरि शिरो हरैत्। प्राणान् विच्छिन्द्यात्। अधीऽधः शिरो हरति। प्राणानां गोपीथायं। इयत्यग्रे हरति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेवैनं लोकेषु प्रतिष्ठितमाधंत्ते। प्रजापंतिरग्निमंसृजत। सोऽबिभेत्प्र मा

धक्ष्यतीतिं॥४१॥

तस्यं त्रेधा मंहिमानं व्यौहत्। शान्त्या अप्रदाहाय। यत्रेधाऽग्निराधीयतें। महिमानंमेवास्य तद्यूहित। शान्त्या अप्रदाहाय। पुन्रा वंर्तयति। महिमानंमेवास्य सन्दंधाति। पृशुर्वा पृषः। यदर्श्वः। पृष रुद्रः॥४२॥

यद्गिः। यदश्वंस्य प्रदें ऽग्निमांद्घ्यात्। रुद्रायं प्रांत्पिदध्यात्। अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यन्नाकृमयेंत्। अनंवरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। पार्श्वत आक्रमयेत्। यथाऽऽहितस्याग्नेरङ्गांरा अभ्यव्वर्तेरन्। अवंरुद्धा अस्य पृशवो भवंन्ति। न रुद्रायापिदधाति॥४३॥

त्रीणि ह्वी १ ष् निर्वपति। विराजं एव विक्रान्तं यजंमानोऽनु विक्रमते। अग्नये पवंमानाय। अग्नये पावकायं। अग्नये शुचंये। यद्ग्रये पवंमानाय निर्वपति। पुनात्येवैनम्। यद्ग्रये पावकायं। पूत एवास्मिन्नन्नाद्यं दधाति। यद्ग्रये शुचंये। ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्नुपरिष्टाद्दधाति॥४४॥ पुनाहुवनीयं धनेऽश्वतं वर्तयति कृष्त् इति एवे देशति यद्ग्रये शुचंय एकं वा——[५]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुपयन्तः। अग्नौ वामं वसु सं न्यंदधत। इदमुं नो भविष्यति। यदिं नो जेष्यन्तीतिं। तद्ग्निर्नोध्सहंमशक्नोत्। तत् त्रेधा विन्यंदधात्। पृशुषु तृतीयम्। अपसु तृतीयम्। आदित्ये तृतीयम्॥४५॥

तद्देवा विजित्यं। पुनुरवांरुरुथ्सन्त। तेंंऽग्नये पर्वमानाय

पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपन्। पृशवो वा अग्निः पर्वमानः। यदेव पृशुष्वासीत्। तत्तेनावांरुन्धतः। तेंऽग्नये पावकायं। आपो वा अग्निः पावकः। यदेवापस्वासीत्। तत्तेनावांरुन्धतः॥४६॥

तैंऽग्रये शुचंये। असौ वा आंदित्यौंऽग्निः शुचिः। यदेवाऽऽदित्य आसींत्। तत्तेनावांरुन्धत। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। तनुवो वावेता अंग्र्याधेयंस्य। आ्ग्रेयो वा अष्टा-कंपालोऽग्र्याधेयमितिं। यत्तं निर्वपैत्। नैतानिं। यथाऽऽत्मा स्यात्॥४७॥

नाङ्गांनि। ताह्येव तत्। यदेतानि निर्वपंत्। न तम्। यथाऽङ्गांनि स्युः। नाऽऽत्मा। ताह्येव तत्। उभयांनि सह निरुप्यांणि। यज्ञस्यं सात्मत्वायं। उभयं वा एतस्येन्द्रियं वीर्यमाप्यते॥४८॥

यों ऽग्निमांधृत्ते। ऐन्द्राग्नमेकांदशकपालमनु निर्वपेत्। आदित्यं चुरुम्। इन्द्राग्नी वै देवानामयांतयामानौ। ये एव देवते अयांतयाम्नी। ताभ्यांमेवास्मां इन्द्रियं वीर्यमवं रुन्थे। आदित्यो भंवति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। धेन्वै वा एतद्रेतः॥४९॥

यदाज्यम्। अनुडुहंस्तण्डुलाः। मिथुनमेवावं रुन्धे। घृते भंवति। यज्ञस्यालूँक्षान्तत्वाय। चत्वारं आर्षेयाः प्राश्ञंन्ति। दिशामेव ज्योतिंषि जुहोति। पृशवो वा एतानिं ह्वी॰षिं। एष रुद्रः। यद्ग्निः॥५०॥ यथ्सद्य एतानि ह्वी १ वि निर्वि त्। रुद्रायं पृश्नि पि दध्यात्। अपृश्र्यजंमानः स्यात्। यन्नानुं निर्वि त्। अनंबरुद्धा अस्य पृश्वंः स्युः। द्वादृशसु रात्रीष्वनु निर्वि पेत्। संवथ्सरप्रतिमा व द्वादंश रात्रयः। संवथ्सरणे वास्मै रुद्र १ शमियत्वा। पृश्नवं रुन्धे। यदेकं मेक मेतानि ह्वी १ वि निर्वि त्॥ ५१॥

यथा त्रीण्यावपंनानि पूरयेंत्। तादक्तत्। न प्रजनंन-मुच्छि १ षेत्। एकं निरुप्यं। उत्तरे समंस्येत्। तृतीयंमेवास्में लोकमुच्छि १ षति प्रजनंनाय। तं प्रजयां पृशुभिरनु प्रजायते। अथो यज्ञस्यैवैषाऽभिक्रांन्तिः। रथचकं प्रवर्तयति। मनुष्यरथेनैव देवर्थं प्रत्यवंरोहति॥५२॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्राँ(३) न होत्व्या(३) मिति। यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। यन्न जुंहुयात्। अग्निः परां भवेत्। तूष्णीमेव होत्व्यम्ं। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। अग्नीधं ददाति॥५३॥

अग्निम्ंखानेवर्त्न्प्रींणाति। उपबर्ह्णं ददाति। रूपाणामवं-रुद्धे। अश्वं ब्रह्मणें। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। धेनु १ होत्रें। आशिषं प्वावं रुन्धे। अनुङ्गाहंमध्वर्यवें। वहिर्वा अनुङ्गान्। वहिरध्वर्युः॥५४॥ वहिंनेव वहिं यज्ञस्यावं रुन्थे। मिथुनौ गावौं ददाति। मिथुनस्यावंरुद्धौ। वासों ददाति। सर्वदेवत्यं वै वासंः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। आ द्वांदशभ्यों ददाति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सर एव प्रतिं तिष्ठति। कामंमूर्ध्वं देयम्। अपंरिमितस्यावंरुद्धौ॥५५॥

घर्मः शिर्स्तद्यम्गिः। सिम्प्रंयः पृशुभिभीवत्। छुर्दिस्तोकाय तनयाय यच्छ। वातः प्राणस्तद्यम्गिः। सिम्प्रंयः पृशुभिभीवत्। स्वदितं तोकाय तनयाय पितुं पंच। प्राचीमन् प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अग्निभीवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो विभाहि। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे॥५६॥

अर्कश्चक्षुस्तद्सौ सूर्यस्तद्यम्गिः। सिम्प्रियः पृश्मिर्भुवत्। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तृनः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिह् तेन् त्वाऽऽदंधे। अग्निनाऽग्ने ब्रह्मणा। आन्शे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे। ये ते अग्ने शिवे तृनुवौं। विराद्वं स्वराद्वं। ते माविशतां ते मां जिन्वताम्॥५७॥

ये तें अग्ने शिवे तुन्वौं। सुम्राद्वांभिभूश्चं। ते माविंशतां ते मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिवे तुनुवौं। विभूश्चं परिभूश्चं। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिवे तुनुवौं। प्रभ्वी च प्रभूतिश्च। ते मा विशतां ते मां जिन्वताम्। यास्ते अग्ने शिवास्तुनुवंः। ताभिस्त्वाऽऽदंधे। यास्ते अग्ने घोरास्तुनुवंः। ताभिरमुं गंच्छ॥५८॥

ड्मे वा एते लोका अग्नयंः। ते यदव्यांवृत्ता आधीयेरन्। शोचयंयुर्यजमानम्। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमा दंधाति। वातः प्राण इत्यंन्वाहार्यपचनम्। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। तेनैवैनान्व्यावंत्यति। तथा न शोचयन्ति यजमानम्। रथन्तरम्भिगांयते गार्हंपत्य आधीयमांने। राथंन्तरो वा अयं लोकः॥५९॥

अस्मिन्नेवैनं लोके प्रतिष्ठितमा धंत्ते। वामदेव्यम्भिगांयत उद्धियमाणे। अन्तरिक्षं वै वामदेव्यम्। अन्तरिक्ष एवैन् प्रतिष्ठितमाधंत्ते। अथो शान्तिर्वे वामदेव्यम्। शान्तमेवैनं पश्व्यंमुद्धंरते। बृहद्भिगांयत आहवनीयं आधीयमाने। बार्हतो वा असौ लोकः। अमुष्मिन्नेवैनं लोके प्रति-ष्ठितमाधंत्ते। प्रजापंतिरिग्नमंसृजत॥६०॥

सोऽश्वोऽवारों भूत्वा परांङेत्। तं वांरवन्तीयंनावारयत। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयृत्वम्। श्येतेनं श्येती अंकुरुत। तच्छौतस्यं श्येतृत्वम्। यद्वांरवन्तीयंमिभ् गायंते। वार्यित्वैवैनं प्रतिष्ठितमा धंत्ते। श्येतेनं श्येती कुंरुते। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमादंधाति। सशींर्षाणमेवैनमा धंत्ते॥६१॥ उपैनमुत्तरो यज्ञो नंमित। रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। स आधीयमान ईश्वरो यज्ञंमानस्य पृशून् हि॰सितोः। सम्प्रियः पृशुभिभुविदित्याह। पृशुभिरेवैन्॰ सम्प्रियं करोति। पृशूनामहि॰सायै। छुर्दिस्तोकाय् तन्याय युच्छेत्याह। आमेवैतामा शास्ते। वार्तः प्राण इत्यंन्वाहार्यपचनम्॥६२॥

सप्राणमेवेनमा धंते। स्वदितं तोकाय तनयाय पितुं प्रचेत्यांह। अन्नमेवास्मैं स्वदयति। प्राचीमनं प्रदिशं प्रेहिं विद्वानित्यांह। विभंक्तिरेवेनयोः सा। अथो नानावीयविवेनौं कुरुते। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पद इत्यांह। आ-मेवेतामा शांस्ते। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। अर्को वे देवानामन्नम्॥६३॥

अन्नमेवावं रुन्धे। तेनं मे दीदिहीत्यांह। सिमंन्ध एवैनम्ं। आनुशे व्यांनश् इति त्रिरुदिंङ्गयित। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेवेनं लोकेषु प्रतिष्ठितमा धंत्ते। तत्तथा न कार्यम्ं। वीङ्गित्मप्रतिष्ठितमा दंधीत। उद्धृत्येवाधायांभिमन्नियंः। अवीङ्गितमेवेनं प्रतिष्ठितमाधंत्ते। विराद्वं स्वराद्व यास्ते अग्ने शिवास्तनुवस्ताभिस्त्वाऽऽदंध इत्यांह। एता वा अग्नेः शिवास्तनुवंः। ताभिरवेन् सम्ध्यति। यास्ते अग्ने घोरास्तनुवस्ताभिरमुं गुच्छेतिं ब्रूयाद्यं द्विष्यात्। ताभिरवेनं पर्गभावयति॥६४॥

शुमीगुर्भाद्गिः मंन्थति। एषा वा अग्नेर्य्जियां तुनूः।

तामेवास्मै जनयति। अदितिः पुत्रकामा। साध्येभ्यो देवेभ्यौ ब्रह्मौदनमंपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञौत्। सा रेतोऽधत्त। तस्यै धाता चौर्यमा चौजायेताम्। सा द्वितीयंमपचत्॥६५॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्यैं मित्रश्च वर्रुणश्चाजायेताम्। सा तृतीयंमपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या अश्शंश्च भगंश्चाजायेताम्। सा चंतुर्थमंपचत्॥६६॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या इन्द्रंश्च विवंस्वाङ्श्चाजायेताम्। ब्रह्मौद्नं पंचति। रेतं एव तद्दंधाति। प्राश्नंन्ति ब्राह्मणा ओंद्नम्। यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तेनं समिधोऽभ्यज्या दंधाति। उच्छेषंणाद्वा अदिती रेतों-ऽधत्त॥६७॥

उच्छेषंणादेव तद्रेतों धत्ते। अस्थि वा एतत्। यथ्समिधंः। एतद्रेतंः। यदाज्यम्। यदाज्यंन समिधोऽभ्यज्यादधांति। अस्थ्येव तद्रेतंसि दधाति। तिस्र आदंधाति मिथुन्त्वायं। इयंतीर्भवन्ति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताः॥६८॥

इयंतीर्भवन्ति। युज्ञपुरुषा सम्मिताः। इयंतीर्भवन्ति। एताबुद्दै पुरुषे वीर्यम्॥ वीर्यसम्मिताः। आर्द्रा भेवन्ति। आर्द्रमिव हि रेतः सिच्यते॥ चित्रियस्याश्वत्थस्यादंधाति। चित्रमेव भेवति। घृतवंतीभिरा दंधाति॥६९॥ पृतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यद्घृतम्। प्रियेणैवैनं धाम्रा समर्धयति। अथो तेजंसा। गायत्रीभिन्नाह्मणस्यादंध्यात्। गायत्रछंन्दा वै ब्राह्मणः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। त्रिष्टुग्भी राजन्यंस्य। त्रिष्टुप्छंन्दा वै राजन्यंः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययनस्त्वायं॥७०॥

जगंतीभिर्वेश्यंस्य। जगंतीछन्दा वै वैश्यंः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। त॰ संवथ्सरं गोपायेत्। संवथ्सर॰ हि रेतों हितं वर्धते। यद्यंन॰ संवथ्सरे नोपनमैत्। स्मिधः पुन्रादंध्यात्। रेतं पुव तिद्धतं वर्धमानमेति। न मा॰्समंश्जीयात्। निश्चियमुपेयात्॥७१॥

यन्मा १ समंश्जीयात्। यिश्वयं मुप्यात्। निर्वीर्यः स्यात्। नैनंमग्निरुपंनमेत्। श्व आंधास्यमानो ब्रह्मौद्नं पंचति। आदित्या वा इत उत्तमाः सुंवर्गं लोकमायन्। ते वा इतो यन्तं प्रतिनुदन्ते। एते खलु वावाऽऽदित्याः। यद्गाँह्मणाः। तैरेव सन्त्वं गंच्छति॥७२॥

नैनं प्रतिनुदन्ते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। क्वां सः। अग्निः कार्यः। यौऽस्मै प्रजां पृश्न्प्रंजनयतीति। शल्कैस्ता १रात्रिंमग्निमिन्धीत। तस्मिन्नुपव्युषम्रणी निष्टंपेत्। यथंर्ष्भायं वाशिता न्यांविच्छायति। तादगेव तत्। अपोद्ह्य भस्माग्निं मन्थति॥७३॥

सैव साऽग्नेः सन्तंतिः। तं मंथित्वा प्राश्चमुद्धंरित।

संवथ्सरमेव तद्रेतों हितं प्रजंनयति। अनांहित्स्तस्याग्नि-रित्यांहुः। यः समिधोऽनांधायाग्निमांधत्त इतिं। ताः संवथ्सरे पुरस्तादादंध्यात्। संवथ्सरादेवैनंमव्रुध्याधंत्ते। यदिं संवथ्सरेऽनाद्ध्यात्। द्वाद्श्यां पुरस्तादादंध्यात्। संवथ्सरप्रतिमा व द्वादंश रात्रयः। संवथ्सरमेवास्याऽऽहिंता भवन्ति। यदिं द्वाद्श्यां नाद्ध्यात्। त्र्यहे पुरस्तादादंध्यात्। आहिंता एवास्यं भवन्ति॥७४॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। स रिरिचानोंऽमन्यत। स तपोंऽतप्यत। स आत्मन्वीर्यमपश्यत्। तदंवर्धत। तदंस्माथ्सहंसोर्ध्वमंसृज्यत। सा विराडंभवत्। तां देवासुरा व्यंगृह्णत। सोंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। मम वा एषा॥७५॥

दोहां एव युष्माक्मितिं। सा ततः प्राच्युदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अर्थवं पितुं में गोपायेतिं। सा द्वितीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। नर्य प्रजां में गोपायेतिं। सा तृतीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। शक्स्यं पशून्में गोपायेतिं॥७६॥

सा चंतुर्थमुदंकामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। सप्रंथ स्भां में गोपायेतिं। सा पंश्रममुदंकामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अहें बुध्निय मर्त्रं मे गोपायेतिं। अग्नीन् वाव सा तान्व्यंक्रमत। तान्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अथो पङ्किमेव। पङ्किर्वा एषा ब्राह्मणे प्रविष्टा॥७७॥

तामात्मनोऽधि निर्मिमीते। यद्ग्निरांधीयतें। तस्मांदेतावंन्तो-ऽग्नय आधीयन्ते। पाङ्कं वा इद सर्वम्। पाङ्कंनैव पाङ्कः स्पृणोति। अर्थवं पितुं में गोपायेत्यांह। अन्नमेवैतेनं स्पृणोति। नर्यं प्रजां में गोपायेत्यांह। प्रजामेवैतेनं स्पृणोति। शक्सं पश्नमें गोपायेत्यांह॥ ७८॥

पृश्नेवैतेनं स्पृणोति। सप्रंथ स्मां में गोपायेत्यांह। स्मामेवैतेनंन्द्रिय स्पृणोति। अहं बुध्निय मन्नं मे गोपायेत्यांह। मन्नमेवैतेन श्रिय स्पृणोति। यदंन्वाहार्यपचंने-ऽन्वाहार्यं पचंन्ति। तेन सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। यद्गार्हंपत्य आज्यंमधिश्रयंन्ति सम्पत्नींयांजयंन्ति। तेन सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। यदांहवनीये जुह्नंति॥७९॥

तेन सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। यथ्मभायां विजयंन्ते।
तेन सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। यदांवस्थेऽन्न्र् हरंन्ति। तेन्
सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। तथांऽस्य सर्वे प्रीता अभीष्टा
आधींयन्ते। प्रवस्थमेष्यन्नेवमुपंतिष्ठेतैकंमेकम्। यथां
ब्राह्मणायं गृहेवासिने परिदायं गृहानेतिं। तादगेव तत्।
पुनंरागत्योपंतिष्ठते। सा भांगेयमेवेषां तत्। सा ततं
ऊर्ध्वारोहत्। सा रोहिण्यंभवत्। तद्रोहिण्ये रोहिणित्वम्।
रोहिण्यामुग्निमादंधीत। स्व पुवैनं योनौ प्रतिष्ठितमाधंत्ते।

प्रथमः प्रश्नः 21

ऋध्रोत्येनेन॥८०॥

पुषा पुश्र्में गोपायेति प्रविष्टा पुश्र्में गोपायेत्यांहु जुह्वंति तिष्ठते सप्त चं॥_______[१०]

ब्रह्म सन्धंत् कृत्तिंका्मूद्धन्ति द्वादशस्ं प्रजापंतिर्वाचो देवासुरास्तद्ग्निर्नोद्धर्मः शिरं हुमे वे शंमीगुर्भात्प्रजापंतिः स रिरिचानः स तपः स आत्मन्वीर्यं दशं॥१०॥ ब्रह्म सन्धंत्तं तो दिव्यावथां शुन्त्वाय् प्राच्येषां यदुपर्युपरि यथ्सद्यः सोऽश्वोऽवारों भृत्वा जगंतीभि्रशींतिः॥८०॥ ब्रह्म सन्धंत्तमृग्नोत्येनेन॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

उद्धन्यमानम्स्या अमेध्यम्। अपं पाप्मानं यजंमानस्य हन्तु। शिवा नंः सन्तु प्रदिश्श्वतंस्रः। शं नों माता पृथिवी तोकंसाता। शं नों देवीर्भिष्टये। आपों भवन्तु पीतयें। शं योर्भि स्रंवन्तु नः। वैश्वान्रस्यं रूपम्। पृथिव्यां परिस्रसां। स्योनमा विंशन्तु नः॥१॥

यदिदं दिवो यददः पृंथिव्याः। सञ्जज्ञाने रोदंसी सम्बभूवतुः। ऊषाँन्कृष्णमंवतु कृष्णमूषाँः। इहोभयोंर्यज्ञिय-मागंमिष्ठाः। ऊतीः कुंर्वाणो यत्पृंथिवीमचंरः। गुहाकारंमाखुरूपं प्रतीत्यं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः सवीराः। ऊर्जं पृथिव्या रसंमाभरंन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः पुरूचीः॥२॥

वृम्रीभिरन्वित्तं गुहांस्। श्रोत्रं त उर्व्यबंधिरा भवामः। प्रजापंतिसृष्टानां प्रजानांम्। क्षुधोऽपंहत्ये स्वितं नो अस्तु। उप प्रभिन्नमिष्मूर्जं प्रजाभ्यः। सूदं गृहेभ्यो रस्माभंरामि। यस्यं रूपं विभ्रंदिमामविंन्दत्। गुह्य प्रविष्टा सरिरस्य मध्यें। तस्येदं विहंतमाभरंन्तः। अर्छम्बद्धारमस्यां विधेम॥३॥

यत्पर्यपंश्यथ्मरि्रस्य मध्यै। उर्वीमपंश्यञ्जगंतः प्रतिष्ठाम्। तत्पुष्करस्याऽऽयतेनाद्धि जातम्। पूर्णं पृथिव्याः प्रथंन १ हरामि। याभि्रदर्शहञ्जगंतः प्रतिष्ठाम्। उर्वीमि्मां विश्वजनस्ये भूत्रीम्। ता नेः शिवाः शर्कराः सन्तु सर्वाः। अग्ने रेतंश्चन्द्र र हिरंण्यम्। अन्धः सम्भूतमृतं प्रजासुं। तथ्सम्भरंन्नुत्तर्तो निधायं॥४॥

अतिप्रयच्छं दुरितिं तरेयम्। अश्वों रूपं कृत्वा यदेश्वत्थे-ऽतिष्ठः। संवथ्सरं देवेभ्यों निलायं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः सवीराः। ऊर्जः पृथिव्या अध्युत्थितोऽसि। वर्नस्पते शृतवंल्शो विरोह। त्वयां व्यमिष्मूर्जं मदेन्तः। रायस्पोषेण समिषा मंदेम। गायत्रिया ह्रियमाणस्य यत्तै॥५॥

पूर्णमपंतत्तृतीयंस्यै दिवोऽिधं। सोंऽयं पूर्णः सोंमपूर्णाद्धि जातः। ततों हरामि सोमपीथस्यावंरुद्धौ। देवानां ब्रह्मवादं वदंतां यत्। उपार्श्वणोः सुश्रवा वै श्रुतोंऽिस। ततो मामाविंशतु ब्रह्मवर्चसम्। तथ्सम्भर्ङ्स्तदवंरुन्धीय साक्षात्। ययां ते सृष्टस्याग्नेः। हेतिमशंमयत्प्रजापंतिः। तामिमामप्रदाहाय॥६॥

श्मी १ शान्त्ये हराम्यहम्। यत्ते सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आँच्छं ज्ञातवेदः। तयां भासा सम्मितः। उरुं नो लोकमनु प्रभाहि। यत्ते तान्तस्य हृदंयमाच्छिंन्दञ्जातवेदः। मुरुतोऽद्भिस्तमयित्वा। पृतत्ते तदंशनेः सम्भरामि। सात्मां अग्रे सहंदयो भवेह। चित्रियादश्वत्थाथ्सम्भृता बृहत्यः॥७॥

शरीरम्भि सङ्स्कृंताः स्थ। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन् सम्मिताः। तिस्रस्त्रिवृद्धिर्मिथुनाः प्रजात्यै। अश्वत्थाद्धंव्य- वाहाद्धि जाताम्। अग्नेस्तुनूं यज्ञियाः सम्भेरामि। शान्तयोनि शमीगुर्भम्। अग्नये प्रजनियतवे। यो अश्वत्थः शमीगुर्भः। आरुरोह त्वे सचौ। तं ते हरामि ब्रह्मणा॥८॥

य्जियैं केतुभिं सह। यं त्वां समभंरञ्जातवेदः। यथाश्रिं भूतेषु न्यंक्तम्। स सम्भृंतः सीद शिवः प्रजाभ्यः। उरुं नों लोकमनुंनेषि विद्वान्। प्रवेधसे क्वये मेध्याय। वची वन्दारुं वृष्माय वृष्णें। यतो भ्यमभंयं तन्नो अस्तु। अवं देवान् यंजे हेड्यान्। समिधाऽग्निं दुंवस्यत॥९॥

॥ घृत-सूक्तम्॥

घृतैर्बोधयतातिथिम्। आऽस्मिन् ह्व्या जुंहोतन। उपं त्वाऽग्ने ह्विष्मितीः। घृताचीर्यन्तु हर्यत। जुषस्वं स्मिधो ममं। तं त्वां स्मिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामिस। बृहच्छोचा यविष्ठ्य। स्मिध्यमानः प्रथमो नु धर्मः। समृक्तुभिरज्यते विश्ववारः॥१०॥

शोचिष्केंशो घृतिनिर्णिक्पाव्कः। सुयज्ञो अग्निर्यज्ञथांय देवान्। घृतप्रंतीको घृतयोनिर्ग्निः। घृतैः सिमंद्धो घृतम्स्यान्नम्। घृतप्रुषंस्त्वा स्रितों वहन्ति। घृतं पिबन्थ्सुयजां यक्षि देवान्। आयुर्वा अंग्ने ह्विषों जुषाणः। घृतप्रंतीको घृतयोनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गव्यम्। पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्॥११॥ त्वामंग्ने समिधानं यंविष्ठ। देवा दूतं चंक्रिरे हव्यवाहम्ं। उरुज्रयंसं घृतयोनिमाहुंतम्। त्वेषं चक्षुंदिधिरे चोदयन्वंति। त्वामंग्ने प्रदिव आहुंतं घृतेनं। सुम्नायवंः सुष्मिधा समीधिरे। स वांवृधान ओषंधीभिरुक्षितः। उरु ज्रयार्थस् पार्थिवा वितिष्ठसे। घृतप्रंतीकं व ऋतस्यं धूर्षदम्ं। अग्निं मित्रं न संमिधान ऋंअते॥१२॥

इन्धांनो अको विदर्थेषु दीद्यंत्। शुक्रवंर्णामुद्दं नो यश्सते धियम्। प्रजा अंग्रे संवासय। आशांश्च प्रशुभिः सह। राष्ट्राण्यंस्मा आधेहि। यान्यासंन्थ्सिवतुः स्वे। मही विश्पत्नी सदंने ऋतस्यं। अर्वाची एतं धरुणे रयीणाम्। अन्तर्वत्नी जन्यं जातवंदसम्। अध्वराणां जनयथः पुरोगाम्॥१३॥

आरोहतं दुशत् शक्तरीर्ममं। ऋतेनांग्र आयुषा वर्चसा सह। ज्योग्जीवन्त उत्तरामुत्तरा समाम। दर्शमहं पूर्णमांसं यज्ञं यथा यजै। ऋत्वियवती स्थो अग्निरेतसौ। गर्भं दधाथां ते वामहं देदे। तथ्सत्यं यद्वीरं विभृथः। वीरं जनियुष्यर्थः। ते मत्प्रातः प्रजनिष्येथे। ते मा प्रजाते प्रजनियुष्यर्थः॥१४॥

प्रजयां पृश्भिष्रह्मवर्चसेनं सुवर्गे लोके। अनृताथ्सत्य-मुपैमि। मानुषाद्दैव्यमुपैमि। दैवीं वार्चं यच्छामि। शल्कैर्ग्निमिन्धानः। उभौ लोकौ संनेम्हम्। उभयौर्लोकयोर् ऋध्वा। अति मृत्युं तराम्यहम्। जातंवेदो भुवनस्य रेतः। इह सिंश्च तपंसो यज्जनिष्यते॥१५॥

अग्निमंश्वत्थादिषे हव्यवाहम्। श्वामीग्रमाञ्चनयन् यो मयोभूः। अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथा नो वर्धया रियम्। अपेत वीत् वि च सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतनाः। अदादिदं यमोऽवसानं पृथिव्याः। अर्नान्निमं पितरो लोकमंस्मै॥१६॥

अग्नेर्भस्मांस्युग्नेः पुरीषमसि। संज्ञानंमसि काम्धरंणम्। मियं ते काम्धरंणं भूयात्। संवंः सृजािम् हृदंयािन। स॰सृष्टं मनों अस्तु वः। स॰सृष्टः प्राणो अस्तु वः। सं या वंः प्रियास्तुन्वंः। सं प्रिया हृदंयािन वः। आत्मा वो अस्तु सिम्प्रियः। सिम्प्रियास्तुन्वो ममं॥१७॥

कल्पंतां द्यावांपृथिवी। कल्पंन्तामाप् ओषंधीः। कल्पंन्तामग्रयः पृथंक्। मम् ज्यैष्ठ्यांय सन्नंताः। येंऽग्रयः समंनसः। अन्तरा द्यावांपृथिवी। वासंन्तिकावृत् अभि कल्पंमानाः। इन्द्रंमिव देवा अभि सं विंशन्तु। दिवस्त्वां वीर्येण। पृथिव्ये मंहिम्रा॥१८॥

अन्तरिक्षस्य पोषेण। सर्वपंशुमादंधे। अजीजनत्रमृतं मर्त्यासः। अस्रेमाणं तरणिं वीडुजंम्भम्। दश् स्वसारो अग्रुवंः समीचीः। पुमार्ंसं जातम्भि सर्श्यन्ताम्। प्रजापंतेस्त्वा प्राणेनाभि प्राणिंमि। पूष्णः पोषेण् मह्यम्। दीर्घायुत्वायं श्तशांरदाय। श्तर श्रद्य आयुंषे वर्चसे॥१९॥ जीवात्वे पुण्यांय। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोककुञ्जातवेदः। प्राणे त्वाऽमृतमादंधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गुप्त्यैं। सुगार्हपत्यो विदहन्नरांतीः। उषसः श्रेयंसीः श्रेयसीर्दधंत्॥२०॥

अग्नें सपत्ना र् अप बार्धमानः। रायस्पोष्मिष्मूर्जम्समासुं धेहि। इमा उ मामुपंतिष्ठन्तु रायः। आभिः प्रजाभिरिह संवंसेय। इहो इडां तिष्ठतु विश्वरूपी। मध्ये वसौदीदिहि जातवेदः। ओजंसे बलाय त्वोद्यंच्छे। वृषंणे शुष्मायाऽऽयुंषे वर्चसे। सपत्नतूरंसि वृत्रतूः। यस्ते देवेषुं महिमा सुंवर्गः॥२१॥

यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। पृष्टिर्या ते मनुष्येषु पप्रथे। तयां नो अग्ने जुषमांण एहिं। दिवः पृथिव्याः पर्यन्तिरक्षात्। वातांत्पशुभ्यो अध्योषंधीभ्यः। यत्रं यत्र जातवेदः सम्बभूथं। ततों नो अग्ने जुषमांण एहिं। प्राचीमन् प्रदिश्ं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अंग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो वि भाहि॥२२॥

ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अन्वग्निरुषसामग्रंमख्यत्। अन्वहांनि प्रथमो जातवेदाः। अनु सूर्यस्य पुरुत्रा चे रश्मीन्। अनु द्यावांपृथिवी आतंतान। विक्रंमस्व महाश् असि। वेदिषन्मानुंषेभ्यः। त्रिषु लोकेषुं जागृहि। यदिदं दिवो यददः पृथिव्याः। संविदाने रोदंसी सं बभूवर्तुः॥२३॥

तयोः पृष्ठे सींदतु जातवेदाः। शम्भूः प्रजाभ्यंस्त्नुवे स्योनः। प्राणं त्वाऽमृत् आ दंधामि। अन्नादमन्नाद्याय। गोप्तारं गृप्त्यै। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तृनः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिह् तेन त्वाऽऽदंधे। अग्निनाऽग्ने ब्रह्मणा। आनुशे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे॥२४॥

नर्य प्रजां में गोपाय। अमृतत्वायं जीवसें। जातां जीन्ष्यमाणां च। अमृते सत्ये प्रतिष्ठिताम्। अथवि पितुं में गोपाय। रसमन्निमहायुषे। अदंब्यायोऽशीततनो। अविषन्नः पितुं कृणु। शङ्स्यं पृशून्में गोपाय। द्विपादो ये चतुंष्पदः॥२५॥

अष्टाशंफाश्च य इहाग्नें। ये चैकंशफा आशुगाः। सप्रंथ सभां में गोपाय। ये च सभ्याः सभासदः। तानिन्द्रियावंतः कुरु। सर्वमायुरुपांसताम्। अहे बुध्निय मन्नें मे गोपाय। यमृषंयस्त्रैविदा विदुः। ऋचः सामानि यजूर्षेष। सा हि श्रीरमृतां सताम्॥२६॥

चतुंः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्ये। मुर्मृज्यमाना महृते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजंमानाय कामान्। इहैव सन्तत्रं सृतो वो अग्नयः। प्राणेनं वाचा मनंसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्। ज्योतिषा वो वैश्वान्रेणोपतिष्ठे। पश्चधाऽग्नीन्व्यंक्रामत्। विराद्थ्सृष्टा प्रजा-पंतेः। ऊर्ध्वाऽऽरोहद्रोहिणी। योनिर्ग्नेः प्रतिष्ठितिः॥२७॥ विश्वन् नः पुरूषीर्विधेम निधाय यत्तेऽप्रदाहाय बृहुत्यौ ब्रह्मणा द्वस्यत विश्ववार इममृञ्जते पृगुगां प्रजनिय्ययौ जनिव्यतेंऽसमे ममं महिष्ना वर्षमे दर्थस्युगां भाहि सम्बभृवतुरायुव्यांनशे चतुंष्यदः स्तां प्रजापतेहें चं॥—[१]

नवैतान्यहांनि भवन्ति। नव वै सुंवर्गा लोकाः। यदेतान्यहाँन्युपयन्ति। नवस्वेव तथ्सुंवर्गेषुं लोकेषुं सित्रणिः प्रतितिष्ठंन्तो यन्ति। अग्निष्टोमाः परंः सामानः कार्या इत्यांहुः। अग्निष्टोमसंग्मितः सुवर्गो लोक इति। द्वादंशाग्निष्टोमस्यं स्तोत्राणि। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। तत्तन्न सूर्क्यम्। उक्थ्यां एव संप्तद्शाः परंः सामानः कार्याः॥२८॥

प्शवो वा उक्थानिं। प्शूनामवंरुद्धौ। विश्वजिद्रभिजितां-विग्निष्टोमो। उक्थ्याः सप्तद्शाः परंः सामानः। ते सङ्स्तुंता विराजम्भि सम्पंद्यन्ते। द्वे चर्चावतिंरिच्येते। एकंया गौरतिंरिक्तः। एक्याऽऽयुंरूनः। सुवर्गो वै लोको ज्योतिंः। ऊर्ग्विराट्॥२९॥

सुवर्गमेव तेनं लोकम्भि जंयन्ति। यत्पर् राथंन्तरम्। तत्प्रंथमेऽहंन्कार्यम्। बृहद्वितीये। वैरूपं तृतीये। वैराजं चंतुर्थे। शाक्करं पंश्रमे। रैवत १ षष्ठे। तद्ं पृष्ठेभ्यो नयंन्ति। सन्तनंय एते ग्रहां गृह्यन्ते॥३०॥

अतिग्राह्याः परंः सामस्। इमानेवैतैर्लोकान्थ्सन्तंन्वन्ति। मिथुना एते ग्रहां गृह्यन्ते। अतिग्राह्याः परंः सामस्। मिथुनमेव तैर्यजमाना अवंरुन्थते। बृहत्पृष्ठं भवति। बृहद्वै सुवर्गो लोकः। बृह्तैव सुंवर्गं लोकं यन्ति। त्रयस्त्रिष्शि नाम् सामी माध्यं दिने पर्वमाने भवति॥३१॥

त्रयंस्त्रिश्शृद्धे देवताः। देवतां पृवावंरुन्धते। ये वा इतः परांश्वश् संवथ्सरमृप्यन्ति। न हैनं ते स्वस्ति समंश्जुवते। अथ येऽमृतोऽर्वाश्चमृप्यन्ति। ते हैनः स्वस्ति समंश्जुवते। पृतद्धा अमृतोऽर्वाश्चमृपंयन्ति। यदेवम्। यो ह खलु वाव प्रजापंतिः। स उवेवेन्द्रः। तदुं देवेभ्यो नयंन्ति॥३२॥ कार्या विपाईकाने पर्वान्त एकं वा————[२]

सन्तंतिर्वा एते ग्रहाँ। यत्परं सामानः। विष्वान्दिंवा-कीर्त्यम्। यथा शालांयै पक्षंसी। एवः संवथ्सरस्य पक्षंसी। यदेतेन गृह्येरन्। विष्ची संवथ्सरस्य पक्षंसी व्यवंस्रः सेयाताम्। आर्तिमार्च्छंयः। यदेते गृह्यन्तें। यथा शालांयै पक्षंसी मध्यमं व्श्शम्भि संमायच्छंति॥३३॥

पुवर संवथ्सरस्य पक्षंसी दिवाकीत्यंमिभ सं तंन्वन्ति। नार्तिमार्च्छंन्ति। एकविर्शमहंभविति। शुक्राग्रा ग्रहां गृह्यन्ते। प्रत्युत्तंब्य्ये सयत्वायं। सौर्यं एतदहंः पृशुरालंभ्यते। सौर्यो-ऽतिग्राह्यों गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं एवेष बुलिरहिंयते। सुप्तैतदहंरतिग्राह्यां गृह्यन्ते॥३४॥

स्प्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। असाविद्तयः शिरः प्रजानाम्। शीर्षन्नेव प्रजानां प्राणान्दंधाति। तस्माध्सप्त शीर्षन्प्राणाः। इन्द्रों वृत्र हत्वा। असुरान्पराभाव्यं। स इमाँ हो कानुभ्यं जयत्। तस्यासौ हो को ऽनंभि जित आसीत्। तं विश्वकंमां भूत्वा ऽभ्यं जयत्। यद्वैश्वकर्मणो गृह्यते॥३५॥

सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। प्रवा एतैंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये वैश्वकर्मणं गृह्णतें। आदित्यः श्वो गृह्यते। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रति तिष्ठन्ति। अन्यौन्यो गृह्यते। विश्वौन्येवान्येन कर्माणि कुर्वाणा यन्ति। अस्यामन्येन प्रति तिष्ठन्ति। तावाऽपंरार्धाथ्यांवथ्यरस्यान्यौन्यो गृह्यते। तावुभौ सह महाव्रते गृह्यते। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। उभयौर्लोकयोः प्रति तिष्ठन्ति। अर्क्यमुक्थं भवति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धौ॥३६॥ सुम्यव्यक्ष्यित्राह्यां गृह्यते स्वथ्यरस्यान्यौन्यो गृह्यते पर्व वा———[३]

पुक्विर्श पृष भेवति। एतेन् वै देवा एंकविर्शेने। आदित्यमित उत्तमर सुंवर्गं लोकमारोहयन्। स वा पृष इत एंकविर्शः। तस्य दशावस्तादहांनि। दशं प्रस्तात। स वा पृष विराज्यंभ्यतः प्रतिष्ठितः। विराजि हि वा पृष उभ्यतः प्रतिष्ठितः। विराजि हि वा पृष लोकष्वंभितपंत्रेति॥३७॥

देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। परांचो-ऽतिपादादंबिभयुः। तं छन्दोभिरदृश्हं धृत्यैं। देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। अवाचोऽवपादादंबिभयुः। तं पश्चभीं रृश्मिभिरुदंवयन्। तस्मादेकविश्शेऽहृन्पश्चं दिवाकीत्यांनि क्रियन्ते। रृश्मयो वै दिवाकीत्यांनि। ये गांयत्रे। ते गांयत्रीषूत्तंरयोः पर्वमानयोः॥३८॥

महादिवाकीर्त्य् होतुंः पृष्ठम्। विकुणं ब्रह्मसामम्। भासौंऽग्निष्टोमः। अथैतानि पर्राणि। परैर्वे देवा आंदित्य र सुवर्गं लोकमंपारयन्। यदपारयन्। तत्पराणां पर्त्वम्। पारयन्त्येनं पर्राणि। य पृवं वेदं। अथैतानि स्पराणि। स्परैर्वे देवा आंदित्य र सुवर्गं लोकमंस्पारयन्। यदस्पारयन्। तथ्स्पराणाः स्पर्त्वम्। स्पारयन्त्येन् स्पराणि। य पृवं वेदं॥ ३९॥

पुति पर्वमानयोः स्पर्राणि पश्चं च॥—————[४]

अप्रतिष्ठां वा एते गंच्छन्ति। येषा संवथ्सरेऽनाप्तेऽथं। एकाद्शिन्याप्यतें। वैष्णवं वांमनमालंभन्ते। युज्ञो वे विष्णुंः। यज्ञमेवालंभन्ते प्रतिष्ठित्ये। ऐन्द्राग्नमालंभन्ते। इन्द्राग्नी वे देवानामयातयामानौ। ये एव देवते अयांतयाम्नी। ते एवाऽऽलंभन्ते॥४०॥

वैश्वदेवमालंभन्ते। देवतां एवावंरुन्थते। द्यावापृथिव्यां धेनुमालंभन्ते। द्यावापृथिव्योरेव प्रतिं तिष्ठन्ति। वायव्यं वथ्समालंभन्ते। वायुरेवैभ्यों यथाऽऽयत्नाद्देवता अवं रुन्थे। आदित्यामविं वशामालंभन्ते। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति। मैत्रावरुणीमालंभन्ते॥४१॥

मित्रेणैव यज्ञस्य स्विष्टः शमयन्ति। वर्रुणेन दुरिष्टम्। प्राजापत्यं तूपरं महाब्रुत आलंभन्ते। प्राजापत्योऽतिग्राह्यो गृह्यते। अहरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं एवैष बुलिर्ह्मियते। आग्नेयमा लंभन्ते प्रति प्रज्ञांत्यै। अजुपेत्वान् वा एते पूर्वेर्मासैरवं रुन्धते। यदेते गुव्याः पृशवं आलुभ्यन्ते॥ उभयेषां पशूनामवंरुद्धौ॥४२॥

यदतिरिक्तामेकाद्शिनींमालभेरन्। अप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यति-रिच्येत। यद्दौ द्वौ पृशू समस्येयुः। कनीय आयुः कुर्वीरन्। यदेते ब्राह्मणवन्तः पृशवं आलुभ्यन्तै। नाप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यंति-रिच्यंते। न कनीय आयुः कुर्वते॥४३॥

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा वृत्तोऽशयत्। तं देवा भूतानाः रस्ं तेजः सम्भृत्यं। तेनैनमभिषज्यन्। महानंववर्तीति। तन्मंहाव्रतस्यं महाव्रतत्वम्। महद्भतमिति। तन्मंहाव्रतस्यं महाव्रत्वम्। महद्भतमिति। तन्मंहाव्रतत्वम्। पश्चविद्शः स्तोमो भवति॥४४॥

चतुर्वि शत्यर्धमासः संवथ्सरः। यद्वा एतस्मिन्थ्संवथ्सरेऽधि प्राजायत। तदन्नं पश्चिव श्रमंभवत्। मध्यतः क्रियते। मध्यतो ह्यन्नंमशितं धिनोतिं। अथो मध्यत एव प्रजानामूर्ग्धीयते। अथ् यद्वा इदमंन्ततः क्रियतें। तस्मादुदन्ते प्रजाः समेधन्ते। अन्ततः क्रियते प्रजनंनायैव। त्रिवृच्छिरों भवति॥४५॥

त्रेधाविहित १ हि शिरं। लोमं छ्वीरस्थि। परांचा स्तुवन्ति। तस्मात्तथ्महग्व। न मेद्यतोऽन्ं मेद्यति। न कृश्यतोऽन्ं कृश्यति। पृश्चद्शौंऽन्यः पृक्षो भवति। सुप्तदुशौं-

ऽन्यः। तस्माद्वयार्श्वस्यन्यतुरमुर्धमुभि पूर्यावर्तन्ते। अन्युतुरतो हि तद्गरीयः क्रियतै॥४६॥

पृश्चिविष्ण आत्मा भेवति। तस्माँनमध्यतः पृशवो वरिष्ठाः। पृक्विष्णं पुच्छम्। द्विपदांसु स्तुवन्ति प्रतिष्ठित्यै। सर्वेण स्ह स्तुवन्ति। सर्वेण ह्याँत्मनाँऽऽत्मन्वी। सहोत्पतंन्ति। एकैकामुच्छिर्षपन्ति। आत्मन्न ह्यङ्गांनि बद्धानि। न वा एतेन सर्वः पुरुषः॥४७॥

यदित इंतो लोमांनि द्तो नुखान्। पृरिमादंः क्रियन्ते। तान्येव तेन् प्रत्युंप्यन्ते। औदुंम्बर्स्तल्पों भवति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धो। यस्यं तल्प्सद्यमनंभिजित् क्र्यस्यात्। स देवाना क्ष्यास्याक्षे। तल्प्सद्यम्भिजयानीति तल्पंमा्रुह्योद्गायेत्। तल्पसद्यम्भिजयानीति तल्पंमा्रुह्योद्गायेत्। तल्पसद्यमेवाभि जयति॥४८॥

यस्यं तल्प्सद्यंम्भिजित् स्यात्। स देवाना स् साम्यक्षे। तल्प्सद्यं मा परांजेषीति तल्पंमारुह्योद्गायेत्। न तंल्प्सद्यं परांजयते। प्रेङ्के शर्सति। महो वे प्रेङ्कः। महंस प्वान्नाद्यस्यावंरुद्धे। देवासुराः संयंत्ता आसन्। त आंदित्ये व्यायंच्छन्त। तं देवाः समंजयन्॥४९॥

ब्राह्मणश्चं शूद्रश्चं चर्मकुर्ते व्यायंच्छेते। दैव्यो वै वर्णों ब्राह्मणः। असुर्यः शूद्रः। इमें ऽराथ्सुरिमे सुंभूतमंऋत्नित्यंन्यतुरो ब्रूयात्। इम उद्वासीकारिणं इमे दुर्भूतमंऋत्नित्यंन्यतुरः। यदेवैषा र सुकृतं या राद्धिः। तदंन्यत्रोंऽभि श्रीणाति। यदेवैषां दुष्कृतं याऽरांद्धिः। तदंन्यत्रोऽपं हन्ति। ब्राह्मणः सं जंयति। अमुमेवाऽऽदित्यं भ्रातृंव्यस्य संविन्दन्ते॥५०॥ भूविष् भूविष् क्रिये प्रकृषे जयत्यजयक्षय्यस्य चा———[६]

उद्धन्यमानं नवैतानि सन्तंतिरेकविश्ष पृषोऽप्रंतिष्ठां प्रजापंतिर्वृत्तः षद्॥६॥ उद्धन्यमानश् शोचिष्केशोऽग्रें सुपन्नानितग्राह्यां वैश्वदेवमालंभन्ते पश्चाशत्॥५०॥ उद्धन्यमानुश् संविन्दन्ते॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयम्प्यन्तः। अग्नीषोमयोस्तेज्ञस्विनींस्तुनः सन्न्यंदधत। इदम् नो भविष्यति। यदि नो जेष्यन्तीतिं। तेनाुग्नीषोमावपानामताम्। ते देवा विजित्यं। अग्नीषोमावन्वैच्छन्। तैंऽग्निमन्वं-विन्दत्रृतुषूथ्मंत्रम्। तस्य विभंक्तीभिस्तेज्ञस्विनींस्तुन्-रवांरुन्थत॥१॥

ते सोम्मन्वंविन्दन्। तमंघ्रन्। तस्यं यथाऽभिज्ञायं त्नूर्व्यगृह्णत्। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृहीताः। नानांऽऽग्नेयं पुनराधेयं कुर्यात्। यदनांग्नेयं पुनराधेयं कुर्यात्। व्यृद्धमेव तत्॥२॥

अनाँग्नेयं वा एतिक्रियते। यथ्समिधस्तनूनपांतिमिडो बर्हिर्यंजित। उभावाँग्नेयावाज्यंभागौ स्याताम्। अनाँज्यभागौ भवत् इत्यांहुः। यदुभावाँग्नेयावन्वश्चावितिं। अग्नये पर्वमानायोत्तरः स्यात्। यत्पर्वमानाय। तेनाऽऽज्यंभागः। तेनं सौम्यः। बुधंन्वत्याग्नेयस्याऽऽज्यंभागस्य पुरोऽनुवा्क्यां भवति॥३॥

यथां सुप्तं बोधयंति। ताहगेव तत्। अग्निन्यंक्ताः पत्नीसंयाजानामृचंः स्युः। तेनाँऽऽग्नेय सर्वं भवति। एक्धा तेजस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहुः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। प्रजनंनं वा अग्निः। प्रजनंनमेवोपैतीतिं। कृतयंजुः सम्भृतसम्भार इत्यांहुः॥४॥

न सम्भृत्याः सम्भाराः। न यजुः कार्यमिति। अथो खलुं। सम्भृत्यां एव सम्भाराः। कार्यं यजुः। पुन्राधेयंस्य समृद्धौ। तेनोपा १ श्रु प्रचरित। एष्यं इव वा एषः। यत्पुनराधेयः। यथोपा १ श्रु नष्टमिच्छति॥ ५॥

ताहगेव तत्। उचैः स्विष्टकृतमुथ्मृंजिति। यथां नृष्टं वित्त्वा प्राह्यमितिं। ताहगेव तत्। एक्धा तेजस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहुः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। तत्तथा नोपैति। प्रयाजानूयाजेष्वेव विभेक्तीः कुर्यात्। यथापूर्वमाज्यंभागौ स्यातांम्। एवं पंत्रीसंयाजाः॥६॥

तद्वैश्वान्रवंत्प्रजनंनवत्तर्म्पैतीतिं। तदांहुः। व्यृंद्धं वा एतत्। अनाग्नेयं वा एतित्क्रियत् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। अग्निं प्रथमं विभेक्तीनां यजति। अग्निम्त्तमं पंत्रीसंयाजानांम्। तेनांऽऽग्नेयम्। तेन् समृंद्धं क्रियत् इतिं॥७॥

अरु-थुतेव तद्भंवति सम्भृतसम्भार् इत्यांहरिच्छतिं पत्नीसंयाजा नवं च॥—————[१]

देवा वै यथादर्शं यज्ञानाहंरन्त। योंऽग्निष्टोमम्। य उक्थ्यम्। योऽतिरात्रम्। ते सहैव सर्वे वाज्येयंमपश्यन्। ते। अन्योंऽन्यस्मै नातिष्ठन्त। अहमनेनं यजा इतिं। तेंऽब्रुवन्। आजिमस्य धांवामेति॥८॥ तस्मिन्नाजिमधावन्। तं बृह्स्पित्रिरुदंजयत्। तेनायजतः। स स्वाराज्यमगच्छत्। तिमन्द्रौंऽब्रवीत्। माम्नेनं याज्येतिं। तेनेन्द्रमयाजयत्। सोऽग्रं देवतानां पर्येत्। अगच्छ्थस्वाराज्यम्। अतिष्ठन्तास्मै ज्यैष्ठ्याय॥९॥

य एवं विद्वान् वांजिपेयेन् यजंते। गच्छेति स्वारांज्यम्। अग्रर्थं समानानां पर्येति। तिष्ठंन्तेऽस्मै ज्यैष्ठ्यांय। स वा एष ब्राह्मणस्यं चैव रांजन्यंस्य च यज्ञः। तं वा एतं वांजिपेय इत्यांहुः। वाजाप्यो वा एषः। वाज्र् ह्येतेनं देवा ऐफ्सन्। सोमो वै वांजिपेयः। यो वै सोमं वाज्रपेयं वेदं॥१०॥

वाज्येवैनं पीत्वा भवति। आऽस्यं वाजी जांयते। अत्रं वै वाजपर्यः। य एवं वेदं। अत्यन्नम्। आऽस्यानादो जांयते। ब्रह्म वै वाजपर्यः। य एवं वेदं। अत्ति ब्रह्मणाऽन्नम्। आऽस्यं ब्रह्मा जांयते॥११॥

वाग्वै वार्जस्य प्रस्वः। य एवं वेदे। क्रोतिं वाचा वीर्यम्। ऐनं वाचा गंच्छति। अपिवतीं वाचं वदति। प्रजापितिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिशत्। स आत्मन्वीज्येयमधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यद्वांज्येयंः॥१२॥

अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं पृता उन्नितीः प्रायंच्छत्। ता वा पृता उन्नितयो व्याख्यांयन्ते। यृज्ञस्यं सर्वत्वायं। देवतानामनिर्भागाय। देवा वै ब्रह्मण्श्वान्नस्य च् शमंलुमपांघ्रन्। यद्वह्मणः शमंलुमासीत्। सा गाथां

नाराशङ्स्यंभवत्। यदन्नंस्य। सा सुरां॥१३॥

तस्माद्गायंतश्च मृत्तस्यं च न प्रंतिगृह्यम्ं। यत्प्रंतिगृह्णीयात्। शमंलं प्रतिगृह्णीयात्। सर्वा वा एतस्य वाचोऽवंरुद्धाः। यो वांजपेययाजी। या पृथिव्यां याऽग्रौ या रंथन्तरे। याऽन्तरिक्षे या वायौ या वांमदेव्ये। या दिवि याऽऽदित्ये या वृंह्ति। याऽपस् यौषंधीषु या वनस्पतिषु। तस्माद्धाजपेययाज्यार्त्विजीनः। सर्वा ह्यंस्य वाचो-ऽवंरुद्धाः॥१४॥

धाुबामेति ज्येष्ठ्याय वेदं ब्रह्मा जांयते वाजुपेयः सुराऽऽर्त्विजीन एकं च॥———— रि

देवा वै यद्न्यैग्रीहैं य्ज्ञस्य नावारंन्थत। तदंतिग्राह्यैरतिगृह्यावांरुन्थत। तदंतिग्राह्याणामितग्राह्यत्वम्। यदंतिग्राह्यां
गृह्यन्तें। यदेवान्यैग्रीहैं य्ज्ञस्य नावं रुन्थे। तदेव तैरंतिगृह्यावं
रुन्थे। पश्चं गृह्यन्ते। पाङ्कों युज्ञः। यावांनेव युज्ञः। तमास्वाऽवं
रुन्थे॥१५॥

सर्वं ऐन्द्रा भंवन्ति। एक्धैव यजंमान इन्द्रियं दंधित। सप्तदंश प्राजापत्या ग्रहां गृह्यन्ते। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजा-पंतेरास्यैं। एकंयुर्चा गृंह्णाति। एक्धैव यजंमाने वीर्यं दधाति। सोम्ग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं गृह्णाति। एतद्वे देवानां पर्ममन्नम्। यथ्सोमं:॥१६॥

पुतन्मंनुष्यांणाम्। यथ्सुरां। पुरमेणैवास्मां अन्नाद्येनावंर-मन्नाद्यमवं रुन्धे। सोम्ग्रहान्गृंह्णाति। ब्रह्मणो वा पुतत्तेजंः। यथ्सोमंः। ब्रह्मण एव तेजंसा तेजो यजंमाने दधाति। सुराग्रहान्गृह्णाति। अत्रस्य वा एतच्छमंलम्। यथ्सुरां॥१७॥

अन्नस्यैव शमंत्रेन् शमंतुं यजंमानादपंहिन्त। सोम्ग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं गृह्णाति। पुमान् वै सोमंः। स्त्री सुरा। तिन्मंथुनम्। िम्थुनमेवास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। आत्मानंमेव सोमग्रहैः स्पृणोति। जाया इ सुराग्रहैः। तस्माद्वाजपेयया ज्यंमुष्मिं ह्योके स्त्रिय इसम्भंवित। वाजपेयांभिजित इह्यंस्य॥१८॥

पूर्वे सोमग्रहा गृंह्यन्ते। अपंरे सुराग्रहाः। पुरोऽक्षश् सोमग्रहान्थ्सांदयति। पृश्चाद्क्षश् सुराग्रहान्। पाप्वस्यसस्य विधृंत्ये। एष वै यजंमानः। यथ्सोमः। अन्नश् सुरा। सोमग्रहाश्श्चं सुराग्रहाश्श्च व्यतिषजित। अन्नाद्येनैवेनं व्यतिषजित॥१९॥

सम्पृचंः स्थ सं मां भृद्रेणं पृङ्केत्यांह। अत्रुं वै भृद्रम्। अन्ना-द्यंनैवैन् सर्मृंजिति। अन्नस्य वा एतच्छमंलम्। यथ्सुराँ। पाप्मेव खलु वै शमंलम्। पाप्मना वा एनमेतच्छमंलेन् व्यतिषजिति। यथ्सोमग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं व्यतिषजिति। विपृचंः स्थ वि मां पाप्मनां पृङ्केत्यांह। पाप्मनैवैन् शमंलेन् व्यावंतियति॥२०॥

तस्मौद्वाजपेययाजी पूतो मेध्यों दक्षिण्यः। प्राङुद्वंवित सोमग्रहेः। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रत्यङ्ख्सुंराग्रहेः। इममेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रतिष्ठन्ति सोमग्रहेः। यावदेव स्त्यम्। तेनं सूयते। वाज्रसृद्धः सुराग्रहान् हंरन्ति। अनृंतेनैव विश्र् संश्मृंजिति। हिर्ण्यपात्रं मधौः पूर्णं दंदाति। मध्व्यो-ऽसानीतिं। एक्धा ब्रह्मण् उपं हरति। एक्धैव यर्जमान् आयुस्तेजों दधाति॥२१॥

आह्वाऽवं रुन्धे सोमः शर्मलं यथ्सुरा ह्यस्यैनं व्यतिषजति व्यावर्तयति सुजति चुत्वारि च॥————[3]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। नाग्निष्टोमो नोक्थ्यः। न षोंड्शी नातिरात्रः। अथ कस्माद्वाज्ञपेये सर्वे यज्ञकृतवोऽवंरुध्यन्त इति। पृशुभिरितिं ब्रूयात्। आग्नेयं पृशुमालंभते। अग्निष्टोममेव तेनावं रुन्धे। ऐन्द्राग्नेनोक्थ्यम्। ऐन्द्रेणं षोड्शिनः स्तोत्रम्। सारस्वत्याऽतिरात्रम्॥२२॥

मारुत्या बृंहृतः स्तोत्रम्। एतावंन्तो वै यंज्ञऋतवंः। तान्प्रशुभिरेवावं रुन्धे। आत्मानंमेव स्पृणोत्यग्निष्टोमेनं। प्राणापानावुक्थ्येन। वीर्यर् षोड्शिनंः स्तोत्रेणं। वार्चमितरात्रेणं। प्रजां बृंहृतः स्तोत्रेणं। इममेव लोकम्भिजंयत्यग्निष्टोमेनं। अन्तरिक्षमुक्थ्येन॥२३॥

सुवर्गं लोक १ षोंड्शिनंः स्तोत्रेणं। देवयानांनेव पृथ आरोहत्यतिरात्रेणं। नाक १ रोहति बृह्तः स्तोत्रेणं। तेजं एवाऽऽत्मन्धंत्त आग्नेयेनं पृशुनां। ओजो बलंमेन्द्राग्नेनं। इन्द्रियमैन्द्रेणं। वाच १ सारस्वत्या। उभावेव देवलोकं च मनुष्यलोकं चाभिजंयति मारुत्या वृशयां। सप्तदेश प्राजापत्यान्पृशूनालंभते। स्प्तदृशः प्रजापंतिः॥२४॥ प्रजापंतेरास्यैं। श्यामा एकंरूपा भवन्ति। एविमेंव हि प्रजापंतिः समृंद्धौ। तान्पर्यंग्निकृतानुथ्मृंजिति। मुरुतों यज्ञ-मंजिघा सन्य्रजापंतेः। तेभ्यं एतां मारुतीं वृशामालंभत। तयैवैनानशमयत्। मारुत्या प्रचर्य। एतान्थ्संज्ञंपयेत्। मुरुतं एव शंमयित्वा॥२५॥

पृतेः प्रचंरित। यज्ञस्याघांताय। पृक्धा व्पा जुंहोति। पृक्देवत्यां हि। पृते। अथां पृक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। नैवारेणं सप्तदंशशरावेणैतर्हि प्रचंरित। पृतत्पुरोडाशा ह्यंते। अथां पशूनामेव छिद्रमिषदधाति। सार्स्वत्योत्तमया प्रचंरित। वाग्वै सर्रस्वती। तस्मात्प्राणानां वागुंत्तमा। अथौं प्रजापंतावेव यज्ञं प्रतिष्ठापयित। प्रजापंतिर्हि वाक्। अपंत्रदती भवति। तस्मान्मनुष्याः सर्वां वाचं वदन्ति॥२६॥

अतिरात्रम्न्तरिक्षमुक्थ्येन प्रजापंतिः शमयित्वोत्तमया प्रचरित षद चं॥—————[४]

सावित्रं जुंहोति कर्मणः कर्मणः पुरस्तांत्। कस्तद्वेदेत्यांहुः। यद्वांज्येयस्य पूर्वं यदपंरमिति। सवितृप्रंसूत एव यथापूर्वं कर्माणि करोति। सवंनेसवने जुहोति। आक्रमणमेव तथ्सेतुं यजंमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्ये। वाचस्पतिर्वाचंम्द्य स्वंदाति न इत्यांह। वाग्वे देवानां पुराऽन्नंमासीत्। वाचंमेवास्मा अन्नई स्वदयति॥२७॥

इन्द्रंस्य वज्रोंऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरति विजिंत्यै।

वार्जस्य नु प्रंस्वे मातरं महीमित्यांह। यचैवेयम्। यचास्यामधि। तदेवावं रुन्धे। अथो तस्मिन्नेवोभयेऽभि-षिच्यते। अपस्वंन्तर्मृतंमपसु भेषजमित्यश्वांन्यल्पूलयति। अपसु वा अश्वंस्य तृतीयं प्रविष्टम्। तदंनुवेन्नववंप्लवते। यद्पसु पंल्पूलयंति॥२८॥

यदेवास्यापसु प्रविष्टम्। तदेवावं रुन्थे। बहु वा अश्वोऽमेध्यमुपंगच्छति। यदपसु पंल्पूलयंति। मेध्यांनेवै-नान्करोति। वायुर्वां त्वा मनुर्वा त्वेत्यांह। एता वा एतं देवता अग्रे अश्वंमयुञ्जन्। ताभिरेवैनान् युनक्ति। स्वस्योजित्यै। यजुषा युनक्ति व्यावृत्त्यै॥२९॥

अपाँत्रपादाशुहेम्त्रिति सम्माँष्टिं। मेध्यांनेवैनाँन्करोति। अथो स्तौत्येवैनांनाजि संरिष्यतः। विष्णुक्रमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ ह्लोकान् भिजंयति। वैश्वदेवो वै रथंः। अङ्कौ न्यङ्काव् भितो रथं यावित्यांह। या एव देवता रथे प्रविष्टाः। ताभ्यं एव नमंस्करोति। आत्मनोऽनाँत्ये। अशंमरथं भावुकोऽस्य रथो भवति। य एवं वेदं॥३०॥

देवस्याह १ संवितुः प्रंसवे बृह्स्पतिना वाज्जिता वाजं जेषिमत्याह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वाज्मु अयित। देवस्याह १ संवितुः प्रंसवे बृह्स्पतिना वाज्जिता वर्षिष्ठं नाक १ रुहेयिमत्यांह। सवितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वर्षिष्ठं नाक रे रोहति। चात्वांले रथच्क्रं निर्मित र रोहति। अतो वा अङ्गिरस उत्तमाः स्वां लोकमायन्। साक्षादेव यजमानः सुव्गं लोकमेति। आवेष्टयति। वज्रो वै रथः। वज्रेणैव दिशोऽभिजंयति॥३१॥

वाजिना समर्म गायते। अत्रं वै वार्जः। अत्रं मेवावं रुन्धे। वाचो वर्ष्म देवेभ्योऽपाँकामत्। तद्वन्स्पतीन्प्राविंशत्। सैषा वाग्वन्स्पतिषु वदति। या दुन्दुभौ। तस्माँद्दुन्दुभिः सर्वा वाचो-ऽतिंवदति। दुन्दुभीन्थ्समाघ्नंन्ति। पुरमा वा पृषा वाक्॥३२॥

या दुन्दुभौ। प्रमयैव वाचाऽवरां वाचमंव रुन्धे। अथो वाच एव वर्ष्म् यजमानोऽवं रुन्धे। इन्द्रांय वाचं वद्तेन्द्रं वाजं जापयतेन्द्रो वाजमजयिदित्यांह। एष वा एतर्हीन्द्रंः। यो यजते। यजमान एव वाजमुज्जयिति। सप्तदंश प्रव्याधानाजिं धांवन्ति। सप्तद्शक्ष स्तोत्रं भंवति। सप्तदंशसप्तदश दीयन्ते॥३३॥

स्प्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापतेरास्यै। अवांऽसि सप्तिरसि वाज्यंसीत्यांह। अग्निर्वा अर्वां। वायुः सप्तिः। आदित्यो वाजी। एताभिरेवास्मै देवतांभिर्देवर्थं युनिक्तः। प्रष्टिवाहिनं युनिक्तः। प्रष्टिवाही वै देवरथः। देवरथमेवास्मै युनिक्तः॥३४॥

वार्जिनो वार्जं धावत काष्ठां गच्छतेत्यांह। सुवर्गो वे लोकः काष्ठां। सुवर्गमेव लोकं यन्ति। सुवर्गं वा एते लोकं यंन्ति। य आजिं धावंन्ति। प्राश्चों धावन्ति। प्राङिंव हि सुंवर्गो लोकः। चृत्सृभिरनुं मन्नयते। चृत्वारि छन्दा स्सि। छन्दोभिरवैनान्थ्सुवर्गं लोकं गंमयति॥३५॥

प्र वा पृतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। य आजिं धावंन्ति। उदं च आवंर्तन्ते। अस्मादेव तेनं लोकान्नयंन्ति। रथविमोचनीयं जुहोति प्रतिष्ठित्ये। आ मा वार्जस्य प्रस्वो जंगम्यादित्यांह। अन्नं वे वार्जः। अन्नमेवावं रुन्धे। यथालोकं वा एत उन्नयन्ति। य आजिं धावंन्ति॥३६॥

कृष्णलं कृष्णलं वाज्यसृद्धः प्रयंच्छति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तं पंरिक्रीयावं रुन्धे। एक्धा ब्रह्मण् उपंहरति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयुः। ता बृहस्पतिरुदंजयत्। स नीवारान्निरंवृणीत। तन्नीवारांणां नीवार्त्वम्। नैवारश्चरुभंवति॥३७॥

पुतद्वै देवानां पर्ममन्नम्। यन्नीवाराः। प्रमेणेवास्मां अन्नाद्येनावंरम्नाद्यमवं रुन्धे। सप्तदंशशरावो भवति। स्प्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्ये। क्षीरे भंवति। रुचमेवास्मिन्दधाति। सपिष्वान्भवति मध्यत्वायं। बार्हस्पत्यो वा पृष देवतंया॥३८॥

यो वांज्पेयेंन् यजंते। बार्हस्पत्य एष च्रः।

अश्वान्थ्मिरिष्यृतः सम्भुषश्चावं घ्रापयति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तमेवावं रुन्धे। अजींजिपत वनस्पतय इन्द्रं वाजं विमुच्यध्वमितिं दुन्दुभीन् विमुश्चिति। यमेव ते वाजं लोकिमिन्द्रियं दुन्दुभयं उज्जयंन्ति। तमेवावं रुन्धे॥३९॥ अभिजयित् वा पृषा वार्यायन्तेऽस्मे युनिक गमयित् य आजि धार्वित भवित देवतंयाऽष्टी चं॥——[६]

तार्प्यं यजंमानं परिधापयति। यज्ञो वै तार्प्यम्। यज्ञेनैवैन् समर्धयति। दुर्भमयं परिधापयति। प्वित्रं वै दुर्भाः। पुनात्येवैनम्। वाजं वा एषोऽवंरुरुसते। यो वांज्पेयेन् यजंते। ओषंधयः खलु वै वाजंः। यद्दर्भमयं परिधापयंति॥४०॥

वाज्स्यावंरुख्यै। जाय एिंह सुवो रोहावेत्यांह। पिलंया एवेष यज्ञस्यांन्वारम्भोऽनंवच्छित्त्यै। सप्तदंशारिक्षयूंपो भवति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। तूप्रश्चतुंरिश्नर्भवति। गौधूमं चुषालम्। न वा एते ब्रीहयो न यवाः। यद्गोधूमाः॥४१॥

पुविमेव हि प्रजापंतिः समृद्धौ। अथों अमुमेवास्मैं लोकमन्नवन्तं करोति। वासोभिर्वेष्टयति। एष वै यर्जमानः। यद्यूपंः। सर्वेदेव्त्यं वासंः। सर्वाभिर्वेनं देवतांभिः समर्धयति। अथों आक्रमणमेव तथ्सेतुं यर्जमानः कुरुते। सुव्रगस्यं लोकस्य समष्ट्यै। द्वादंश वाजप्रस्वीयांनि जुहोति॥४२॥

द्वार्दश् मासाः संवथ्यरः। संवथ्यरमेव प्रीणाति। अथो संवथ्यरमेवास्मा उपदर्धाति। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ठ्ये। द्शिभः कल्पै रोहित। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यथास्थानं कल्पियत्वा। सुवर्गं लोकमेति। एतावृद्वे पुरुषस्य स्वम्॥४३॥

यावंत्र्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तेनं सह सुंवर्गं लोकमेति। सुवंदेवा अगृन्मेत्याह। सुवर्गमेव लोकमेति। अमृतां अभूमेत्याह। अमृतिमिव हि सुंवर्गो लोकः। प्रजापेतेः प्रजा अभूमेत्याह। प्राजापत्यो वा अयं लोकः। अस्मादेव तेनं लोकान्नेतिं॥४४॥

सम्हं प्रजया सं मया प्रजेत्यांह। आमेवेतामा शास्ते। आसपुटैर्घन्त। अत्रं वा इयम्। अन्नाद्येनैवेन् समर्धयन्ति। ऊषैर्घन्ति। एते हि साक्षादन्नम्। यदूषाः। साक्षादेवेनंमन्नाद्येन् समर्धयन्ति। पुरस्तात्प्रत्यश्चें घ्रन्ति॥४५॥

अमृतं एव सुंवर्गे लोके प्रतिं तिष्ठति। श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। पुष्ठ्ये वा एतद्रूपम्। यद्जा। त्रिः संवथ्सरस्यान्यान्पशून्परि प्रजायते। बुस्ताजिनम्ध्यवं रोहति। पुष्ट्यांमेव प्रजनेने प्रतिं

तिष्ठति॥४७॥

स्प्तान्नहोमाञ्जेहोति। स्प्त वा अन्नानि। यावन्त्येवान्नानि। तान्येवावं रुन्थे। स्प्त ग्राम्या ओषंधयः। स्प्तार्ण्याः। उभयीषामवंरुद्धे। अन्नस्यान्नस्य जुहोति। अन्नस्यान्नस्या-वरुद्धे। यद्वांजपेययाज्यनंवरुद्धस्याष्ट्रजीयात्॥४८॥

अवंरुद्धेन् व्यृंद्धोत। सर्वस्य समवदायं जुहोति। अनंवरुद्धस्यावंरुद्धौ। औदुंम्बरेण स्रुवेणं जुहोति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धौ। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंस्व इत्यांह। स्वितृप्रंसूत एवेनं ब्रह्मणा देवतांभिर्भिषिश्चति। अन्नस्यान्नस्याभिषिश्चति। अन्नस्यान्नस्यावंरुद्धौ॥४९॥

पुरस्ताँत्प्रत्यश्चंम्भिषिश्चित। पुरस्ताद्धि प्रंतीचीन्मन्नंमृद्यतें। शीर्षतोऽभिषिश्चित। शीर्षतो ह्यनंमृद्यतें। आ मुखांद्न्ववं-स्नावयित। मुख्त एवास्मां अन्नाद्यं दधाति। अग्नेस्त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। एष वा अग्नेः स्वः। तेनैवैनंम्भिषिश्चिति। इन्द्रंस्य त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामी-त्यांह॥५०॥

ड्रन्द्रियमेवास्मिन्नेतेनं दधाति। बृह्स्पतेंस्त्वा साम्रांज्येनाभि-षिश्चामीत्याह। ब्रह्म वे देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवैनंमभि-षिश्चति। सोमग्रहाइश्चांवदानीयानि चर्त्विग्भ्य उपहरन्ति। अमुमेव तैर्लोकमन्नंवन्तं करोति। सुराग्रहाइश्चांनवदानीयानिं च वाज्रसृद्धः। इममेव तैर्लोकमन्नवन्तं करोति। अथो उभयीष्वेवाभिषिंच्यते। विमाथं कुर्वते वाज्रसृतः॥५१॥

ड्रन्द्रियस्यावंरुद्धै। अनिरुक्ताभिः प्रातः सव्ने स्तुंवते। अनिरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्यै। वाजंवतीभिर्माध्यं दिने। अत्रं वै वाजंः। अत्रंमेवावं रुन्धे। शिपिविष्ट-वंतीभिस्तृतीयसव्ने। युज्ञो वै विष्णुंः। पृशवः शिपिः। युज्ञ एव पृशुषु प्रतिं तिष्ठति। बृहदन्त्यं भवति। अन्तंमेवैन ई श्रियै गंमयति॥५२॥

अ्ष्रजीयादत्रंस्यात्रस्यावंरुद्धाः इन्द्रंस्य त्वा साम्राज्येनाभिषिश्चामीत्यांह वाजुसृतः शिपिस्रीणि च॥————[८]

नृषदं त्वेत्यांह। प्रजा वै नॄन्। प्रजानांमेवेतेनं सूयते। द्रुषद्मित्यांह। वनस्पतंयो वै द्रु। वनस्पतींनामेवेतेनं सूयते। भुवनसद्मित्यांह। यदा वै वसींयान्भवंति। भुवनमगृन्निति वै तमांहुः। भुवनमेवेतेनं गच्छति॥५३॥

अपसुषदं त्वा घृत्सद्मित्यांह। अपामेवैतेनं घृतस्यं सूयते। व्योमसद्मित्यांह। यदा वै वसीया-भवंति। व्योमागृन्निति वै तमांहुः। व्योमैवैतेनं गच्छति। पृथिविषदं त्वाऽन्तिरक्षसद्मित्यांह। एषामेवैतेनं लोकानारं सूयते। तस्मांद्वाजपेययाजी न कश्चन प्रत्यवंरोहति। अपीव हि देवतांनार सूयतें॥५४॥

नाकुसद्मित्यांह। यदा वै वसीयान्भवंति। नाकंमगन्निति वै तमाहुः। नाकंमेवैतेनं गच्छति। ये ग्रहाः पश्चज्नीना इत्याह। पश्चजनानांमेवेतेनं सूयते। अपार रस्मुद्वेयस्मि-त्यांह। अपामेवेतेन् रसंस्य सूयते। सूर्यरिश्मर स्माभृतमित्यांह सशुऋत्वायं॥५५॥

इन्द्रों वृत्र हत्वा। असुरान्पराभाव्यं। सोऽमावास्यां प्रत्यागंच्छत्। ते पितरंः पूर्वेद्युरागंच्छन्। पितृन् यज्ञां-ऽगच्छत्। तं देवाः पुनरयाचन्त। तमेंभ्यो न पुनरददुः। तेंऽब्रुवन्वरं वृणामहै। अथं वः पुनर्दास्यामः। अस्मभ्यंमेव पूर्वेद्यः क्रियाता इति॥५६॥

तमेंभ्यः पुनंरददुः। तस्मौत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः क्रियते। यत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः क्रोति। पितृभ्यं पृव तद्यज्ञं निष्क्रीय यजमानः प्रतन्ते। सोमाय पितृपीताय स्वधा नम् इत्याह। पितुरेवाधि सोमपीथमवं रुन्धे। न हि पिता प्रमीयमाण आहैष सोमपीथ इति। इन्द्रियं वै सोमपीथः। इन्द्रियमेव सोमपीथमवं रुन्धे। तेनैन्द्रियेणं द्वितीयां जायामभ्यंश्जुते॥५७॥

पृतद्वे ब्राह्मणं पुरा वाजवश्रवसा विदामंत्रन्। तस्मात्ते द्वेद्वे जाये अभ्याक्षत। य पृवं वेदे। अभि द्वितीयां जायामंश्ज्ते। अग्नये कव्यवाहंनाय स्वधा नम् इत्याह। य पृव पितृणाम्ग्निः। तं प्रीणाति। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५८॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। तूष्णीं मेक्षणमादंधाति। अस्तिं वा हि षष्ठ ऋतुर्न वाँ। देवान् वे पितॄन्प्रीतान्। मृनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षट्थ्सम्पद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥५९॥

ऋतवः खलु वै देवाः पितरंः। ऋतूनेव देवान्पितॄन्प्रीणाति। तान्प्रीतान्। मनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। सकृदाच्छित्रं बर्हिर्भवति। सकृदिव हि पितरंः। त्रिर्निदंधाति। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। पराङावंति॥६०॥

ह्रीका हि पितरंः। ओष्मणौं व्यावृत् उपाँस्ते। ऊष्मभांगा हि पितरंः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्राश्या (३) न्न प्राश्या (३) मितिं। यत्प्रांश्ञीयात्। जन्यमन्नमद्यात्। प्रमायुंकः स्यात्। यन्न प्रांश्ञीयात्। अहंविः स्यात्॥६१॥

पितृभ्य आवृंश्च्येत। अवघ्रेयंमेव। तन्नेव प्राशितं नेवाप्रांशितम्। वीरं वा वै पितर्रः प्रयन्तो हरन्ति। वीरं वां ददति। दशां छिनत्ति। हर्रणभागा हि पितरः। पितृनेव निरवंदयते। उत्तर् आयुंषि लोमं छिन्दीत। पितृणाङ् ह्यंतर्हि नेदीयः॥६२॥

नमंस्करोति। नुमुस्कारो हि पिंतृणाम्। नमों वः पितरो रसाय। नमों वः पितरः शुष्माय। नमों वः पितरो जीवाय। नमों वः पितरः स्वधायै। नमों वः पितरो मुन्यवै। नमों वः पितरो घोराय। पितरो नमों वः। य पुतस्मिं ह्योके स्थ॥६३॥ युष्मा इस्ते ऽन्। यें ऽस्मिँ हो के। मां ते ऽन्। य एतस्मिँ हो के स्थ। यूयं तेषां विसेष्ठा भूयास्त। यें ऽस्मिँ हो के। अहं तेषां विसेष्ठा भूयास्त। यें ऽस्मिँ हो के। अहं तेषां विसेष्ठा भूयास्ति। विसेष्ठः समानानां भवति। य एवं विद्वान्यितृभ्यः करोति। एष वै मनुष्याणां युज्ञः॥६४॥

देवानां वा इतंरे युज्ञाः। तेन वा एतिपंतृलोके चंरति। यित्पृत्भ्यंः करोति। स ईंश्वरः प्रमेतोः। प्राजापृत्ययुर्चा पुनरेति। युज्ञो वे प्रजापंतिः। युज्ञेनेव सह पुनरेति। न प्रमायुंको भवति। पितृलोके वा एतद्यजंमानश्चरति। यित्पृत्भ्यंः करोति। स ईंश्वर आर्तिमार्तौः। प्रजापंतिस्त्वावेनं तत् उन्नेतुमर्हतीत्याहुः। यत्प्राजापृत्ययुर्चा पुनरेति। प्रजापंतिरेवेनं तत् उन्नयित। नार्तिमार्च्छति यजमानः॥६५॥ इत्यंत्रको पद्यने पद्यने

देवासुरा अग्नीषोमंयोर्देवा वै यथादर्शं देवा वै यद्न्येग्नीहैंब्र्ह्मवादिनों नाग्निष्टोमों न सांवित्रं देवस्याहं तार्प्यंश् सप्तान्नेहोमान्नृषदं त्वेन्द्रीं वृत्रश् हुत्वा दर्शा॥१०॥ देवासुरा वाज्येवेनं तस्माद्वाजपेययाजी देवस्याहं वाजस्यावंश्रद्धा इन्द्रियमेवास्मिन् ह्लीका हि पितरः पश्चंषष्टिः॥६५॥ देवासुरा यर्जमानः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

उभये वा एते प्रजापंतेरध्यंसृज्यन्त। देवाश्चासुंराश्च। तान्न व्यंजानात्। इमें ऽन्य इमें ऽन्य इति। स देवान् १ शूनंकरोत्। तान्भ्यंषुणोत्। तान्पवित्रंणापुनात्। तान्परस्तांत्पवित्रंस्य व्यंगृह्णात्। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रहत्वम्॥१॥

देवता वा एता यर्जमानस्य गृहे गृंह्यन्ते। यद्ग्रहाँ। विदुर्रनं देवाः। यस्यैवं विदुर्षं एते ग्रहां गृह्यन्तें। एषा वै सोम्स्याऽऽहुंतिः। यदुंपार्शः। सोमेन देवाङ्स्तंपयाणीति खलु वै सोमेन यजते। यदुंपार्शुं जुहोतिं। सोमेनैव तद्देवाङ्स्तंपयति। यद्गहाँ जुहोतिं॥२॥

देवा एव तद्देवान्गंच्छन्ति। यर्चम्सां जुहोतिं। तेनैवानुंरूपेण यर्जमानः सुवृगं लोकमेति। किं न्वेतदग्रं आसीदित्यांहुः। यत्पात्राणीति। इयं वा एतदग्रं आसीत्। मृन्मयांनि वा एतान्यांसन्। तैर्देवा न व्यावृतंमगच्छन्। त एतानिं दारुमयांणि पात्रांण्यपश्यन्। तान्यंकुर्वत॥३॥

तैर्वे ते व्यावृतंमगच्छन्। यद्दांरुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। व्यावृतंमेव तैर्यजमानो गच्छति। यानि दारुमयांणि पात्रांणि भवन्ति। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयति। यानि मृन्मयांनि। इममेव तैर्लोकम्भिजंयति। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। काश्चतंस्रः स्थालीर्वायव्याः सोम्ग्रहंणीरिति। देवा वै पृश्ञिंमदुह्नन्॥४॥ तस्यां एते स्तनां आसन्। इयं वै पृश्जिः। तामांदित्या आंदित्यस्थाल्या चतुंष्पदः पृशूनंदुह्नन्। यदांदित्यस्थाली भवंति। चतुंष्पद एव तयां पृशून् यजंमान इमां दुहे। तामिन्द्रं उक्थ्यस्थाल्येन्द्रियमंदुहत्। यदुंक्थ्यस्थाली भवंति। इन्द्रियमेव तया यजंमान इमां दुहे। तां विश्वं देवा आंग्रयणस्थाल्योर्जमदुहन्। यदांग्रयणस्थाली भवंति॥५॥

ऊर्जमेव तया यजमान इमां दुहे। तां मंनुष्यां ध्रुवस्थाल्याऽऽयुंरदुह्नन्। यद्धुंवस्थाली भवंति। आयुंरेव तया यजमान इमां दुहे। स्थाल्या गृह्णातिं। वायव्येन जुहोति। तस्मांदन्येन पात्रेण पृशून्दुहन्तिं। अन्येन प्रतिंगृह्णन्ति। अथौं व्यावृतमेव तद्यजमानो गच्छति॥६॥

युव श्रामंमिश्वना। नर्मुचावासुरे सर्चा। विपिपाना शुंभस्पती। इन्द्रं कर्म स्वावतम्। पुत्रिमंव पितरांवश्विनोभा। इन्द्रावंतं कर्मणा दृश्सनांभिः। यथ्सुरामं व्यपिंबः शचींभिः। सरंस्वती त्वा मघवन्नभीष्णात्। अहाँव्यग्ने ह्विरास्येंते। सुचीवं घृतं चुमू इंव सोमंः॥७॥

वाज्ञसिनि रियमस्मे सुवीरम्। प्रशस्तं धेहि यशसं बृहन्तम्। यस्मिन्नश्वांस ऋषभासं उक्षणः। वशा मेषा अंवसृष्टास् आहुंताः। कीलालुपे सोमपृष्ठाय वेधसे। हृदा मृतिं जनय चारुंमुग्नये। नाना हि वां देवहिंतुर् सदों मितम्। मा स॰सृंक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हि॰सीः स्वां योनिमाविशन्॥८॥

यदत्रं शिष्टः रसिनंः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिंबच्छचींभिः। अहं तदंस्य मनंसा शिवेनं। सोम् राजानिमृह भंक्षयामि। द्वे स्नुती अंश्रणवं पितृणाम्। अहं देवानांमुत मर्त्यांनाम्। ताभ्यांमिदं विश्वं भुवंन् समेति। अन्तरा पूर्वमपंरं च केतुम्। यस्ते देव वरुण गायुत्रछंन्दाः पाशः। तं तं पुतेनावं यजे॥९॥

यस्ते देव वरुण त्रिष्टुप्छेन्दाः पार्शः। तं ते पृतेनावं यजे। यस्ते देव वरुण जगतीछन्दाः पार्शः। तं ते पृतेनावं यजे। सोमो वा पृतस्यं राज्यमादत्ते। यो राजा सन्नाज्यो वा सोमेन यजेते। देवसुवामेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। पृतावंन्तो वे देवाना १ स्वाः। त पृवास्मे स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एनं पृनः सुवन्ते राज्यायं। देवसू राजां भवति॥१०॥

उदंस्थाद्देव्यदितिर्विश्वरूपी। आयुर्यज्ञपंतावधात्। इन्द्रांय कृण्वती भागम्। मित्राय वर्रुणाय च। इयं वा अग्निहोत्री। इयं वा एतस्य निषीदति। यस्याग्निहोत्री निषीदिति। तामुत्थापयेत्। उदंस्थाद्देव्यदितिरिति। इयं वै देव्यदितिः॥११॥

ड्मामेवास्मा उत्थापयति। आयुर्येज्ञपंतावधादित्यांह। आयुरेवास्मिन्दधाति। इन्द्रांय कृण्वती भागं मित्राय वर्रुणाय चेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अवंर्तिं वा एषैतस्य पाप्मानं प्रतिख्याय निषीदति। यस्याँग्निहोत्र्युपंसृष्टा निषीदंति। तां दुग्ध्वा ब्राँह्मणायं दद्यात्। यस्यात्रं नाद्यात्। अवंर्तिमेवास्मिन्याप्मानं प्रतिमुश्चति॥१२॥

दुग्धा दंदाति। न ह्यदंष्टा दक्षिणा दीयतें। पृथिवीं वा एतस्य पयः प्रविंशति। यस्यांग्निहोत्रं दुह्यमांनु स्कन्दंति। यद्द्य दुग्धं पृथिवीमसंक्त। यदोषंधीरप्यसंर्द्यदापंः। पयो गृहेषु पयो अघ्नियासं। पयो वृथ्सेषु पयो अस्तु तन्मयीत्यांह। पयं पुवाऽऽत्मन्गृहेषुं पृशुषुं धत्ते। अप उपंसृजति॥१३॥

अद्भिरेवैनंदाप्नोति। यो वै य्ज्ञस्यार्ते नानांति स् सर्मुजति। उभे वै ते तर्ह्यार्च्छंतः। आर्च्छंति खलु वा एतदंग्निहोत्रम्। यद्दुह्ममान् स्कन्दंति। यदंभिदुह्यात्। आर्ते नानांतं य्ज्ञस्य सर्म्जेत्। तदेव यादकीदक्रं होत्व्यम्। अथान्यां दुग्धा पुनंरहोत्व्यम्। अनांतिनेवार्तं य्ज्ञस्य निष्कंरोति॥१४॥

यद्युद्वंतस्य स्कन्देंत्। यत्ततोऽहुंत्वा पुनंरेयात्। यृज्ञं विच्छिंन्द्यात्। यत्र स्कन्देंत्। तन्निषद्य पुनंर्गृह्णीयात्। यत्रैव स्कन्दंति। ततं पुवैनृत्पुनंर्गृह्णाति। तदेव यादक्षीदक्षं होत्व्यम्। अथान्यां दुग्ध्वा पुनंर्होत्व्यम्। अनौर्तेनैवार्तं यज्ञस्य निष्कंरोति॥१५॥

वि वा पुतस्यं युज्ञशिखंद्यते। यस्यांग्निहोत्रेंऽधिश्रिंते श्वा-ऽन्तरा धावंति। रुद्रः खलु वा पुषः। यद्ग्निः। यद्गामंन्वत्या वर्तयेत्। रुद्रायं पृश्नपि दध्यात्। अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यद्पोंऽन्वतिषिञ्चेत्। अनाद्यमुग्नेरापः। अनाद्यमाभ्यामिषं दध्यात्। गर्हंपत्याद्भरमादायं। इदं विष्णुर्विचंक्रम् इतिं वैष्णुव्यर्चाऽऽहंवनीयाद्ध्वर्सयृत्रुद्रंवेत्। यृज्ञो वै विष्णुः। यज्ञेनैव यज्ञर सन्तंनोति। भरमंना पृदमिषं वपति शान्त्याः॥१६॥

वै देव्यदितिर्मुश्रति सृजति करोति करोत्याभ्यामपि दथ्यात् पश्चं च॥______[3]

नि वा पुतस्यांऽऽहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभि निम्नोचंति। दुर्भेण हिरंण्यं प्रबद्धं पुरस्तांद्धरेत्। अथाग्निम्। अथांग्निहोत्रम्। यद्धिरंण्यं पुरस्ताद्धरंति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवेनं पश्यन्नुद्धंरति। यद्ग्निं पूर्व्ध् हर्त्यथांग्निहोत्रम्॥१७॥

भागधेयेंनैवैनं प्रणंयति। ब्राह्मण आंर्षेय उद्धेरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः। सर्वाभिरेवैनं देवतांभिरुद्धंरति। अग्निहोत्रम्ंप्साद्यातिमंतोरासीत। व्रतमेव हृतमनं प्रियते। अन्तं वा एष आत्मनां गच्छति। यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनंद्धृत्र सूर्योऽभि निम्रोचंति॥१८॥

पुनंः समन्यं जुहोति। अन्तेनैवान्तं यज्ञस्य निष्कंरोति। वर्रुणो वा एतस्यं यज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभि निम्रोचंति। वारुणं चरुं निवंपेत्। तेनैव यज्ञं निष्क्रीणीते। नि वा एतस्यांऽऽहव्नीयो गार्हंपत्यं कामयते। नि गार्हंपत्य आहव्नीयम्। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्युंदेतिं। चतुर्गृहीतमाज्यंं पुरस्तांद्धरेत्॥१९॥

अथाग्निम्। अथाँग्निहोत्रम्। यदाज्यं पुरस्ताद्धरंति। एतद्वा अग्नेः प्रियं धार्म। यदाज्यम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समर्धयति। यद्ग्निं पूर्वे हर्त्यथाँग्निहोत्रम्। भागधेयेनैवैनं प्रणयति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः॥२०॥

सर्वाभिरेवैनं देवतांभिरुद्धंरित। परांची वा एतस्मैं व्युच्छन्ती व्युच्छिति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्युंदेति। उषाः केतुनां जुषताम्। यज्ञं देवेभिरिन्वितम्। देवेभ्यो मधुंमत्तम् स्वाहेतिं प्रत्यिङ्कषद्याज्येन जुहुयात्। प्रतीचीमेवास्मै विवासयित। अग्निहोत्रमुंपसाद्यातिमितोरासीत। व्रतमेव हृतमनुं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनों गच्छिति॥२१॥

यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभ्युंदेतिं। पुनंः समन्यं जुहोति। अन्तेनैवान्तं यज्ञस्य निष्कंरोति। मित्रो वा एतस्यं यज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभ्युंदेतिं। मैत्रं च्रुं निर्वपेत्। तेनैव यज्ञं निष्क्रीणीते। यस्यांऽऽहवनीयेऽनुंद्धाते गार्हंपत्य उद्घार्यंत्॥२२॥

यदांहवनीयमनुंद्वाप्य गार्हंपत्यं मन्थैत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। यद्वै युज्ञस्यं वास्तुव्यं क्रियतें। तदनुं रुद्रोऽवंचरति। यत्पूर्वमन्ववस्येत्। वास्तव्यंमग्निमुपांसीत। रुद्रौऽस्य पृशून्यातुंकः स्यात्। आहुवनीयंमुद्वाप्यं। गार्हंपत्यं मन्थेत्॥२३॥

इतः प्रथमं जंज्ञे अग्निः। स्वाद्योनेरिधं जातवेदाः। स गांयित्रिया त्रिष्टुभा जगंत्या। देवेभ्यों हृव्यं वहतु प्रजानन्नितिं। छन्दोभिरेवैन्ड् स्वाद्योनेः प्रजनयित। गार्हंपत्यं मन्थित। गार्हंपत्यं वा अन्वाहिताग्नेः पृशव उपं तिष्ठन्ते। स यदुद्वायंति। तदनुं पृशवोऽपं क्रामन्ति। इषे रुय्यै रंमस्व॥२४॥

सहंसे द्युम्नायं। ऊर्जेऽपत्यायेत्यांह। प्रावो वै र्यिः। प्रात्नेवास्में रमयित। सार्स्वतौ त्वोथ्सौ सिमंन्धातामित्यांह। ऋख्सामे वै सारस्वतावुथ्सौं। ऋख्सामाभ्यांमेवैन् समिन्धे। सम्राडंसि विराड्सीत्यांह। रथन्त्रं वे सम्राट। बृहद्विराट॥२५॥

ताभ्यांमेवेन् सिन्धे। वज्रो वे चुक्रम्। वज्रो वा एतस्यं यज्ञं विच्छिनत्ति। यस्यानों वा रथों वाऽन्त्रराऽग्नी याति। आहुवनीयंमुद्धाप्यं। गार्हंपत्यादुद्धेरेत्। यदंग्ने पूर्वं प्रभृतं पदश् हि तैं। सूर्यस्य र्ष्मीनन्वांतृतानं। तत्रं रियष्ठामनु सं भेरैतम्। सं नंः सृज सुमत्या वाजंवत्येतिं॥२६॥

पूर्वेणैवास्यं युज्ञेनं युज्ञमनु सन्तंनोति। त्वमंग्ने सुप्रथां असीत्याह। अग्निः सर्वा देवताः। देवतांभिरेव युज्ञः सन्तंनोति। अग्नयं पिथकृतं पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपेत्। अग्निमेव पंथिकृत् स्वेनं भाग्धेयेनोपंधावति। स पुवैनं यज्ञियं पन्थामपि नयति। अनुङ्वान्दक्षिणा। वृही ह्येष समृद्धे॥२७॥

यस्यं प्रातः सवने सोमोंऽतिरिच्यंते। माध्यं दिन् सवंनं कामयंमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौधंयति मुरुतामिति धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। हिनस्ति वै सन्ध्यधीतम्। सन्धीव खलु वा एतत्। यथ्सवंनस्यातिरिच्यंते। यद्धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। सन्धेः शान्त्यै। गायुत्र सामं भवति पश्चद्शः स्तोमंः। तेनैव प्रांतः सवनान्नयंन्ति॥२८॥

म्रुत्वंतीषु कुर्वन्ति। तेनैव माध्यं दिनाथ्सवंनान्नयंन्ति। होतुंश्चम्समनून्नयन्ते। होताऽनुं शश्सित। मध्यत एव यज्ञश् समादंधाति। यस्य माध्यं दिने सवंने सोमोंऽति-रिच्यंते। आदित्यं तृंतीयसवनं कामयमानोऽभ्यतिंरिच्यते। गौरिवीतश् सामं भवति। अतिंरिक्तं व गौरिवीतम्। अतिंरिक्तं यथ्सवंनस्यातिरिच्यंते॥२९॥

अतिंरिक्तस्य शान्त्यैं। बण्महा असि सूर्येतिं कुर्वन्ति। यस्यैवाऽऽदित्यस्य सर्वनस्य कामेनातिरिच्यंते। तेनैवैनं कामेन समर्धयन्ति। गौरिवीत साम भवति। तेनैव मार्ध्यं दिनाथ्सवंनान्नयंन्ति। सप्तद्शः स्तोमंः। तेनैव तृतीयसवनान्नयंन्ति। होतुंश्चमसमनून्नयन्ते। होताऽनुं शश्सित॥३०॥

मध्यत एव यज्ञ समादंधाति। यस्यं तृतीयसवने सोमोऽित्रिच्यंत। उक्थं कुर्वीत। यस्योक्थ्यंऽित्रिच्यंत। अतिरात्रं कुर्वीत। यस्यांतिरात्रंऽित्रिच्यंत। तत्त्वे दुंष्प्रज्ञानम्। यजमानं वा एतत्प्रश्वं आसाह्यंयन्ति। बृहथ्सामं भवित। बृहद्वा इमाँ ह्रोकान्दांधार। बार्हंताः प्रश्वंः। बृह्तैवास्में प्रशून्दांधार। शिपिविष्टवंतीषु कुर्वन्ति। शिपिविष्टो वे देवानां पुष्टम्। पुष्ट्येवेन् समर्धयन्ति। होतुंश्चमसमनूत्रंयन्ते। होताऽनुंश स्सिति। मध्यत एव यज्ञ समादंधाति॥३१॥ वित्रे सक्त्रस्ति। स्थार्षे वार्षे वे स्वार्षे सक्त्रस्ति। स्थार्षे वे स्वार्षे स्वार्षे वार्षे वे स्वार्षे स्वार्षे वार्षे वे स्वार्षे वार्षे वे स्वार्षे वार्षे वार्षे वे स्वार्षे वे स्वार्षे वार्षे वे स्वार्षे वार्षे वार्षे वे स्वार्षे वार्षे वार्षे वार्षे वार्षे वे स्वार्षे वार्षे वार्षे वार्षे वार्षे वे वित्रे स्वार्षे वार्षे वार्षे वार्षे वार्षे वे वार्षे वार्षे वार्षे वार्षे वार्षे वार्षे वे वार्षे वार

एकैंको वै जनतांयामिन्द्रंः। एकं वा प्ताविन्द्रंम्भि सश्सुंनुतः। यौ द्वौ सश्सुनुतः। प्रजापंतिर्वा एष वितांयते। यद्यज्ञः। तस्य ग्रावांणो दन्ताः। अन्यत्रं वा एते सश्सुन्वतोर्निर्वप्सति। पूर्वेणोप्सृत्यां देवता इत्यांहुः। पूर्वोप्सृतस्य वै श्रेयांन्भवति। एतिंवन्त्याज्यांनि भवन्त्यभिजित्यै॥३२॥

म्रुत्वंतीः प्रतिपदंः। म्रुतो वै देवानामपंराजितमायतंनम्। देवानांमेवापंराजित आयतंने यतते। उभे बृंहद्रथन्तरे भंवतः। इयं वाव रंथन्तरम्। असौ बृहत्। आभ्यामेवेनम्नतरंति। वाचश्च मनंसश्च। प्राणाचापानाच। दिवश्चं पृथिव्याश्चं॥३३॥

सर्वस्माद्वित्ताद्वेद्यात्। अभिवर्तो ब्रह्मसामं भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिवृत्त्ये। अभिजिद्भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्ये। विश्वजिद्भंवति। विश्वंस्य जित्यै। यस्य भूयार्श्सो यज्ञकृतव इत्यांहुः। स देवतां वृङ्क इति। यद्यंग्निष्टोमः सोमः परस्ताथ्स्यात्॥३४॥

उक्थ्यं कुर्वीत। यद्युक्थंः स्यात्। अतिरात्रं कुर्वीत। यज्ञृत्रतिभेरेवास्यं देवतां वृङ्के। यो वै छन्दोभिरभिभवंति। स सर्सुन्वतोर्भिभवति। संवेशायं त्वोपवेशाय त्वेत्यांह। छन्दार्सस् वै संवेश उपवेशः। छन्दोभिरेवास्य छन्दार्स्स्यभिभवति। इष्टर्गो वा ऋत्विजांमध्वर्युः॥३५॥

ड्रष्टर्गः खलु वै पूर्वोऽर्ष्टुः क्षीयते। प्राणापानौ मृत्योमां पात्मित्याह। प्राणापानयोरेव श्रंयते। प्राणापानौ मा मां हासिष्टमित्याह। नैनं पुराऽऽयुंषः प्राणापानौ जंहितः। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषां दीक्षितानां प्रमीयंते। तं यदंववर्जेयुः। ऋर्कृतांमिवैषां लोकः स्यांत्। आहेर दहेतिं ब्रूयात्॥३६॥

तं दंक्षिणतो वेद्यै निधायं। सूर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुंयुः। इयं वै सर्पतो राज्ञीं। अस्या एवेनं परिंददित। व्यृंद्धं तदित्यांहुः। यथ्स्तुतमनंनुशस्तमितिं। होतां प्रथमः प्रांचीनावीती मांज्ञीलीयं परींयात्। यामीरंनुब्रुवन्। सूर्पराज्ञीनां कीर्तयेत्। उभयोर्वेनं लोकयोः परिंददित॥३७॥

अथों धुवन्त्येवैनम्ं। अथो न्येवास्में हुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। पुभ्य पुवैनं लोकभ्यों धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं धुवते। अग्र आयूरंषि पवस् इति प्रतिपदं कुर्वीरन्। रथन्तरसांमैषा स्योत्। आयुरेवाऽऽत्मन्दंधते। अथों पाप्मानमेव विज्ञहंतो यन्ति॥३८॥

असुर्यं वा एतस्माद्वर्णं कृत्वा। पृशवों वीर्यमपं क्रामिन्त। यस्य यूपों विरोहंति। त्वाष्ट्रं बंहुरूपमालंभेत। त्वष्टा वै रूपाणांमीशे। य एव रूपाणामीशें। सोंऽस्मिन्पशून् वीर्यं यच्छति। नास्मौत्पशवों वीर्यमपं क्रामिन्त। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषां दीक्षितानांमग्निरुद्वायंति॥३९॥

यदांहवनीयं उद्घायंत्। यत्तं मन्थंत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। यदांहवनीयं उद्घायंत्। आग्नींद्रादुद्धं-रेत्। यदाग्नींद्ध उद्घायंत्। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यद्गार्हंपत्य उद्घायंत्। अतं एव पुनंर्मन्थेत्॥४०॥

अत्र वाव स निर्लयते। यत्र खलु वै निर्लीनमुत्तमं पश्यंन्ति। तदेनिमच्छन्ति। यस्माद्दारोरुद्वायेत्। तस्यारणीं कुर्यात्। कुमुकमिपं कुर्यात्। एषा वा अग्नेः प्रिया तन्ः। यत्क्रुंमुकः। प्रिययैवैनं तनुवा समर्थयति। गार्हंपत्यं

मन्थति॥४१॥

गार्हंपत्यो वा अग्नेर्योनिः। स्वादेवैनं योनैंर्जनयति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। यस्य सोमं उपदस्यैत्। सुवर्ण् हिरंण्यं द्वेधा विच्छिद्यं। ऋजी्षेऽन्यदांधूनुयात्। जुहुयादन्यत्। सोमंमेवाभिषुणोतिं। सोमं जुहोति। सोमंस्य वा अभिष्यमाणस्य प्रिया तुनूरुदंक्रामत्॥४२॥

तथ्सुवर्ण् हरंण्यमभवत्। यथ्सुवर्ण् हरंण्यं कुर्वन्ति। प्रिययैवैनं तनुवा समंध्यन्ति। यस्याक्रीत् सोमंमपृहरंयुः। क्रीणीयादेव। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यस्यं क्रीतमंपृहरंयुः। आदाराङ्श्चं फाल्गुनानिं चाभिषुंणुयात्। गायत्री यश्सोममाहंरत्। तस्य योऽरंशः प्राऽपंतत्॥४३॥

त आंदारा अंभवन्। इन्द्रों वृत्रमंहन्। तस्यं वृत्कः परां-ऽपतत्। तानिं फाल्गुनान्यंभवन्। पृशवो व फाल्गुनानिं। पृशवः सोमो राजां। यदांदाराङ्श्चं फाल्गुनानिं चाभिषुणोतिं। सोममेव राजांनम्भिषुंणोति। शृतेनं प्रातः सवने श्रींणीयात्। दथ्ना मध्यं दिने॥४४॥

नीतिमिश्रेणं तृतीयसवने। अग्निष्टोमः सोमंः स्याद्रथन्तर-सामा। य एवर्त्विजों वृताः स्यः। त एनं याजयेयः। एकां गां दक्षिणां दद्यात्तेभ्यं एव। पुनः सोमंं क्रीणीयात्। यज्ञेनैव तद्यज्ञमिंच्छति। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। सर्वाभ्यो वा एष देवताँभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठेभ्यं आत्मान्मागुरते। यः स्त्रायांगुरतें। एतावान्खलु वै पुरुषः। यावंदस्य वित्तम्। सर्ववेदसेनं यजेत। सर्वंपृष्ठोऽस्य सोमः स्यात्। सर्वाभ्य एव देवताँभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठेभ्यं आत्मानं निष्क्रीणीते॥४५॥

पर्वमानः सुवर्जनंः। प्वित्रेण विचंर्षणिः। यः पोता स पुनातु मा। पुनन्तुं मा देवज्नाः। पुनन्तु मनेवो धिया। पुनन्तु विश्वं आयवः। जातंवेदः प्वित्रंवत्। प्वित्रंण पुनाहि मा। शुक्रेणं देव दीद्यंत्। अग्ने कत्वा कतूर् रनुं॥४६॥

यत्ते प्वित्रंम्चिषिं। अग्ने वितंतमन्त्रा। ब्रह्म तेनं पुनीमहे। उभाभ्यां देव सवितः। प्वित्रंण स्वेनं च। इदं ब्रह्मं पुनीमहे। वैश्वदेवी पुनती देव्यागांत्। यस्यैं बह्बीस्तनुवों वीतपृष्ठाः। तया मदन्तः सधमाद्येषु। वयः स्याम् पत्यो रयीणाम्॥४७॥

वैश्वानरो रिश्मिर्मिमा पुनातु। वार्तः प्राणेनेषिरो मंयोभूः। द्यावापृथिवी पर्यसा पर्योभिः। ऋतावरी यज्ञिये मा पुनीताम्। बृहद्भिः सवित्स्तृभिः। वर्षिष्ठैर्देव मन्मंभिः। अग्ने दक्षैः पुनाहि मा। येनं देवा अपुनत। येनाऽऽपो दिव्यं कर्शः। तेनं दिव्येन् ब्रह्मणा॥४८॥

इदं ब्रह्मं पुनीमहे। यः पांवमानीर्ध्येतिं। ऋषिभिः सम्भृत् रसम्। सर्वर् स पूतमंश्ञाति। स्वदितं मांतरिश्वना। पावमानीर्यो अध्येतिं। ऋषिभिः सम्भृतर् रसम्। तस्मै सरंस्वती दुहे। क्षीर स्पर्पिर्मधूंदकम्। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः॥४९॥

सुद्धा हि पर्यस्वतीः। ऋषिभिः सम्भृतो रसः। ब्राह्मणेष्वमृत १ हितम्। पावमानीर्दिशन्तु नः। इमं लोकमथीं अमुम्। कामान्थ्समध्यन्तु नः। देवीर्देवैः समाभृताः। पावमानीः स्वस्त्ययनीः। सुद्धा हि घृतश्चर्तः। ऋषिभिः सम्भृतो रसः॥५०॥

ब्राह्मणेष्वमृत रे हितम्। येनं देवाः प्वित्रेण। आत्मानं पुनते सदाँ। तेनं सहस्रंधारेण। पावमान्यः पुनन्तु मा। प्राजापत्यं प्वित्रम्ं। श्रातोद्यांम र हिर्ण्मयम्। तेनं ब्रह्मविदों वयम्। पूतं ब्रह्मं पुनीमहे। इन्द्रंः सुनीती सह मां पुनातु। सोमंः स्वस्त्या वरुंणः समीच्यां। यमो राजां प्रमृणाभिः पुनातु मा। जातवेदा मोर्जयंन्त्या पुनातु॥५१॥
अतं रयोणां ब्रह्मणा स्वस्त्ययंनाः सुद्धाः हि इतिश्रुतः क्राविकः सम्मेते रसः प्रमातु क्रीणि च॥——[८]

प्रजा वै स्त्रमांसत् तप्स्तप्यंमाना अर्जुहृतीः। देवा अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमं- जुहवुः। तेनौर्धमास ऊर्जुमवांरुन्धत। तस्मांदर्धमासे देवा इंज्यन्ते। पितरोऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं मास्यूर्जुमवांरुन्धत। तस्मौन्मासि पितृभ्यः क्रियते। मनुष्यां अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५२॥

तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं द्वयीमूर्ज्मवांरुन्थत। तस्माद्विरह्नां मनुष्येम्य उपहियते। प्रातश्चं सायं चं। प्रश्वोऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्त-मंजुहवुः। तेनं त्रयीमूर्ज्मवारुन्थत। तस्मात्रिरह्नंः पृशवः प्रेरंते। प्रातः संङ्गवे सायम्। असुरा अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५३॥

तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं संवथ्सर ऊर्ज्मवांरुन्धत। ते देवा अंमन्यन्त। अमी वा इदमंभूवन्। यद्ययः स्म इतिं। त एतानिं चातुर्मास्यान्यंपश्यन्। तानि निरंवपन्। तैरे्वैषां तामूर्जमवृञ्जत। ततों देवा अभंवन्। पराऽसुंराः॥५४॥

यद्यजंते। यामेव देवा ऊर्जम्वारुंन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यत्पितृभ्यः करोति। यामेव पितर् ऊर्जम्वारुंन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यदांवस्थेऽन्न् हर्रन्ति। यामेव मंनुष्यां ऊर्जमवारुंन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यद्दक्षिणां ददांति॥५५॥

यामेव प्राव ऊर्जम्वारुंन्धत। तान्तेनावं रुन्धे। यचांतुर्मास्यैर्यजंते। यामेवासंरा ऊर्जम्वारुंन्धत। तान्तेनावं रुन्धे। भवंत्यात्मनां। परांस्य भ्रातृंच्यो भवति। वि्राजो वा एषा विक्रांन्तिः। यचांतुर्मास्यानिं। वैश्वदेवेनास्मिं होके प्रत्यंतिष्ठत्। वृरुण्प्रघासेर्न्तिरक्षे। साक्रमेधेरमुष्मिं होके। एष ह त्वावेतथ्सर्वं भवति। य एवं विद्वाः श्चांतुर्मास्यैर्यजंते॥५६॥

मृनुष्यां अपश्यश्रम्सं घृतस्यं पूर्णंश् स्व्धामसुंरा अपश्यश्रम्सं घृतस्यं पूर्णंश् स्व्धामसुंरा ददाँत्यतिष्ठबृत्वारिं च॥ 🌂 🗍

अग्निर्वाव संवध्सरः। आदित्यः पंरिवध्सरः। चन्द्रमां इदावध्सरः। वायुरंनुवध्सरः। यद्वैश्वदेवेन् यजंते। अग्निमेव तथ्संवध्सरमांप्रोति। तस्माद्वैश्वदेवेन् यजंमानः। संवध्सरीणा हं स्वस्तिमा शास्त इत्याशासीत। यद्वरुण-प्रघासैर्यजंते। आदित्यमेव तत्पंरिवध्सरमांप्रोति॥५७॥

तस्मौद्वरुणप्रघासैर्यजमानः। परिवथ्सरीणाई स्वस्तिमा शौस्त इत्याशांसीत। यथ्सांकमेधेर्यजंते। चन्द्रमंसमेव तिदंदावथ्सरमौप्रोति। तस्मौथ्साकमेधेर्यजमानः। इदा-वथ्सरीणाई स्वस्तिमा शौस्त इत्याशांसीत। यित्पंतृयज्ञेन यजते। देवानेव तदन्ववंस्यति। अथ वा अंस्य वायुश्चांनु-वथ्सरश्चाप्रीतावुच्छिंष्येते। यच्छुंनासीरीयेण यजते॥५८॥

वायुमेव तदंनुवथ्मरमाँप्रोति। तस्माँच्छुनासीरीयेण् यजमानः। अनुवथ्मरीणाई स्वस्तिमा शाँस्त इत्याशासीत। संवथ्मरं वा एष ईफ्मतीत्यांहुः। यश्चांतुर्मास्यैर्यजंत इति। एष ह् त्वै संवथ्मरमाँप्रोति। य एवं विद्वाइश्चांतुर्मास्यैर्यजंते। विश्वे देवाः समयजन्त। तैंऽग्निमेवायंजन्त। त एतं लोकमंजयन्॥५९॥

यस्मिन्नग्निः। यद्वैश्वदेवेन यजिते। एतमेव लोकं जियति। यस्मिन्नग्निः। अग्नेरेव सायुज्यमुपैति। यदा वैश्वदेवेन यजिते। अर्थ संवथ्सरस्यं गृहपैतिमाप्नोति। यदा सेवथ्सरस्यं गृहपंतिमाप्रोतिं। अथं सहस्रयाजिनंमाप्रोति। युदा सहस्रयाजिनंमाप्रोतिं॥६०॥

अर्थ गृहमेधिनंमाप्नोति। यदा गृहमेधिनंमाप्नोति। अथाग्निर्भवति। यदाग्निर्भवंति। अथ गौर्भवति। एषा वै वैश्वदेवस्य मात्राँ। एतद्वा एतेषांमव्मम्। अतोतो वा उत्तराणि श्रेया रेसि भवन्ति। यद्विश्वं देवाः समयंजन्त। तद्वैश्वदेवस्यं वैश्वदेवत्वम्॥६१॥

अथांऽऽदित्यो वर्रण् रांजानं वरुणप्रघासैरंयजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्नादित्यः। यद्वरुणप्रघासैर्यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्नादित्यः। आदित्यस्यैव सायुज्यमुपैति। यदांदित्यो वर्रण् राजांनं वरुणप्रघासे-रयंजत। तद्वरुणप्रघासानां वरुणप्रघासत्वम्। अथ् सोमो राजा छन्दार्से साकमेधेर्यजत॥६२॥

स पृतं लोकमंजयत्। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। यथ्मांकमेधेर्यजंते। एतमेव लोकं जंयित। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। चन्द्रमंस एव सायुंज्यमुपैति। सोमो वै चन्द्रमाः। एष हु त्वै साक्षाथ्सोमं भक्षयित। य एवं विद्वान्थ्यांकमेधेर्यजंते। यथ्सोमंश्च राजा छन्दाईसि च समैधेन्त॥६३॥

तथ्सांकमेधाना र्ेसाकमेधत्वम्। अथुर्तवेः पितरेः प्रजापंतिं पितरें पितृयुज्ञेनांयजन्त। त पुतं लोकमंजयन्। यस्मिन्नृतवंः। यत्पितृयज्ञेन यजिते। एतमेव लोकं जियति। यस्मिन्नृतवंः। ऋतूनामेव सायुज्यमुपैति। यद्दतवंः पितरंः प्रजापितिं पितरं पितृयज्ञेनायंजन्त। तत्पितृयज्ञस्ये पितृयज्ञत्वम्॥६४॥

अथौषंधय इमं देवं त्र्यंम्बकैरयजन्त प्रथंमहीतिं। ततो वै ता अप्रथन्त। य एवं विद्वा इस्त्र्यंम्बकैर्यजेते। प्रथंते प्रजयां पशुभिः। अथं वायुः परमेष्ठिन इश्वासीरीयेणायजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्वायुः। यच्छुंनासीरीयेण यजेते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्वायुः॥६५॥

वायोरेव सायुंज्यमुपैति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्र चांतुर्मास्ययाजी मींयता (३) न प्रमींयता (३) इतिं। जीवन्वा एष ऋतूनप्येति। यदिं वसन्तौ प्रमीयंते। वसन्तो भंवति। यदिं ग्रीष्मे ग्रीष्मः। यदिं वर्षासुं वर्षाः। यदिं श्रिदें श्रत्। यदि हेमंन् हेम्न्तः। ऋतुर्भूत्वा संंवथ्सरमप्येति। संवथ्सरः प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावैषः॥६६॥

परिवृथ्सरमांप्रोति शुनासीरीयेण यजंतेऽजयन्थ्सहस्रयाजिनंमाप्रोति वैश्वदेवत्व सांकमेथेरंयजत समेथंन्त पितृयज्ञत्वं जंयित् यस्मिन्वायुर्हेम्नतस्रीणि च॥————[१०]

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

उभयें युवर सुराममुदंस्थान्नि वे यस्यं प्रातः सबुन एकैकोऽसुर्यं पर्वमानः प्रजा वे सुत्रमांसताृग्निर्वाव संवथ्सरो इशं॥१०॥

उभये वा उर्दस्थाथ्सर्वाभिर्मध्यतोऽत्र वाव ब्राँह्मणेष्वथं गृहमेधिन् पर्थ्यष्टिः॥६६॥ उभये वा वैषः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

अग्नेः कृत्तिकाः। शुक्रं प्रस्ताञ्च्योतिर्वस्तांत्। प्रजापंते रोहिणी। आपः प्रस्तादोषंधयोऽवस्तांत्। सोमंस्येन्वका विततानि। प्रस्ताद्वयंन्तोऽवस्तांत्। रुद्रस्यं बाहू। मृग्यवंः प्रस्तांद्विक्षारोऽवस्तांत्। अदित्ये पुनर्वसू। वातः प्रस्तांदार्द्रम्वस्तांत्॥१॥

बृह्स्पतें स्तिष्यः। जुह्नंतः प्रस्ताद्यजंमाना अवस्तांत्। सूर्पाणांमाश्रेषाः। अभ्यागच्छंन्तः प्रस्तांदभ्यानृत्यंन्तो-ऽवस्तांत्। पितृणां मघाः। रुदन्तः प्रस्तांदपश्रश्शोऽवस्तांत्। अर्यम्णः पूर्वे फल्गुंनी। जाया प्रस्तांदषभोऽवस्तांत्। भगस्योत्तरे। बृह्तवंः प्रस्ताद्वहंमाना अवस्तांत्॥२॥

देवस्यं सिवतुर्हस्तंः। प्रस्तवः प्रस्तांथ्यनिर्वस्तांत्। इन्द्रस्य चित्रा। ऋतं प्रस्तांथ्यत्यम्वस्तांत्। वायोर्निष्ठ्यां व्रतिः। प्रस्तादसिद्धिर्वस्तांत्। इन्द्राग्नियोर्विशांखे। युगानिं प्रस्तांत्कृषमांणा अवस्तांत्। मित्रस्यांनूराधाः। अभ्यारोहंत्प्रस्तांदभ्यारूढम्वस्तांत्॥३॥

इन्द्रंस्य रोहिणी। शृणत्परस्तांत्प्रतिशृणद्वस्तांत्। निर्ऋत्ये मूलवर्हणी। प्रतिभुञ्जन्तः पुरस्तांत्प्रतिशृणन्तो-ऽवस्तांत्। अपां पूर्वा अषाढाः। वर्चः पुरस्ताथ्सिमितिर्वस्तांत्। विश्वेषां देवानामुत्तंराः। अभिजयंत्पुरस्तांद्भिजितम्वस्तांत्। विष्णोः श्रोणा पृच्छमानाः। प्रस्तात्पन्थां अवस्तात्॥४॥ वसूना्ड् श्रविष्ठाः। भूतं प्रस्ताद्भृतिर्वस्तात्। इन्द्रस्य श्तिभेषक्। विश्वव्यंचाः प्रस्ताद्धिश्वक्षितिर्वस्तात्। अजस्यैकंपदः पूर्वे प्रोष्ठपदाः। वैश्वान्तरं प्रस्ताद्वश्वावस्वम्वस्तात्। अहेंबुंध्रियस्योत्तरे। अभिष्ठिश्चन्तंः प्रस्तादिभिष्णवन्तोऽवस्तात्। पूष्णो रेवतीं। गावंः प्रस्ताद्वध्मा अवस्तात्। अश्विनोरश्वयुजौं। ग्रामंः प्रस्ताव्धेनाऽवस्तात्। यमस्याप्भर्गणोः। अपकर्षन्तः प्रस्तादप्वहंन्तोऽवस्तात्। पूर्णा पृश्वाद्यते देवा अदेधुः॥५॥

आर्द्रमुवस्ताद्वहंमाना अवस्तांदुभ्यारूंढमुवस्तात्पन्थां अवस्तांद्वथ्सा अवस्तात्पश्चं च॥————[१]

यत्पुण्यं नक्षंत्रम्। तद्बद्वंर्वीतोपव्युषम्। यदा वै सूर्यं उदेति। अथ नक्षंत्रं नैति। यावंति तत्र सूर्यो गच्छैत्। यत्रं जघन्यं पश्यौत्। तावंति कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते। एव॰ ह वै यज्ञेषुं च श्तद्यंम्नं च माथ्स्यो निरवसाय्यां चंकार॥६॥

यो वै नेक्ष्तियं प्रजापंतिं वेदं। उभयोरेनं लोकयोंविंदुः। हस्तं एवास्य हस्तंः। चित्रा शिरंः। निष्ट्या हृदंयम्। ऊरू विशांखे। प्रतिष्ठाऽनूराधाः। एष वै नेक्ष्तिर्यः प्रजापंतिः। य एवं वेदं। उभयोरेनं लोकयोविंदुः॥७॥

अस्मि इश्चामुष्मि ईश्च। यां कामयेत दुहितरें प्रिया स्यादितिं। तां निष्ट्यायां दद्यात्। प्रियैव भवति। नेव तु पुन्रागंच्छति। अभिजिन्नाम् नक्षंत्रम्। उपरिष्टादषाढानांम्। अवस्तांच्छ्रोणायैं। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवास्तस्मिन्नक्षंत्रेऽभ्यंजयन्॥८॥

यद्भ्यजंयन्। तदंभिजितों ऽभिजित्त्वम्। यं कामयेतानप-ज्ययं जंयेदितिं। तमेतस्मिन्नक्षंत्रे यातयेत्। अनुपज्य्यमेव जयित। पापपंराजितिमव् तु। प्रजापंतिः पृशूनंसृजत। ते नक्षंत्रं नक्षत्रमुपांतिष्ठन्त। ते समावंन्त एवाभंवन्। ते रेवतीमुपांतिष्ठन्त॥९॥

ते रेवत्यां प्राभवन्। तस्माँद्रेवत्यां पशूनां कुंवीत। यत्किं चाँर्वाचीन् सोमाँत्। प्रैव भवन्ति। सुलिलं वा इदमन्त्रासीत्। यदत्रन्। तत्तारंकाणां तारकृत्वम्। यो वा इह यजेते। अमु स लोकं नक्षते। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्॥१०॥

देवगृहा वै नक्षंत्राणि। य एवं वेदं। गृह्यंव भंवति। यानि वा इमानिं पृथिव्याश्चित्राणि। तानि नक्षंत्राणि। तस्मादश्चीलनामङ्श्चित्रे। नावस्येन्न यंजेत। यथां पापाहे कुंरुते। ताहगेव तत्। देवनुक्षुत्राणि वा अन्यानिं॥११॥

युम्नक्षत्राण्यन्यानि। कृत्तिंकाः प्रथमम्। विशांखे उत्तमम्। तानि देवनक्षत्राणि। अनूराधाः प्रथमम्। अपभरंणीरुत्तमम्। तानि यमनक्षत्राणि। यानि देवनक्षत्राणि। तानि दक्षिणेन् परियन्ति। यानि यमनक्षत्राणि॥१२॥ तान्युत्तरेण। अन्वेषामराथ्स्मेति। तदेनूराधाः। ज्येष्ठमेषामवधिष्मेति। तज्ञ्येष्ठघ्नी। मूलमेषामवृक्षामेति। तन्मूलवर्हणी। यन्नासंहन्त। तदेषाढाः। यदश्लोणत्॥१३॥

तच्छ्रोणा। यदर्शणोत्। तच्छ्रविष्ठाः। यच्छ्तमभिषज्यन्। तच्छ्रतभिषक्। प्रोष्ठपदेषूदंयच्छन्त। रेवत्यांमरवन्त। अश्वयुजोरयुञ्जत। अपभरणीष्वपांवहन्। तानि वा एतानि यमनक्ष्त्राणि। यान्येव देवनक्ष्त्राणि। तेषुं कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते॥१४॥

चुकारैवं वेदोभयोरेनं लोकयोर्विद्रजयत्रेवतीमुपातिष्ठन्त नक्षत्रत्वमृन्यानि यानि यमनक्षुत्राण्यश्लोणद्यमनक्षुत्राणि त्रीणि च॥______ि २]

देवस्यं सिवतुः प्रातः प्रस्वः प्राणः। वरुणस्य सायमांस्वो-ऽपानः। यत्प्रंतीचीनं प्रात्स्तनांत्। प्राचीन र सङ्गवात्। ततो देवा अग्निष्टोमं निर्रामिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। मित्रस्यं सङ्गवः। तत्पुण्यं तेज्ञस्व्यहंः। तस्मात्तर्हि पृशवंः सुमायन्ति। यत्प्रंतीचीन र सङ्गवात्॥१५॥

प्राचीनं मध्यं दिनात्। ततों देवा उक्थ्यं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। बृह्स्पतेंर्मध्यं दिनः। तत्पुण्यं तेज्रस्व्यहंः। तस्मात्तर्ह् तेक्ष्णिष्ठं तपित। यत्प्रंतीचीनं मध्यं दिनात्। प्राचीनंमपराह्णात्। ततों देवाः षोंड्शिनं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः॥१६॥

भगंस्यापराह्नः। तत्पुण्यं तेजस्व्यहंः। तस्मांदपराह्ने

कुंमार्यो भगंमिच्छमांनाश्चरन्ति। यत्प्रंतीचीनंमपराह्णात्। प्राचीन सायात्। ततो देवा अंतिरात्रं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। वरुंणस्य सायम्। तत्पुण्यं तेजस्व्यहंः। तस्मात्तर्हि नानृतं वदेत्॥१७॥

ब्राह्मणो वा अष्टाविश्यो नक्षेत्राणाम्। स्मानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षेत्राणि। चत्वार्यश्चीलानि। तानि नवि। यचे प्रस्तान्नक्षेत्राणां यच्चावस्तांत्। तान्येकांदश। ब्राह्मणो द्वांदशः। य एवं विद्वान्थ्यंवथ्यरं व्रतं चरित। संवथ्यरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भविति। स्मानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षेत्राणि। चत्वार्यश्चीलानि। तानि नवि। आग्नेयी रात्रिः। ऐन्द्रमहेः। तान्येकांदश। आदित्यो द्वांद्शः। य एवं विद्वान्थ्यंवथ्यरं व्रतं चरिति। संवथ्यरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भविति॥१८॥ सङ्बाध्यांइशिन् विरिमिमत् तत्त्वात्तीर्थ विर्माणं विदेववि सम्पनस्याङ्क पश्च प्रण्यानि नक्षेत्राण्यशे चे॥—[३]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कित् पात्राणि यज्ञं वंहुन्तीतिं। त्रयोदशेतिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कस्तानि निरंमिमीतेतिं। प्रजापंतिरितिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कुत्स्तानि निरंमिमीतेतिं। आत्मन् इतिं। प्राणापानाभ्यांमेवोपाई-श्वन्तर्यामौ निरंमिमीत॥१९॥

व्यानादुंपा १ शुसर्वनम्। वाच ऐन्द्रवायवम्। दृक्षु ऋतुभ्यां मैत्रावरुणम्। श्रोत्रांदाश्विनम्। चक्षुंषः शुक्रामुन्थिनौ। आत्मनं आग्रयणम्। अङ्गेभ्य उक्थ्यम्। आयुंषो ध्रुवम्। प्रतिष्ठायां ऋतुपात्रे। यज्ञं वाव तं प्रजापंतिर्निरंमिमीत। स निर्मितो नाद्धियत् समंह्रीयत्। स एतान्प्रजापंतिरिपवापानंपश्यत्। तां निरंवपत्। तैर्वे स यज्ञमप्यवपत्। यदंपिवापा भवन्ति। यज्ञस्य धृत्या असंंह्रयाय॥२०॥

उपार्श्वन्तर्यामौ निरंमिमीतामिमीत् षद्गं॥_______

[8]

ऋतमेव पंरमेष्ठि। ऋतं नात्येति किश्चन। ऋते संमुद्र आहितः। ऋते भूमिरियङ्श्रिता। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रान्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजसा। ऋतेनांस्य नि वंतिये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शग्मेनांस्याभि वर्तये। तद्दतं तथ्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२१॥

यद्घ्मः पूर्यवंतियत्। अन्तांन्पृथिव्या दिवः। अग्निरीशांन् ओजंसा। वरुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्भिः सखिंभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आऋांन्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वान्रस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंतिये। स्त्येन् परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शग्मेनांस्याभि वंतिये। तद्दतं तथ्सत्यम्। तद्दतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२२॥

यो अस्याः पृंथिव्यास्त्वचि। निवर्तयत्योषंधीः। अग्निरीशान् ओजंसा। वर्रुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मरुद्भिः सर्खिभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रांन्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंतिये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वंतिये। तद्दतं तथ्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२३॥

एकं मास्मुदंसृजत्। प्रमेष्ठी प्रजाभ्यः। तेनाभ्यो मह् आवंहत्। अमृतं मर्त्याभ्यः। प्रजामनु प्र जांयसे। तदं ते मर्त्यामृतम्। येन मासां अर्धमासाः। ऋतवंः परिवथ्सराः। येन ते ते प्रजापते। ईजानस्य न्यवंत्यन्। तेनाहमस्य ब्रह्मणा। निवंत्यामि जीवसे। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषा। तप् आक्रान्तमुष्णिहाँ। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वान्रस्य तेजंसा। ऋतेनास्य नि वंत्ये। स्त्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। श्राग्मेनास्याभि वर्तये। तद्तं तथ्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२४॥

देवा वै यद्यज्ञेऽकुंर्वत। तदसुंरा अकुर्वत। तेऽसुंरा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्यो नापंश्यन्। ते केशानग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रूणि। अथोपपृक्षौ। तत्स्तेऽवाश्च आयन्। परांऽभवन्। यस्यैवं वपंन्ति। अवांङेति॥२५॥

अथो परैव भंवति। अथं देवा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्योंऽपश्यन्। त उंपपक्षावग्रेंऽवपन्त। अथ श्मश्रृंणि। अथ केशान्ं। ततस्तें- ऽभवन्। सुवुर्गं लोकमायन्। यस्यैवं वर्पन्ति। भवंत्यात्मनां। अथो सुवर्गं लोकमेति॥२६॥

अथैतन्मनुंर्वित्रे मिथुनमंपश्यत्। स श्मश्रूण्यग्रेऽवपतः। अथोपपक्षौः। अथ् केशान्। ततो वै स प्राजायत प्रजयां पश्मिः। यस्यैवं वपन्ति। प्र प्रजयां पश्मिमिथुनैर्जायते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते संवथ्सरे व्यायंच्छन्तः। तान्देवाश्चांतुर्मास्यैरेवाभि प्रायुंञ्जत॥२७॥

वैश्वदेवनं चतुरों मासोंऽवृञ्जतेन्द्रंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चार्वर्तयन्त परिं च। वरुणप्रघासैश्चतुरों मासोंऽवृञ्जत वर्रण-राजानः। ताञ्छीर्षं नि चार्वर्तयन्त परिं च। साकुमेधेश्चतुरों मासोंऽवृञ्जत सोमराजानः। ताञ्छीर्षं नि चार्वर्तयन्त परिं च। या संवथ्मर उंपजीवाऽऽसींत्। तामेषामवृञ्जत। ततों देवा अभेवन्। पराऽसुंराः॥२८॥

य एवं विद्वा इश्चांतुर्मा स्यैर्य जंते। भ्रातृं व्यस्यैव मासो वृक्ता। शीर्षं नि चं वर्तयंते परिं च। यैषा संवथ्सर उपजीवा। वृक्के तां भ्रातृं व्यस्य। क्षुधाऽस्य भ्रातृं व्यः पर्गं भवति। लोहितायसेन नि वर्तयते। यद्वा इमाम् शिर्ऋतावागंते निवर्तयति। एतदेवैना इस्तं कृत्वा निवर्तयति। सा ततः श्वश्वो भूयंसी भवंन्त्येति॥ २९॥

प्र जांयते। य एवं विद्वाँ होहितायुसेनं निवृर्तयंते। एतदेव

रूपं कृत्वा नि वर्तयते। स ततः श्वश्वो भूयान्भवंत्रेति। प्रैव जायते। त्रेण्या शंलल्या नि वर्तयेत। त्रीणि त्रीणि वै देवानांमृद्धानिं। त्रीणि छन्दा रेसि। त्रीणि सर्वनानि। त्रयं इमे लोकाः॥३०॥

ऋध्यामेव तद्वीर्यं एषु लोकेषु प्रतिं तिष्ठति। यचांतुर्मास्य-याज्यांत्मनो नावद्येत्। देवेभ्य आवृंश्च्येत। चृतृषु चंतृषु मासेषु नि वंतियेत। प्रोक्षंमेव तद्देवेभ्यं आत्मनोऽवंद्यत्यनांत्रस्काय। देवानां वा एष आनीतः। यश्चांतुर्मास्ययाजी। य एवं विद्वान्ति चं वृत्तयंते परिं च। देवतां एवाप्येति। नास्यं रुद्रः प्रजां पश्निमे मन्यते॥३१॥

पुत्येत्ययुञ्जतासुंरा एति लोका मन्यते॥—————[६]

आयुंषः प्राणः सन्तंनु। प्राणादंपानः सन्तंनु। अपानाद्यानः सन्तंनु। व्यानाचक्षुः सन्तंनु। चक्षुंषः श्रोत्रः सन्तंनु। श्रोत्रान्मनः सन्तंनु। मनसो वाच् सन्तंनु। वाच आत्मान् सन्तंनु। आत्मनं पृथिवीः सन्तंनु। पृथिव्या अन्तरिक्षः सन्तंनु। अन्तरिक्षाद्दिवः सन्तंनु। दिवः सुवः सन्तंनु॥३२॥

अन्तरिक्षर् सन्तेनु हे चं॥———[७]

इन्द्रों दधीचो अस्थिनिः। वृत्राण्यप्रतिष्कुतः। ज्ञ्घानं नवतीर्नवं। इच्छन्नश्वंस्य यच्छिरंः। पर्वतेष्वपंश्रितम्। तिद्वंदच्छर्यणावति। अत्राह् गोरमंन्वत। नाम् त्वष्टुंरपीच्यम्। इत्था चन्द्रमंसो गृहे। इन्द्रमिद्गाथिनों बृहत्॥३३॥ इन्द्रं मुर्केभिर्किणं। इन्द्रं वाणीरनूषत। इन्द्रं इद्धर्योः सचाँ। सम्मिश्च आवंचो युजाँ। इन्द्रों वुज्री हिर्ण्ययं। इन्द्रों दीर्घाय चक्षंसे। आ सूर्यर् रोहयद्दिव। वि गोभिरद्रिंमैरयत्। इन्द्रं वाजेषु नो अव। सहस्रंप्रधनेषु च॥३४॥

उग्र उग्राभिंक्तिभिंः। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तेवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। इन्द्रः स दामने कृतः। ओजिंष्टः स बलें हितः। द्युम्नी श्लोकी स सौम्यः। गिरा वज्रो न सम्भृतः। सबंलो अनंपच्युतः। वृवक्षुरुग्रो अस्तृतः॥३५॥ वृह्यास्तंः।————[८]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स प्रजापंतिरिन्द्रं ज्येष्ठं पुत्रमप् न्यंधत्तः। नेदेनमसुरा बलीया स्सोऽहन् न्नितिं। प्रह्नादों हु वै कायाधवः। विरोचन् स्वं पुत्रमप् न्यंधत्तः। नेदेनं देवा अहन् नितिं। ते देवाः प्रजापंतिमुपस्मेत्योचुः। नाराजकंस्य युद्धमस्ति। इन्द्रमन्विंच्छामेति। तं यंज्ञकृतुभिरन्वैंच्छन्॥३६॥

तं यंज्ञकृतुभिनान्वंविन्दन्। तमिष्टिंभिरन्वैंच्छन्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दन्। तदिष्टींनामिष्टित्वम्। एष्टंयो ह् वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तस्मां एतमांग्रावैष्ण्वमेकांदशकपालं दीक्षणीयं निरंवपन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। तान्पंत्रीसंयाजान्त उपानयन्॥३७॥

ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। ते प्रांयणीयंमुभि सुमारोहन्।

तदंपद्रुत्यांतन्वत। ताञ्छ्य्यंन्त उपांनयन्। ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। त आंतिथ्यम्भि समारोहन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। तानिडांन्त उपांनयन्। ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। तस्मांदेता पृतदंन्ता इष्टंयः सन्तिष्ठन्ते॥३८॥

पुव हे देवा अर्कुर्वत। इति देवा अंकुर्वत। इत्यु वै मंनुष्याः कुर्वते। ते देवा ऊंचुः। यद्वा इदमुचैर्यज्ञेन चरोम। तन्नोऽसुंराः पाप्माऽनुंविन्दन्ति। उपा शूंप्सदां चराम। तथा नोऽसुंराः पाप्मा नानुंवेथ्स्यन्तीति। त उपा शूंप्सदंमतन्वत। तिस्र एव सांमिधेनीरनूच्यं॥३९॥

स्रुवेणांघारमाघार्य। तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। स्रुवेणांप्सदं जुह्वां चंकुः। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधीक्र स्वाहेतिं। अशन्यापिपासे ह् वा उग्रं वचः। एनंश्च वैरहत्यं च त्वेषं वचः। एतः ह् वाव तचंतुर्धाविहितं पाप्मानं देवा अपंजिष्ठरे। तथो एवैतदेवंविद्यजमानः। तिस्र एव सांमिधेनीर्नूच्यं। स्रुवेणांघारमाघार्य॥४०॥

तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। स्रुवेणोप्सदं जुहोति। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधी हु स्वाहेति। अशन्यापिपासे हु वा उग्रं वचः। एनश्च वैरहत्यं च त्वेषं वचः। एतमेव तचंतुर्धाविहितं पाप्मानं यजमानोऽपं हते। तेऽभिनीयैवाहंः पशुमाऽलंभन्त। अह्नं एव तद्देवा अवंर्तिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे। तेनांभिनीयेंव रात्रेः प्राचंरन्। रात्रिया एव तद्देवा अवंर्तिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे॥४१॥

तस्मादिभिनीयैवाहं पृशुमा लेभेत। अह्रं एव तद्यजंमानो-ऽवंतिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं नुदते। तेनांभिनीयेव रात्रेः प्रचरेत्। रात्रिया एव तद्यजंमानोऽवंतिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं नुदते। स एष उंपवस्थीयेऽहं द्विदेवृत्यंः पृशुरा लेभ्यते। द्वयं वा अस्मिँ श्लोके यर्जमानः। अस्थि च मा १ सं चं। अस्थिं चैव तेनं मा १ सं च यर्जमानः स १ स्कुरुते। ता वा एताः पश्चं देवताः। अग्नीषोमांवग्निमित्रावरुणौ॥४२॥

पृश्रपृश्ची वै यजंमानः। त्वङ्गार्सः स्नावाऽस्थिं मृज्ञा। एतमेव तत्पंश्चधाविहितमात्मानं वरुणपा्शान्मुंश्चति। भेषजतांयै निर्वरुणत्वायं। तर सप्तिभृश्छन्दोंभिः प्रातरंह्वयन्। तस्मांथ्सप्त चंतुरुत्तराणि छन्दारेसि प्रातरनुवाकेऽनूंच्यन्ते। तमेतयोपस्मेत्योपांसीदन्। उपांस्मै गायता नर् इतिं। तस्मांदेतयां बहिष्यवमान उपसद्यः॥४३॥

ऐच्छुत्रन्युङ्स्तिष्ठ-तेऽनूच्यानूच्यं स्रुवेणांघारमाघार्य रात्रिया एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे मित्रावरुंणौ नवं च (देवा यजमानो देवा देवा यजमानो यजमानो प्राचेरं प्रचेरेदालंभुन्तालंभेत मृत्युमपंजिघ्नरे आतृंच्यान्॥॥——[९]

स संमुद्र उत्तर्तः प्राज्वेलद्भूम्यन्तेनं। एष वाव स संमुद्रः। यच्चात्वांलः। एष उवेव स भूम्यन्तः। यद्वैद्यन्तः। तदेतित्रिश्लं त्रिंपूरुषम्। तस्मात्तं त्रिंवित्स्तं खनिन्तः। स सुंवर्णरज्ताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत आसीत्। तं यद्स्या अध्यजनेयन्। तस्मादादित्यः॥४४॥

अथ यथ्सुंवर्णरज्ञताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत् आसींत्। साऽस्यं कौशिकतां। तं त्रिवृताऽभि प्रास्तुंवत। तं त्रिवृताऽदंदत। तं त्रिवृताऽहंरन्। यावंती त्रिवृतो मात्रां। तं पंश्रद्शेनाभि प्रास्तुंवत। तं पंश्रद्शेनादंदत। तं पंश्रदशेनाहंरन्। यावंती पश्चदशस्य मात्रां॥४५॥

त १ संप्तद्शेनाभि प्रास्तुंवत। त १ संप्तद्शेनादंदत। त १ संप्तद्शेनाहं १ यावंती सप्तद्शस्य मात्रां। तस्यं सप्तद्शेनं हियमांणस्य तेजो हरों ऽपतत्। तमें कि वि १ शेनाभि प्रास्तुंवत। तमें कि वि १ शेनाहं १ त्यावंत्ये कि वि १ शेनाहं १ त्यावंत्ये कि वि १ शस्य मात्रां। ते यित्रवृतां स्तुवतं ॥ ४६॥

त्रिवृतेव तद्यजंमान्मादंदते। तं त्रिवृतेव हंरन्ति। यावंती त्रिवृतो मात्रां। अग्निर्वे त्रिवृत्। यावृद्वा अग्नेदंहंतो धूम उदेत्यानु व्येतिं। तावंती त्रिवृतो मात्रां। अग्नेरेवैनं तत्। मात्रा सायुंज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ यत्पंश्रदृशेनं स्तुवतें। पृश्रदृशेनैव तद्यजंमान्मादंदते॥४७॥

तं पंश्चद्रशेनैव हंरन्ति। यावंती पश्चद्रशस्य मात्राँ। चुन्द्रमा वै पंश्चद्रशः। एष हि पंश्चद्रयामंपक्षीयतेँ। पृश्चद्रयामांपूर्यतेँ। चन्द्रमंस एवेनं तत्। मात्रा सायुंज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ यथ्संप्तद्रशेनं स्तुवतें। स्प्तद्रशेनैव तद्यजंमान्मादंदते। तर संप्तद्रशेनैव हंरन्ति॥४८॥

यावंती सप्तद्शस्य मात्रौ। प्रजापंतिर्वे संप्तद्शः। प्रजा-

पंतेरेवैनं तत्। मात्रा सायंज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ् यदेकवि इशेनं स्तुवतें। एकवि इशेनेव तद्यजमान्मादंदते। तमेकवि इशेनेव हंरन्ति। यावंत्येकवि इशस्य मात्रां। असो वा आंदित्य एकवि इशः। आदित्यस्यैवेनं तत्॥४९॥

मात्रा सायंज्य सलोकतां गमयन्ति। ते कुश्यौं। व्यंप्रन्। ते अंहोरात्रे अंभवताम्। अहंरेव सुवर्णाऽभवत्। रज्ता रात्रिः। स यदांदित्य उदेतिं। एतामेव तथ्सुवर्णां कुशीमनु समेति। अथ यदंस्तमेतिं। एतामेव तद्रज्तां कुशीमनुसंविशति। प्रह्लादों हु वे कांयाध्वः। विरोचन् इं स्वं पुत्रमुदांस्यत्। स प्रंदरोंऽभवत्। तस्मौत्प्रद्रादुंदकं नाचांमेत्॥५०॥

ये वै चत्वारः स्तोमाः। कृतं तत्। अथ् ये पश्चं। किलः सः। तस्माचतुंष्टोमः। तचतुंष्टोमस्य चतुष्टोमृत्वम्। तदांहुः। कृतमानि तानि ज्योती १षि। य एतस्य स्तोमा इति। त्रिवृत्पंश्चदशः संप्तदश एंकवि १शः॥५१॥

पुतानि वाव तानि ज्योती १षि। य पुतस्य स्तोमाः। सौंऽब्रवीत्। सप्तद्शेनं ह्रियमांणो व्यंलेशिषि। भिषज्यंत मेतिं। तमुश्विनौं धानाभिरभिषज्यताम्। पूषा कंरम्भेणं। भारती परिवापेणं। मित्रावरुंणौ पयस्यंया। तदांहुः॥५२॥ यदिश्वभ्यां धानाः। पूष्णः कर्मभः। भारत्ये परिवापः। मित्रावर्रुणयोः पयस्याऽथं। कस्मदितेषार् ह्विषामिन्द्रमेव यंजन्तीति। एता ह्यंनं देवता इति ब्रूयात्। एतेर्ह्विर्भि-रभिषज्यङ्स्तस्मादिति। तं वसंवोऽष्टाकंपालेन प्रातः सवने-ऽभिषज्यन्। रुद्रा एकांदशकपालेन् माध्यं दिने सर्वने। विश्वं देवा द्वादंशकपालेन तृतीयसवने॥५३॥

स यद्ष्टाकंपालान्प्रातः सब्ने कुर्यात्। एकांदश-कपालान्माध्यं दिने सर्वने। द्वादंशकपालाङ्स्तृतीयसब्ने। विलोम् तद्यज्ञस्यं क्रियेत। एकांदशकपालानेव प्रांतः सब्ने कुर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सर्वने। एकांदशकपालाङ्स्तृतीयसब्ने। यज्ञस्यं सलोम्त्वायं। तदांहुः। यद्वसूनां प्रातः सब्नम्। रुद्राणां माध्यं दिन्श् सर्वनम्। विश्वंषां देवानां तृतीयसब्नम्। अथ् कस्मांदेतेषाश् ह्विषामिन्द्रंमेव यंजन्तीतिं। एता ह्यंनं देवता इतिं ब्रूयात्। एतैरह्विर्भिरभिषज्यङ्स्तस्मादितिं॥५४॥

पुक्विर्श आंहुस्तृतीयसवुने प्रांतः सवुनं पश्चं च॥————[१९]

तस्यावांचोऽवपादादंबिभयुः। तमेतेषुं सप्तसु छन्दंः स्वश्रयन्। यदश्रंयन्। तच्छ्रांयन्तीयंस्य श्रायन्तीयृत्वम्। यदवांरयन्। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयृत्वम्। तस्यावांच प्वावंपादादंबिभयुः। तस्मां पृतानिं सप्त चंतुरुत्तराणि छन्दा इस्युपांदधुः। तेषामित् त्रीण्यंरिच्यन्त। न त्रीण्युदं-

भवन्॥५५॥

स बृंह्तीमेवास्पृंशत्। द्वाभ्यांमक्षरांभ्याम्। अहोरात्राभ्यांमेव। तदांहुः। कृतमा सा देवाक्षंरा बृह्ती। यस्यान्तत्प्रत्यतिंष्ठत्। द्वादंश पौर्णमास्यः। द्वादशाष्टंकाः। द्वादंशामावास्याः। एषा वाव सा देवाक्षंरा बृहती॥५६॥

यस्यां तत्प्रत्यतिष्ठिदिति। यानि च छन्दाईस्यत्यिरच्यन्त। यानि च नोदर्भवन्। तानि निर्वीर्याणि हीनान्यंमन्यन्त। साऽब्रंबीद्वहृती। मामेव भूत्वा। मामुप सङ्श्रंयतेति। चतुर्भिरक्षरैरनुष्टुग्बृंहृतीं नोदंभवत्। चतुर्भिरक्षरैः पङ्किर्बृहृतीः मत्यंरिच्यत। तस्यांमेतानि चत्वार्यक्षराण्यपच्छिद्यां-दधात्॥५७॥

ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। अष्टाभि-रक्षरैरुष्णिग्बृंह्तीं नोदंभवत्। अष्टाभिरक्षरैष्ग्रिष्टुग्बृंह्तीमत्यं-रिच्यत। तस्यांमेतान्यष्टावृक्षरांण्यप्च्छिद्यांदधात्। ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। द्वाद्शभिर्क्षरैंगांयत्री बृंह्तीं नोदंभवत्। द्वाद्शभिर्क्षरैर्जगंती बृह्तीमत्यंरिच्यत। तस्यांमेतानि द्वादंशाक्षरांण्यपच्छिद्यांदधात्॥५८॥

ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। सौंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। छन्दा रेसि रथो मे भवत। युष्माभिरहमेतमध्वांनमनु सश्चराणीति। तस्यं गायत्री च जगंती च पृक्षावंभवताम्। उष्णिक्नं त्रिष्ठुप्च प्रष्ट्यौ। अनुष्टुप्चं पङ्किश्च धुर्यौ। बृह्त्येंबोद्धिरंभवत्। स एतं छंन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वांनमनु समंचरत्। एत॰ ह् वै छंन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वांनमनु सश्चरित। येनैष एतथ्सश्चरित। य एवं विद्वान्थ्सोमेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥५९॥

अुभुवुन्वाव सा देवाक्षरा बृह्त्यंदधाद्वादंशाक्षराण्यपुच्छिद्यांदधादास्थाय पद्गं॥—————[१२]

अुभेः कृत्तिका यत्पुण्यं देवस्यं सिवृतुर्बह्मवादिनः कत्यृतमेव देवा वा आयुंषः प्राणिमन्द्रीं दर्धाचो देवासुराः स प्रजापंतिः स संमुद्रो ये वै चृत्वार्स्तस्यावांचो द्वादंश॥१२॥ अुभेः कृत्तिका देवगृहा ऋतमेवर्ध्यामेव तिस्रः परांची्यें वे चृत्वारो नवंपश्चाशत्॥५९॥ अभेः कृत्तिका य उं चैनमेवं वेदं॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

अनुंमत्यै पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपति। ये प्रत्यश्चः शम्याया अवृशीयंन्ते। तन्नैर्ऋतमेकंकपालम्। इयं वा अनुंमतिः। इयं निर्ऋतिः। नैर्ऋतेन् पूर्वेण प्रचंरति। पाप्मानमेव निर्ऋतिं पूर्वां निरवंदयते। एकंकपालो भवति। एक्थेव निर्ऋतिं निरवंदयते। यदहुंत्वा गार्हंपत्य ईयुः॥१॥

रुद्रो भूत्वाऽग्निरंनूत्थायं। अध्वर्यं च यजंमानं च हन्यात्। वीह् स्वाहाऽऽहुंतिं जुषाण इत्याह। आहुंत्यैवैन र्श्शमयति। नार्तिमार्च्छंत्यध्वर्युर्न यजंमानः। एकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्ध निर्ऋत्ये भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै निर्ऋत्यै दिक्। स्वायांमेव दिशि निर्ऋतिं निरवंदयते॥२॥

स्वकृंत इरिणे जुहोति प्रद्रे वाँ। एतद्वै निर्ऋंत्या आयतंनम्। स्व एवायतंने निर्ऋंतिं निरवंदयते। एष ते निर्ऋते भाग इत्यांह। निर्दिशत्येवैनांम्। भूतें ह्विष्मंत्यसीत्यांह। भूतिंमे्वोपावंतिते। मुश्चेममश्हंस् इत्यांह। अश्हंस एवैनंं मुश्चति। अङ्गुष्ठाभ्यांं जुहोति॥३॥

अन्तत एव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णं वासंः कृष्णतूंषं दक्षिणा। एतद्वै निर्ऋत्यै रूपम्। रूपेणैव निर्ऋतिं निरवंदयते। अप्रतिक्षमायंन्ति। निर्ऋत्या अन्तर्हित्यै। स्वाह्य नमो य इदं चकारेति पुन्रेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। आहुंत्यैव नंमस्यन्तो गार्हंपत्यमुपावर्तन्ते। आनुम्तेन प्रचरित। इयं वा अनुमितिः॥४॥

इयमेवास्मै राज्यमन् मन्यते। धेनुर्दक्षिणा। इमामेव धेनुं कुंरुते। आदित्यं चुरुं निर्वपति। उभयींष्वेव प्रजास्वभिषिंच्यते। दैवीषु च मानुषीषु च। वरो दक्षिणा। वरो हि राज्य समृद्धे। आग्नावैष्णवमेकादशकपालं निर्वपति। अग्निः सर्वा देवताः॥५॥

विष्णुंर्यज्ञः। देवताँश्चैव यज्ञं चार्व रुन्थे। वामनो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनाँऽऽग्नेयः। यद्वांमनः। तेनं वैष्णवः समृंद्धौ। अग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति। अग्नीषोमाँभ्यां वा इन्द्रों वृत्रमंहन्नितिं। यदंग्नीषोमीयमेकां-दशकपालं निर्वपंति॥६॥

वार्त्रघमेव विजित्यै। हिरंण्यं दक्षिणा समृद्धौ। इन्द्रों वृत्र स्ट्रां स्ट्रां स्ट्रां स्ट्रां स्ट्रां वृत्र संट्रां स्ट्रां स्ट्रा

यद्वही। तेनाँऽऽग्नेयः। यदंष्भः। तेनै्न्द्रः समृंद्धै। आग्नेयमृष्टाकंपालुं निर्वपति। ऐन्द्रं दिधं। यदाँग्नेयो भवंति। अग्निर्वे यंज्ञमुखम्। युज्ञमुखमेवर्ष्धिं पुरस्ताँद्धत्ते। यदैन्द्रं दिधं॥८॥

इन्द्रियमेवावं रुन्थे। ऋषभो वही दक्षिणा। यहही। तेनाँऽऽग्नेयः। यदंषभः। तेनैन्द्रः समृद्धै। यावंतीवें प्रजा ओषंधीनामहुतानामाश्ञन्। ताः परांऽभवन्। आग्रयणं भंवति हुताद्यांय। यजंमानुस्यापंराभावाय॥९॥

देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयुः। ता इंन्द्राग्नी उदंजयताम्। तावेतमैंन्द्राग्नं द्वादंशकपालं निरंवृणाताम्। यदैंन्द्राग्नो भवत्युज्जित्ये। द्वादंशकपालो भवति। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। वैश्वदेव-श्वरुर्भवति। वैश्वदेवं वा अन्नम्ं। अन्नमेवास्मैं स्वदयति॥१०॥

प्रथमजो वृथ्सो दक्षिणा समृद्धे। सौम्य श्यांमाकं च्रं निर्वपति। सोमो वा अंकृष्टप्च्यस्य राजां। अकृष्टप्च्यमेवास्में स्वदयति। वासो दक्षिणा। सौम्य हि देवतंया वासः समृद्धे। सरंस्वत्ये च्रं निर्वपति। सरंस्वते च्रम्। मिथुनमेवावं रुन्थे। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धे। एति वा एष यंज्ञमुखादध्याः। योंऽग्नेर्देवतांया एति। अष्टावेतानि ह्वी १ पि भवन्ति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रोंऽग्निः। तेनैव यंज्ञमुखादध्यां अग्नेर्देवतांये नैति॥११॥

र्ड्युर्निरवंदयतेऽङ्गुष्टाभ्यां जुहोत्यनुंमतिर्देवतां निर्वपंति वही दक्षिणा यदैन्द्रं दध्यपंराभावाय स्वदयति गावौ दक्षिणा समृद्धौ पदम्म वैश्वदेवेन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टा न प्राजायन्त। सौंऽग्निरंकामयत। अहमिमाः प्रजनयेयमिति। स प्रजापंतये शुचंमदधात्। सोंऽशोचत्प्रजामिच्छमानः। तस्माद्यं चं प्रजा भुनक्ति यं च न। तावुभौ शोंचतः प्रजामिच्छमानौ। तास्वग्निमप्यंसृजत्। ता अग्निरध्यैंत्॥१२॥

सोमो रेतोंऽदधात्। स्विता प्राजंनयत्। सरंस्वती वाचंमदधात्। पूषाऽपोषयत्। ते वा एते त्रिः संवथ्सरस्य प्रयंज्यन्ते। ये देवाः पृष्टिंपतयः। संवथ्सरो वै प्रजापंतिः। संवथ्सरेणैवास्मै प्रजाः प्राजंनयत्। ताः प्रजा जाता मुरुतोंऽघ्नन्। अस्मानिष् न प्रायुंक्षतेतिं॥१३॥

स पृतं प्रजापंतिर्मारुतः सप्तकंपालमपश्यत्। तन्निरंवपत्। ततो वै प्रजाभ्योऽकल्पत। यन्मांरुतो निरुप्यते। यज्ञस्य क्रुप्त्यै। प्रजानामघाताय। सप्तकंपालो भवति। सप्तगंणा वै मुरुतः। गुणुश पुवास्मै विशं कल्पयति। स प्रजापंतिरशोचत्॥१४॥

याः पूर्वाः प्रजा असृक्षि। मुरुत्स्ता अंवधिषुः। कथमपंराः सृजेयेति। तस्य शुष्मं आण्डं भूतं निरंवर्तत। तद्धादंहरत्। तदंपोषयत्। तत्प्राजांयत। आण्डस्य वा एतद्रूपम्। यदामिक्षां। यद्युद्धरंति॥१५॥

प्रजा एव तद्यजंमानः पोषयति। वैश्वदेव्यांमिक्षां भवति। वैश्वदेव्यों वै प्रजाः। प्रजा एवास्मै प्रजंनयति। वार्जिन्मानयित। प्रजास्वेव प्रजातासु रेतो दधाति। द्यावापृथिव्यं एकंकपालो भवति। प्रजा एव प्रजाता द्यावापृथिवीभ्यांमुभ्यतः परि गृह्णाति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्॥१६॥

मामग्रे यजत। मया मुखेनासुंराञ्जेष्यथेति। मां द्वितीयमिति सोमौंऽब्रवीत्। मया राज्ञां जेष्यथेति। मां तृतीयमिति सविता। मया प्रसूता जेष्यथेति। मां चंतुर्थीमिति सरंस्वती। इन्द्रियं वोऽहं धौस्यामीति। मां पंश्वमिति पूषा। मयौ प्रतिष्ठयां जेष्यथेति॥१७॥

तेंऽग्निना मुखेनासुंरानजयन्। सोमेन राज्ञां। स्वित्रा प्रसूताः। सरंस्वतीन्द्रियमंदधात्। पूषा प्रंतिष्ठाऽऽसींत्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदेतानिं ह्वी १ विं निरुप्यन्ते विजित्यै। नोत्तरवेदिमुपंवपति। पृशवो वा उंत्तरवेदिः। अजांता इव् ह्यंतर्हिं पशवंः॥१८॥

त्रिवृद्धर्हिर्भविति। माता पिता पुत्रः। तदेव तिमिथुनम्। उल्बं गर्भो जरायुं। तदेव तिमिथुनम्। त्रेधा बर्हिः सन्नेद्धं भवित। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेव लोकेषु प्रतिं तिष्ठति। एकधा पुनः सन्नेद्धं भवित। एकं इवृ ह्ययं लोकः॥१९॥

अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रति तिष्ठति। प्रसुवो भवन्ति। प्रथमजामेव पृष्टिमवं रुन्धे। प्रथमजो वथ्सो दक्षिणा समृद्धै। पृषदाज्यं गृह्णाति। पशवो वै पृषदाज्यम्। पशूनेवावं रुन्धे। पश्चगृहीतं भवति। पाङ्गा हि पशवः। बहुरूपं भवति॥२०॥

बहुरूपा हि पृशवः समृंद्धै। अग्निं मंन्थन्ति। अग्निमुंखा वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। यद्ग्निं मन्थंन्ति। अग्निमुंखा एव तत्प्रजा यजंमानः सृजते। नवं प्रयाजा इंज्यन्ते। नवांनूयाजाः। अष्टौ ह्वी॰िषं। द्वावांघारौ। द्वावाज्यंभागौ॥२१॥

त्रिष्शथ्सम्पंद्यन्ते। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराज्ञैवान्नाद्यमवं रुन्धे। यजमानो वा एकंकपालः। तेज् आज्यम्। यदेकंकपाल आज्यमानयति। यजमानमेव तेजंसा समर्धयति। यजमानो वा एकंकपालः। पृशव आज्यम्॥२२॥

यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव पृशुभिः समर्धयति। यदल्पंमानयंत्। अल्पां एनं पृशवों भुअन्त उपंतिष्ठेरन्। यद्बह्वांनयंत्। बहवं एनं पृशवोऽभुंअन्त उपंतिष्ठेरन्। बह्वांनीयाविः पृष्ठं कुर्यात्। बहवं एवैनं पृशवों भुअन्त उपंतिष्ठन्ते। यजंमानो वा एकंकपालः। यदेकंकपालस्यावद्येत्॥२३॥

यजंमान्स्यावंद्येत्। उद्घा माद्येद्यजंमानः। प्र वां मीयेत। स्कृदेव होत्व्यः। स्कृदिव हि सुंवृगों लोकः। हुत्वाऽभि जुहोति। यजंमानमेव सुंवृगं लोकं गंमियत्वा। तेजंसा समर्थयति। यजंमानो वा एकंकपालः। सुवृगों लोक

आंहवनीर्यः॥२४॥

यदेकंकपालमाहवनीयं जुहोतिं। यजंमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमयति। यद्धस्तेन जुहुयात्। सुवर्गाल्लोकाद्यजंमानमवं-विध्येत्। सुचा जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्ये। यत्प्राङ्घर्षत। देवलोकम्भिजंयेत्। यद्दंक्षिणा पितृलोकम्। यत्प्रत्यक्॥२५॥

रक्षा रेसि युज्ञ र हेन्युः। यदुदङ्कं। मृनुष्युलोकम्भिजंयेत्। प्रतिष्ठितो होत्व्यः। एकंकपालं वे प्रतितिष्ठंन्तं द्यावापृथिवी अनु प्रति तिष्ठतः। द्यावापृथिवी ऋतवः। ऋतून् युज्ञः। युज्ञं यजमानः। यजमानं प्रजाः। तस्मात्प्रतिष्ठितो होत्व्यः॥२६॥

वाजिनों यजित। अग्निर्वायुः सूर्यः। ते वै वाजिनः। तानेव तद्यंजित। अथो खल्वांहुः। छन्दार्शस् वै वाजिन इति। तान्येव तद्यंजित। ऋख्सामे वा इन्द्रंस्य हरी सोम्पानौं। तयोः परिधयं आधानम्। वाजिनं भागधेयम्॥२७॥

यदप्रहत्य परिधीं जुंहुयात्। अन्तराधानाभ्यां घासं प्रयंच्छेत्। प्रहत्यं परिधीं जुंहोति। निराधानाभ्यामेव घासं प्रयंच्छिति। बर्हिषिं विषिश्चन्वाजिनमा नंयित। प्रजा वै बर्हिः। रेतो वाजिनम्। प्रजास्वेव रेतो दधाति। समुपहूर्यं भक्षयन्ति। पृतथ्सोमपीथा ह्येते। अथो आत्मन्नेव रेतो दधते। यजमान उत्तमो भंक्षयित। पृशवो वै वाजिनम्। यजमान एव प्शून्प्रतिष्ठापयन्ति॥२८॥

लोको बंहुरूपं भवत्याज्यभागौ पुशव आज्यमवद्येवांहुवनीयः प्रत्यक्तस्मात्प्रतिष्ठितो होत्व्यों भागुधेर्यमेते चत्वारिं च॥ 🕄

प्रजापंतिः सिवता भूत्वा प्रजा अंसृजत। ता एंन्मत्यंमन्यन्त। ता अंस्मादपांक्रामन्। ता वर्रणो भूत्वा प्रजा वर्रणेनाग्राहयत्। ताः प्रजा वर्रणगृहीताः। प्रजापंतिं पुन्रपांधावन्नाथिम् च्छमांनाः। स एतान्य्रजापंतिर्वरुणप्रघासानंपश्यत्। तां निरंवपत्। तैर्वे स प्रजा वंरुणपाशादंमुञ्चत्। यद्वंरुणप्रघासा निरुप्यन्ते॥२९॥

प्रजानामवंरुणग्राहाय। तासां दक्षिणो बाहुर्न्यक्र आसींत्। स्वयः प्रसृतः। स एतां द्वितीयां दक्षिणतो वेदिमुदंहन्। ततो वे स प्रजानां दक्षिणं बाहुं प्रासारयत्। यद्वितीयां दक्षिणतो वेदिमुद्धन्ति। प्रजानांमेव तद्यजंमानो दक्षिणं बाहुं प्रसारयित। तस्मां चातुर्मास्ययाज्यं मुष्मिं लोक उभ्याबांहुः। यज्ञाभिजित् क् ह्यंस्य। पृथमात्राद्वेदी असंम्भिन्ने भवतः॥३०॥

तस्मौत्पृथमात्रं व्यश्सौं। उत्तरस्यां वेद्यांमुत्तरवेदिमुपं वपति। पृशवो वा उंत्तरवेदिः। पृशूनेवावं रुन्थे। अथो यज्ञपुरुषोऽनंन्तरित्यै। पृतद्वौह्मणान्येव पश्चं हुवीश्षिं। अथैष ऐन्द्राग्नो भंवति। प्राणापानौ वा पृतौ देवानौम्। यदिंन्द्राग्नी। यदैन्द्राग्नो भवंति॥३१॥

प्राणापानावेवावं रुन्धे। ओजो बलं वा पृतौ देवानांम्। यदिन्द्राग्नी। यदैन्द्राग्नो भवंति। ओजो बलमेवावं रुन्धे। मारुत्यांमिक्षां भवति। वारुण्यांमिक्षां। मेषी चं मेषश्चं भवतः। मिथुना एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्वति। लोमशौ भंवतो मेध्यत्वायं॥३२॥

उत्तरस्यां वेद्यांमन्यानिं ह्वी १ षिं सादयति। दक्षिणायां मारुतीम्। अपधुरमेवैनां युनक्ति। अथो ओजं एवासामवं हरति। तस्माद्वह्मणश्च क्षत्राच्च विशों उन्यतो उपक्रमिणीः। मारुत्या पूर्वया प्रचंरति। अनृंतमेवावं यजते। वारुण्योत्तरया। अन्तत एव वरुणमवं यजते। यदेवाध्वर्युः करोतिं॥३४॥

तत्प्रंतिप्रस्थाता कंरोति। तस्माद्यच्छ्रेयाँन्करोतिं। तत्पापीं-यान्करोति। पत्नीं वाचयति। मेध्यांमेवैनां करोति। अथो तपं एवैनामुपं नयति। यज्जार सन्तन्न प्रंब्रूयात्। प्रियं ज्ञाति र रुन्थ्यात्। असौ में जार इति निर्दिशेत्। निर्दिश्यैवैनं

वरुणपाशेनं ग्राहयति॥३५॥

प्रघास्यान् हवामह् इति पत्नीमुदानंयति। अह्नंतैवैनांम्। यत्पत्नी पुरोनुवाक्यांमनुब्रूयात्। निर्वींयों यजंमानः स्यात्। यजंमानोऽन्वांह। आत्मन्नेव वीर्यं धत्ते। उभौ याज्यार्थं सवीर्यत्वायं। यद्गामे यदरंण्य इत्यांह। यथोदितमेव वर्रणमवं यजते। यजमानदेवत्यों वा आहवनीयः॥३६॥

भ्रातृ व्यदेवत्यों दक्षिणः। यदांहवनीयें जुहुयात्। यजंमानं वरुणपाशेनं ग्राहयेत्। दक्षिणेऽग्रौ जुंहोति। भ्रातृं व्यमेव वंरुणपाशेनं ग्राहयति। शूर्पेण जुहोति। अन्यंमेव वरुणमवं यजते। शीर्षत्रेधि निधायं जुहोति। शीर्षत एव वरुणमवं यजते। प्रत्यिङ्गिष्ठं जुहोति॥३७॥

प्रत्यङ्केव वंरुणपाशान्निर्मृच्यते। अऋन्कर्म कर्मृकृत् इत्याह। देवाऽनृणं निरवदायं। अनृणा गृहानुप प्रेतेति वावैतदाह। वरुणगृहीतं वा एतद्यज्ञस्यं। यद्यजुंषा गृहीतस्यांतिरिच्यंते। तुषांश्च निष्कासश्चं। तुषैश्च निष्कासेनं चावभृथमवैति। वरुणगृहीतेनैव वरुणमवयजते। अपों-ऽवभृथमवैति॥३८॥

अपसु वै वर्रुणः। साक्षादेव वर्रुणमवंयजते। प्रति-युतो वर्रुणस्य पाश इत्याह। वुरुणपाशादेव निर्मुच्यते। अप्रतीक्षमा यन्ति। वरुणस्यान्तर्हित्यै। एधौऽस्येधिषीमही- त्यांह। समिधैवाग्निं नंमस्यन्तं उपायंन्ति। तेजोंऽसि तेजो मियं धेहीत्यांह। तेजं पुवाऽऽत्मन्धंत्ते॥३९॥ करोति ग्राहयत्याहवनीयस्तिष्टं जुहोत्यपंऽवभ्यमवैति धते॥—————[५]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममेयमनीक-वती तुनः। तां प्रीणीत। अथासुरानुभि भविष्यथेति। ते देवा अग्नयेऽनीकवते पुरोडाशमष्टाकपालं निरंवपन्। सौंऽग्निरनीकवान्थ्स्वेनं भाग्धेयेन प्रीतः। चतुर्धाऽनीकान्य-जनयत। ततो देवा अभवन्। पराऽसुराः॥४०॥

यद्ग्रयेऽनींकवते पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपंति। अग्निमेवानींकवन्त्र् स्वेनं भाग्धेयेन प्रीणाति। सौंऽग्निरनींकवान्थ्स्वेनं भाग्धेयेन प्रीतः। चतुर्धाऽनींकानि जनयते। असौ वा आंदित्योंऽग्निरनींकवान्। तस्यं रृश्मयो-ऽनींकानि। साक्ष् सूर्येणोद्यता निर्वपति। साक्षादेवास्मा अनींकानि जनयति। तेऽसुंगः परांजिता यन्तः। द्यावापृथिवी उपांश्रयन्॥४१॥

ते देवा मुरुद्धाः सान्तपुनेभ्यंश्चरुं निरंवपन्। तान्द्यावांपृथिवीभ्यांमेवोभ्यतः समंतपन्। यन्मुरुद्धाः सान्तपुनेभ्यंश्चरुं निर्वपंति। द्यावांपृथिवीभ्यांमेव तद्भ्यतो यजमानो भ्रातृंव्यान्थ्यन्तंपति। मुध्यन्दिने निर्वपति। तर्हि हि तेक्ष्णिष्टं तपंति। चुरुर्भवति। सूर्वतं पुवैनान्थ्यन्तंपति। ते देवाः श्वोविज्यिनः सन्तंः। सर्वासां दुग्धे गृहमेधीयं चुरुं

निरंवपन्॥४२॥

आशिता एवाद्योपंवसाम। कस्य वाऽहेदम्। कस्यं वा श्वो भवितेति। स शृतोंऽभवत्। तस्याहुंतस्य नाश्जन्ं। न हि देवा अहुंतस्याश्जन्तिं। तैंऽब्रुवन्। कस्मां इम॰ हौंष्याम् इतिं। मुरुद्धों गृहमेधिभ्यं इत्यंब्रुवन्। तं मुरुद्धों गृहमेधिभ्यों-ऽजुहवुः॥४३॥

ततों देवा अभंवन्। पराऽसुंराः। यस्यैवं विदुषों मुरुद्धों गृहमेधिभ्यों गृहे जुह्वंति। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंब्यो भवति। यद्वै यज्ञस्यं पाकुत्रा क्रियतें। पृशुब्यं तत्। पाकुत्रा वा पृतिक्रंयते। यन्नेध्माबुर्हिभवंति। न सांमिधेनीर्न्वाहं॥४४॥

न प्रयाजा इज्यन्तै। नानूयाजाः। य एवं वेदं। पशुमान्भवित। आज्यंभागौ यजित। यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरेति। मुरुतों गृहमेधिनों यजित। भागधेयेंनैवैनान्थ्समंधियित। अग्निश्स्वंष्टकृतं यजित प्रतिष्ठित्यै। इडाँन्तो भवित। पशवो वा इडाँ। पशुष्वेवोपिर्षष्टात्प्रतिं तिष्ठति॥४५॥ अस्य अभ्यन्तरमेश्यं कुरु निरंबपन्नज्ञहरकुत्वाहेडाँनो भवित है वं॥———[६]

यत्पत्नीं गृहमेधीयंस्याश्जीयात्। गृहुमेध्येव स्याँत्। वि त्वंस्य युज्ञ ऋष्येत। यन्नाश्जीयात्। अगृहमेधी स्यात्। नास्यं युज्ञो व्यृंद्धोत। प्रतिवेशं पचेयुः। तस्याँश्जीयात्। गृहुमेध्येव भंवति। नास्यं यज्ञो व्यृंद्धते॥४६॥

ते देवा गृंहमेधीयेंनेष्ट्वा। आशिंता अभवन्। आञ्चंताभ्यंञ्जत।

अनुं वृथ्सानंवासयन्। तेभ्योऽसुंराः क्षुधं प्राहिण्वन्। सा देवेषुं लोकमवित्वा। असुंरान्पुनंरगच्छत्। गृह्मेधीयेनेष्ट्वा। आशिता भवन्ति। आञ्जतेऽभ्यंञ्जते॥४७॥

अनुं वृथ्सान् वांसयन्ति। भ्रातृंव्यायैव तद्यजंमानः क्षुधं प्रिहंणोति। ते देवा गृंहमेधीयेंनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्कासं न्यंदधुः। अस्मानेव श्व इन्द्रों निहिंतभाग उपावर्तितेति। तानिन्द्रों निहिंतभाग उपावर्तितेति। तानिन्द्रों निहिंतभाग उपावर्तित। गृह्मेधीयेंनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्कासं निदंध्यात्। इन्द्रं एवैनं निहिंतभाग उपावर्तते। गार्हंपत्ये जुहोति॥४८॥

भागधेयेनेवेन् समर्धयित। ऋषभमाह्वयित। वृषद्भार एवास्य सः। अथों इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यजमानो भ्रातृव्यंस्य वृङ्का। इन्द्रों वृत्र हत्वा। पर्गं परावतंमगच्छत्। अपाराधमिति मन्यमानः। सौंऽब्रवीत्। क इदं वेदिष्यतीति। तैंऽब्रुवन्मरुतो वरं वृणामहै॥४९॥

अर्थ व्यं वेदाम। अस्मभ्यंमेव प्रंथम हिविर्निरुप्याता इति। त एंनमध्यंक्रीडन्। तत्क्रीडिनांं क्रीडित्वम्। यन्मुरुद्धाः क्रीडिभ्यः प्रथम हिविर्निरुप्यते विजित्ये। साक सूर्येणोद्यता निर्वपति। एतस्मिन्वे लोक इन्द्रों वृत्रमहन्थ्समृद्धौ। एतद्ग्राह्मणान्येव पश्चं ह्वी धि। एतद्ग्राह्मण ऐन्द्राग्नः। अथैष ऐन्द्रश्चरुर्भवति॥५०॥

वैश्वदेवेन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता वंरुण-प्रघासैर्वरुणपाशादंमुञ्जत्। साकुमेधेः प्रत्यंस्थापयत्। त्र्यंम्बकै रुद्रं निरवादयत। पितृयुज्ञेनं सुवृगं लोकमंगमयत्। यद्वैश्वदेवेन यजंते। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। ता वंरुणप्रघासैर्वरुणपाशान्मुंञ्चति। साकुमेधेः प्रतिष्ठापयति। त्र्यंम्बकै रुद्रं निरवदयते॥५२॥

पितृयज्ञेनं सुवर्गं लोकं गंमयति। दक्षिणतः प्रांचीनावीती निर्वपति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। अनांदृत्य तत्। उत्तर्त एवोपवीय निर्वपेत्। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तें। अथो यदेव दक्षिणार्धेऽधि श्रयंति। तेनं दक्षिणावृत्। सोमांय पितृमते पुरोडाश् ष्टूंपालं निर्वपति। संवथ्सरो वै सोमंः पितृमान्॥५३॥

संवथ्सरमेव प्रीणाति। पितृभ्यों बर्हिषद्भी धानाः। मासा वै पितरों बर्हिषदेः। मासानेव प्रीणाति। यस्मिन्वा ऋतौ पुरुषः प्रमीयते। सौंऽस्यामुष्मिं ह्योके भवति। बहुरूपा धाना भंवन्ति। अहोरात्राणांमभिजिंत्यै। पितृभ्योंऽग्निष्वात्तेभ्यों मन्थम्। अर्धमासा वै पितरौंऽग्निष्वात्ताः॥५४॥

अर्धमासानेव प्रीणाति। अभिवान्यांयै दुग्धे भंवति। सा हि पितृदेवत्यं दुहे। यत्पूर्णम्। तन्मंनुष्यांणाम्। उपर्यर्धो देवानांम्। अर्धः पितृणाम्। अर्ध उपमन्थति। अर्धो हि पितृणाम्। एकयोपंमन्थति॥५५॥

एका हि पिंतृणाम्। दक्षिणोपंमन्थति। दक्षिणावृद्धि पिंतृणाम्। अनारभ्योपंमन्थति। तद्धि पितृन्गच्छंति। इमान्दिशं वेदिमुद्धंन्ति। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तै। चतुंः स्रक्तिर्भवति। सर्वा ह्यनु दिशंः पितरंः। अखांता भवति॥५६॥

खाता हि देवानांम्। मृध्यतों ऽग्निराधीयते। अन्ततो हि देवानांमाधीयतें। वर्षीयानिध्म इध्माद्भेवति व्यावृत्त्ये। परिश्रयति। अन्तर्हितो हि पितृलोको मंनुष्यलोकात्। यत्पर्रुषि दिनम्। तद्देवानांम्। यदंन्तरा। तन्मंनुष्यांणाम्॥५७॥

यथ्समूलिम्। तित्पंतृणाम्। समूलं ब्रहिर्भवित् व्यावृत्त्यै। दक्षिणा स्तृणाति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। त्रिः पर्येति। तृतीये वा इतो लोके पितर्रः। तानेव प्रीणाति। त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५८॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। यत्प्रस्त्रं यज्ञुंषा

गृह्णीयात्। प्रमायुंको यजंमानः स्यात्। यन्न गृह्णीयात्। अनायतनः स्यात्। तूष्णीमेव न्यंस्येत्। न प्रमायुंको भवंति। नानायतनः। यत्रीन्यंरिधीन्यंरिदध्यात्॥५९॥

मृत्युना यजंमानं परिगृह्णीयात्। यन्न पंरिद्ध्यात्। रक्षां स्ति यज्ञं हंन्युः। द्वौ पंरिधी परिद्धाति। रक्षंसामपंहत्ये। अथो मृत्योरेव यजंमान्मुथ्सृंजित। यत्रीणि त्रीणि ह्वी इष्युंदाहरेयुः। त्रयंस्रय एषा साकं प्रमीयेरन्। एकैकमनूचीनांन्युदाहंरिन्तः। एकैक प्वेषांमन्वश्चः प्रमीयते। कृशिपुं किशप्र्यांय। उपबर्हंणमुपबर्हण्यांय। आञ्जंनमाञ्चन्यांय। अभ्यञ्जंनमभ्यञ्चन्यांय। यथाभागमे-वैनांन्प्रीणाति॥६०॥

निरर्वदयते पितृमानिग्नेष्वात्ता एक्योपं मन्थृत्यखाता भवति मनुष्याणां पद्यन्ते परिदृध्यान्मीयते पश्चं च॥——[८]

अग्नये देवेभ्यः पितृभ्यः सिम्ध्यमानायान् ब्रूहीत्यांह। उभये हि देवाश्चं पितरश्चेज्यन्ते। एकामन्वांह। एका हि पितृणाम्। त्रिरन्वांह। त्रिर्हि देवानांम्। आघारावाघांरयति। यज्ञपुरुषोरनंन्तरित्ये। नार्षेयं वृंणीते। न होतांरम्॥६१॥

यदार्षेयं वृंणीत। यद्धोतारम्। प्रमायुंको यजमानः स्यात्। प्रमायुंको होता। तस्मान्न वृंणीते। यजमानस्य होतुंर्गोपीथायं। अपं बर्हिषः प्रयाजान् यंजति। प्रजा वै ब्र्हिः। प्रजा एव मृत्योरुथ्मृंजति। आज्यंभागौ यजति॥६२॥

यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरंति। प्राचीनावीती सोमं यजति।

पितृदेवत्यां हि। एषाऽऽहुंतिः। पश्चकृत्वोऽवं द्यति। पश्च ह्यंता देवताः। द्वे पुरोऽनुवाक्यः। याज्यां देवतां वषद्वारः। ता एव प्रीणाति। सन्तंतमवं द्यति॥६३॥

ऋतूना सन्तंत्यै। प्रैवैभ्यः पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽऽह। प्रणंयति द्वितीयंया। गुमयंति याज्यंया। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। अहं एवैनान्पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽत्यानंयति। रात्रिंयै द्वितीयंया। ऐवैनान् याज्यंया गमयति। दक्षिणतों-ऽवदायं। उदङ्कातं कामति व्यावृत्त्यै॥६४॥

आ स्वधेत्याश्रांवयति। अस्तुं स्वधेतिं प्रत्याश्रांवयति। स्वधा नम् इति वषंद्वरोति। स्वधाकारो हि पितृणाम्। सोम्मग्रें यजति। सोमंप्रयाजा हि पितरंः। सोमं पितृमन्तं यजति। संवथ्सरो वै सोमंः पितृमान्। संवथ्सरमेव तद्यंजति। पितृन्बंहिषदों यजति॥६५॥

ये वै यज्वांनः। ते पितरों बर्हिषदः। तानेव तद्यंजित। पितृनंग्निष्वात्तान् यंजित। ये वा अयंज्वानो गृहमेधिनः। ते पितरौंऽग्निष्वात्ताः। तानेव तद्यंजिति। अग्निं कंव्यवाहंनं यजित। य एव पितृणामग्निः। तमेव तद्यंजिति॥६६॥

अथो यथाऽग्निः स्विष्टकृतं यजिति। ताहगेव तत्। एतत्ते तत् ये च त्वामन्वितिं तिसृषुं स्रक्तीषु निदंधाति। तस्मादा तृतीयात्पुरुषान्नाम् न गृह्णन्ति। एतावन्तो हीज्यन्तैं। अत्रं पितरो यथाभागं मन्दध्वमित्यांह। ह्लीका हि पितरंः। उदंश्चो निष्क्रांमन्ति। एषा वै मनुष्यांणां दिक्। स्वामेव तदिशमनु निष्क्रांमन्ति॥६७॥

आह्वनीयमुपंतिष्ठन्ते। न्यंवास्मै तद्भुवते। यथ्सत्याहवनीयैं। अथान्यत्र चरंन्ति। आतिमेतोरुपंतिष्ठन्ते। अग्निमेवोपंद्रष्टारं कृत्वा। पितृन्निरवंदयन्ते। अन्तं वा एते प्राणानां गच्छन्ति। य आतिमेतोरुप तिष्ठंन्ते। सुसन्दर्शं त्वा व्यमित्यांह॥६८॥

प्राणो वै सुंस्न्हक्। प्राणमेवाऽऽत्मन्दंधते। योजा न्विन्द्र ते हरी इत्यांह। प्राणमेव पुनरयुक्त। अक्षन्नमींमदन्त हीति गार्हंपत्यमुपंतिष्ठन्ते। अक्षन्नमींमदन्ताथ त्वोपंतिष्ठामह् इति वावैतदांह। अमींमदन्त पितरंः सोम्या इत्यभि प्रपंद्यन्ते। अमींमदन्त पितरोऽथं त्वाऽभि प्रपंद्यामह् इति वावैतदांह। अपः परिषिश्चति। मार्जयंत्येवैनान्॥६९॥

अथों तुर्पयंत्येव। तृष्यंति प्रजयां पृशुभिः। य एवं वेदं। अपं बर्हिषावनूयाजौ यंजति। प्रजा वै बर्हिः। प्रजा एव मृत्योरुथ्मृंजति। चृतुरंः प्रयाजान् यंजति। द्वावंनूयाजौ। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। न पत्यन्वांस्ते। न संयांजयन्ति। यत्पत्यन्वासीत। यथ्संयाजयेयः। प्रमायंका स्यात्। तस्मान्नान्वांस्ते। न संयांजयन्ति। पत्निये गोपीथायं॥७०॥

प्रतिपूरुषमेकंकपालां निर्वपिति। जाता एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एकमितिरिक्तम्। जनिष्यमाणा एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एकंकपाला भवन्ति। एक्धैव रुद्रं निरवंदयते। नाभिघांरयति। यदंभिघारयेत्। अन्तर्वचारिणर्रं रुद्रं कुंर्यात्। एकोल्मुकेनं यन्ति॥७१॥

ति रुद्रस्यं भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्रो वा अपृशुकांया आहुंत्यै नातिष्ठत। असौ ते पृशुरिति निर्दिशेद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तमंस्मै पृशुं निर्दिशति। यदि न द्विष्यात्। आखुस्ते पृशुरितिं ब्रूयात्॥७२॥

न ग्राम्यान्पशून् हिनस्ति। नारण्यान्। चृतुष्पथे जुंहोति। एष वा अंग्रीनां पड्वीशो नामं। अग्निवत्येव जुंहोति। मध्यमेनं पूर्णेनं जुहोति। सुग्घ्येषा। अथो खलुं। अन्तमेनैव होत्व्यम्। अन्तुत एव रुद्रं निरवंदयते॥७३॥

पुष ते रुद्र भागः सह स्वस्नाऽम्बिक्येत्यांह। श्ररह्वा अस्याम्बिका स्वसा। तया वा एष हिनस्ति। य॰ हिनस्ति। तयैवैन॰ सह शंमयति। भेषजङ्गव इत्यांह। यावेन्त एव ग्राम्याः पृशवंः। तेभ्यों भेषुजं कंरोति। अवाम्ब रुद्रमंदिमृहीत्यांह। आमेवैतामा शास्ते॥७४॥

त्र्यंम्बकं यजामह् इत्यांह। मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतादिति

वावैतदांह। उत्किरन्ति। भगस्य लीफ्सन्ते। मूतंकृत्वा-ऽऽसंजन्ति। यथा जनं यतंऽव्सं क्रोतिं। तादृगेव तत्। एष ते रुद्र भाग इत्यांह निरवंत्त्ये। अप्रतीक्षमा यन्ति। अपः परिषिश्चति। रुद्रस्यान्तर्हित्ये। प्र वा एतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये त्र्यंम्बकैश्चरंन्ति। आदित्यं च्रुं पुनरेत्य निर्वपति। इ्यं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥७५॥

अर्नुमत्ये वैश्वदेवेन ताः सृष्टाञ्चिवृत्र्युजापंतिः सिवतोत्तंरस्यान्देवासुराः सौंऽग्निर्यत्पत्नीं वैश्वदेवेन ता वंरुणप्रघासैरुग्नयं देवेभ्यः प्रतिपूरुषं दर्श॥१०॥

ुन्तेमत्ये प्रथमुजो वृथ्सो बंहुरूपा हि पुशवुस्तस्मात्पृथमात्रं यदुग्रयेऽनींकवत उद्धारं वा अग्नयें देवेभ्यः प्रतिपूरुषं पर्श्वसप्ततिः॥७५॥

अनुंमत्यै प्रतिं तिष्ठन्ति॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्ठः प्रपातकः समाप्तः॥

॥ सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

पुराद्वाँह्मणान्येव पश्चं ह्वी १ षिं। अथेन्द्रांय शुनासीरांय पुरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपिति। संवथ्सरो वा इन्द्राशुनासीरंः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्थे। वायव्यं पयो भवति। वायुर्वे वृष्ट्ये प्रदापियता। स पुवास्मे वृष्टिं प्रदापयति। सौर्यं एकंकपालो भवति। सूर्येण वा अमुष्मिं ल्लोके वृष्टिंधृता। स पुवास्मे वृष्टिं निर्यच्छिति॥१॥

द्वादशगव सीरं दक्षिणा समृद्धे। देवासुराः संयंता आसन्। ते देवा अग्निमंब्रुवन्। त्वयां वीरेणासुरान्भिभंवामेति। सौंऽब्रवीत्। त्रेधाऽहमात्मानं विकंरिष्य इति। स त्रेधा-ऽऽत्मानं व्यंकुरुत। अग्निं तृतींयम्। रुद्रं तृतींयम्। वर्रणं तृतींयम्॥२॥

सौंऽब्रवीत्। क इदं तुरीयमितिं। अहमितीन्द्रौं-ऽब्रवीत्। सन्तु सृंजावहा इतिं। तौ समंसृजेताम्। स इन्द्रंस्तुरीयंमभवत्। यदिन्द्रंस्तुरीयमभंवत्। तदिंन्द्र-तुरीयस्येन्द्रतुरीयत्वम्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदिंन्द्रतुरीयं निरुप्यते विजित्ये॥३॥

वृहिनीं धेनुर्दक्षिणा। यद्घहिनीं। तेनांऽऽग्नेयी। यद्गोः। तेनं रौद्री। यद्धेनुः। तेनैन्द्री। यथ्म्री स्ती दान्ता। तेनं वारुणी समृद्धे। प्रजापंतिर्यज्ञमंसृजत॥४॥ त १ सृष्ट १ रक्षा १ स्यजिघा १ सन्। स पृताः प्रजा-पंतिरात्मनो देवता निरंमिमीत। ताभिर्वे स दिग्भ्यो रक्षा १ सि प्राणुंदत। यत्पंश्चावृत्तीयं जुहोति। दिग्भ्य पृव तद्यजंमानो रक्षा १ सि प्रणुंदते। समूंढ १ रक्षः सन्दंग्ध १ रक्ष् इत्याह। रक्षा १ स्येव सन्दंहति। अग्नयं रक्षोघ्ने स्वाहेत्यांह। देवतांभ्य पृव विजिग्यानाभ्यों भाग्धेयं करोति। प्रष्टिवाही रथो दक्षिणा समृंद्धे॥ ५॥

इन्द्रों वृत्र हत्वा। असुंरान्पराभाव्यं। नमुंचिमासुरं नार्लभत। त श्रच्यांऽगृह्णात्। तौ समेलभेताम्। सौंऽस्माद्भिशुंनतरोऽभवत्। सौंऽब्रवीत्। सन्धा श् सन्दंधावहै। अथु त्वाऽवं स्रक्ष्यामि। न मा शुष्केण् नाऽऽर्द्रेणं हनः॥६॥

न दिवा न नक्तमितिं। स पृतम्पां फेनंमसिश्चत्। न वा पृष शुष्को नाऽऽर्द्रो व्युष्टाऽऽसीत्। अनुंदितः सूर्यः। न वा पृतद्दिवा न नक्तम्। तस्यैतस्मिं ह्लोके। अपां फेनेन् शिर् उदंवर्तयत्। तदेनमन्वंवर्तत। मित्रंद्रुगितिं॥७॥

स पृतानंपामार्गानंजनयत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स रक्षाङ्स्यपाहतः। यदंपामार्गहोमो भवंति। रक्षंसामपंहत्यै। पृकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्धे रक्षंसां भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै रक्षंसां दिक्। स्वायांमेव दिशि रक्षांसी हन्ति॥८॥ स्वर्नृत इरिणे जुहोति प्रद्रे वां। एतद्वे रक्षंसामायतनंम्। स्व एवायतंने रक्षां सि हन्ति। पण्मयेन स्रुवेणं जुहोति। ब्रह्मं वे प्णः। ब्रह्मंणेव रक्षां सि हन्ति। देवस्यं त्वा सिवृतः प्रंस्व इत्यांह। सिवृतृप्रंसूत एव रक्षां सि हन्ति। हृत र रक्षो-ऽवंधिष्म रक्ष इत्यांह। रक्षंसा स्रुवेणा निर्वंत्ये। अप्रतीक्षमायंन्ति। रक्षंसाम्नत्र्हित्ये॥९॥ युद्धति वर्षणं वर्तीयं विजित्या अस्जत् सर्ग्धे हने विश्वृत्तिति हित् स्त्ये वर्ति वा——[१]

धात्रे पुरोडाशं द्वादेशकपालं निर्वपित। संवथ्सरो वै धाता। संवथ्सरेणैवास्मैं प्रजाः प्रजनयित। अन्वेवास्मा अनुमितर्मन्यते। राते राका। प्र सिनीवाली जनयित। प्रजास्वेव प्रजातासु कुह्वां वाचं दधाति। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धे। आग्नावैष्णवमेकांदशकपालं निर्वपित। ऐन्द्रावैष्णवमेकांदशकपालम्॥१०॥

वैष्ण्वं त्रिंकपालम्। वीर्यं वा अग्निः। वीर्यमिन्द्रेः। वीर्यं विष्णुः। प्रजा एव प्रजाता वीर्ये प्रतिष्ठापयति। तस्मात्प्रजा वीर्यावतीः। वाम्न ऋष्भो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनांऽऽग्नेयः। यदंषभः॥११॥

तेनैन्द्रः। यद्वांमनः। तेनं वैष्णवः समृद्धे। अग्नीषोमीयमेकां-दशकपालुं निर्वपति। इन्द्रासोमीयमेकांदशकपालम्। सौम्यं चरुम्। सोमो वै रेतोधाः। अग्निः प्रजानां प्रजनयिता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापयिता। सोमं पुवास्मै रेतो दर्धाति॥१२॥ अग्निः प्रजां प्रजांनयति। वृद्धामिन्द्रः प्रयंच्छति। ब्रुदिक्षिणा समृद्धै। सोमापौष्णं चरुं निर्वपति। ऐन्द्रापौष्णं चरुम्। सोमो वै रेतोधाः। पूषा पंशूनां प्रजनियता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापयिता। सोमं एवास्मै रेतो दधांति। पूषा पश्नप्रजनयति॥१३॥

वृद्धानिन्द्रः प्रयंच्छति। पौष्णश्चरुभंवति। इयं वै पूषा। अस्यामेव प्रति तिष्ठति। श्यामो दक्षिणा समृद्धौ। बहु वै पुरुषो मेध्यमुपंगच्छति। वैश्वान्तरं द्वादंशकपालं निर्वपति। संवथ्सरो वा अग्निर्वैश्वान्रः। संवथ्सरेणैवैन ई स्वदयति। हिर्रण्यं दक्षिणा॥१४॥

प्वित्रं वे हिरंण्यम्। पुनात्येवेनम्ं। बहु वे राजन्योऽनृंतं करोति। उपं जाम्ये हरंते। जिनातिं ब्राह्मणम्। वदत्यनृंतम्। अनृंते खलु वे क्रियमाणे वरुणो गृह्णाति। वारुणं यवमयं चरुं निर्वपति। वरुणपाशादेवेनं मुश्रति। अश्वो दक्षिणा। वारुणो हि देवत्याऽश्वः समृंद्धौ॥१५॥

पुंन्द्रा<u>व</u>ेष्ण्वमेकांदशकपालुं यदंपुभो दर्धाति पूषा पुश्_{न्}प्रजनयति हिरंण्युं दक्षिणा दक्षिणकं च॥———[२]

र्विनांमेतानिं ह्वी १ षिं भवन्ति। एते वै राष्ट्रस्यं प्रदातारेः। एतेंऽपादातारेः। य एव राष्ट्रस्यं प्रदातारेः। येंऽपादातारेः। त एवास्मैं राष्ट्रं प्रयंच्छन्ति। राष्ट्रमेव भवति। यथ्संमाहृत्यं निर्वपेत्। अरंबिनः स्युः। यथायथं निर्वपति रिवृत्वायं॥१६॥

यथ्सद्यो निर्वपेत्। यावंतीमेकंन ह्विषाऽऽशिषंमव रुन्धे। तावंतीमवंरुन्धीत। अन्वहन्निर्वंपति। भूयंसीमेवाशिषमवं रुन्धे। भूयंसो यज्ञऋतूनुपैति। बार्हस्पत्यं चरुं निर्वंपति ब्रह्मणो गृहे। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंन्नेव क्षत्रमन्वारंम्भयति। शितिपृष्ठो दक्षिणा समृंद्धौ॥१७॥

पुन्द्रमेकांदशकपाल र राज्न्यंस्य गृहे। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। ऋष्भो दक्षिणा समृद्धे। आदित्यं चरुं महिष्ये गृहे। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। धेनुर्दक्षिणा समृद्धे। भगांय चरुं वावातांये गृहे। भगंमेवास्मिन्दधाति। विचित्तगर्भा पष्ठौही दक्षिणा समृद्धे॥१८॥

नैर्ऋतं चुरुं पंरिवृत्त्यै गृहे कृष्णानां व्रीहीणां न्खनिर्भित्रम्। पाप्मानमेव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णा कूटा दक्षिणा समृद्धौ। आग्नेयमृष्टाकंपाल स् सेनान्यो गृहे। सेनामेवास्य सङ्श्यंति। हिर्णयं दक्षिणा समृद्धौ। वारुणं दश्वंकपाल स् सूतस्यं गृहे। वरुणस्वमेवावं रुन्थे। महानिरष्टो दक्षिणा समृद्धौ। मारुत स् सप्तकंपालं ग्रामण्यो गृहे॥१९॥

अत्रं वै मुरुतः। अत्रंमेवावं रुन्धे। पृश्ञिदक्षिणा समृद्धे। सावित्रं द्वादंशकपालं क्षत्तुर्गृहे प्रसूत्यै। उपध्वस्तो दक्षिणा समृद्धे। आश्विनं द्विकपालः संङ्ग्रहीतुर्गृहे। अश्विनौ वै देवानां भिषजौ। ताभ्यांमेवास्मे भेषजं करोति। स्वात्यौ दक्षिणा समृद्धे। पौष्णं चुरुं भागदुघस्यं गृहे॥२०॥ अत्रं वे पूषा। अत्रंमेवावं रुन्धे। श्यामो दक्षिणा समृंद्धै। रौद्रं गांवीधुकं चरुमंक्षावापस्यं गृहे। अन्तृत एव रुद्रं निरवंदयते। शबल उद्वांरो दक्षिणा समृंद्धै। द्वादंशैतानिं ह्वी १ षि भवन्ति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्मैं राष्ट्रमवं रुन्धे। राष्ट्रमेव भंवति॥२१॥

यन्न प्रंति निर्वपेत्। रिवनं आशिषोऽवंरुन्धीरन्। प्रतिनिर्वपति। इन्द्रांय सुत्राम्णे पुरोडाश्मेकांदशकपालम्। इन्द्रांया होमुचें। आशिषं एवावं रुन्धे। अयं नो राजां वृत्रहा राजां भूत्वा वृत्रं वंध्यादित्यांह। आमेवैतामा शास्ते। मैत्राबार्हस्पत्यं भंवति। श्वेतायैं श्वेतवंथ्सायै दुग्धे॥२२॥

बार्हस्पत्ये मैत्रमपिं दधाति। ब्रह्मं चैवास्मैं क्षत्रं चं समीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रं प्रतिष्ठापयति। बार्ह्स्पत्येन् पूर्वेण प्रचंरति। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रम्न्वारंम्भयति। स्वयं कृता वेदिर्भवति। स्वयं दिनं बर्हिः। स्वयं कृत इध्मः। अनंभिजितस्याभिजित्यै। तस्माद्राज्ञामरंण्यम्भिजितम्। सैव श्वेता श्वेतवंथ्सा दक्षिणा समंद्ये॥२३॥

र्बित्वाय समृद्धे पष्टोही दक्षिणा समृद्धे ग्रामुण्यों गृहे भांगदुघस्यं गृहे भंवति दुग्धेंऽभिजिंत्ये द्वे चं॥—[३]

देवसुवामेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। एतावन्तो वै देवाना १ स्वाः। त एवास्मै स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एन १ स्वन्ते। अग्निरेवैनं गृहपंतीना १ सुवते। सोमो वनस्पतीनाम्। रुद्रः पंशूनाम्। बृह्स्पतिंर्वाचाम्। इन्द्रों ज्येष्ठानांम्। मित्रः सत्यानांम्॥२४॥

वर्रणो धर्मपतीनाम्। पृतदेव सर्वं भवति। स्विता त्वां प्रस्वानारं सुवतामिति हस्तं गृह्णाति प्रसूँत्यै। ये देवा देवः सुवः स्थेत्याह। यथायजुरेवैतत्। महते क्षत्रायं महत आधिपत्याय महते जानंराज्यायेत्यांह। आमेवैतामा शांस्ते। पृष वों भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानार् राजेत्यांह। तस्माथ्सोमंराजानो ब्राह्मणाः। प्रति त्यन्नामं राज्यमंधायीत्यांह॥२५॥

राज्यमेवास्मिन्प्रतिदधाति। स्वां तनुवं वर्रणो अशिश्वेदित्यांह। वरुणस्वमेवावं रुन्धे। शुचैर्मित्रस्य व्रत्यां अभूमेत्यांह। शुचिमेवेनं व्रत्यं करोति। अमन्मिह मह्त ऋतस्य नामेत्यांह। मनुत एवेनम्। सर्वे व्राता वर्रणस्याभूवन्नित्यांह। सर्ववातमेवेनं करोति। वि मित्र एवेररांतिमतारीदित्यांह॥२६॥

अरांतिमेवैनं तारयति। असूषुदन्त यज्ञियां ऋतेनेत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। व्यं त्रितो जीर्माणं न आन्डित्यांह। आयुरेवास्मिन्दधाति। द्वाभ्यां विमृष्टे। द्विपाद्यजीमानः प्रतिष्ठित्ये। अग्नीषोमीयस्य चैकांदशकपालस्य देवसुवां चे ह्विषांमग्नयें स्विष्टकृतें समर्वद्यति। देवतांभिरेवैनंमुभ्यतः परिगृह्णाति। विष्णुऋमान्क्रमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ श्लोकान्भि-जंयति॥२७॥

अर्थेतः स्थेति जुहोति। आहुंत्यैवैनां निष्क्रीयं गृह्णाति। अथों ह्विष्कृंतानामेवाभिघृंतानां गृह्णाति। वहंन्तीनां गृह्णाति। एता वा अपा॰ राष्ट्रम्। राष्ट्रमेवास्में गृह्णाति। अथो श्रियंमेवैनंम्भिवंहन्ति। अपां पतिंर्सीत्यांह। मिथुनमेवाकंः। वृषांऽस्यूर्मिरित्यांह॥२८॥

ऊर्मिमन्तंमेवैनं करोति। वृष्सेनोंऽसीत्यांह। सेनांमेवास्य सङ्श्यंति। ब्रजिक्षितः स्थेत्यांह। एता वा अपां विशंः। विशंमेवास्मै पर्यूहति। मुरुतामोजः स्थेत्यांह। अत्रं वै मुरुतंः। अन्नमेवावं रुन्थे। सूर्यवर्चसः स्थेत्यांह॥२९॥

राष्ट्रमेव वेर्चस्व्यंकः। सूर्यत्वचसः स्थेत्यांह। सृत्यं वा एतत्। यद्वर्षति। अनृतं यदातपंति वर्षति। सृत्यानृते एवावं रुन्थे। नैन र सत्यानृते उदिते हिर्इस्तः। य एवं वेदं। मान्दाः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव ब्रह्मवर्चस्यंकः॥३०॥

वाशाः स्थेत्याह। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। शक्वंरीः स्थेत्याह। पृशवो वै शक्वंरीः। पृशूनेवावं रुन्धे। विश्वभृतः स्थेत्याह। राष्ट्रमेव पंयुस्व्यंकः। जनभृतः स्थेत्याह। राष्ट्रमेवन्द्रियाव्यंकः। अग्नेस्तेजस्याः स्थेत्याह॥३१॥

राष्ट्रमेव तेजस्व्यंकः। अपामोषंधीना १ रसः स्थेत्यांह।

राष्ट्रमेव मंध्व्यंमकः। सार्स्वतं ग्रहं गृह्णाति। एषा वा अपां पृष्ठम्। यथ्सरंस्वती। पृष्ठमेवैन समानानां करोति। षोड्शभिंगृह्णाति। षोडंशकलो वे पुर्रुषः। यावांनेव पुर्रुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। षोड्शभिंर्जुहोतिं षोड्शभिंगृह्णाति। द्वात्रिर्श्शथ्सम्पंद्यन्ते। द्वात्रिर्श्शदक्षरा-ऽनुष्ठक्। वागंनुष्टुप्सर्वाणि छन्दार्श्सि। वाचैवैन्र् सर्वेभिश्छन्दोंभिरभिषिंश्रति॥३२॥

र्कुर्मिरित्यांहु सूर्यवर्चसुः स्थेत्यांह ब्रह्मवर्चस्यंकस्तेज्ञस्याः स्थेत्यांहुव पुरुषुः षट् चं॥————— $oxedsymbol{\left\langle \mathbf{q} \right\rangle}$

देवीरापः सं मधुंमतीर्मधुंमतीभिः सृज्यध्वमित्यांह। ब्रह्मंणैवैनाः स॰सृंजति। अनांधृष्टाः सीद्तेत्यांह। ब्रह्मंणैवैनाः सादयति। अन्तरा होतुंश्च धिष्णियं ब्राह्मणाच्छु॰सिनंश्च सादयति। आग्नेयो व होतां। ऐन्द्रो ब्राह्मणाच्छु॰सी। तेजंसा चैवेन्द्रियेणं चोभ्यतों राष्ट्रं परिगृह्णाति। हिरण्येनोत्पुंनाति। आहुंत्ये हि प्वित्रांभ्यामृत्पुनन्ति व्यावृंत्त्ये॥३३॥

श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रति तिष्ठति। अनिभृष्टम्सीत्यांह। अनिभृष्ट्र् ह्येतत्। वाचो बन्धुरित्यांह। वाचो ह्येष बन्धुंः। तृपोजा इत्यांह। तृपोजा ह्येतत्। सोमंस्य दात्रमसीत्यांह॥३४॥

सोमंस्य ह्यंतद्दात्रम्। शुक्रा वंः शुक्रेणोत्पुंनामीत्यांह। शुक्रा ह्यापंः। शुक्र १ हिरंण्यम्। चन्द्राश्चन्द्रेणेत्यांह। चन्द्रा ह्यापंः। चन्द्र १ हिरंण्यम्। अमृतां अमृत्नेनेत्यांह। अमृता ह्यापंः।

अमृत्र हिरंण्यम्॥३५॥

स्वाहां राज्यस्यायेत्यांह। राज्यस्यांय ह्यंना उत्पुनाति।
स्थमादों द्युम्निनीरूर्ज एता इति वारुण्यर्चा गृह्णाति।
वरुणस्वमेवावं रुन्थे। एकंया गृह्णाति। एक्धेव यर्जमाने
वीर्यं दधाति। क्ष्रत्रस्योल्बंमिस क्ष्रत्रस्य योनिर्सीति तार्यं
चोष्णीषं च प्रयंच्छति सयोनित्वायं। एकंशतेन दर्भपुश्चीलैः
पंवयति। श्वायुर्वे पुरुषः श्ववीर्यः। आत्मैकंश्वतः॥३६॥

यावांनेव पुरुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। दध्यांशयति। इन्द्रियमेवावं रुन्थे। उदुम्बरंमाशयति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। शष्पांण्याशयति। सुरांबलिमेवैनं करोति। आविदं एता भेवन्ति। आविदंमेवैनं गमयन्ति॥३७॥

अग्निरेवैनं गार्हंपत्येनावति। इन्द्रं इन्द्रियेणं। पूषा पृश्मिः। मित्रावरुंणौ प्राणापानाभ्यांम्। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। स दिवंमिलिखत्। सौंऽर्यम्णः पन्थां अभवत्। स आविंत्रे द्यावांपृथिवी धृतन्नते इति द्यावांपृथिवी उपांधावत्। स आभ्यामेव प्रसूत इन्द्रों वृत्राय वज्रं प्राहंरत्। आविंत्रे द्यावांपृथिवी धृतन्नते इति यदाहं॥३८॥

आभ्यामेव प्रसूतो यर्जमानो वज्रं भ्रातृंव्याय प्रहंरति। आविन्ना देव्यदितिर्विश्वरूपीत्याह। इयं वै देव्यदितिर्विश्व-रूपी। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। आविन्नोऽयम्सावांमुष्या- यणौंऽस्यां विश्यंस्मित्राष्ट्र इत्यांह। विशेवैन रे राष्ट्रेण् समर्धयति। मृह्ते क्षत्रायं मह्त आधिपत्याय मह्ते जानंराज्यायेत्यांह। आमेवैतामा शांस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना राजेत्यांह। तस्माथ्सोमंराजानो ब्राह्मणाः॥३९॥

इन्द्रंस्य वज्रोऽिस् वार्त्रघ्न इति धनुः प्रयंच्छिति विजित्यै। श्रृत्रुवाधनाः स्थेतीषूनं। श्रृत्रुनेवास्यं बाधन्ते। पात मां प्रत्यश्चं पात मां तिर्यश्चंमन्वश्चं मा पातत्यांह। तिस्रो व शंर्व्याः। प्रतीचीं तिरश्च्यनूचीं। ताभ्यं एवैनं पान्ति। दिग्भ्यो मां पातत्यांह। दिग्भ्य एवैनं पान्ति। विश्वाभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पातत्यांह। दिग्भ्य एवैनं पान्ति। विश्वाभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पातत्यांह। अपंरिमितादेवैनं पान्ति। हिरंण्यवर्णावुषसां विरोक इति त्रिष्टुभां बाहू उद्गृह्णाति। इन्द्रियं व वीर्यं त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव वीर्यमुपरिष्टादात्मन्धत्ते॥४०॥ व्यवस्य व्यवस्य व्यवस्य विरोध विरोक विरोध विरो

दिशो व्यास्थांपयति। दिशाम्भिजिंत्यै। यदंनु प्रक्रामेंत्। अभि दिशों जयेत्। उत्त माँद्येत्। मन्साऽनु प्रक्रांमित। अभि दिशों जयित। नोन्माँद्यति। सुमिधुमा तिष्ठेत्यांह। तेजं एवावं रुन्थे॥४१॥

उग्रामा तिष्ठेत्यांह। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। विराजमातिष्ठेत्यांह। अन्नाद्यंमेवावं रुन्धे। उदीचीमा तिष्ठेत्यांह। पृश्ननेवावं रुन्धे। ऊर्ध्वामातिष्ठेत्यांह। सुवर्गमेव लोकम्भिजंयति। अनून्निंहीते।

सुवर्गस्यं लोकस्य समंध्ये॥४२॥

मारुत एष भंवति। अत्रं वै मुरुतः। अत्रंमेवावं रुन्थे। एकंविश्शतिकपालो भवति प्रतिष्ठित्यै। योऽरण्येऽनुवाक्यों गणः। तं मध्यत उपंदधाति। ग्राम्येरेव पृशुभिरारण्यान्पशून्परि गृह्णाति। तस्माँद्राम्यैः पृशुभिरारण्याः पृशवः परिगृहीताः। पृथिवैन्यः। अभ्यंषिच्यत॥४३॥

स राष्ट्रं नार्भवत्। स एतानि पार्थान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स राष्ट्रमंभवत्। यत्पार्थानि जुहोतिं। राष्ट्रमेव भवति। बार्ह्स्पत्यं पूर्वेषामुत्तमं भवति। ऐन्द्रमुत्तरेषां प्रथमम्। ब्रह्मं चैवास्मै क्षत्रं चं समीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंन्नेव क्षत्रं प्रति-ष्ठापयति॥४४॥

षद्वरस्तांदिभिषेकस्यं जुहोति। षडुपरिष्टात्। द्वादंश् सम्पंद्यन्ते। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरः खलु वै देवानां पूः। देवानांमेव पुरं मध्यतो व्यवंसपिति। तस्य न कुतंश्चनोपांव्याधो भंवति। भूतानामवेष्टीर्जुहोति। अत्रात्र वै मृत्युर्जायते। यत्रंयत्रैव मृत्युर्जायते। ततं पृवेनमवंयजते। तस्माद्वाज्सूयेनेजानो नाभिचंरित्वै। प्रत्यगेनमभिचारः स्तृंणुते॥४५॥

सोमंस्य त्विषिरसि तवेव मे त्विषिर्भयादिति शार्दूल-चर्मोपंस्तृणाति। यैव सोमे त्विषिः। या शाँर्दूले। तामेवाव रुन्थे। मृत्योर्वा एष वर्णः। यच्छाँदूलः। अमृत् हरंण्यम्। अमृतंमसि मृत्योर्मा पाहीति हिरंण्यमुपाँस्यति। अमृतंमेव मृत्योर्न्तर्थत्ते। शृतमानं भवति॥४६॥

श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। दिद्योन्मां पाहीत्युपरिष्टादिष्यं निदंधाति। उभ्यतं एवास्मै शर्मं दधाति। अवेष्टा दन्दश्का इतिं क्रीब॰ सीसेन विध्यति। दन्दश्कांनेवावंयज्ञते। तस्मौत्क्रीबं दंन्दश्कां द॰शुंकाः। निरंस्तं नमुंचेः शिर् इतिं लोहितायसं निरंस्यति। पाप्मानमेव नमुंचिं निरवंदयते। प्राणा आत्मनः पूर्वेऽभिषिच्या इत्यांहः॥४७॥

सोमो राजा वर्रणः। देवा धंर्मसुवंश्च ये। ते ते वाचरं सुवन्तां ते ते प्राणर सुवन्तामित्यांह। प्राणानेवाऽऽत्मनः पूर्वान्भिषिश्चति। यद्भूयात्। अग्नेस्त्वा तेजंसाऽभिषिश्चामीति। तेजस्येव स्यात्। दुश्चर्मा तु भवत्। सोमंस्य त्वा सुम्नेनाभिषिश्चामीत्यांह। सौम्यो वै देवतंया पुरुषः॥४८॥

स्वयैवैनं देवतंयाऽभिषिश्चिति। अग्नेस्तेज्सेत्यांह। तेजं पुवास्मिन्दधाति। सूर्यस्य वर्चसेत्यांह। वर्च पुवास्मिन्दधाति। इन्द्रंस्येन्द्रियेणेत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। मित्रावर्रुण-योवीर्येणेत्यांह। वीर्यमेवास्मिन्दधाति। मुरुतामोज्सेत्यांह॥४९॥ ओजं पुवास्मिन्दधाति। क्षत्राणां क्षत्रपंतिर्सीत्यांह। क्षत्राणांमेवेनं क्षत्रपंतिं करोति। अति दिवस्पाहीत्यांह। अत्यन्यान्पाहीति वावैतदांह। समावंवृत्रन्नध्रागुदींचीरित्यांह। राष्ट्रमेवास्मिन्धुवमंकः। उच्छेषंणेन जुहोति। उच्छेषंणभागो वै रुद्रः। भागधेयेंनैव रुद्रं निरवंदयते॥५०॥

उदं बुरेत्याग्नीं द्धे जुहोति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायां मेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्र यत्ते ऋयी परं नामेत्यां ह। यद्वा अस्य ऋयी परं नामं। तेन वा एष हिनस्ति। यश हिनस्ति। तेनैवैन सह शंमयति। तस्मैं हुतमंसि यमेष्टं मुसीत्यां ह। यमादेवास्यं मृत्युमवंयजते॥५१॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्य इति तस्यै गृहे जुंहुयात्। यां कामयेत राष्ट्रमंस्यै प्रजा स्यादितिं। राष्ट्रमेवास्यै प्रजा भंवति। पूर्णमयेनाध्वर्युर्भिषिश्चिति। ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्त्विषं दधाति। औदुंम्बरेण राजन्यः। ऊर्जमेवास्मिन्नन्नाद्यं दधाति। आश्वंत्थेन वैश्यः। विश्नमेवास्मिन्पृष्टिं दधाति। नैयंग्रोधेन जन्यः। मित्राण्येवास्मै कल्पयति। अथो प्रतिष्ठित्यै॥५२॥ भृत्रत्यहुः पूर्वप् अज्नेत्रत्यहे विश्वं वज्ये वर्षे वे॥———[८]

इन्द्रंस्य वज्रोऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरति विजित्यै। मित्रावरुणयोस्त्वा प्रशास्त्रोः प्रशिषां युन्ज्मीत्यांह। ब्रह्मंणैवैनं देवतांभ्यां युनक्ति। प्रष्टिवाहिनं युनक्ति। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्में युनक्ति। त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। द्वौ

संव्येष्ठसारथी। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५३॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं युनक्ति। विष्णुक्रमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ ह्योकान्भिजंयति। यः क्षित्रियः प्रतिहितः। सौंऽन्वारंभते। राष्ट्रमेव भंवति। त्रिष्टुभाऽन्वारंभते। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति॥५४॥

मुरुतां प्रस्वे जेषिमित्यांह। मुरुद्धिरेव प्रसूत उन्नयित। आप्तं मन् इत्यांह। यदेव मन्सैफ्सींत्। तदांपत्। राज्न्यं जिनाति। अनांकान्त एवाक्रमते। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणध्यते। यो राज्न्यं जिनाति। सम्हिमेन्द्रियेणं वीर्येणत्यांह॥५५॥

ड्रन्द्रियमेव वीर्यमात्मन्यंत्ते। पृश्नां मृन्युरंसि तवेंव मे मृन्युर्भूयादिति वाराही उपानहावुपं मुश्रते। पृश्नां वा एष मृन्युः। यद्वंराहः। तेनैव पंश्नां मृन्युमात्मन्यंत्ते। अभि वा इय स्पंषुवाणं कांमयते। तस्यैश्वरेन्द्रियं वीर्यमादांतोः। वाराही उपानहावुपंमुश्रते। अस्या एवान्तर्यंत्ते। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यानांत्यै॥५६॥

नमों मात्रे पृंथिव्या इत्याहाहि ईसायै। इयंद्स्यायुंर्स्यायुंर्मे धेहीत्यांह। आयुंरेवाऽऽत्मन्धंत्ते। ऊर्ग्स्यूर्जं मे धेहीत्यांह। ऊर्जमेवाऽऽत्मन्धंत्ते। युङ्कंसि वर्चोऽसि वर्चो मिये धेहीत्यांह।

वर्च एवाऽऽत्मन्धंत्ते। एक्धा ब्रह्मण् उपंहरति। एक्धेव यजमान् आयुरूर्जं वर्चो दधाति। रथविमोचनीयां जुहोति प्रतिष्ठित्ये॥५७॥

त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। तस्मांचतुर्जुहोति। यदुभौ सहावतिष्ठंताम्। समानं लोकिमंयाताम्। सह संङ्ग्रहीत्रा रथवाहंने रथमादंधाति। सुवर्गादेवैनं लोकादन्तदंधाति। हुर्सः शुंचिषिदत्यादंधाति। ब्रह्मणैवैनंमुपावहरंति। ब्रह्मणा-ऽऽदंधाति। अतिंच्छन्द्साऽऽदंधाति। अतिंच्छन्दा वै सर्वाणि छन्दार्शसे। सर्वेभिरेवैनं छन्दोंभिरादंधाति। वर्ष्म् वा एषा छन्दंसाम्। यदतिंच्छन्दाः। यदतिंच्छन्दसा दधांति। वर्ष्म् वेनर्श् समानानां करोति॥५८॥

मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसीत्यांह। मैत्रं वा अहंः। वा्रुणी रात्रिः। अहोरात्राभ्यांमेवैनंमुपावंहरति। मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसीत्यांह। मैत्रो वे दक्षिणः। वा्रुणः सव्यः। वैश्वदेव्यांमिक्षां। स्वमेवैनों भाग्धेयंमुपावंहरति। समृहं विश्वदेविरित्यांह॥५९॥

वैश्वदेव्यों वै प्रजाः। ता एवाद्याः कुरुते। क्ष्रत्रस्य नाभिंरसि क्षत्रस्य योनिर्सीत्यंधीवासमास्तृंणाति सयोनित्वायं। स्योनामा सींद सुषदामा सीदेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। मा त्वां हिश्सीन्मा मां हिश्सीदित्याहाहिश्सायै। निषंसाद धृतव्रंतो वरुंणः पुस्त्यांस्वा साम्रांज्याय सुऋतुरित्यांह। साम्राज्यमेवैन रे सुऋतुं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्वर राजन्ब्रह्माऽसिं सविताऽसिं सृत्यसंव इत्यांह। सवितारंमेवैन रे सत्यसंवं करोति॥६०॥

ब्रह्मा(३)न्त्व राजन्ब्रह्माऽसीन्द्रोऽसि स्त्यौजा इत्यांह। इन्द्रंमेवेन र स्त्यौजंसं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व र राजन्ब्रह्माऽिसं मित्रोऽिस सुशेव इत्यांह। मित्रमेवेन र सुशेवं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व र राजन्ब्रह्मासि वर्रुणोऽिस स्त्यधर्मेत्यांह। वर्रुणमेवेन र स्त्यधर्माणं करोति। स्विताऽिसं स्त्यसंव इत्यांह। गायत्रीमेवेतेनांिभे व्याहंरित। इन्द्रोऽिस स्त्यौजा इत्यांह। त्रिष्टुभंमेवेतेनांिभे व्याहंरित॥६१॥

मित्रोंऽसि सुशेव इत्यांह। जगंतीमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यमेता देवताः। सत्यमेतानि छन्दारंसि। सत्यमेवावं रुन्धे। वर्रुणोऽसि सत्यधर्मेत्यांह। अनुष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यानृते वा अनुष्टुप्। सत्यानृते वर्रुणः। सत्यानृते एवावं रुन्धे॥६२॥

नैन र्स्सत्यानृते उदिते हि र्स्तः। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वज्रोऽिस् वार्त्रघ्न इति स्फ्यं प्रयंच्छिति। वज्रो वै स्फ्यः। वज्रेणेवास्मां अवरप्र रंन्धयित। एव रहि तच्छ्रेयः। यदंस्मा एते रध्येयः। दिशोऽभ्यंय र राजांऽभूदिति पश्चाक्षान्प्रयंच्छिति। एते वै सर्वेऽयाः। अपंराजायिनमेवैनं करोति॥६३॥

ओदनमुद्धुंबते। प्रमेष्ठी वा एषः। यदोंदनः। प्रमामेवैन्ड्ं श्रियंं गमयित। सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्गलाँ(४) सत्यंराजा(३)-नित्यांह। आमेवैतामा शाँस्ते। शौनः शेपमाख्यांपयते। वरुणपाशादेवैनं मुश्चिति। प्रः शतं भंविति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। मारुतस्य चैकविश्शितकपालस्य वैश्वदेव्ये चामिक्षांया अग्नयें स्विष्टकृतें समवंद्यति। देवतांभिरेवैनंमुभ्यतः परिं गृह्णाति। अपान्नश्रे स्वाहोर्जो नश्रे स्वाहाऽग्नये गृहपंतये स्वाहेितं तिष्ठति॥६४॥

देवैरित्यांह स्त्यसंवं करोति त्रिष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरित सत्यानृते एवावं रुन्धे करोति श्तेन्द्रियः षट् चं॥ १०]

पुतद्वाँह्मणानि धात्रे रिक्रनाँन्देवसुवाम्थेतो देवीर्दिशः सोम्स्येन्द्रस्य मित्रो दर्श॥१०॥

पुतद्वाँह्मणानि वैष्णुवं त्रिंकपालमत्रुं वे पूषा वाशाः स्थेत्यांह् दिशो व्यास्थापयुत्युदंहुरेत्य ब्रह्मा(३)न्त्व॰ रांजुञ्चतुंष्यष्टिः॥६४॥

पुतद्वाँह्मणानि प्रतिं तिष्ठति॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

वर्रणस्य सुषुवाणस्यं दश्धेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। तथ्स्र सृद्धिरन् समंसर्पत्। तथ्स्र सृपारं सरसृत्वम्। अग्निनां देवेनं प्रथमेऽहृन्ननु प्रायुंङ्कः। सरस्वत्या वाचा द्वितीर्यं। स्वित्रा प्रंस्वेनं तृतीर्यं। पूष्णा पृश्भिश्चतुर्थे। बृह्स्पतिना ब्रह्मणा पश्चमे। इन्द्रेण देवेनं षृष्ठे। वर्रुणेन् स्वयां देवत्या सप्तमे॥१॥

सोमेन राज्ञांऽष्ट्रमे। त्वष्ट्रां रूपेणं नव्मे। विष्णुंना यज्ञेनांऽऽप्रोत्। यथ्स्रस्पृपो भवंन्ति। इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यज्ञंमान आप्नोति। पूर्वापूर्वा वेदिर्भवति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावंरुद्धे। पुरस्तांदुप्सदार्श्रं सौम्येन प्रचंरति। सोमो वै रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। अन्तरा त्वाष्ट्रेणं। रेतं एव हितं त्वष्टां रूपाणि विकंरोति। उपरिष्टाद्वेष्ण्वेनं। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञ एवान्ततः प्रतिं तिष्ठति॥२॥

सुसुमे देपाति पश्च च॥______[१]

जामि वा एतत्कुर्वन्ति। यथ्मद्यो दीक्षयन्ति सद्यः सोमं क्रीणन्ति। पुण्डरिस्रजां प्रयंच्छत्यजांमित्वाय। अङ्गिरसः सुवर्गं लोकं यन्तः। अपसु दीक्षात्पसी प्रावंशयन्। तत्पुण्डरीकमभवत्। यत्पुण्डरिस्रजां प्रयच्छंति। साक्षादेव दीक्षात्पसी अवं रुन्थे। दशभिवंथ्सत्रैः सोमं क्रीणाति।

दशाँक्षरा विराट्॥३॥

अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। मुष्करा भविन्ति सेन्द्रत्वायं। दशपेयों भवित। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। शृतं ब्राँह्यणाः पिंबन्ति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। सुप्तदशङ् स्तोन्नं भविति। सुप्तदशः प्रजापंतिः॥४॥

प्रजापंतेरास्यै। प्राकाशावंध्वर्यवे ददाति। प्रकाशमेवेनं गमयति। स्रजंमुद्गात्रे। व्येवास्मै वासयति। रुकार होत्रै। आदित्यमेवास्मा उन्नयति। अश्वं प्रस्तोतृप्रतिहुर्तृभ्याम्। प्राजापत्यो वा अश्वं। प्रजापंतेरास्यै॥५॥

द्वादंश पष्टौहीर्ब्रह्मणें। आयुरेवावं रुन्थे। वृशां मैंत्रावरुणायं। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। ऋष्मं ब्राह्मणाच्छुर्सिनें। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। वासंसी नेष्टापोतृभ्याम्। प्वित्रे प्वास्यैते। स्थूरि यवाचितमंच्छावाकायं। अन्तत एव वर्रणमवं यजते॥६॥

अनुङ्गाहंमग्रीधं। विहुर्वा अनुङ्गान्। विह्नंरग्नीत्। विह्नंनेव विह्नं यज्ञस्यावं रुन्धे। इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं त्रेधेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। भृगुस्तृतीयमभवत्। श्रायन्तीयं तृतीयम्। सरंस्वती तृतीयम्। भार्गवो होतां भवति। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भंवति। वार्वन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। सार्स्वतीर्पो गृह्णाति। इन्द्रियस्यं वीर्यंस्यावंरुद्धे। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भंवति। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं श्रयति। वार्वन्तीयमग्निष्टोमसामम्। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं वारयति॥७॥

विसद्वापंतिरक्षं प्रजापंतरक्षं प्रजापंतरक्षं प्रजा ब्रह्मसामं भवति सत्त चं॥————[२]

र्ड्रश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयन्ति। दिशामवेष्टयो भवन्ति। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठत्यनुंन्मादाय। पश्चं देवतां यजित। पश्च दिशंः। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति। हिवषोहिवष इष्ट्वा बांर्हस्पत्यम्भिघांरयित। यज्मानदेवत्यों वै बृह्स्पितिः। यजंमानमेव तेजंसा समर्धयित॥८॥

आदित्यां मृल्हां गुर्भिणीमा लंभते। मारुतीं पृश्विं पष्टौहीम्। विशं चैवास्मैं राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आदित्यया पूर्वया प्रचंरति। मारुत्योत्तंरया। राष्ट्र एव विश्वमनुंबध्नाति। उचैरादित्याया आश्रावयति। उपार्श मारुत्ये। तस्माँद्राष्ट्रं विश्वमतिंवदति। गुर्भिण्यांदित्या भवति॥९॥

इन्द्रियं वै गर्भः। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। अगर्भा मांकृती। विश्वे मुरुतः। विश्वमेव निरिन्द्रियामकः। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा अश्विनौः पूषन्वाचः सृत्यः संन्निधायं। अनृतेनासुरान्भ्यंभवन्। तैंऽश्विभ्यां पूष्णे पुरोडाश्ं द्वादंशकपालं निर्वपन्। ततो वे ते वाचः सत्यमवांकन्धत॥१०॥

यदुश्विभ्यां पूष्णे पुरोडाशुं द्वादेशकपालं निर्वपिति।

अनृतिनैव भ्रातृंव्यानिभूयं। वाचः स्त्यमवं रुन्धे। सरंस्वते सत्यवाचे च्रम्। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। स्वित्रे स्त्यप्रंसवाय पुरोडाशं द्वादंशकपालं प्रसूत्यै। दूतान्प्रहिंणोति। आविदं एता भंवन्ति। आविदंमेवैनं गमयन्ति। अथों दूतेभ्यं एव न छिंद्यते। तिसृधन्वश् शुंष्कदृतिदक्षिणा समृंद्धै॥११॥

र्धुयति भुवत्युरुश्यत् गुमुयन्ति हे चं॥—————[3]

आग्नेयम्ष्टाकंपालं निर्वपति। तस्माच्छिशिरे कुरुपश्चालाः प्राश्चो यान्ति। सौम्यं चुरुम्। तस्मौद्धस्नतं व्यंवसायांदयन्ति। सावित्रं द्वादंशकपालम्। तस्मौत्पुरस्ताद्यवांनाः सवित्रा विरुन्धते। बार्हुस्पत्यं चुरुम्। सवित्रेव विरुध्यं। ब्रह्मणा यवानादंधते। त्वाष्ट्रमृष्टाकंपालम्॥१२॥

रूपाण्येव तेनं कुर्वते। वैश्वान्तरं द्वादेशकपालम्। तस्मां ज्ञघन्यं नैदांघे प्रत्यश्चंः कुरुपश्चाला याँन्ति। सारुस्वतं चरुं निर्वपति। तस्मांत्प्रावृष्टि सर्वा वाचो वदन्ति। पौष्णेन् व्यवस्यन्ति। मैत्रेणं कृषन्ते। वारुणेन् विधृंता आसते। क्षेत्रपत्येनं पाचयन्ते। आदित्येनादंधते॥१३॥

मासिमाँस्येतानिं ह्वी १ षिं निरुप्याणीत्यांहुः। तेनैवर्तून्प्रयुंङ्कः इतिं। अथो खल्वांहुः। कः संवथ्सरं जीविष्यतीतिं। षडेव पूर्वेद्युर्निरुप्यांणि। षडुंत्तरेद्युः। तेनैवर्तून्प्रयुंङ्के। दक्षिंणो रथवाहनवाहः पूर्वेषां दक्षिंणा। उत्तर् उत्तरिषाम्। सुंवृथ्स्रस्यैवान्तौ युनक्ति। सुवृर्गस्यं लोकस्य सम्ष्रया१४॥

त्वाष्ट्रमृष्टाकंपालं दथते युन्त्तचेकं च॥______[४]

इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं दश्धेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। स यत्प्रंथमं निरष्ठींवत्। तत्कंलमभवत्। यद्वितीयम्। तद्वदंरम्। यत्तृतीयम्। तत्कर्कन्धुं। यन्नस्तः। स सि॰्हः। यदक्ष्यौः॥१५॥

स शाँदूंलः। यत्कर्णयोः। स वृक्तः। य ऊर्ध्वः। स सोर्मः। याऽवांची। सा सुराँ। त्रयाः सक्तंवो भवन्ति। इन्द्रियस्यावंरुख्यै। त्रयाणि लोमांनि॥१६॥

त्विषिमेवावं रुन्धे। त्रयो ग्रहाँः। वीर्यमेवावं रुन्धे। नाम्नां दश्मी। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दश्मी। प्राणा इंन्द्रियं वीर्यम्। प्राणानेवेन्द्रियं वीर्यं यजमान आत्मन्धेत्ते। सीसेन क्रीबाच्छष्पांणि क्रीणाति। न वा एतदयो न हिरंण्यम्॥१७॥

यथ्सीसम्। न स्त्री न पुमान्। यत्क्रीबः। न सोमो न सुराँ। यथ्सौत्रामणी समृद्धौ। स्वाद्वीं त्वाँ स्वादुनेत्यांह। सोममेवैनां करोति। सोमोंऽस्यश्विभ्यां पच्यस्व सरंस्वत्यै पच्यस्वेन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्वेत्यांह। एताभ्यो ह्येषा देवतांभ्यः पच्यते। तिस्रः स॰सृष्टा वसति॥१८॥

तिस्रो हि रात्रीः क्रीतः सोमो वसंति। पुनातुं ते परिस्रुतमिति यजुंषा पुनाति व्यावृत्त्यै। पुवित्रेण पुनाति। प्वित्रंण हि सोमं पुनिन्तं। वारंण शश्वंता तनेत्यांह। वारंण हि सोमं पुनिन्तं। वायुः पूतः प्वित्रेणेति नैतयां पुनीयात्। व्यृंद्धा ह्यंषा। अतिप्वितस्यैतयां पुनीयात्। कुविदङ्गेत्यनिरुक्तया प्राजापृत्ययां गृह्णाति॥१९॥

अनिरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्धेव यजमाने वीर्यं दधाति। आश्विनं धूम्रमालंभते। अश्विनौ व देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्में भेषजं कंरोति। सार्स्वतं मेषम्। वाग्वे सरंस्वती। वाचैवैनं भिषज्यति। ऐन्द्रमृष्भ समन्द्रत्वायं॥२०॥

यित्रषु यूपें प्वालभेत। बहिर्धाऽस्मांदिन्द्रियं वीर्यं दध्यात्। भ्रातृं व्यमस्मै जनयेत्। एक्यूप आलंभते। एक्धेवास्मिन्निन्द्रियं वीर्यं दधाति। नास्मै भ्रातृं व्यं जनयित। नेतेषां पशूनां पुरोडाशां भवन्ति। ग्रहंपुरोडाशां ह्यंते। युवः सुरामंमिश्वनेतिं सर्वदेवृत्यं याज्यानुवाक्यं भवतः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति॥२१॥

ब्राह्मणं परिक्रीणीयादुच्छेषंणस्य पातारम्। ब्राह्मणो ह्याहुंत्या उच्छेषंणस्य पाता। यदिं ब्राह्मणं न विन्देत्। वल्मीक्वपायामवं नयेत्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यद्वै सौत्रामण्ये व्यृद्धम्। तदंस्यै समृद्धम्। नानादेवत्याः पृशवंश्च पुरोडाशाँश्च भवन्ति समृद्धै। ऐन्द्रः पंशूनामृत्तमो भवति। ऐन्द्रः पुरोडाशानां प्रथमः॥२२॥

इन्द्रिये पुवास्मैं समीचीं दधाति। पुरस्तांदनूयाजानां पुरोडाशैः प्रचरित। पुशवो व पुरोडाशौः। पुश्नेवावं रुन्धे। पुनद्रमेकांदशकपालं निर्वपिति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। सावित्रं द्वादंशकपालं प्रस्ति। वारुणं दशकपालम्। अन्तत एव वर्रणमवं यजते। वर्डंबा दिक्षणा॥२३॥

उत वा एषाऽश्वर्थं सूते। उताऽश्वंतरम्। उत सोमं उत सुराँ। यथ्सौँत्रामणी समृद्धौ। बार्ह्स्पृत्यं पृशुं चंतुर्थमंतिपवितस्या लंभते। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैव यज्ञस्य व्यृद्धमिपं वपति। पुरोडाशंवानेष पृशुर्भविति। न ह्यंतस्य ग्रहं गृह्णन्ति। सोमंप्रतीकाः पितरस्तृण्णुतेतिं शतातृण्णायारं सुमवंनयति॥२४॥

श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। दक्षिणेऽग्नौ जुंहोति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। हिरंण्यमन्त्रा धारयति। पूतामेवैनां जुहोति। श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। यत्रैव श्तातृण्णां धारयंति॥२५॥

तन्निदंधाति प्रतिष्ठित्यै। पितृन् वा एतस्यैन्द्रियं वीर्यं गच्छति। य सोमोऽति पर्वते। पितृणां याज्यानुवाक्यांभिरुपं

तिष्ठते। यदेवास्यं पितृनिन्द्रियं वीर्यं गच्छंति। तदेवावं रुन्धे। तिसृभिरुपं तिष्ठते। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। अथो त्रीणि वै यज्ञस्यैन्द्रियाणि। अध्वर्युर्होतां ब्रह्मा। त उपंतिष्ठन्ते। यान्येव यज्ञस्यैन्द्रियाणि। तैरेवास्मैं भेषजं करोति॥२६॥

अग्निष्टोममग्र आहंरति। यज्ञमुखं वा अंग्निष्टोमः। यज्ञमुखमेवारभ्यं स्वमा क्रंमते। अथैषोंऽभिषेचनीयंश्चतु-स्त्रिष्शपंवमानो भवति। त्रयंस्त्रिष्श्चद्वे देवताः। ता प्वाऽऽप्नोति। प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्ट्षः। तमेवाऽऽप्नोति। स्थ्शर पुष स्तोमानामयंथापूर्वम्। यद्विषंमाः स्तोमाः॥२७॥

पुतावान् वै यज्ञः। यावान्यवंमानाः। अन्तः श्लेषंणं त्वा अन्यत्। यथ्समाः पवंमानाः। तेनाऽस रश्चरः। तेनं यथापूर्वम्। आत्मनेवाग्निष्टोमेन्भ्नोतिं। आत्मना पुण्यो भवति। प्रजा वा उक्थानिं। पृशवं उक्थानिं। यदुक्थ्यो भवत्यनु सन्तंत्त्यै॥२८॥ स्त्रामाः पृशवं उक्थानें। व्युक्थ्यो भवत्यनु सन्तंत्त्यै॥२८॥

उपं त्वा जामयो गिर् इतिं प्रतिपद्भवति। वाग्वै वायुः। वाच एवैषोऽभिषेकः। सर्वासामेव प्रजानाः सूयते। सर्वा एनं प्रजा राजेतिं वदन्ति। एतम् त्यन्दश् क्षिप् इत्यांह। आदित्या वै प्रजाः। प्रजानांमेवेतेनं सूयते। यन्ति वा एते यंज्ञमुखात्। ये संम्भार्या अक्रन्॥२९॥ यदाह् पर्वस्व वाचो अग्निय इति। तेनैव यंज्ञमुखान्नयंन्ति। अनुष्टुक्प्रथमा भवति। अनुष्टुगुंत्तमा। वाग्वा अनुष्टुक्। वाचैव प्रयन्ति। वाचोद्यंन्ति। उद्वंतीर्भवन्ति। उद्वद्वा अनुष्टुभों रूपम्। आनुष्टुभो राजन्यः॥३०॥

तस्मादुद्वंतीर्भवन्ति। सौर्यनुष्टुगुंत्तमा भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। यो वै स्वादेतिं। नैनर्ं स्व उपनमित। यः सामभ्य एतिं। पापीयान्थ्सुषुवाणो भंवति। एतानि खलु वै सामानि। यत्पृष्ठानिं। यत्पृष्ठानि भवन्ति॥३१॥

तैर्व स्वान्नैतिं। यानिं देवराजाना् सामानि। तैरमुष्मिंश्लोक ऋंध्रोति। यानिं मनुष्यराजाना् सामानि। तैरस्मिंश्लोक ऋंध्रोति। उभयोर्व लोकयोर् ऋध्रोति। देवलोके चं मनुष्यलोके चं। एकविश्शोंऽभिषेचनीयंस्योत्तमो भवति। एकविश्शः केशवपनीयंस्य प्रथमः। सप्तद्शो दंशपेयः॥३२॥

विड्वा एंकविर्शः। राष्ट्र संप्तद्शः। विश्रं एवैतन्मध्यतीं-ऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विशां प्रियः। विशो हि मध्यतोऽभिषिच्यतें। यद्वा एनम्दो दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। तथ्सुंवर्गं लोकम्भ्या रोहति। यदिमं लोकं न प्रत्यवरोहेंत्। अतिजनं वेयात्। उद्वां माद्येत्। यदेष प्रतीचीनः स्तोमो भवंति। इममेव तेनं लोकं प्रत्यवरोहति। अथों अस्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठत्यनुंन्मादाय॥३३॥

अर्क्नत्राजुन्यों भवन्ति दश्पेयों माद्येत्रीणिं च॥

ड्यं वे रंज्ता। असौ हरिणी। यद्रुक्मौ भवंतः। आभ्यामेवैनंमुभ्यतः परिं गृह्णाति। वर्रुणस्य वा अभिष्च्यमांनस्याऽऽपंः। इन्द्रियं वीर्यं निरंप्रन्। तथ्सुवर्ण्ष् हिरंण्यमभवत्। यद्रुक्ममंन्तर्दधांति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्या-निर्घाताय। शतमांनो भवति शतक्षरः। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। आयुर्वे हिरंण्यम्। आयुष्यां एवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति। तेजो वे हिरंण्यम्। तेज्रस्यां एवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति। वर्चो वे हिरंण्यम्। तेज्रस्यां एवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति। वर्चो वे हिरंण्यम्। वर्चस्यां एवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति। वर्चो वे हिरंण्यम्। वर्चस्यां एवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति॥३४॥

संगुऽष्टौ चं॥————[९]

अप्रतिष्ठितो वा एष इत्यांहुः। यो रांज्यसूर्येन यजंत इतिं। यदा वा एष एतेन द्विरात्रेण यजंते। अर्थ प्रतिष्ठा। अर्थ संवथ्सरमाप्रोति। यावंन्ति संवथ्सरस्यांहोरात्राणि। तावंतीरेतस्यं स्तोत्रीयाः। अहोरात्रेष्वेव प्रतिं तिष्ठति। अग्निष्टोमः पूर्वमहंर्भवति। अतिरात्र उत्तरम्॥३५॥

नानैवाहों रात्रयोः प्रतिं तिष्ठति। पौर्णमास्यां पूर्वमहं भवित। व्यंष्टकायामुत्तंरम्। नानैवार्धंमासयोः प्रतिं तिष्ठति। अमावास्यायां पूर्वमहं भवित। उद्दृष्ट उत्तंरम्। नानैव मासंयोः प्रतिं तिष्ठति। अथो खलुं। ये एव संमानपक्षे पुंण्याहे स्याताम्। तयोः कार्यं प्रतिष्ठित्यै॥३६॥

अपुशुव्यो द्विरात्र इत्यांहुः। द्वे ह्यंते छन्दंसी।

गायत्रं च त्रेष्ट्रंभं च। जगंतीम्न्तर्यंन्ति। न तेन् जगंती कृतेत्यांहुः। यदंनान्तृतीयसवने कुर्वन्तीतिं। यदा वा पृषाऽहीन्स्याहुर्भजंते। साह्रस्यं वा सवंनम्। अथैव जगंती कृता। अथं पश्र्व्यः। व्यृष्टि्वा एष द्विरात्रः। य एवं विद्वान्द्विरात्रेण यजंते। व्येवास्मां उच्छति। अथो तमं एवापं हते। अग्निष्टोममंन्त्त आ हंरति। अग्निः सर्वा देवताः। देवताः स्वेव प्रतिं तिष्ठति॥३७॥

उत्तरं प्रतिष्ठित्ये पश्चयः सप्त चं॥————[१०]

वर्रुणस्य जामि वा ईंश्वर आँग्रेयमिन्द्रंस्य यिष्ठिप्विंग्रिष्टोममुपं त्वेयं वे रंजुताऽप्रतिष्ठितो दशं॥१०॥ वर्रुणस्य यद्श्विभ्यां यिष्ठेषु तस्मादुद्वंतीः सुप्तित्रिश्चत्॥३७॥ वर्रुणस्य प्रति तिष्ठति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टकम् २॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अङ्गिरसो वै स्त्रमांसत। तेषां पृश्ञिर्धर्मधुगांसीत्। सर्जीषेणांजीवत्। तेंंऽब्रुवन्। कस्मै नु स्त्रमांस्महे। येंंऽस्या ओषधीर्म जनयांम् इतिं। ते दिवो वृष्टिमसृजन्त। यावंन्तः स्तोका अवापंद्यन्त। तावंतीरोषंधयोऽजायन्त। ता जाताः पितरों विषेणांलिम्पन्॥१॥

तासाँ जुग्ध्वा रुप्यन्त्यैत्। तैंऽब्रुवन्। क इदिमृत्थमंक्रितिं। वयं भाग्धेयंमिच्छमाना इतिं पितरोंऽब्रुवन्। किं वों भाग्धेयमितिं। अग्निहोत्र एव नोऽप्यस्त्वत्यंब्रुवन्। तेभ्यं एतद्भाग्धेयं प्रायंच्छन्। यद्भुत्वा निमार्ष्टिं। ततो वै त ओषंधीरस्वदयन्। य एवं वेदं॥२॥

स्वदंन्तेऽस्मा ओषंधयः। ते वृथ्समुपावांसृजन्। इदं नों हृव्यं प्रदांप्येतिं। सोंऽब्रवीद्वरं वृणे। दशं मा रात्रींर्जातं न दोहन्। आसङ्गवं मात्रा सह चंराणीतिं। तस्मांद्वथ्सं जातं दश रात्रीर्न दुंहन्ति। आसङ्गवं मात्रा सह चंरति। वारेवृत्ड् ह्यंस्य। तस्मांद्वथ्स॰ स॰सृष्टध्य॰ रुद्रो घातुंकः। अति हि सन्धान्धयंति॥३॥

अुंतिम्पुन्वेद् घातुंकु एकं च॥————[१]

प्रजापंतिर्ग्निमंसृजत। तं प्रजा अन्वंसृज्यन्त। तमंभाग

उपाँस्त। सोंऽस्य प्रजाभिरपाँकामत्। तमंव्रुरुंथ्समानो-ऽन्वैत्। तमंव्रुधं नाशंक्रोत्। स तपोऽतप्यत। सोंऽग्निरुपांरम्तातांपि वे स्य प्रजापंतिरितिं। स र्राटादुदंमृष्ट॥४॥

तद्घृतमंभवत्। तस्माद्यस्यं दक्षिणतः केशा उन्मृंष्टाः। ताञ्येष्ठलक्ष्मी प्रांजापत्येत्यांहुः। यद्रराटांदुदमृष्ट। तस्मांद्रराटे केशा न संन्ति। तद्ग्री प्रागृंह्णात्। तद्यंचिकिथ्सत्। जुहवानी(३) मा हौषा(३)मितिं। तद्विंचिकिथ्सायै जन्मं। य एवं विद्वान् विचिकिथ्संति॥५॥

वसीय एव चेतयते। तं वाग्भ्यंवदञ्जुहुधीतिं। सौंऽब्रवीत्। कस्त्वम्सीतिं। स्वैव ते वागित्यंब्रवीत्। सोंऽजुहोथ्स्वाहेतिं। तथ्स्वांहाकारस्य जन्मं। य एवङ्स्वांहाकारस्य जन्म वेदं। क्रोतिं स्वाहाकारेणं वीर्यम्। यस्यैवं विदुषंः स्वाहाकारेण जुह्वंति॥६॥

भोगांयैवास्यं हुतं भंवति। तस्या आहंत्यै पुरुषमसृजत। द्वितीयंमजुहोत्। सोऽश्वंमसृजत। तृतीयंमजुहोत्। स गामं-सृजत। चृतुर्थमंजुहोत्। सोऽविंमसृजत। पृश्चममंजुहोत्। सोऽजामंसृजत॥७॥

सौंऽग्निरंबिभेत्। आहुंतीभिवें मांऽऽप्नोतीतिं। स प्रजापंतिं पुनः प्राविंशत्। तं प्रजापंतिरब्रवीत्। जायुस्वेतिं। सौंऽब्रवीत्। किं भांगुधेयंमुभि जंनिष्यु इतिं। तुभ्यंमेवेद॰ हूंयाता इत्यंब्रवीत्। स पुतद्भांगुधेयंमुभ्यंजायत। यदंग्निहोत्रम्॥८॥

तस्मांदग्निहोत्रमुंच्यते। तद्धूयमांनमादित्यों ऽब्रवीत्। मा हौषीः। उभयोर्वे नांवेतदितिं। सों ऽग्निरंब्रवीत्। कथं नौं होष्यन्तीतिं। सायमेव तुभ्यंं जुहवन्ं। प्रातर्मह्यमित्यंब्रवीत्। तस्मांदग्नयं साय ह्यते। सूर्याय प्रातः॥९॥

आ्रोयी वै रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। यदनुंदिते सूर्ये प्रांतर्जुहुयात्। उभयंमेवाग्नेय स्यात्। उदिते सूर्ये प्रांतर्जुहोति। तथाऽग्नयं साय हूंयते। सूर्याय प्रांतः। रात्रिं वा अनुं प्रजाः प्र जांयन्ते। अहा प्रतिं तिष्ठन्ति। यथ्सायं जुहोतिं॥१०॥

प्रैव तेनं जायते। उदिते सूर्यें प्रातर्जुहोति। प्रत्येव तेनं तिष्ठति। प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेति। स एतदिग्निहोत्रं मिथुनमंपश्यत्। तदुदिते सूर्येऽजुहोत्। यजुंषाऽन्यत्। तूष्णीमन्यत्। ततो व स प्राजायत। यस्यैवं विदुष् उदिते सूर्येऽग्निहोत्रं जुह्वंति॥११॥

प्रैव जांयते। अथो यथा दिवाँ प्रजानन्नेतिं। ताहगेव तत्। अथो खल्वांहुः। यस्य वै द्वौ पुण्यौ गृहे वसंतः। यस्तयोर्न्यश् राधयंत्यन्यं न। उभौ वाव स तावृच्छ्तीतिं। अग्निं वावा-ऽऽदित्यः सायं प्र विंशति। तस्मांद्ग्निर्दूरान्नक्तंं दहशे। उभे हि तेजंसी सम्पद्यंते॥१२॥ उद्यन्तं वावाऽऽदित्यम्ग्निरन् स्मारोहित। तस्मौद्धूम प्वाग्नेर्दिवां दद्दशे। यद्ग्नयं सायं जुंहुयात्। आ सूर्याय वृश्चेत। यथ्सूर्याय प्रातर्जुंहुयात्। आऽग्नयं वृश्चेत। देवतांभ्यः स्मदं दध्यात्। अग्निज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहेत्येव सायश् होत्व्यम्। सूर्यो ज्योतिज्योतिरिग्नः स्वाहेतिं प्रातः। तथोभाभ्याः सायश् ह्रंयते॥१३॥

उभाभ्यां प्रातः। न देवतांभ्यः समदं दधाति। अग्निर्ज्योति-रित्यांह। अग्निर्वे रंतोधाः। प्रजा ज्योतिरित्यांह। प्रजा एवास्मे प्र जंनयति। सूर्यो ज्योतिरित्यांह। प्रजास्वेव प्रजांतासु रेतो दधाति। ज्योतिरिग्निः स्वाहेत्यांह। प्रजा एव प्रजांता अस्यां प्रतिष्ठापयति॥१४॥

तूष्णीमुत्तंरामाहंतिं जुहोति। मिथुन्त्वाय प्रजांत्यै। यदुदिते सूर्ये प्रांतर्जुहुयात्। यथाऽतिंथये प्रद्रुंताय शून्यायांवस्थायांहार्य हरंन्ति। ताहगेव तत्। क्वाऽऽह् तत्स्तद्भवतीत्यांहुः। यथ्म न वेदं। यस्मै तद्धर्न्तीतिं। तस्माद्यदौष्मं जुहोतिं। तदेव संम्प्रति। अथो यथा प्रार्थमौषसं परिवेवेष्टि। ताहगेव तत्॥१५॥

रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। पर्नी स्थाली। यन्मध्ये-ऽग्नेरिधेश्रयेत्। रुद्राय पत्नीमपि दध्यात्। प्रमायुंका स्यात्। उदीचोऽङ्गांरान्निरूह्याधि श्रयति। पत्नियै गोपीथायं। व्यन्तान्करोति। तथा पत्यप्रमायुका भवति॥१६॥

घुमी वा एषोऽशाँन्तः। अहंरहः प्र वृंज्यते। यदंग्निहोत्रम्। प्रतिषिश्चेत्पशुकांमस्य। शान्तिमेव हि पंश्वयम्। न प्रति-षिश्चेद्वह्मवर्चसकांमस्य। समिद्धमिव हि ब्रह्मवर्चसम्। अथो खलुं। प्रतिषिच्यंमेव। यत्प्रंतिषिश्चिति॥१७॥

तत्पंश्व्यम्। यञ्जुहोति। तद्वंह्मवर्चिस। उभयंमेवाकः। प्रच्युंतं वा एतद्स्माल्लोकात्। अगंतं देवलोकम्। यच्छृतः ह्विरनंभिघारितम्। अभि द्योतयति। अभ्येवैनंद्घारयति। अथो देवत्रैवैनंद्गयति॥१८॥

पर्यमि करोति। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पर्यमि करोति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। यत्प्राचीनंमुद्धासयेत। यजंमान शुचाऽपंयेत्। यद्दंक्षिणा। पितृदेवत्य एस्यात्। यत्प्रत्यक्॥१९॥

पत्नी १ शुचा ऽपंयेत्। उदीचीन् मुद्वां सयित। एषा वै देवमनुष्याणा १ शान्ता दिक्। तामे वैन्दनूद्वां सयित शान्त्यै। वर्त्मं करोति। युज्ञस्य सन्तंत्यै। निष्टंपित। उपैव तथ्स्तृंणाित। चतुरुन्नंयित। चतुंष्यादः पश्चंः॥२०॥

पृश्नेवावं रुन्धे। सर्वांन्पूर्णानुन्नंयति। सर्वे हि पुण्यां राद्धाः। अनूच उन्नंयति। प्रजायां अनूचीनृत्वायं। अनूच्येवास्यं प्रजा- ऽर्धुका भवति। सम्मृंशित् व्यावृत्त्यै। नाहौंष्युन्नुपं सादयेत्। यदहौंष्यन्नुपसादयेंत्। यथाऽन्यस्मां उपनिधायं॥२१॥

अन्यस्मैं प्रयच्छंति। ताह्रगेव तत्। आऽस्मैं वृश्च्येत। यदेव गार्हंपत्येऽधि श्रयंति। तेन गार्हंपत्यं प्रीणाति। अग्निरंबिभेत्। आहुंतयो माऽत्येष्यन्तीतिं। स पुताश् समिधंमपश्यत्। तामाऽधंत्त। ततो वा अग्नावाहुंतयो-ऽध्रियन्त॥२२॥

यदेन १ समयंच्छत्। तथ्समिधंः सिम्त्वम्। सिमध्मा दंधाति। सम्वैनं यच्छति। आहुंतीनां धृत्यैं। अथों अग्निहोत्रम्वेष्मवंत्करोति। आहुंतीनां प्रतिष्ठित्ये। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदेका १ सिमधंमाधाय द्वे आहुंती जुहोतिं। अथ कस्या १ सिमिधं द्वितीयामाहुंतिं जुहोतीतिं॥२३॥

यह्ने स्मिधांवा द्ध्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। एका र स्मिधंमाधायं। यजुंषाऽन्यामाहुंतिं जुहोति। उमे एव स्मिद्धंती आहुंती जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयित। आदींप्तायां जुहोति। समिद्धमिव हि ब्रंह्मवर्च्सम्। अथो यथाऽतिंथिं ज्योतिंष्कृत्वा पंरि वेवेष्टि। ताद्दगेव तत्। चतुरुन्नंयित। द्विर्जुहोति। तस्मांद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथौं द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिष्ठापयति॥२४॥

भुवृति प्रतिषिञ्जति गमयति प्रत्यक्पुशवं उपनिधार्याप्रियन्तेति तच्चत्वारिं च॥————[३]

उत्तरावंतीं वै देवा आहंतिमजुंहवुः। अवांचीमसुंराः। ततों

देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यं कामयेत् वसीयान्थस्यादिति। कनीयस्तस्य पूर्वर्ष हुत्वा। उत्तरं भूयो जुहुयात्। एषा वा उत्तरावत्याहुंतिः। तान्देवा अजुहवुः। ततस्तेऽभवन्॥२५॥

यस्यैवं जुह्नंति। भवंत्येव। यं कामयंत् पापीयान्थस्यादितिं। भूयस्तस्य पूर्व हृत्वा। उत्तरं कनीयो जुहुयात्। एषा वा अवाच्याहुंतिः। तामसुंरा अजुहवुः। तत्स्ते परांऽभवन्। यस्यैवं जुह्नंति। परैव भंवति॥२६॥

हुत्वोपं सादयत्यजांमित्वाय। अथो व्यावृत्त्यै। गार्हंपत्यं प्रतींक्षते। अनंनुध्यायिनमेवेनं करोति। अग्निहोत्रस्य वे स्थाणुरंस्ति। तं य ऋच्छेत्। यज्ञस्थाणुमृंच्छेत्। एष वा अग्निहोत्रस्यं स्थाणुः। यत्पूर्वाऽऽहुंतिः। तां यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥२७॥

यज्ञस्थाणुमृंच्छेत्। अतिहाय पूर्वामाहुंतिं जुहोति। यज्ञस्थाणुमेव परिं वृणक्ति। अथो भ्रातृंव्यमेवास्वाऽतिं क्रामति। अवाचीनर्ं सायमुपंमार्ष्टि। रेतं एव तद्दंधाति। ऊर्ध्वं प्रातः। प्र जनयत्येव तत्। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। चत्रुत्रंयति॥२८॥

द्विर्जुहोति। अथ कं द्वे आहुंती भवत् इतिं। अग्नौ वैश्वान्र इतिं ब्रूयात्। एष वा अग्निवैश्वान्रः। यद्वाँह्मणः। हुत्वा द्विः प्राश्ञांति। अग्नावेव वैश्वान्रे द्वे आहुंती जुहोति। द्विर्जुहोतिं। द्विर्निमांर्ष्टि। द्विः प्राश्ञांति॥२९॥

षद्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रींणाति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। किं देवृत्यंमग्निहोत्रमितिं। वैश्वदेवमितिं ब्र्यात्। यद्यजुंषा जुहोतिं। तदैन्द्राग्नम्। यत्तूष्णीम्। तत्प्रांजापत्यम्॥३०॥

यन्निमार्ष्टि। तदोषंधीनाम्। यद्वितीयम्। तत्पंतृणाम्। यत्प्राश्ञांति। तद्गभांणाम्। तस्माद्गभां अनंश्ञन्तो वर्धन्ते। यदाचामंति। तन्मंनुष्यांणाम्। उदंङ्घर्यावृत्याचांमति॥३१॥

आत्मनों गोपीथायं। निर्णेनेक्ति शुद्धौं। निष्टंपति स्वगाकृत्ये। उद्दिंशति। सप्तर्षीनेव प्रींणाति। दक्षिणा पूर्यावर्तते। स्वमेव वीर्यमन् पूर्यावर्तते। तस्माद्दक्षिणोऽर्धं आत्मनों वीर्यावत्तरः। अथों आदित्यस्यैवावृत्मन् पूर्यावर्तते। हुत्वोप समिन्धे॥३२॥

ब्रह्मवर्चसस्य सिमंद्धै। न ब्र्हिरनु प्र हंरेत्। असईस्थितो वा एष यज्ञः। यदिग्निहोत्रम्। यदेनु प्रहरेत्। यज्ञं विच्छिन्द्यात्। तस्मान्नानुं प्रहृत्यम्। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अपो नि नंयति। अवभृथस्यैव रूपमंकः॥३३॥

अ<u>भव-भ</u>वति जुहुयात्रयति मार्ष्टि द्विः प्राश्ञांति प्राजापुत्यमाचांमतीन्धेऽकः॥**————————**[४]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। अग्निहोत्रप्रांयणा यज्ञाः। किं प्रांयणमग्निहोत्रमितिं। वृथ्सो वा अग्निहोत्रस्य प्रायंणम्। अग्निहोत्रं यज्ञानांम्। तस्यं पृथिवी सदंः। अन्तरिक्षमाग्नीं द्रम्। द्यौर्हं विर्धानम्। दिव्या आपः प्रोक्षंणयः। ओषंधयो ब्रहिः॥३४॥

वनस्पतंय इध्मः। दिशः परिधयः। आदित्यो यूपः। यजंमानः पृशः। समुद्रोऽवभृथः। संवथ्सरः स्वंगाकारः। तस्मादाहिताग्रेः सर्वमेव बर्हिष्यं दत्तं भेवति। यथ्मायं जुहोतिं। रात्रिमेव तेनं दक्षिण्यां कुरुते। यत्प्रातः॥३५॥

अहंरेव तेनं दक्षिण्यं कुरुते। यत्ततो ददांति। सा दक्षिणा। यावन्तो वै देवा अहंतमादन्। ते परांऽभवन्। त एतदिग्निहोत्र श् सर्वस्येव समवदायां जुहवुः। तस्मादाहुः। अग्निहोत्रं वै देवा गृहाणां निष्कृतिमपश्यित्रिति। यथ्सायं जुहोति। रात्रिया एव तद्धुताद्यांय॥३६॥

यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्प्रातः। अहं एव तद्धुताद्यांय। यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्ततोऽश्ञातिं। हुतमेव तत्। द्वयोः पर्यसा जुहुयात्पृशुकांमस्य। एतद्वा अग्निहोत्रं मिथुनम्। य एवं वेदं। प्र प्रजयां पृशुभिर्मिथुनैर्जायते॥३७॥

इमामेव पूर्वया दुहे। अमूमुत्तंरया। अधिश्रित्योत्तंरमा नंयति। योनांवेव तद्रेतः सिश्चति प्रजनंने। आज्येन जुहुयात्तेजंस्कामस्य। तेजो वा आज्यम्। तेज्रस्येव भंवति। पर्यसा पृशुकांमस्य। एतद्वे पंशूनाः रूपम्। रूपेणैवास्मैं पशूनवं रुन्थे॥३८॥ पृशुमानेव भंवति। दुभ्रेन्द्रियकांमस्य। इन्द्रियं वै दिधे। इन्द्रियाव्येव भंवति। युवाग्वां ग्रामंकामस्योषधा वै मंनुष्याः। भागुधेयेनैवास्में सजातानवं रुन्धे। ग्राम्येव भंवति। अयंज्ञो वा एषः। योऽसामा॥३९॥

चतुरुन्नंयति। चतुंरक्षरः रथन्तरम्। रथन्तरस्यैष वर्णः। उपरीव हरति। अन्तरिक्षं वामदेव्यम्। वामदेव्यस्यैष वर्णः। द्विर्जुहोति। द्यंक्षरं बृहत्। बृहुत एष वर्णः। अग्निहोत्रमेव तथ्सामन्वत्करोति॥४०॥

यो वा अंग्निहोत्रस्योपसदो वेदं। उपैनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्। उन्नीयोपं सादयति। पृथिवीमेव प्रीणाति। होष्यन्नुपंसादयति। अन्तरिक्षमेव प्रीणाति। हुत्वोपं सादयति। दिवंमेव प्रीणाति। एता वा अंग्निहोत्रस्योपसदं:॥४१॥

य एवं वेदं। उपैनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्ं। यो वा अग्निहोत्रस्याश्रांवितं प्रत्याश्रांवित् होतांरं ब्रह्माणं वषद्कारं वेदं। तस्य त्वेव हुतम्। प्राणो वा अग्निहोत्रस्याश्रांवितम्। अपानः प्रत्याश्रांवितम्। मनो होतां। चक्षुंर्ब्रह्मा। निमेषो वषद्कारः॥४२॥

य एवं वेदं। तस्य त्वेव हुतम्। सायं यावांनश्च वै देवाः प्रांतुर्यावांणश्चाग्निहोत्रिणों गृहमार्गच्छन्ति। तान् यन्न

त्प्येत्। प्रजयाऽस्य प्शुभिर्वि तिष्ठेरन्। यत्त्प्येत्। तृप्ता एनं प्रजयां प्शुभिस्तप्येयुः। स्जूर्देवैः सायं याविभिरितिं सायश्सम्मृंशति। स्जूर्देवैः प्रातर्याविभिरितिं प्रातः। ये चैव देवाः सायं यावीनो ये चे प्रातर्यावीणः॥४३॥

तानेवोभयाईस्तर्पयति। त एंनं तृप्ताः प्रजयां पृशुभिस्तर्प-यन्ति। अरुणो हं स्माहौपंवेशिः। अग्निहोत्र एवाह सायं प्रांत्वं भ्रातृंव्येभ्यः प्र हंरामि। तस्मान्मत्पापीया सो भ्रातृंव्या इति। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। स्मिथ्संप्तमी। स्प्तपंदा शक्नंरी। शाक्नरो वर्ज्ञः। अग्निहोत्र एव तथ्सायं प्रांत्वं यजंमानो भ्रातृंव्याय प्र हंरति। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति॥४४॥

बुर्हिः प्रातरहुताद्याय जायते रुन्धेऽसामा कंरोत्येता वा अग्निहोत्रस्योपसदी वषद्भारश्चं प्रातुर्यावाणो वज्रस्त्रीणि च॥ 🗘 🗍

प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मन्वन्मं जायेतेतिं। सोंऽजुहोत्। तस्यांऽऽत्मन्वदंजायत। अग्निर्वायुरांदित्यः। तेंऽब्रुवन्। प्रजा-पंतिरहौषीदात्मन्वन्मं जायेतेतिं। तस्यं व्यमंजनिष्महि। जायंतान्न आत्मन्वदित् तेऽजुहवुः। प्राणानांम्गिः। तनुवैं वायुः॥४५॥

चक्षुंष आदित्यः। तेषा हुतादंजायत् गौरेव। तस्यै पर्यसि व्यायंच्छन्त। ममं हुतादंजिन् ममेतिं। ते प्रजा-पंतिं प्रश्नमायन्। स आंदित्यौंऽग्निमंब्रवीत्। यत्रो नौ जयात्। तन्नौ सहास्दिति। कस्यै कोऽहौंषीदितिं प्रजापंतिरब्रवीत्कस्यै क इतिं। प्राणानांमहिमत्यग्निः॥४६॥ त्नुवां अहमितिं वायुः। चक्षुंषोऽहमित्यांदित्यः। य एव प्राणानामहौषीत्। तस्यं हुतादंजनीतिं। अग्नेर्हुतादंजनीतिं। तदंग्निहोत्रस्यांग्निहोत्रत्वम्। गौर्वा अग्निहोत्रम्। य एवं वेद् गौरंग्निहोत्रमितिं। प्राणापानाभ्यांमेवाग्निः समंध्यति। अव्यर्धुकः प्राणापानाभ्यां भवति॥४७॥

य एवं वेदं। तौ वायुरंब्रवीत्। अनु मा भंजत्मिति। यदेव गार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयंम्भ्यंद्रवान्। तेन त्वां प्रीणानित्यंब्रूताम्। तस्माद्यद्वार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयं-म्भ्यंद्रवंति। वायुमेव तेन प्रीणाति। प्रजापंतिर्देवताः सृजमानः। अग्निमेव देवतानां प्रथममंसृजत। सोऽन्यदां-लुम्भ्यंमवित्वा॥४८॥

प्रजापंतिम्भि प्रयावंतित। स मृत्योरंबिभेत्। सोंऽमुमांदित्यमात्मनो निरंमिमीत। त॰ हुत्वा परांड्व्यावंतित। ततो वै स मृत्युमपांजयत्। अपं मृत्युं जंयति। य एवं वेदं। तस्माद्यस्यैवं विदुषंः। उतेकाहमुत द्यहं न जुह्वंति। हुतमेवास्यं भवति। असौ ह्यांदित्योंऽग्निहोत्रम्॥४९॥ वृत्यं वृत्युक्षंव्यावंव्या भव्यंवं वा

रौद्रं गविं। वायव्यंमुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमानम्। सौम्यं दुग्धम्। वारुणमधिं श्रितम्। वैश्वदेवा भिन्दवंः। पौष्णमुदंन्तम्। सारुस्वतं विष्यन्दंमानम्। मैत्र॰ शर्रः। धातुरुद्वांसितम्। बृहुस्पतेरुन्नीतम्। सुवितुः प्र ज्ञांन्तम्। द्यावापृथिव्यर्थं ह्रियमाणम्। ऐन्द्राग्नमुपंसन्नम्। अग्नेः पूर्वा-ऽऽहुंतिः। प्रजापंतेरुत्तंरा। ऐन्द्र॰ हुतम्॥५०॥

दक्षिणत उपं सृजित। पितृलोकमेव तेनं जयित। प्राचीमा वंतियति। देवलोकमेव तेनं जयित। उदींचीमावृत्यं दोग्धि। मृनुष्यलोकमेव तेनं जयित। पूर्वौ दुह्याङ्येष्ठस्यं ज्यैष्ठिनेयस्यं। यो वां गृतश्रीः स्यात्। अपंरौ दुह्यात्किनिष्ठस्यं कानिष्ठिनेयस्यं। यो वा बुभूषेत्॥५१॥

न सं मृंशति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। वायव्यं वा पृतदुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमानम्। मैत्रं दुग्धम्। अर्यम्ण उद्वास्यमानम्। त्वाष्ट्रमुंन्नीयमानम्। बृह्स्पतेरुन्नीतम्। स्वितुः प्रक्रौन्तम्। द्यावापृथिव्यर्ड् ह्रियमाणम्॥५२॥

प्रेन्द्राग्नमुपं सादितम्। सर्वांभ्यो वा एष देवतांभ्यो जुहोति। योंऽग्निहोत्रं जुहोतिं। यथा खलु वै धेनुं तीर्थे तर्पयंति। एवमंग्निहोत्री यजंमानं तर्पयति। तृप्यंति प्रजयां पृश्निः। प्र सुंव्गं लोकं जांनाति। पश्यंति पुत्रम्। पश्यंति पौत्रम्। प्र प्रजयां पृश्निमिथुनैर्जायते। यस्यैवं विदुषोंऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५३॥

त्रयो वै प्रैयम्धा आंसन्। तेषां त्रिरेकौँऽग्निहोत्रमंजुहोत्। द्विरेकः। सकृदेकः। तेषां यस्त्रिरजुंहोत्। स ऋचाऽजुंहोत्।

यो द्विः। स यर्जुषा। यः सुकृत्। स तूष्णीम्॥५४॥

यश्च यजुषाऽजुंहोद्यश्चं तूष्णीम्। तावुभावाँर्भुताम्। तस्माद्यजुषाऽऽहुंतिः पूर्वा होत्व्याँ। तूष्णीमृत्तंरा। उभे एवधीं अवं रुन्धे। अग्निज्यींतिज्यींतिर्ग्निः स्वाहेतिं सायं जुंहोति। रेतं एव तद्दंधाति। सूर्यो ज्योतिज्यींतिः सूर्यः स्वाहेतिं प्रातः। रेतं एव हितं प्र जनयित। रेतो वा एतस्यं हितं न प्र जांयते॥५५॥

यस्याँग्निहोत्रमहुंत्र सूर्योऽभ्यंदिति। यद्यन्ते स्यात्। उन्नीय् प्राङुदाद्रंवेत्। स उपसाद्यातिमेतोरासीत। स यदा ताम्येँत्। अथ् भूः स्वाहेतिं जुहुयात्। प्रजापितिर्वे भूतः। तमेवोपांसरत्। स पुवेनं तत् उन्नयति। नार्तिमार्च्छति यजमानः॥५६॥ व्यां जांवते यजमानः॥—[९]

यद्ग्रिमुद्धरंति। वसंवस्तर्द्ध्याः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। वसुंष्वेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति। निहितो धूपायञ्छेते। रुद्रास्तर्द्धाग्नः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। रुद्रेष्वेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति। प्रथममिध्ममर्चिरा लेभते। आदित्यास्तर्द्धाग्नः॥५७॥

तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। आदित्येष्वेवास्याँग्निहोत्र हुतं भविति। सर्व एव संवृंश इध्म आदीं हो भविति। विश्वें देवास्तर्ह्याग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। विश्वेंष्वेवास्यं

देवेष्वंग्निहोत्र हुतं भंवति। नित्रामृर्चिरुपावैति लोहिनीकेव भवति। इन्द्रस्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। इन्द्रं एवास्यांग्निहोत्र हुतं भंवति॥५८॥

अङ्गारा भवन्ति। तेभ्योऽङ्गारेभ्योऽर्चिरुदेति। प्रजा-पंतिस्तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। प्रजापंतावेवास्यांग्निहोत्र हुतं भवति। शरोऽङ्गारा अध्यूहन्ते। ब्रह्म तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। ब्रह्मंत्रेवास्यांग्निहोत्र हुतं भवति। वसुंषु रुद्रेष्वांदित्येषु विश्वंषु देवेषुं। इन्द्रें प्रजापंतौ ब्रह्मन्। अपंरिवर्गमेवास्यैतासुं देवतांसु हुतं भवति। यस्यैवं विदुषांऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५९॥

आपित्त्यास्तर्ध्यप्रिरिन्द्रं पुवास्याँग्निहोत्र ${f x}$ हुतं भंवित देवेषुं चृत्वारिं च (यद्ग्नित्रिहिंतः प्रथम ${f x}$ सर्वं पुव निंतुरामङ्गांगुः शरोऽङ्गांगु ब्रह्म वसुंप्बष्टौ॥)॥————[${f y}$ ${f x}$

ऋतं त्वां सृत्येन परिषिश्चामीतिं सायं परिषिश्चति। सृत्यं त्वर्तेन परिषिश्चामीतिं प्रातः। अग्निर्वा ऋतम्। असावांदित्यः सृत्यम्। अग्निमेव तदांदित्येनं सायं परिषिश्चति। अग्निनां-ऽऽदित्यं प्रातः सः। यावंदहोरात्रे भवंतः। तावंदस्य लोकस्यं। नार्तिनं रिष्टिः। नान्तो न पर्यन्तौऽस्ति। यस्यैवं विदुषौऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उंचैनदेवं वेदं॥६०॥

अङ्गिरसः प्रजापंतिरप्रि॰ रुद्र उंत्तरावंतीं ब्रह्मवादिनौंऽग्निहोत्रप्रांयणा युज्ञाः प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मुन्वब्रौद्रङ्गविं दक्षिणृतस्त्रयो वै यद्ग्रिमृतं त्वां सुत्येनैकांदश॥११॥ अङ्गिरसः प्रैव तेनं पशूनेव यत्रिमार्ष्टि यो वा अग्निहोत्रस्योपसदों दक्षिणतः पष्टिः॥६०॥

अङ्गिरसो य उंचैनदेवं वेदं॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंज्येतिं। स पृतं दशंहोतारम-पश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बेऽजुहोत्। ततो वै स प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टा अपाँकामन्। ता ग्रहेणागृह्णात्। तद्गहंस्य ग्रह्त्वम्। यः कामयेत् प्रजायेयेतिं। स दशंहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तुम्बे जुंहुयात्। प्रजापंति्वें दशंहोता॥१॥

प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। मनंसा जुहोति। मनं इव् हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। पूर्णयां जुहोति। पूर्ण इंव् हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। न्यूंनया जुहोति। न्यूंनाद्धि प्रजा-पंतिः प्रजा असृंजत। प्रजानार् सृष्ट्यै॥२॥

दुर्भस्तम्बे जुंहोति। एतस्माद्वे योनैंः प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। यस्मादेव योनैंः प्रजापंतिः प्रजा असृंजत। तस्मादेव योनेः प्रजायते। ब्राह्मणो दक्षिणत उपास्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येव प्रजायते। ग्रहों भवति। प्रजानां सृष्टानां धृत्यै। यं ब्राह्मणं विद्यां विद्वाः सं यशो नर्च्छेत्॥३॥

सोऽरंण्यं प्रेत्यं। दुर्भस्तम्बमुद्भथ्यं। ब्राह्मणं दक्षिणतो निषाद्यं। चतुरहोतॄन्व्याचंक्षीत। एतद्वै देवानां पर्मं गृह्यं ब्रह्मं। यचतुरहोतारः। तदेव प्रकाशं गमयति। तदेनं प्रकाशं गृतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयति। दुर्भस्तम्बमुद्भथ्य व्याचंष्टे॥४॥ अग्निवान् वै दंर्भस्तम्बः। अग्निवत्येव व्याचंष्टे। ब्राह्मणो दंक्षिणत उपाँस्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येवैनं यशं ऋच्छति। ईश्वरन्तं यशोर्तोरित्यांहुः। यस्यान्ते व्याचष्ट् इतिं। वर्स्तस्मे देयः। यदेवैनं तत्रोपनमंति। तदेवावं रुन्थे॥५॥

अग्निमादधांनो दर्शहोत्राऽरणिमवं दध्यात्। प्रजांतमेवैनमा धंत्ते। तेनैवोद्गुत्यांग्निहोत्रं जुंहुयात्। प्रजांतमेवैनं ज्ञुहोति। ह्विर्निर्वृपस्यं दर्शहोतारं व्याचंक्षीत। प्रजांतमेवैनं निर्वृपति। सामिधेनीरंनुवृक्ष्यं दर्शहोतारं व्याचंक्षीत। सामिधेनीरेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। अथों युज्ञो वै दर्शहोता। युज्ञमेव तंनुते॥६॥

अभिचरं दर्शहोतारं जुहुयात्। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिदंशमी। सप्राणमेवनमभि चरित। एतावृद्धे पुरुषस्य स्वम्। यावंत्प्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तद्भि चरित। स्वकृत् इरिणे जुहोति प्रदरे वाँ। एतद्धा अस्यै निर्ऋतिगृहीतम्। निर्ऋतिगृहीत एवेनं निर्ऋत्या ग्राहयित। यद्धाचः कूरम्। तेन वषंद्वरोति। वाच एवेनं कूरेण प्र वृंश्चित। ताजगार्तिमार्च्छंति॥७॥

प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंजेयेतिं। स एतं चतुर्होतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वे स दंर्शपूर्णमासावंसृजत। तावंस्माथ्सृष्टावपां- क्रामताम्। तौ ग्रहेणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। दुर्श्पूर्णमासावालभंमानः। चतुरहोतारं मनसाऽनुद्रुत्यां-हवनीये जुहुयात्। दुर्शपूर्णमासावेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते॥८॥

ग्रहों भवति। द्र्शपूर्णमासयौः सृष्टयोर्धृत्यै। सोऽकामयत चातुर्मास्यानिं सृजेयेति। स एतं पश्चंहोतारमपश्यत्। तं मनसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेऽजुहोत्। ततो वे स चांतुर्मास्यान्यं-सृजत। तान्यंस्माथ्सृष्टान्यपाँकामन्। तानि ग्रहेणागृह्णात्। तद्गहंस्य ग्रहत्वम्। चातुर्मास्यान्यालभंमानः॥९॥

पश्चंहोतार्ं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयें जुहुयात्। चातुर्मास्यान्येव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। ग्रहों भवति। चातुर्मास्यानारं सृष्टानां धृत्यैं। सोंऽकामयत पशुबन्धरं सृंजेयेतिं। स एतर षड्ढांतारमपश्यत्। तं मनंसा-ऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वै स पंशुबन्धमंसृजत। सौस्माथ्सृष्टोऽपांकामत्। तं ग्रहेणागृह्णात्॥१०॥

तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। पृशुब्न्धेनं युक्ष्यमांणः। षङ्कोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयं जुहुयात्। पृशुब्न्धमेव सृष्ट्वा-ऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। पृशुब्न्धस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। सोऽकामयत सौम्यमंध्वर स्ंजेयेतिं। स एत स्माहोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयंऽजुहोत्। ततो व स सौम्यमंध्वरमंसृजत॥११॥

सों ऽस्माथ्सृष्टोऽपां कामत्। तं ग्रहेंणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। दीक्षिष्यमाणः। सप्तहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यां-ऽऽहवनीयं जुहुयात्। सौम्यमेवाध्वरः सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। सौम्यस्याध्वरस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। देवेभ्यो वै युज्ञो न प्राभंवत्। तमेतावुच्छः समंभरन्॥१२॥

यथ्संम्भाराः। ततो वै तेभ्यों यज्ञः प्राभंवत्। यथ्संम्भारा भवंन्ति। यज्ञस्य प्रभूत्ये। आतिथ्यमासाद्य व्याचंष्टे। यज्ञमुखं वा आतिथ्यम्। मुख्त एव यज्ञ र सम्भृत्य प्र तंनुते। अयज्ञो वा एषः। योऽप्रत्नीकः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्नीर्व्याचंष्टे। यज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजनंनाय। उपसथ्मु व्याचंष्टे। एतद्वे पत्नीनामायतंनम्। स्व एवैनां आयत्नेऽवंकल्पयिति॥१३॥ व्युवः अल्लभमानेऽग्रह्णवस्वनाभरआयेर्थ्यदं॥——[२]

प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेति। स तपोऽतप्यत। स त्रिवृत् क् स्तोमंमसृजत। तं पश्चद्शः स्तोमो मध्यत उदंतृणत्। तौ पूर्वपक्षश्चापरपक्षश्चांभवताम्। पूर्वपक्षं देवा अन्वसृंज्यन्त। अपरपक्षमन्वसुंराः। ततो देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यं कामयेत् वसीयान्थस्यादिति॥१४॥

तं पूर्वपक्षे यांजयेत्। वसीयानेव भवति। यं कामयेत् पापीयान्थस्यादिति। तमंपरपक्षे यांजयेत्। पापीयानेव भवति। तस्मौत्पूर्वपक्षोऽपरपक्षात्करुण्यंतरः। प्रजापंतिवैं दशंहोता। चतुंर्होता पश्चंहोता। षङ्कोता सप्तहोता। ऋतवंः

संवथ्सरः॥१५॥

प्रजाः पृशवं इमे लोकाः। य एवं प्रजापंतिं बृहोर्भूया रेसं वेदं। बृहोरेव भूयाँ-भवति। प्रजापंतिर्देवासुरानं सृजत। स इन्द्रमपि नासृजत। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येति। सौं ऽब्रवीत्। यथा ऽहं युष्मा इस्तप्सा ऽसृक्षि। एविमन्द्रं जनयध्वमिति॥१६॥

ते तपोंऽतप्यन्त। त आत्मिन्निन्द्रंमपश्यन्। तमंब्रुवन्। जायस्वेतिं। सोंऽब्रवीत्। किं भांग्धेयंम्भि जंनिष्य इतिं। ऋतून्थ्यंवथ्यरम्। प्रजाः पृशून्। इमाँ ह्योकानित्यं ब्रुवन्। तं वै माऽऽहुंत्या प्र जनयतेत्यं ब्रवीत्॥१७॥

तं चतुंर्होत्रा प्राजंनयन्। यः कामयेत वीरो म् आजांयेतेति। स चतुंर्होतारं जुहुयात्। प्रजा-पंतिर्वे चतुंर्होता। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहेति ग्रहेण जुहोति। आऽस्यं वीरो जांयते। वीर॰ हि देवा एतयाऽऽहुंत्या प्राजंनयन्। आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकेंऽस्पर्धन्त। व्यं पूर्वे सुवर्गं लोकिमियाम व्यं पूर्व इतिं॥१८॥

त आंदित्या एतं पश्चंहोतारमपश्यन्। तं पुरा प्रांतरन्-वाकादाग्नींध्रेऽजुहवुः। ततो वै ते पूर्वे सुव्गं लोकमायन्। यः सुव्गंकामः स्यात्। स पश्चंहोतारं पुरा प्रांतरनुवाकादाग्नींध्रे जुहुयात्। सुंव्थ्सरो वै पश्चंहोता। सुंव्थ्सरः सुंव्गों लोकः। स्ंवृथ्सर एवर्तुषुं प्रतिष्ठायं। सुवृगं लोकमंति। तेंऽब्रुवृन्निङ्गंरस आदित्यान्॥१९॥

क्वं स्थ। क्वं वः स्द्र्यो ह्व्यं वंक्ष्याम् इति। छन्दः स्वित्यं ब्रुवन्। गायित्रयां त्रिष्टुभि जगत्यामिति। तस्माच्छन्देः सु सद्य आदित्येभ्यः। आङ्गीर्सीः प्रजा ह्व्यं वहन्ति। वहंन्त्यस्मै प्रजा बिलम्। ऐनमप्रतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं। द्वादंश मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एंकवि १ शः। एतस्मिन्वा एष श्रितः। एतस्मिन्प्रतिष्ठितः। य एवमेत १ श्रितं प्रतिष्ठितं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥२०॥ स्याविति संवस्यो जनयस्मितीत्वंवत्यात्वः पदं॥———[३]

प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेविति। स एतं दर्शहोतारमपश्यत्। तेनं दश्धाऽऽत्मानं विधायं। दर्शहोत्राऽतप्यत। तस्य चित्तिः सुगासीत्। चित्तमाज्यम्। तस्यैतावंत्येव वागासीत्। एतावानं यज्ञऋतुः। स चतुंर्होतारमसृजत। सोऽनन्दत्॥२१॥

असृंक्षि वा इमिनितं। तस्य सोमों ह्विरासींत्। स चतुंर्होत्राऽतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भूरिति व्याहंरत्। स भूमिंमसृजत। अग्निहोत्रं दंर्शपूर्णमासौ यजूर्षेषि। स द्वितीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भुव इति व्याहंरत्॥२२॥

सौंऽन्तिरिक्षमसृजत। चातुर्मास्यानि सामानि। स तृतीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स सुव्रिति व्याहंरत्। स दिवंमसृजत। अग्निष्टोममुक्थ्यंमतिरात्रमृचंः। एता वै व्याहृंतय इमे लोकाः। इमान्खलु वै लोकानन् प्रजाः पृशवृश्छन्दा से प्राजायन्त। य पृवमेताः प्रजापंतेः प्रथमा व्याहृंतीः प्रजाता वेदं॥२३॥

प्र प्रजयां पृश्निर्मिथुनैर्जायते। स पश्चंहोतारम-सृजतः। स हुविर्नाविन्दतः। तस्मै सोमंस्तुनुवं प्रायंच्छत्। पृतत्ते हुविरितिं। स पश्चंहोत्राऽतप्यतः। सोऽताम्यत्। स प्रत्यक्षंबाधतः। सोऽसुंरानसृजतः। तदस्याप्रियमासीत्॥२४॥

तद्दुर्वर्ण् हरेण्यमभवत्। तद्दुर्वर्णस्य हिरेण्यस्य जन्मं। स द्वितीयंमतप्यत। सोऽताम्यत्। स प्राङंबाधत। स देवानं-सृजत। तदंस्य प्रियमांसीत्। तथ्सुवर्ण् हिरेण्यमभवत्। तथ्सुवर्णस्य हिरेण्यस्य जन्मं। य एव॰ सुवर्णस्य हिरेण्यस्य जन्म वेदं॥२५॥

सुवर्ण आत्मनां भवति। दुर्वर्णोंऽस्य भ्रातृंव्यः। तस्मांध्सुवर्ण् हिरंण्यं भार्यम्। सुवर्णं एव भंवति। ऐनं प्रियं गंच्छति नाप्रियम्। स सप्तहोतारमसृजत। स सप्तहोत्रैव सुंवर्णं लोकमैत्। त्रिणवेन स्तोमेनैभ्यो लोकभ्यो-ऽसुंरान्प्राणुंदत। त्रयस्त्रिष्शेन प्रत्यंतिष्ठत्। एकविष्शेन रुचंमधत्त॥२६॥

स्प्तृद्शेन प्राजांयत। य एवं विद्वान्थ्सोमेन यजेते। सप्तहोत्रैव सुंवर्गं लोकमेति। त्रिणवेन स्तोमेनैभ्यो लोकेभ्यो भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। त्रयस्त्रिष्शेन् प्रतिं तिष्ठति। एकविष्शेन् रुचं धत्ते। स्प्तद्शेन् प्र जांयते। तस्मांध्सप्तद्शः स्तोमो न निर्हत्यः। प्रजापंतिर्वे संप्तद्शः। प्रजापंतिमेव मध्यतो धंते प्रजात्यै॥२७॥

देवा वै वर्रणमयाजयन्। स यस्यैयस्यै देवतांयै दक्षिणामनंयत्। तामंब्रीनात्। तेंंऽब्रुवन्। व्यावृत्य प्रतिंगृह्णाम। तथां नो दक्षिणा न ब्रेंष्यतीतिं। ते व्यावृत्य प्रत्यंगृह्णन्। ततो वै तान्दक्षिणा नाब्रीनात्। य एवं विद्वान्व्यावृत्य दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। नैनं दक्षिणा ब्रीनाति॥२८॥

राजां त्वा वर्रुणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्नये हिर्ण्यमित्यांह। आग्नेयं वै हिर्ण्यम्। स्वयैवैनंद्देवतंया प्रतिगृह्णाति। सोमाय वास् इत्याह। सौम्यं वै वासंः। स्वयैवैनंद्देवतंया प्रतिगृह्णाति। रुद्राय गामित्यांह। रौद्री वै गौः। स्वयैवैनां देवतंया प्रतिंगृह्णाति। गृह्णाति। वर्रुणायाश्वमित्यांह॥२९॥

वारुणो वा अश्वंः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिगृह्णाति। प्रजा-पंतये पुरुषमित्यांह। प्राजापत्यो वे पुरुषः। स्वयैवैनं देवतंया प्रति गृह्णाति। मनवे तल्पमित्यांह। मानवो वे तल्पंः। स्वयैवैनं देवतंया प्रति गृह्णाति। उत्तानायांङ्गीरसायान् इत्यांह। इयं वा उत्तान आङ्गीरसः॥३०॥

अनयैवैन्त्प्रतिं गृह्णाति। वैश्वानुर्यर्चा रथं प्रतिं गृह्णाति।

वैश्वान् ते वे देवतंया रथंः। स्वयैवैनं देवतंया प्रति गृह्णाति। तेनांमृत्त्वमंश्यामित्यांह। अमृतंमेवाऽऽत्मन्यंत्ते। वयो दात्र इत्यांह। वयं एवैनं कृत्वा। सुवृगं लोकं गंमयति। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्र इत्यांह॥३१॥

यद्वै शिवम्। तन्मयंः। आत्मनं पृवैषा परींत्तिः। क इदं कस्मां अदादित्यांह। प्रजापंतिर्वे कः। स प्रजापंतये ददाति। कामः कामायेत्यांह। कामेन हि ददांति। कामेन प्रतिगृह्णातिं। कामों दाता कामः प्रतिग्रहीतेत्यांह॥३२॥

कामो हि दाता। कामः प्रतिग्रहीता। कामः समुद्रमाविशे-त्यांह। समुद्र इंव हि कामः। नेव हि कामस्यान्तोऽस्ति। न समुद्रस्यं। कामेन त्वा प्रतिगृह्णामीत्यांह। येन कामेन प्रतिगृह्णाति। स एवैनंममुष्मिं छोके काम आगंच्छति। कामेतत्तं एषा ते काम दक्षिणेत्यांह। कामं एव तद्यजंमानो-ऽमुष्मिं छोके दक्षिणामिच्छति। न प्रतिग्रहीतिरिं। य एवं विद्वान्दिश्वणां प्रतिगृह्णातिं। अनृणामेवैनां प्रति गृह्णाति॥३३॥ क्षान्त्यक्षित्यांह प्रतिगृह्णातिं। अनृणामेवैनां प्रति गृह्णाति॥३३॥

अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्देशममहंः। दुश्मे-ऽहंन्थ्सर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुवन्ति। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। अन्नाद्यमवं रुन्थते। तिसृभिः स्तुवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकभ्योऽन्नाद्यमवं रुन्थते। पृश्चिवतीर्भवन्ति। अन्नं वै पृश्चि॥३४॥ अन्नमेवार्व रुन्थते। मनंसा प्रस्तौति। मन्सोद्गीयति। मनंसा प्रति हरति। मनं इव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। देवा वै सूर्पाः। तेषांमिय राज्ञी। यथ्संपराज्ञियां ऋग्भिः स्तुवन्ति। अस्यामेव प्रति तिष्ठन्ति॥३५॥

चतुंरहोतृन् होता व्याचेष्टे। स्तुतमनुंश श्सित् शान्त्यैं। अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। एतत्खलु वे देवानां पर्मं गृह्यं ब्रह्मं। यचतुंरहोतारः। दश्मेऽह् श्रुश्चतुंर्होतृन्व्याचेष्टे। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। प्रमं देवानां गृह्यं ब्रह्मावं रुन्थे। तदेव प्रकाशं गमयित॥३६॥

तदेनं प्रकाशं गृतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयति। वाचं यच्छति। यज्ञस्य धृत्यै। यज्ञमानदेवत्यं वा अहं। भ्रातृव्यदेवत्यां रात्रिः। अहा रात्रिं ध्यायेत्। भ्रातृंव्यस्यैव तल्लोकं वृंङ्के। यद्दिवा वाचं विसृजेत्। अह्भ्रातृंव्यायोच्छि १ षेत्। यन्नक्तं विसृजेत्। रात्रिं भ्रातृंव्यायोच्छि १ षेत्। अधिवृक्षसूर्ये वाचं विसृजिति। पृतावंन्तमेवास्में लोकमुच्छि १ षति। यावंदादित्यों-ऽस्तमेतिं॥३७॥

पृष्ठित्रं तिष्ठन्ति गमयति शि॰पेृत्पश्चं च॥______[६

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टाः समंक्षिष्यन्। ता रूपेणानुप्राविंशत्। तस्मादाहुः। रूपं वै प्रजापंतिरितिं। ता नाम्नाऽनु प्राविंशत्। तस्मांदाहुः। नाम् वै प्रजापंतिरितिं। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्ध्वयेते॥३८॥

मित्रमेव भंवतः। प्रजापंतिर्देवासुरानंसृजत। स इन्द्रमि नासृंजत। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येति। स आत्मित्रिन्द्रंमपश्यत्। तमंसृजत। तं त्रिष्टुग्वीर्यं भूत्वाऽनु प्राविंशत्। तस्य वर्ज्ञः पश्चद्शो हस्त आपंद्यत। तेनोदय्यासुंरानभ्यंभवत्॥३९॥

य एवं वेदं। अभि भ्रातृंच्यान्भवति। ते देवा असुंरैर्विजित्यं। सुव्गं लोकमायन्। तेंऽमुष्मिं श्लोके व्यक्षध्यन्। तेंऽब्रुवन्। अमुतंः प्रदानं वा उपंजिजीविमेतिं। ते सप्तहोंतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीर्सं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्पयेतिं॥४०॥

तस्य वा इयं क्रृप्तिः। यदिदं किं चे। य एवं वेदे। कल्पेतेऽस्मै। स वा अयं मेनुष्येषु युज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं सुद्धो देवेभ्यो हृव्यं वंहित। य एवं वेदे। उपैनं युज्ञो नेमित। सोऽमन्यत। अभि वा इमेंऽस्माल्लोकादमुं लोकं किमिष्यन्त इति। स वार्चस्पते हृदिति व्याहंरत्। तस्मौत्पुत्रो हृदेयम्। तस्मौद्स्माल्लोकादमुं लोकं नाभि कोमयन्ते। पुत्रो हि हृदेयम्॥४१॥

देवा वै चतुंर्होतृभिर्य्ज्ञमंतन्वत। ते वि पाप्मना

भ्रातृं व्येणाजंयन्त। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। य एवं विद्वाः श्चतुं रहोतृभिर्य्ञं तंनुते। वि पाप्मना भ्रातृं व्येण जयते। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। षड्ढोंत्रा प्रायणीयमा सांदयति। अमुष्मे वै लोकाय षड्ढोंता। घ्रन्ति खलु वा एतथ्सोमम्। यदंभिषुण्वन्ति॥४२॥

ऋजुधेवैनंमुमुं लोकं गंमयित। चतुंर्होत्राऽऽतिथ्यम्। यशो वे चतुंर्होता। यशं एवाऽऽत्मन्धंत्ते। पश्चंहोत्रा पशुमुपंसादयित। सुवृग्यों वे पश्चंहोता। यजंमानः पृशुः। यजंमानमेव सुवृगं लोकं गंमयित। ग्रहानगृहीत्वा सप्तहोतारं जुहोति। इन्द्रियं वे सप्तहोता॥४३॥

ड्रान्द्रियमेवाऽऽत्मन्धंत्ते। यो वै चतुंर्होतॄननुसव्नं तूर्पयंति। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैन सोमपीथो नमिति। बहिष्प्वमाने दशहोतारं व्याचंक्षीत। माध्यं दिने पवमाने चतुंर्होतारम्। आर्भवे पवमाने पश्चहोतारम्। पितृयज्ञे षड्ढोतारम्। यज्ञायज्ञियंस्य स्तोत्रे सप्तहोतारम्। अनुस्वनमेवैना इंस्तर्पयति॥४४॥

तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैन सोमपीथो नमिति। देवा वै चतुंरहोतृभिः स्त्रमांसत। ऋद्धिंपरिमितं यशंस्कामाः। तेंऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषान्नस्तथ्सहासदितिं। सोमश्चतुंरहोत्रा। अग्निः पश्चंहोत्रा।

धाता षड्ढों त्रा॥४५॥

इन्द्रंः सप्तहोत्रा। प्रजापंतिर्दशंहोत्रा। तेषा् सोम् राजांनं यशं आर्च्छत्। तन्त्र्यंकामयत। तेनापात्रामत्। तेनं प्रलायमचरत्। तं देवाः प्रेषेः प्रैषंमैच्छन्। तत्प्रैषाणां प्रैष्त्वम्। निविद्धिन्यंवेदयन्। तन्निविद्वान्त्रिवित्त्वम्॥४६॥

आप्रीभिराप्नुवन्। तदाप्रीणांमाप्रित्वम्। तमंघ्नन्। तस्य यशो व्यंगृह्णतः। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृंहीताः। तेंऽब्रुवन्। यो वै नः श्रेष्ठो-ऽभूत्॥४७॥

तमंबिधष्म। पुनेरिम १ सुंवामहा इति। तं छन्दोभिरसुवन्त। तच्छन्दंसां छन्द्स्त्वम्। साम्ना समानंयन्। तथ्साम्नेः सामृत्वम्। उक्थैरुदंस्थापयन्। तदुक्थानांमुक्थृत्वम्। य एवं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥४८॥

सर्वमायुरिति। सोमो वै यशः। य एवं विद्वान्थ्सोमंमागच्छंति। यशं एवैनंमृच्छति। तस्मादाहुः। यश्चैवं वेद यश्च न। तावुभौ सोम्मागंच्छतः। सोमो हि यशः। तं त्वाऽव यशं ऋच्छुतीत्यांहुः। यः सोमे सोमं प्राहेतिं। तस्माथ्सोमे सोमः प्रोच्यः। यशं एवैनंमृच्छति॥४९॥

अभिषुण्वन्तिं सप्तहोंता तर्पयति पङ्गोत्रा निवित्त्वमभूँत्तिष्ठति प्राहेति द्वे चं॥—————[८]

इदं वा अग्रे नैव किं चु नाऽऽसींत्। न द्यौरांसीत्। न पृंथिवी। नान्तरिक्षम्। तदसंदेव सन्मनोऽकुरुत् स्यामितिं। तदंतप्यत। तस्मौत्तेपानाद्धूमोऽजायत। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपानादग्निरंजायत। तद्भूयोऽतप्यत॥५०॥

तस्मौत्तेपानाञ्चोतिरजायत। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपाना-द्विरंजायत। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपानान्मरीचयो-ऽजायन्त। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपानादुंदारा अंजायन्त। तद्भूयोऽतप्यत। तद्भूमिव समहन्यत। तद्वस्तिमीभनत्॥५१॥

स संमुद्रोऽभवत्। तस्माँथ्समुद्रस्य न पिंबन्ति। प्रजननिमव् हि मन्यंन्ते। तस्माँत्पृशोर्जायंमानादापंः पुरस्ताँद्यन्ति। तद्दशंहोताऽन्वंसृज्यत। प्रजापंतिर्वे दशंहोता। य एवं तपंसो वीर्यं विद्वाङ्स्तप्यंते। भवंत्येव। तद्वा इदमापंः सिल्लमांसीत्। सोंऽरोदीत्प्रजापंतिः॥५२॥

स करमां अज्ञि। यद्यस्या अप्रंतिष्ठाया इतिं। यद्फ्स्वंवापंद्यत। सा पृंथिव्यंभवत्। यद्यमृष्ट। तद्न्तिरिक्षम-भवत्। यदूर्ध्वमुदमृष्ट। सा द्यौरंभवत्। यदरोंदीत्। तद्नयों रोदस्त्वम्॥५३॥

य एवं वेदे। नास्यं गृहे रुंदन्ति। एतद्वा एषां लोकानां जन्मं। य एवमेषां लोकानां जन्म वेदे। नैषु लोकेष्वार्तिमार्च्छति। स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। स इमां प्रतिष्ठां वित्वाऽकांमयत् प्रजायेयेति। स तपोऽतप्यत। सौऽन्तर्वानभवत्। स जघनादसुंरानसृजत॥५४॥ तेभ्यों मृन्मये पात्रेऽन्नंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासींत्। तामपांहत। सा तिमंस्राऽभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेति। स तपोंऽतप्यत। सोंन्तर्वानभवत्। स प्रजनंनादेव प्रजा अं-सृजत। तस्मांदिमा भूयिष्ठाः। प्रजनंनाद्येना असृंजत॥५५॥

ताभ्यों दारुमये पात्रे पयोंऽदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासींत्। तामपाहत। सा जोथ्स्नांऽभवत्। सोंऽकामयत् प्रजायेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स उंपपक्षाभ्यांमेवर्तूनं-सृजत। तेभ्यों रज्ते पात्रे घृतमंदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्॥५६॥

तामपांहत। सोंऽहोरात्रयोः सन्धिरंभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स मुखाँद्देवानंसृजत। तेभ्यो हरिते पात्रे सोमंमदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्। तामपांहत। तदहंरभवत्॥५७॥

पुते वै प्रजापंतेर्दोहाँः। य पुवं वेदं। दुह पुव प्रजाः। दिवा वै नों ऽभूदितिं। तद्देवानांं देवत्वम्। य पुवं देवानांं देवत्वं वेदं। देववांनेव भवति। पुतद्वा अंहोरात्राणां जन्मं। य पुवमंहोरात्राणां जन्म वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छति॥५८॥

अस्तोऽधि मनोंऽसृज्यत। मनंः प्रजापंतिमसृजत। प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तद्वा इदं मनंस्येव पंर्मं प्रतिष्ठितम्। यदिदं किं चं। तदेतच्छ्वोवस्यसन्नाम् ब्रह्मं। व्युच्छन्तीं व्युच्छन्त्यस्मै वस्यंसीवस्यसी व्युंच्छति। प्रजांयते प्रजयां पृशुभिः। प्र पंरमेष्ठिनो मात्रांमाप्नोति। य एवं वेदं॥५९॥

अभिरंजायत् तद्भूयेंऽतप्यताभिनदरोदीत्प्रजापंतीरोदस्त्वमंसृज्ञतासृंजत धृतमंदृहुद्याऽस्य सा तुनूरासीदहंरभवदच्छिति वेदं (इदं धृमौंऽग्निज्योंतिंर्चिर्मरींचय उदारास्तद्श्रः स जुधनाथ्सा तिमस्रा स प्रजनंनाथ्सा जोथ्स्रा स उपपक्षाभ्याः सोंऽहोरात्रयौंः सन्धिः स मुखात्तदहंदेववौन्मृन्मयें दारुमयें रज्ञते हिरिते तेभ्यस्ताभ्यो द्वे तेऽत्रृं पर्यो घृतः सोमम्॥॥——[९]

प्रजापंतिरिन्द्रंमसृजतानुजाव्रं देवानांम्। तं प्राहिणोत्। परेहि। एतेषां देवानामधिपतिरेधीति। तं देवा अंब्रुवन्। कस्त्वमिसं। व्यं वे त्वच्छ्रेयार्श्सः स्मृ इति। सोंऽब्रवीत्। कस्त्वमिसं व्यं वे त्वच्छ्रेयार्श्सः स्मृ इति मा देवा अंवोचन्निति। अथ वा इदं तर्हि प्रजापंतौ हरं आसीत्॥६०॥

यद्स्मिन्नांदित्ये। तदेनमब्रवीत्। एतन्मे प्रयंच्छ। अथाहमेतेषां देवानामधिपतिभीविष्यामीति। कोऽह इ स्यामित्यंब्रवीत्। एतत्प्रदायेति। एतथ्स्या इत्यंब्रवीत्। यदेतद्ववीषीति। को हु वै नामं प्रजापतिः। य एवं वेदं॥६१॥

विदुरेंनं नाम्नां। तदंस्मे रुकां कृत्वा प्रत्यंमुश्चत्। ततो वा इन्द्रों देवानामधिपतिरभवत्। य एवं वेदं। अधिपतिरेव संमानानां भवति। सोऽमन्यत। किं किं वा अंकर्मितिं। स चन्द्रं म् आह्रेति प्रालंपत्। तच्चन्द्रमंसश्चन्द्रम्स्त्वम्। य एवं वेदं॥६२॥

चुन्द्रवानेव भवति। तं देवा अंब्रुवन्। सुवीर्यो मर्या

यथां गोपायत् इति। तथ्सूर्यस्य सूर्यत्वम्। य एवं वेदं। नैनं दभ्नोति। कश्च नास्मिन्वा इदिमिन्द्रियं प्रत्यंस्थादितिं। तदिन्द्रंस्थेन्द्रत्वम्। य एवं वेदं। इन्द्रियाव्येव भविति॥६३॥

अयं वा इदं पंरमों ऽभूदितिं। तत्पंरमेष्ठिनः परमेष्ठित्वम्। य एवं वेदं। प्रमामेव काष्ठां गच्छति। तं देवाः संमन्तं पर्यविशन्। वसंवः पुरस्तांत्। रुद्रा देक्षिणतः। आदित्याः पश्चात्। विश्वे देवा उत्तर्तः। अङ्गिरसः प्रत्यश्चम्॥६४॥

साध्याः परांश्वम्। य एवं वेदं। उपेंन समानाः संविंशन्ति। स प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा आवंयत्। ता अंस्मै नातिंष्ठन्तान्नाद्यांय। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। दक्षिणतः पर्यायन्। स दक्षिणतः पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः॥६५॥

पृश्चात्पर्यायन्। स पृश्चात्पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः। मुखं पृश्चात्। उत्तर्तः पर्यायन्। स उत्तर्तः पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः। मुखं पृश्चात्॥६६॥

मुखंमुत्तर्तः। ऊर्ध्वा उदांयन्। स उपरिष्टान्त्र्यंवर्तयत। ताः स्वंतोमुखो भूत्वाऽऽवंयत्। ततो वै तस्मैं प्रजा अतिष्ठन्तान्नाद्यांय। य एवं विद्वान्परि च वर्तयंते नि चं। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा अंति। तिष्ठंन्तेऽस्मै प्रजा अन्नाद्यांय। अन्नाद एव भंवति॥६७॥

प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामिति। स एतं दशंहोतारमपश्यत्। तं प्रायुंङ्का तस्य प्रयुंक्ति बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामिति। स दशंहोतारं प्रयुंजीत। बहोरेव भूयाँन्भवति। सोऽकामयत वीरो म् आजांयेतेति। स दशंहोतुश्चतुंरहोतारं निर्रमिमीत। तं प्रायुंङ्का ६८॥

तस्य प्रयुक्तीन्द्रोंऽजायत। यः कामयेत वीरो म् आजांयेतेतिं। स चतुंर्होतार् प्रयुंश्चीत। आऽस्यं वीरो जांयते। सोंऽकामयत पशुमान्थ्स्यामितिं। स चतुंर्होतुः पश्चंहोतार् निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंक्ति पश्चमानंभवत्। यः कामयेत पशुमान्थ्स्यामितिं। स पश्चहोतारं प्रयुंश्चीत॥६९॥

पृशुमानेव भंवति। सोंऽकामयत्तिवों मे कल्पेर्न्नितिं। स पश्चंहोतुः षह्वोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंत्त्व्यृतवौं-ऽस्मा अकल्पन्त। यः कामयेत्तिवों मे कल्पेर्न्नितिं। स षह्वोतारं प्रयुंश्चीत। कल्पन्तेऽस्मा ऋतवंः। सोंऽकामयत सोम्पः सोंमयाजी स्याम्। आ में सोम्पः सोंमयाजी जांयेतेति॥७०॥

स षड्ढोतुः सप्तहोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्का तस्य

प्रयुंक्ति सोम्पः सोमयाज्यंभवत्। आऽस्यं सोम्पः सोमयाज्यंजायत। यः कामयंत सोम्पः सोमयाजी स्याम्। आ में सोम्पः सोमयाजी जांयेतेतिं। स सप्तहोतारं प्रयुंश्चीत। सोम्प एव सोमयाजी भंवति। आऽस्यं सोम्पः सोमयाजी जायते। स वा एष पशुः पंश्चधा प्रतिं तिष्ठति॥७१॥

पद्भिमुंखेन। ते देवाः पृशून् वित्वा। सुवर्गं लोकमायन्। तेऽमुष्मिं लोके व्यक्षध्यन्। तेंऽब्रुवन्। अमुतः प्रदानं वा उपंजिजीविमेति। ते सप्तहोतारं यृज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीर्सं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्पयेति। तस्य वा इयं कृप्तिः॥७२॥

यदिदं किं चं। य एवं वेदं। कल्पंतेऽस्मे। स वा अयं मंनुष्येषु यज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं सुद्धो देवेभ्यो ह्व्यं वहित। य एवं वेदं। उपेनं यज्ञो नमिति। यो वे चतुंरहोतृणां निदानं वेदं। निदानंवान्भवित। अग्निहोत्रं वे दशहोतुर्निदानम्। दर्शपूर्णमासौ चतुंरहोतुः। चातुर्मास्यानि पश्चंहोतुः। पृशुबन्धः षङ्कोतुः। सौम्यौऽध्वरः सप्तहोतुः। एतद्वै चतुंरहोतृणां निदानम्। य एवं वेदं। निदानंवान्भवित॥७३॥ अभिनीत व प्रायंक्क पश्चेहतारं प्र यंक्षित जायेवित विष्ठति क्रिविदेशहोतुर्निदानरं स्व चं॥——[११]

प्रजापंतिरकामयत निदानंबान्भवति॥

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंजेयेतिं प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंजेयेतिं प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेति स तपः स त्रिवृतं प्रजापंतिरकामयत् दर्शहोतार् तेनं दश्धाऽऽत्मानं देवा वै वर्षणमन्तो वै प्रजापंतिस्ताः सृष्टाः समश्चिष्यं देवा वै चतुरहोतृभिरिदं वा अग्रें प्रजापंतिरिन्द्रं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भ्यानेकांदश॥११॥

प्रजापंतिस्तद्वहंस्य प्रजापंतिरकामयतानयैवैनृत्तस्य वा <u>इ</u>यं क्लिप्तिस्मात्तेपानाक्र्योतिर्यदस्मिन्नांदित्ये स पह्नांतुः सप्तहोंतार् त्रिसंप्ततिः॥७३॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। किं चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वमितिं। यदेवैषु चंतुर्धा होतांरः। तेन चतुंर्होतारः। तस्माचतुंर्होतार उच्यन्ते। तचतुर्रहोतृणां चतुर्होतृत्वम्। सोमो वै चतुंर्होता। अग्निः पश्चंहोता। धाता षड्ढोता। इन्द्रंः सप्तहोता॥१॥

प्रजापंतिर्दर्शहोता। य एवं चतुंर्होतृणामृद्धिं वेदे। ऋभ्रोत्येव। य एषामेवं बन्धुतां वेदे। बन्धुमान्भवति। य एषामेवं कृप्तिं वेदे। कल्पंतेऽस्मै। य एषामेवमायतेनं वेदे। आयतेनवान्भवति। य एषामेवं प्रतिष्ठां वेदे॥२॥

प्रत्येव तिष्ठति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। दशंहोता चतुंर्होता। पश्चंहोता षड्ढोता सप्तहोता। अथ कस्माचतुंर्होतार उच्यन्त इति। इन्द्रो वै चतुंर्होता। इन्द्रः खलु वै श्रेष्ठों देवतानामुप्देशंनात। य एविमन्द्रङ् श्रेष्ठं देवतानामुप्देशंनाद्वेदं। विसेष्ठः समानानां भवति। तस्माच्छ्रेष्ठं मायन्तं प्रथमेनैवानं बुध्यन्ते। अयमागन्। अयमवांसादितिं। कीर्तिरंस्य पूर्वाऽऽगंच्छिति जनतांमायतः। अथों एनं प्रथमेनैवानं बुध्यन्ते। अयमागन्। अयमवांसादितिं॥ ३॥

स्प्तहोंता प्रतिष्ठां वेदं बुध्यन्ते पद्गं॥———[१]

दक्षिणां प्रतिग्रहीष्यन्थ्सप्तदंशकृत्वोऽपाँन्यात्। आत्मानंमेव समिन्धे। तेजंसे वीर्याय। अथौं प्रजापंतिरेवैनां भूत्वा प्रतिंगृह्णाति। आत्मनोऽनाँत्यै। यद्यंनमार्त्विज्याद्वृतः सन्तंं निर्हरेरन्। आग्नींध्रे जुहुयाद्दशंहोतारम्। चुतुर्गृहीतेनाऽऽज्येन। पुरस्ताँत्प्रत्यिङ्गिष्ठन्ं। प्रतिलोमं विग्राहम्ं॥४॥

प्राणानेवास्योपं दासयित। यद्येनं पुनरुप् शिक्षेयुः। आग्नींध्र एव जुंहुयाद्दशंहोतारम्। चृतुर्गृहीतेनाऽऽज्येन। पृश्चात्प्राङासीनः। अनुलोममिवंग्राहम्। प्राणानेवास्में कल्पयित। प्रायंश्चित्ती वाग्घोतेत्यृतुमुखऋतुमुखे जुहोति। ऋतूनेवास्में कल्पयित। कल्पंन्तेऽस्मा ऋतवंः॥५॥

कुप्ता अस्मा ऋतव आयंन्ति। षड्ढोता वै भूत्वा प्रजापंतिरिदश् सर्वमसृजत। स मनोऽसृजत। मन्सोऽधिं गायत्रीमंसृजत। तद्गायत्रीं यशं आर्च्छत्। तामाऽलंभत। गायत्रिया अधि छन्दाईस्यसृजत। छन्दोभ्योऽधि सामं। तथ्साम यशं आर्च्छत्। तदाऽलंभत॥६॥

साम्नोऽधि यज्र्ईष्यसृजत। यजुभ्योऽधि विष्णुम्। तिद्वष्णुं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। विष्णोरध्योषंधीर-सृजत। ओषंधीभ्योऽधि सोमम्। तथ्सोमुं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। सोमादिधं पृशूनंसृजत। पृशुभ्योऽधीन्द्रम्॥७॥

तिदन्द्रं यशं आर्च्छत्। तदेनं नाति प्राच्यंवत। इन्द्रं इव यश्स्वी भवति। य एवं वेदं। नैनं यशोऽति प्रच्यंवते। यद्वा इदं किं चं। तथ्सर्वमुत्तान एवाऽऽङ्गीर्सः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिं- गृहीतं नाहिंनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तथ्सवंमुत्तानस्त्वां-ऽऽङ्गीर्सः प्रतिंगृह्णात्वत्येव प्रतिंगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आङ्गीर्सः। अनयैवेनत्प्रतिंगृह्णाति। नैन रे हिनस्ति। बर्हिषा प्रतीयाद्गां वाऽश्वं वा। एतद्वै पंशूनां प्रियं धामं। प्रियेणैवैनं धाम्ना प्रत्येति॥८॥

विग्राहंमृतवस्तदाऽलंभृतेन्द्रं गृह्णीयाथ्यद्वं॥

-[२]

यो वा अविद्वान्निवर्तयंते। विशीर्षा सपौप्माऽमुिष्मं हो के भेवति। अथ यो विद्वान्निवर्तयंते। सशीर्षा विपौप्मा- ऽमुिष्मं हो के भेवति। देवता वै सप्त पृष्टिकामा न्यंवर्तयन्त। अग्निश्चं पृथिवी चं। वायुश्चान्तरिक्षं च। आदित्यश्च द्यौश्चं चन्द्रमाः। अग्निर्यंवर्तयत। स साहस्रमंपुष्यत्॥९॥

पृथिवी न्यंवर्तयत। सौषंधीभिवंनस्पतिंभिरपुष्यत्। वायुर्न्यवर्तयत। स मरींचीभिरपुष्यत्। अन्तरिंक्षं न्यंवर्तयत। तद्वयोभिरपुष्यत्। आदित्यो न्यंवर्तयत। स रृश्मिभिरपुष्यत्। द्यौर्न्यवर्तयत। सा नक्षंत्रैरपुष्यत्। चन्द्रमा न्यंवर्तयत। सोऽहोरात्रैरंधमासैर्मासैर्र्ऋतुभिः संवथ्सरेणांपुष्यत्। तान्योषान्युष्यति। याइस्तेऽपुष्यन्। य एवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परिं च॥१०॥

अपुष्यन्नक्षंत्रेरपुष्यत्पश्चं च॥

-[३]

तस्य वा अग्नेर्हिरंण्यं प्रतिजग्रहुषंः। अर्धिमेन्द्रियस्यापाँ-क्रामत्। तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै सौंऽर्धिमेन्द्रिय- स्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। अर्धिमंन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वान् हिरंण्यं प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। अर्धमंस्येन्द्रियस्यापंक्रामित। तस्य वै सोमंस्य वासंः प्रतिजग्रहुषंः। तृतींयमिन्द्रियस्यापांक्रामत्॥११॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स तृतींयिमिन्द्रिय-स्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। तृतींयिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वान् वासंः प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविंद्वान्प्रति-गृह्णातिं। तृतींयमस्येन्द्रियस्यापंक्रामित। तस्य वै रुद्रस्य गां प्रतिजग्रहुषंः। चृतुर्थिमिन्द्रियस्यापाँक्रामत्। तामेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स चतुर्थिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त॥१२॥

चतुर्थमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधेत्ते। य एवं विद्वान्गां प्रितगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। चतुर्थमस्येन्द्रिय-स्यापंक्रामित। तस्य वे वर्रुणस्यार्श्वं प्रतिजग्रहुषंः। पश्चमिनद्रियस्यापाकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वे स पश्चमिनद्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधेत्त। पश्चमिनद्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपाधेत्त। पश्चमिनद्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपाधेत्त। य एवं विद्वानश्वं प्रतिगृह्णातिं॥१३॥

अथ् योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। पृश्चममंस्येन्द्रियस्यापं-क्रामित। तस्य वै प्रजापंतेः पुरुषं प्रतिजग्रहुषंः। षष्ठिमिन्द्रियस्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स षष्ठिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। षष्ठिमिन्द्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वान्पुरुषं प्रतिगृह्णातिं। अथ्

योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। षुष्ठमंस्येन्द्रियस्यापंत्रामति॥१४॥

तस्य वै मनोस्तर्ल्पं प्रतिजग्रहुषंः। सप्तमिन्द्रिय-स्यापानामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वे स सप्तमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। सप्तमिनद्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वाङ्स्तर्ल्पं प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। सप्तममंस्येन्द्रियस्यापंक्रामित। तस्य वा उत्तानस्यांऽऽङ्गीर्सस्याप्राणत्प्रतिजग्रहुषंः। अष्टमिनद्रियस्यापाकामत्॥१५॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यद्दर्शहोतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनं प्रजा अंसृज्नन्तेतिं। प्रजा- पंतिना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्यवन्। तेनं प्रजा अंसृजन्त। यचतुंर्होतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्यवन्। केनौषंधीरसृज्जन्तेतिं। सोमेन् वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्यवन्॥१७॥

तेनौषंधीरसृजन्त। यत्पश्चंहोतारः सृत्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनैभ्यो लोकभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। केनैषां पृशूनंवृञ्जतेतिं। अग्निना वे ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनैभ्यो लोकभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। तेनैषां पृशूनंवृञ्जत। यथ्यङ्कांतारः सृत्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१८॥

केन्तूनंकल्पयन्तेति। धात्रा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन्तूनंकल्पयन्त। यथ्सप्तहोतारः सत्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केन् सुवंरायन्। केन्माँ श्लोकान्थ्समं-तन्वित्रिति। अर्यम्णा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन् सुवंरायन्। तेन्माँ श्लोकान्थ्समंतन्वित्रिति॥१९॥

पृते वै देवा गृहपंतयः। तान् य पृवं विद्वान्। अप्यन्यस्यं गार्हपते दीक्षंते। अवान्तरमेव सत्त्रिणांमृभ्नोति। यो वा अर्थमणं वेदं। दानंकामा अस्मै प्रजा भवन्ति। यज्ञो वा अर्थमा। आर्यावस्तिरिति वै तमांहुर्यं प्रश्रश्सन्ति। आर्यावस्तिर्भवति। य एवं वेदं॥२०॥

यद्वा इदं किं चे। तथ्सर्वं चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽधिं यज्ञो निर्मितः। स य एवं विद्वान् विवदेत। अहमेव भूयों वेद। यश्चतुंर्होतॄन् वेदेतिं। स ह्येव भूयो वेदं। यश्चतुंर्होतॄन् वेदं। यो वै चतुंर्होतृणाु ५ होतृन् वेदं। सर्वासु प्रजास्वन्नंमत्ति॥२१॥

सर्वा दिशोऽभि जंयति। प्रजापंतिर्वे दशंहोतृणा १ होतां। सोमश्चतुंर्होतृणा १ होतां। अग्निः पश्चंहोतृणा १ होतां। धाता षड्ढोंतृणार होतां। अर्यमा सप्तहोंतृणार होतां। एते वै चतुंर्होतृणा ५ होतांरः। तान् य एवं वेदं। सर्वासु प्रजास्वन्नंमत्ति। सर्वा दिशोऽभि जंयति॥२२॥

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा व्यंस्र एसत। स हृदंयं भूतों-ऽशयत्। आत्मुन् हा (३) इत्यह्वंयत्। आपुः प्रत्यंशृण्वन्। ता अंग्रिहोत्रेणैव यंज्ञऋतुनोपं पर्यावंर्तन्त। ताः कुसिन्धम्पौहन्। तस्मादिग्निहोत्रस्यं यज्ञक्रतोः। एकं ऋत्विक्। चतुष्कृत्वो-ऽह्वंयत्। अग्निर्वायुरांदित्यश्चन्द्रमाः॥२३॥

ते प्रत्यंशृण्वन्। ते दंर्शपूर्णमासाभ्यांमेव यंज्ञऋतुनोपं पर्यावंतन्त। त उपौंह इश्वत्वार्यङ्गानि। तस्माँ द्र्शपूर्ण-मासयौर्यज्ञक्रतोः। चत्वारं ऋत्विजः। पृश्चकृत्वोऽह्वंयत्। पशवः प्रत्यंश्रुण्वन्। ते चांतुर्मास्यैरेव यंज्ञऋतुनोपं पर्यावर्तन्त। त उपौहं लोमं छुवीं माुर्समस्थिं मुज्जानम्। तस्माँचातुर्मास्यानां यज्ञक्रतोः॥२४॥

पश्चर्त्विजंः। षुद्भत्वोऽह्वंयत्। ऋतवः प्रत्यंशण्वन्। ते पंशुबन्धेनैव यंज्ञऋतुनोपंपर्यावंतन्त। त उपौहन्थ्स्तनांवाण्डौ शिश्ञमवाश्चं प्राणम्। तस्मौत्पशुबन्धस्यं यज्ञऋतोः।

षड्टिक्जिः। सुप्तकृत्वोऽह्वंयत्। होत्राः प्रत्यंश्रण्वन्। ताः सौम्येनैवाध्वरेणं यज्ञकृतुनोपंपूर्यावंर्तन्त॥२५॥

ता उपौहन्थ्सप्त शीर्षण्यान्प्राणान्। तस्माध्सौम्यस्याध्वरस्यं यज्ञकृतोः। सप्त होत्राः प्राचीर्वषं हुर्वन्ति। दशकृत्वोऽह्वं यत्। तपः प्रत्यंशृणोत्। तत्कर्मणेव संवध्सरेण सर्वैयज्ञकृतिभृरुपं पूर्यावर्ततः। तथ्सर्वमात्मानमपरिवर्गमुपौहत्। तस्माध्संवध्सरे सर्वे यज्ञकृतवोऽवं रुध्यन्ते। तस्माद्दशंहोता चतुं रहोता। पश्चंहोता षङ्कोता सप्तहोता। एकंहोत्रे बिलिश हं रन्ति। हर्गन्त्यस्मे प्रजा बिलिम्। ऐन्मप्रतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं॥२६॥

प्रजापंतिः पुरुषमसृजत। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममायमन्नं-मस्त्विति। सोऽबिभेत्। सर्वं वे माऽयं प्र धंक्ष्यतीति। स एता इश्चतुं रहोतृनात्मस्परंणानपश्यत्। तानं जुहोत्। तैर्वे स आत्मानं मस्पृणोत्। यदंग्निहोत्रं जुहोति। एकंहोतारमेव तद्यं ज्ञुतुं मांप्रोत्यग्निहोत्रम्॥२७॥

कुसिन्धं चाऽऽत्मनः स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयित। चतुर्होतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति दर्शपूर्णमासो। चत्वारिं चाऽऽत्मनोऽङ्गांनि स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयित। समित्पंश्रमी। पश्चंहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति चातुर्मास्यानि। लोमं छुवीं मार्समस्थिं मुज्ञानम्॥२८॥

तानिं चाऽऽत्मनः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति। षङ्कोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति पशुबन्धम्। स्तनांवाण्डौ शिश्ञमवाँश्चं प्राणम्। तानिं चाऽऽत्मनः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति॥२९॥

स्मिथ्संप्तमी। स्प्तहोतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति सौम्यमंध्वरम्। स्प्त चाऽऽत्मनंः शीर्षण्याँन्प्राणान्थस्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। द्विर्निमाँष्टि। द्विः प्राश्ञांति। दशंहोतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति संवथ्सरम्। सर्वं चाऽऽत्मान्मपंरिवर्गङ् स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति॥३०॥

प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेवितं। स तपोऽतप्यत। सौंऽन्तर्वानभवत्। सहिरंतः श्यावोऽभवत्। तस्माथ्स्र्यंन्तर्वं त्री। हरिणी सती श्यावा भवति। स विजायंमानो गर्भेणाताम्यत्। स तान्तः कृष्णः श्यावोऽभवत्। तस्मौतान्तः कृष्णः श्यावो भवति। तस्यासुरेवाजीवत्॥३१॥

तेनासुनाऽस्रंरानसृजत। तदस्रंराणामस्र्त्वम्। य एवम-स्रंराणामस्र्त्वं वेदं। अस्मानेव भेवति। नैन्मस्र्जहाति। सो-ऽस्रंरान्थ्सृष्ट्वा पितेवांमन्यत। तदन्रं पितृनंसृजत। तत्पितृणां पितृत्वम्। य एवं पितृणां पितृत्वं वेदं। पितेवैव स्वानां

भवति॥३२॥

यन्त्यंस्य पितरो हवम्ं। स पितॄन्थ्मृष्ट्वाऽऽमंनस्यत्। तदनुं मनुष्यांनसृजता तन्मंनुष्यांणां मनुष्यत्वम्। य पृवं मंनुष्यांणां मनुष्यांन्थ्यसृजानायं। दिवां देवत्राऽभंवत्। तदनुं देवानं-सृजता तद्देवानां देवत्वम्। य पृवं देवानां देवत्वं वेदं। दिवां हैवास्यं देवत्रा भंवति। तानि वा पृतानि चत्वार्यम्भा स्सि। देवा मंनुष्याः पितरोऽसुंराः। तेषु सर्वेष्वम्भो नभं इव भवति। य पृवं वेदं॥३३॥

अजीव्ध्स्वानां भवित देवानंसृजत सप्त चं॥______[८]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यो वा इमं विद्यात्। यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायुरियात्। न पुरा-ऽऽयुषः प्र मीयेत। पृशुमान्थ्स्यात्। विन्देतं प्रजाम्। यो वा इमं वेदं॥३४॥

यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायुरिति। न पुराऽऽयुषः प्र मीयते। पृशुमान्भविति। विन्दते प्रजाम्। अद्भः पंवते। अपोऽभि पंवते। अपोऽभि सम्पंवते॥३५॥

अस्याः पंवते। इमाम्भि पंवते। इमाम्भि सम्पंवते। अग्नेः पंवते। अग्निम्भि पंवते। अग्निम्भि सम्पंवते। अन्तरिक्षात्पवते। अन्तरिक्षम्भि पंवते। अन्तरिक्षम्भि सम्पंवते। आदित्यात्पंवते॥३६॥ आदित्यम्भि पंवते। आदित्यम्भि सम्पंवते। द्योः पंवते। दिवंम्भि पंवते। दिवंम्भि सम्पंवते। दिग्भ्यः पंवते। दिशोऽभि पंवते। दिशोऽभि सम्पंवते। स यत्पुरस्ताद्वाति। प्राण एव भूत्वा पुरस्तौद्वाति॥३७॥

तस्मौत्पुरस्ताद्वान्तम्। सर्वाः प्रजाः प्रति नन्दन्ति। प्राणो हि प्रियः प्रजानांम्। प्राण इंव प्रियः प्रजानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष प्राण एव। अथ् यद्दंक्षिणतो वाति। मात्तिश्वेव भूत्वा दंक्षिणतो वांति। तस्मौद्दक्षिणतो वान्तं विद्यात्। सर्वा दिश आ वांति॥३८॥

सर्वा दिशोऽनु वि वांति। सर्वा दिशोऽनु सं वातीति। स वा एष मांतिरश्वैव। अथ यत्पश्चाद्वाति। पर्वमान एव भूत्वा पृश्चाद्वांति। पूतमंस्मा आहंरन्ति। पूतमुपंहरन्ति। पूतमंश्ञाति। य एवं वेदं। स वा एष पर्वमान एव॥३९॥

अथ यद्तरतो वाति। स्वितेव भूत्वोत्तरतो वाति। स्वितेव स्वानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष संवितेव। ते य एंनं पुरस्तांदायन्तंमुप्वदंन्ति। य एवास्यं पुरस्तांत्पाप्मानंः। ताङ्स्तेऽपं घ्रन्ति। पुरस्तादितंरान्पाप्मनंः सचन्ते। अथ य एंनं दक्षिणत आयन्तंमुप्वदंन्ति॥४०॥

य पुवास्यं दक्षिणतः पाप्मानः। ता इस्तेऽपं घ्रन्ति। दक्षिणत इतंरान्पाप्मनः सचन्ते। अथ् य एनं पृश्चादायन्तंमुप् वदंन्ति। य पृवास्यं पृश्चात्पाप्मानः। ता इस्तेऽपं घ्रन्ति। पश्चादितंरान्याप्मनंः सचन्ते। अथ् य एनमुत्तर्त आयन्तंमुप् वदंन्ति। य एवास्यौत्तर्तः पाप्मानंः। ताङ्स्तेऽपं घ्रन्ति॥४१॥

उत्तर्त इतंरान्याप्मनंः सचन्ते। तस्मदिवं विद्वान्। वीवं नृत्येत्। प्रेवं चलेत्। व्यस्येवाक्ष्यौ भाषेत। मृण्टयेदिव। क्राथयेदिव। शृङ्गायेतेव। उत मोपं वदेयुः। उत में पाप्मान्मपं हन्युरितिं। स यान्दिशं स्निमेष्यन्थ्स्यात्। यदा तान्दिशं वातों वायात्। अथ प्रवेयात्। प्र वां धावयेत्। सातमेव रेदितं व्यूढं गुन्धम्भि प्रच्यंवते। आऽस्य तं जनपदं पूर्वां कीर्तिर्गच्छति। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। य एवं वेदं॥४२॥

प्रजापंतिः सोम् राजानमसृजत। तं त्रयो वेदा अन्वसृज्यन्त। तान् हस्तेंऽकुरुत। अथ् ह सीतां सावित्री। सोम् राजांनं चकमे। श्रद्धामु स चंकमे। साऽऽहं पितरंं प्रजापंतिमुपंससार। त॰ होवाच। नमंस्ते अस्तु भगवः। उपं त्वाऽयानि॥४३॥

प्रत्वां पद्ये। सोमं वै राजांनं कामये। श्रृद्धामु स कांमयत् इति। तस्यां उ ह स्थांग्रमंलङ्कारं केल्पयित्वा। दशहोतारं पुरस्तांद्याख्यायं। चतुंर्होतारं दक्षिणतः। पश्चंहोतारं पृश्चात्। षड्ढोतारमुत्तर्तः। सप्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारेश्च पिनिभिश्च मुखेंऽलङ्कत्यं॥४४॥ आऽस्यार्धं वंब्राज। ता होदीक्ष्योवाच। उप मा वंर्तस्वेतिं। त होवाच। भोगं तु मृ आचंक्ष्व। एतन्मृ आचंक्ष्व। यत्तें पाणावितिं। तस्यां उ ह त्रीन् वेदान्प्रदेदौ। तस्मादुहु स्त्रियो भोगमैव हारयन्ते। स यः कामयेत प्रियः स्यामितिं॥४५॥

यं वां कामयेत प्रियः स्यादितिं। तस्मां एतः स्थांग्रमंलङ्कारं केल्पयित्वा। दशंहोतारं पुरस्तौद्धाख्यायं। चतुंरहोतारं दक्षिणतः। पश्चंहोतारं पृश्चात्। षङ्कोतारमुत्तरः। स्प्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारेश्च पित्निभिश्च मुखेंऽलङ्कृत्यं। आस्यार्धं व्रंजेत्। प्रियो हैव भेवति॥४६॥

अयान्युलङ्कृत्यं स्यामितिं भवति॥______[१०]

ब्रह्मौत्मन्वदंसृजत। तदंकामयत। समात्मनां पद्येयेतिं। आत्मन्नात्मिन्नित्यामंत्रयत। तस्मै दश्म १ हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स दशंहूतोऽभवत्। दशंहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं दशंहूत् १ सन्तम्। दशंहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥४७॥

आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मैं सप्तमः हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स स्प्तहूंतोऽभवत्। स्प्तहूंतो हु वै नामैषः। तं वा एतः स्प्तहूंतः सन्तम्। स्प्तहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मैं षष्ठः हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स षड्ढंतोऽभवत्॥४८॥

षड्ढंतो हु वै नामैषः। तं वा एत षड्ढंत सन्तम्।

षड्ढोतेत्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्में पश्चम हूतः प्रत्यंशृणोत्। स पश्चंहूतोऽभवत्। पश्चंहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं पश्चंहृत् सन्तम्। पश्चंहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षंण॥४९॥

ब्रह्मवादिनः किं दक्षिणां यो वा अविद्वान्तस्य वै ब्रह्मवादिनो यहशहोतारः प्रजापितिर्व्यंस्रं प्रजापितिः पुरुषं प्रजापितिरकामयत् स तपः सौँऽन्तर्वां-ब्रह्मवादिनो यो वा हुमं विद्यात्प्रजापितिः सोम्॰ राजीनं ब्रह्मांत्मुन्वदेकोदश॥११॥ ब्रह्मवादिनस्तस्य वा अग्नेर्यद्वा हुदं किं चे प्रजापितिरकामयत् य पुवास्यं दक्षिणतः पश्चाशत्॥५०॥ ब्रह्मवादिनो य पुवं वेदं॥

हरिं: ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

जुष्टो दर्मूना अतिथिर्दुरोणे। इमं नों यज्ञमुपं याहि विद्वान्। विश्वां अग्नेऽभियुजों विहत्यं। श्रृत्रूयतामा भेरा भोजंनानि। अग्ने शर्धं महते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सञ्जांस्पृत्य स्यममा कृणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा महा स्सि। अग्ने यो नोऽभितो जनंः। वृको वारो जिघा स्ति॥१॥

ताइस्त्वं वृत्रहं जिहि। वस्वस्मभ्यमा भेर। अग्ने यो नी-ऽभिदासंति। समानो यश्च निष्ट्यः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। त्विमेन्द्राभिभूरंसि। देवो विज्ञांतवीर्यः। वृत्रहा पुरुचेतंनः। अप प्राचं इन्द्र विश्वारं अमित्रान्॥२॥

अपापांचो अभिभूते नुदस्व। अपोदींचो अपंशूराध्रा चं ऊरौ। यथा तव शर्मन्मदेम। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तंवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। युजे रथं ग्वेषंण् हिर्रिभ्याम्। उप ब्रह्माणि जुजुषाणमंस्थुः। विबाधिष्टास्य रोदंसी महित्वा। इन्द्रों वृत्राण्यंप्रतीजंघन्वान्॥३॥

ह्व्यवाहंमभिमातिषाहम्ं। रक्षोहणं पृतंनासु जिष्णुम्। ज्योतिष्मन्तं दीद्यंतं पुरंन्धिम्। अग्निः स्विष्टकृतमा हुवेम। स्विष्टमग्ने अभि तत्पृणाहि। विश्वां देव पृतंना अभि ष्य। उरुं नः पन्थां प्रदिशन्विभांहि। ज्योतिष्मद्धेह्यज्ञरं न आयुंः।

त्वामंग्ने हविष्मंन्तः। देवं मर्तास ईडते॥४॥

मन्यै त्वा जातवेदसम्। स ह्व्या वंक्ष्यानुषक्। विश्वांनि नो दुर्गहां जातवेदः। सिन्धुं न नावा दुरिताऽतिं पर्षि। अग्नें अत्रिवन्मनंसा गृणानः। अस्माकंं बोध्यविता तनूनांम्। पूषा गा अन्वेतु नः। पूषा रेक्ष्त्वर्वतः। पूषा वाजर्ं सनोतु नः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः॥५॥

सो अस्मार अभैयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अघृंणिः सर्ववीरः। अप्रयुच्छन्पुर एंतु प्रजानन्। त्वमंग्ने सप्रथां असि। जुष्टो होता वरेंण्यः। त्वयां यज्ञं वितंन्वते। अग्नी रक्षार्रसि सेधति। शुक्रशोंचिरमंत्र्यः। शुचिः पावक ईड्यः। अग्ने रक्षां णो अर्हसः॥६॥

प्रतिं ष्म देव रीषंतः। तिपंष्ठेर्जरों दह। अग्ने हश्स् न्यंत्रिणम्ं। दीद्यन्मर्त्येष्वा। स्वे क्षये शुचिव्रत। आ वांत वाहि भेष्जम्। वि वांत वाहि यद्रपंः। त्वश् हि विश्वभेषजः। देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमौ वातौं वातः॥७॥

आ सिन्धोरा परावर्तः। दक्षं मे अन्य आवार्तु। परान्यो वातु यद्रपः। यद्दो वात ते गृहे। अमृतंस्य निधिर्हितः। ततो नो देहि जीवसें। ततो नो धेहि भेषजम्। ततो नो मह आवंह। वातु आवांतु भेषजम्। शम्भूर्मयोभूर्नो हृदे॥८॥ प्रण आयूर्षि तारिषत्। त्वमंग्ने अयासिं। अया सन्मनंसा हितः। अया सन् ह्व्यमूंहिषे। अया नों धेहि भेषजम्। इष्टो अग्निराहुंतः। स्वाहांकृतः पिपर्तु नः। स्वगा देवेभ्यं इदं नमः। कामों भूतस्य भव्यंस्य। सम्राडेको विरांजिति॥९॥

स इदं प्रति पप्रथे। ऋतूनुथ्मृंजते वृशी। काम्स्तदग्रे समंवर्ततािधं। मनंसो रेतंः प्रथमं यदासींत्। सतो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। त्वयां मन्यो स्रथंमारुजन्तः। हर्षंमाणासो धृषता मंरुत्वः। तिग्मेषंव आयुंधा सुर्शिशांनाः। उप प्रयंन्ति नरों अग्निरूपाः॥१०॥

मृन्युर्भगों मृन्युरेवासं देवः। मृन्युर्होता वर्रुणो विश्ववेदाः। मृन्युं विशं ईडते देवयन्तीः। पाहि नों मन्यो तपंसा श्रमेण। त्वमंग्ने व्रत्मृच्छुचिः। देवा असांदया इह। अग्ने ह्व्याय् वोढंवे। व्रतानुबिभ्रंद्रत्पा अदांभ्यः। यजां नो देवा अजरंः सुवीरंः। दध्द्रत्नांनि सुविदानो अंग्ने। गोपाय नों जीवसें जातवेदः॥११॥

जिघारं सत्यमित्रां अघुन्वानीं डते सर्वा अरहंसो वातो हुदे राजत्युग्निरूपाः सुविदानो अंग्रु एकं च॥———[१]

चक्षुंषो हेते मनंसो हेते। वाचों हेते ब्रह्मंणो हेते। यो मांऽघायुरंभिदासंति। तमंग्ने मेन्या मेनिं कृणा। यो मा चक्षुंषा यो मनंसा। यो वाचा ब्रह्मंणाऽघायुरंभिदासंति। तयाँऽग्ने त्वं मेन्या। अमुमंमेनिं कृणा। यत्किश्चासौ मनंसा यचं वाचा। यज्ञैर्जुहोति यजुंषा हुविर्भिः॥१२॥ तन्मृत्युर्निर्ऋत्या संविदानः। पुरादिष्टादाहुंतीरस्य हन्तु। यातुधाना निर्ऋतिरादुरक्षः। ते अस्य घ्रन्त्वनृंतेन स्त्यम्। इन्द्रेषिता आज्यंमस्य मथ्नन्तु। मा तथ्समृंद्धि यद्सौ क्रोतिं। हन्मिं तेऽहं कृत १ ह्विः। यो में घोरमचींकृतः। अपाँश्रौ त उभौ बाहू। अपंनह्याम्यास्यम्॥१३॥

अपं नह्यामि ते बाहू। अपं नह्याम्यास्यम्। अग्नेर्देवस्य ब्रह्मणा। सर्वं तेऽविधेषं कृतम्। पुराऽमुष्यं वषद्कारात्। युज्ञं देवेषुं नस्कृधि। स्विष्टमुस्माकं भूयात्। माऽस्मान्प्रापन्न-रातयः। अन्तिं दूरे सुतो अंग्ने। भ्रातृंव्यस्याभिदासंतः॥१४॥

वृषद्भारेण वर्न्नेण। कृत्या हिन्म कृतामहम्। यो मा नक्तं दिवां सायम्। प्रातश्चाह्नां निपीयंति। अद्या तिमंन्द्र वर्न्नेण। भातृंव्यं पादयामिस। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तन्त्वां। प्रपेद्ये सगुः सार्श्वः। सह यन्मे अस्ति तेनं। ईडें अग्निं विपश्चितम्॥१५॥

गिरा यज्ञस्य सार्धनम्। श्रुष्टीवानंन्धितावानम्। अग्ने श्वेकमं ते वयम्। यमं देवस्यं वाजिनंः। अति द्वेषारंसि तरेम। अवंतं मा समनसौ समोकसौ। सचेतसौ सरेतसौ। उभौ मामवतञ्जातवेदसौ। शिवौ भवतम् च नंः। स्वयं कृण्वानः सुगमप्रयावम्॥१६॥

तिग्मश्रंङ्गो वृष्भः शोश्चानः। प्रवर स्थस्थमनु पश्यमानः। आ तन्तुंमग्निर्दिव्यं तंतान। त्वन्नस्तन्तुंरुत सेतुंरग्ने। त्वं पन्थां भवसि देव्यानः। त्वयाँऽग्ने पृष्ठं व्यमार्रुहेम। अथां देवैः संधुमादं मदेम। उद्तुन् मं मुमुग्धि नः। वि पार्शं मध्यमश्चृत। अवाधमानि जीवसे॥१७॥

वय सोम व्रते तवं। मनंस्त्नूषु बिभ्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमितः। इन्द्राणी देवी सुभगां सुपत्नीं। उद शोन पित्विद्यें जिगाय। त्रि श्रदंस्या ज्यनं योजंनािन। उपस्थ इन्द्र श्र् स्थिवंरं बिभिति। सेनां हु नामं पृथिवी धंनञ्जया। विश्वव्यंचा अदिंतिः सूर्यंत्वक्। इन्द्राणी देवी प्रासहा ददांना॥१८॥

सा नों देवी सुहवा शर्म यच्छत्। आत्वांऽहार्षम्नतरंभूः। ध्रुवस्तिष्ठाविंचाचितः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमिधं भ्रशत्। ध्रुवा द्यौर्ध्रुवा पृंथिवी। ध्रुवं विश्वंमिदं जगत्। ध्रुवा ह पर्वता इमे। ध्रुवो राजां विशाम्यम्। इहैवैधि मा व्यंथिष्ठाः॥१९॥

पर्वत इवाविचाचिलः। इन्द्रं इवेह ध्रुवस्तिष्ठ। इह राष्ट्रमुं धारय। अभितिष्ठ पृतन्यतः। अधेरे सन्तु शत्रंवः। इन्द्रं इव वृत्रहा तिष्ठ। अपः क्षेत्राणि स्अयन्। इन्द्रं एणमदीधरत्। ध्रुवं ध्रुवेणं ह्विषां। तस्में देवा अधिब्रवन्। अयं च् ब्रह्मणस्पतिः॥२०॥

हुविर्भिगुस्यमिभ् दासंतो विपृश्चित्मप्रयावश्चीवसे दर्दाना व्यथिष्ठा ब्रव्नेत्रं च॥————[$oldsymbol{2}$]

जुष्टी नरो ब्रह्मणा वः पितृणाम्। अक्षंमव्ययं न

किलारिषाथ। यच्छक्नेरीषु बृह्ता रवेण। इन्द्रे शुष्ममदेधाथा वसिष्ठाः। पावका नः सरस्वती। वाजेभिर्वाजिनीवती। यज्ञं वंष्टु धिया वसुः। सरस्वत्यभिनों नेषि वस्यः। मा पंस्फरीः पर्यसा मा न आधंक्। जुषस्वं नः सुख्यां वेश्यां च॥२१॥

मा त्वक्षेत्राण्यरंणानि गन्म। वृञ्जे ह्विर्नमंसा ब्रहिर्ग्रौ। अयांमि स्रुग्धृतवंती सुवृक्तिः। अम्यक्षि सद्म सदेने पृथिव्याः। अश्रायि यज्ञः सूर्ये न चक्षुः। इहार्वाञ्चमितं ह्वये। इन्द्रं जैत्राय जेतंवे। अस्माकंमस्तु केवंलः। अर्वाञ्चमिन्द्रंम्मुतो हवामहे। यो गोजिद्धंनजिदंश्वजिद्यः॥२२॥

ड्मं नो युज्ञं विंहुवे जुंषस्व। अस्य कुंमीं हरिवो मेदिनं त्वा। असंम्मृष्टो जायसे मातृवोः शुचिः। मृन्द्रः कुविरुदंतिष्ठो विवंस्वतः। घृतेनं त्वा वर्धयन्नग्न आहुत। धूमस्ते केतुरंभविद्द्वि श्रितः। अग्निरग्रै प्रथमो देवतांनाम्। संयातानामृत्तमो विष्णुंरासीत्। यजमानाय परिगृह्यं देवान्। दीक्षयेद १ हविरा गंच्छतन्नः॥२३॥

अग्निश्चं विष्णो तपं उत्तमं महः। दीक्षापालेभ्योऽवनंत्र् हि शंक्रा। विश्वेंद्वेर्यज्ञियैः संविदानो। दीक्षामस्मै यजंमानाय धत्तम्। प्र तिद्वष्णुंः स्तवते वीर्याय। मृगो न भीमः कुंच्रो गिरिष्ठाः। यस्योरुषुं त्रिषु विक्रमणेषु। अधि क्षियन्ति भुवंनानि विश्वां। नूमर्तो दयते सिन्ष्यन् यः। विष्णंव उरुगायाय दाशंत्॥२४॥ प्रयः स्त्राचा मनंसा यजांतै। पृतावंन्त्त्रर्यमा विवासात्। विचंक्रमे पृथिवीमेष पृताम्। क्षेत्राय विष्णुर्मनुषे दशस्यन्। ध्रुवासो अस्य कीरयो जनांसः। उरुक्षितिः सुजनिंमा चकार। त्रिर्देवः पृथिवीमेष पृताम्। विचंक्रमे शृतर्चंसं महित्वा। प्र विष्णुंरस्तु त्वस्स्तवींयान्। त्वेषः ह्यंस्य स्थविंरस्य नामं॥२५॥

होतांरं चित्ररंथमध्वरस्यं। यज्ञस्यंयज्ञस्य केतु र रुशंन्तम्। प्रत्यंधिं देवस्यंदेवस्य मृह्णा श्रिया त्वंग्निमितिथिं जनांनाम्। आ नो विश्वांभिरूतिभिः स्जोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हंर्यश्व याहि। वरीवृज्धस्थविरेभिः सृशिप्र। अस्मे दधृदृषण् शृष्मंमिन्द्र। इन्द्रः सुवर्षा जनयन्नहांनि। जिगायोशिग्भः पृतंना अभि श्रीः॥२६॥

प्रारोचयन्मनेवे केतुमह्राम्। अविन्दुज्योतिर्बृह्ते रणांय। अश्विनाववसे निह्नंये वाम्। आ नूनं यातः सुकृतायं विप्रा। प्रात्युक्तेनं सुवृता रथेन। उपागंच्छत्मवसागंतन्नः। अविष्टं धीष्वश्विना न आसु। प्रजावद्रेतो अह्नंयं नो अस्तु। आवां तोके तनंये तूर्तुजानाः। सुरत्नांसो देववीतिं गमेम॥२७॥

त्व शोम् ऋतुंभिः सुऋतुंभूः। त्वं दक्षैः सुदक्षो विश्ववंदाः। त्वं वृषां वृष्त्वेभिर्मिह्त्वा। द्युम्नेभिर्द्युम्यंभवो नृचक्षाः। अषांढं युथ्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षाम्पस्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजा र सुंक्षिति र सुश्रवंसम्। जयंन्तं त्वामनुं मदेम सोम। भवां मित्रो न शेव्यों घृतासुंतिः। विभूतद्युम्न एव या उं सप्रथाः॥२८॥

अधां ते विष्णो विदुषां चिद्दध्यः। स्तोमों युज्ञस्य राध्यों ह्विष्मंतः। यः पूर्व्यायं वेधसे नवीयसे। सुमज्ञांनये विष्णंवे ददांशति। यो जातमस्य महतो महि ब्रवांत्। सेदु श्रवोंभिर्युज्यं चिद्दभ्यंसत्। तमुं स्तोतारः पूर्व्यं यथां विद ऋतस्यं। गर्भ ह्विषां पिपर्तन। आऽस्यं जानन्तो नामं चिद्विवक्तन। बृहत्तं विष्णो सुमृतिं भंजामहे॥२९॥

ड्मा धाना घृतस्रुवंः। हरीं इहोपंवक्षतः। इन्द्र र् सुखतंमे रथें। एष ब्रह्मा प्रतेमहे। विदर्थे शर्सिष्ट् हरीं। य ऋत्वियः प्रते वन्वे। वनुषों हर्यतं मदम्। इन्द्रो नामं घृतन्नयः। हरिभिश्चारु सेचंते। श्रुतो गण आ त्वां विशन्तु॥३०॥

हरिवर्पसङ्गिरंः। आचर्षणिप्रा वृष्भो जनानाम्। राजां कृष्टीनां पुरुहूत इन्द्रंः। स्तुतश्रंवस्यन्नवसोपमद्रिक्। युक्ता हरी वृष्णायाँ ह्यर्वाङ्। प्र यथ्सिन्धंवः प्रस्वं यदायन्। आपंः समुद्र रथ्येव जग्मुः। अतंश्चिदिन्द्रः सदंसो वरीयान्। यदी र् सोमः पृणतिं दुग्धो अर्शः। ह्वयांमसि त्वेन्द्रं याह्यंर्वाङ्॥३१॥

अरंन्ते सोमंस्त्नुवें भवाति। शतंक्रतो मादयंस्वा सुतेषुं। प्रास्मा अव पृतंनासु प्रयुथ्स। इन्द्रांय सोमाः प्रदिवो विदानाः। ऋभुर्येभिवृषंपर्वा विहायाः। प्रयम्यमाणान्प्रति षू गृंभाय। इन्द्र पिब् वृषंधूतस्य वृष्णंः। अहेडमान् उपंयाहि यज्ञम्। तुभ्यं पवन्त इन्दंवः सुतासंः। गावो न वंज्रिन्थ्स्वमोको अच्छं॥३२॥

इन्द्रा गंहि प्रथमो यूज्ञियांनाम्। या ते काकुथ्सुकृता या वरिष्ठा। यया शश्वत्यिबसि मध्यं ऊर्मिम्। तयां पाहि प्र ते अध्वर्युरंस्थात्। सन्ते वज्रों वर्ततामिन्द्र गृव्युः। प्रात्युंजा वि बोधय। अश्विनावेह गंच्छतम्। अस्य सोमंस्य पीतये। प्रात्यावांणा प्रथमा यंजध्वम्। पुरा गृध्रादरंरुषः पिबाथः। प्रातर्रहि यज्ञमश्विना दधांते। प्रश्रूंसन्ति क्वयः पूर्वभाजः। प्रात्यंजध्वमश्विनां हिनोत। न सायमंस्ति देवया अजुंष्टम्। उतान्यो अस्मद्यंजते विचायः। पूर्वः पूर्वो यजमानो वनीयान्॥३३॥

चाुश्वजिद्यो गंच्छतं नो दाशुन्नामांभिश्रीर्गमम सुप्रथा भजामहे विशन्तु याह्यवाङच्छं पिबाथः पद्गं॥———[३]

नृक्तं जाताऽस्योषधे। रामे कृष्णे असिंक्रि च। इद॰ रंजिन रजय। किलासं पिलतं च यत्। किलासं च पिलतं चं। निरितो नांशया पृषंत्। आ नः स्वो अंश्जुतां वर्णः। पर्गं श्वेतानि पातय। असितं ते निलयनम्। आस्थानमसितं तवं॥३४॥

असिंक्रियस्योषधे। निरितो नांशया पृषंत्। अस्थिजस्यं किलासंस्य। तुनूजस्यं च यत्त्वचि। कृत्ययां कृतस्य ब्रह्मणा। लक्ष्मं श्वेतमंनीनशम्। सरूपा नामं ते माता। सरूपो नामं ते पिता। सर्रूपाऽस्योषधे सा। सर्रूपमिदं कृधि॥३५॥

शुन १ हुंवेम मृघवांन्मिन्द्रम्ं। अस्मिन्भरे नृतंमं वाजंसातौ। शृण्वन्तंमुग्रमूतये स्मर्थ्स्। प्रन्तं वृत्राणि स्ञितं धनांनाम्। धूनुथ द्यां पर्वतान्दाशुषे वस्। नि वो वनां जिहते यामं नो भिया। कोपयंथ पृथिवीं पृंश्विमातरः। युधे यद्ंग्राः पृषंतीरयुंग्ध्वम्। प्रवेपयन्ति पर्वतान्। विविश्वन्ति वनस्पतीन्॥३६॥

प्रोवारत मरुतो दुर्मदां इव। देवांसः सर्वया विशा। पुरुत्रा हि सद्दृङ्गसिं। विशो विश्वा अनुं प्रभु। समर्थ्युं त्वा हवामहे। समथ्स्वग्निमवंसे। वाज्यन्तों हवामहे। वाजेषु चित्रराधसम्। सङ्गंच्छध्वर् संवद्ध्वम्। सं वो मनार्रसे जानताम्॥३७॥

देवा भागं यथा पूर्वे। सञ्जानाना उपासंत। समानो मन्नः समितिः समानी। समानं मनः सह चित्तमेषाम्। समानं केतो अभि स॰ रंभध्वम्। संज्ञानेन वो ह्विषां यजामः। समानी व आकूंतिः। समाना हृदंयानि वः। समानमंस्तु वो मनः। यथां वः सुसहासंति॥३८॥

स्ंज्ञानं नः स्वैः। स्ंज्ञान्मरंणैः। स्ंज्ञानंमिश्विना युवम्। इहास्मासु नियंच्छतम्। स्ंज्ञानं मे बृह्स्पितिः। स्ंज्ञानं सिवता करत्। स्ंज्ञानंमिश्वना युवम्। इह मह्यं नि यंच्छतम्। उपं च्छायामिव घृणैः। अगन्म शर्म ते वयम्॥३९॥

अग्ने हिरंण्यसन्दशः। अदंब्धेभिः सवितः पायुभिष्ट्वम्। शिवेभिर्द्य परिपाहि नो गयम्। हिरंण्यजिह्वः सुविताय् नव्यंसे। रक्षा मार्किर्नो अघशर्रस ईशत। मदेमदे हि नो ददुः। यूथा गर्वामृजुकर्तुः। सङ्गृभाय पुरूशता। उभया हस्त्या वस्। शिशीहि राय आ भर॥४०॥

शिप्रिंन्वाजानां पते। शचीवस्तवं द्रस्मनां। आ तू नं इन्द्र भाजय। गोष्वश्वेषु शुभुषुं। सहस्रेषु तुवीमघ। यद्देवा देवहेर्डनम्। देवांसश्चकृमा व्यम्। आदित्यास्तस्मांन्मा यूयम्। ऋतस्युर्तेनं मुञ्चत। ऋतस्युर्तेनांऽऽदित्याः॥४१॥

यजंत्रा मुश्चतेह माँ। युज्ञैर्वो यज्ञवाहसः। आशिक्षंन्तो न शेंकिम। मेदंस्वता यजंमानाः। स्रुचाऽऽज्येन जुह्वंतः। अकामा वो विश्वेदेवाः। शिक्षंन्तो नोपं शेकिम। यदि दिवा यदि नक्तम्। एनं एन्स्योकंरत्। भूतं मा तस्माद्भव्यं च॥४२॥

द्रुपदादिव मुश्चतु। द्रुपदादिवेन्मुंमुचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलादिव। पूतं पवित्रेणेवाऽऽज्यम्। विश्वे मुश्चन्तु मैनसः। उद्वयं तमस्परि। पश्यन्तो ज्योति्रत्तंरम्। देवं देवत्रा सूर्यम्। अगन्म ज्योतिंरुत्तमम्॥४३॥

तर्व कृषि वनस्पतींश्वानतामसंति वयं भंरादित्याश्च नर्व च॥————[४]

वृषा सो अर्शः पंवते ह्विष्मान्थ्सोमः। इन्द्रंस्य भाग ऋंतयः शतायुः। स मा वृषाणं वृष्भं कृणोत्। प्रियं विशार सर्ववीरर सुवीरम्॥ कस्य वृषां सुते सर्चा। नियुत्वांन्वृष्भो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। यस्ते शङ्ग वृषोनपात्। प्रणंपात्कुण्डपाय्यः। न्यंस्मिन्दध्र आ मनः॥४४॥

तः स्प्रीचींकृतयो वृष्णियानि। पौ इस्यांनि नियुतः सश्चिरिन्द्रम्। स्मुद्रं न सिन्धंव उक्थशुंष्माः। उरुव्यचंस्ङ्गिर् आ विंशन्ति। इन्द्रांय गिरो अनिंशितसर्गाः। अपः प्रैरंयन्थ्सगंरस्य बुप्नात्। यो अक्षेणेव च्किया शचींभिः। विष्वंक्तस्तम्मं पृथिवीमुत द्याम्। अक्षोदयच्छवंसा क्षामंबुप्नम्। वार्णवांतस्तविषीभिरिन्द्रंः॥४५॥

दृढान्यौँघ्रादुशमांन् ओजंः। अवांभिनत्कुकुमः पर्वतानाम्। आ नो अग्ने सुकेतुनाँ। रृयिं विश्वायुंपोषसम्। मार्डीकं धेहि जीवसेँ। त्व॰ सोम महे भगम्ँ। त्वं यूनं ऋतायते। दक्षं दधासि जीवसेँ। रथं युअते मुरुतंः शुभे सुगम्। सूरो न मित्रावरुणा गविंष्टिषु॥४६॥

रजारेसि चित्रा विचंरन्ति त्न्यवंः। दिवः संम्राजा पर्यसा न उक्षतम्। वाच् सुमित्रावरुणाविरावतीम्। पूर्जन्यंश्चित्रां वंदित् त्विषीमतीम्। अभ्रा वंसत मरुतः सुमाययां। द्यां वंर्षयतमरुणामेरेपसम्। अयुक्त सप्त शुन्ध्यवंः। सूरो रथंस्य निष्ठियंः। ताभिर्याति स्वयंक्तिभिः। विहेष्ठेभिर्विहरंन् यासि तन्तुम्॥४७॥

अवव्ययन्नितं देव वस्वः। दविध्वतो र्श्मयः सूर्यस्य। चर्मेवावाधुस्तमो अपस्वन्तः। पूर्जन्याय प्र गांयत। दिवस्पुत्रायं मीढुषें। स नो यवसंमिच्छतु। अच्छां वद त्वसं गीर्भिराभिः। स्तुहि पूर्जन्यं नम्साऽऽविवास। कर्निऋदद्वृष्भो जीरदानुः। रेतो दधात्वोषंधीषु गर्भम्॥४८॥

यो गर्भमोषंधीनाम्। गर्वां कृणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणांम्। तस्मा इदास्ये हृविः। जुहोता मध्नेमत्तमम्। इडां नः संयतं करत्। तिस्रो यदंग्ने शरद्स्त्वामित्। शुचिं घृतेन शुचयः सप्यन्। नामांनि चिद्दधिरे युज्ञियांनि। असूदयन्त तुनुवः सुजांताः॥४९॥

इन्द्रंश्च नः शुनासीरो। इमं युज्ञं मिंमिक्षतम्। गर्भं धत्तक्ष् स्वस्तयें। ययोरिदं विश्वं भुवनमा विवेशं। ययोरान्नदो निहितो महंश्च। शुनांसीरावृतुभिः संविदानो। इन्द्रंवन्तो हिविर्दं जुंषेथाम्। आघाये अग्निमिन्धते। स्तृणन्तिं बर्हिरांनुषक्। येषामिन्द्रो युवा सखाँ। अग्न इन्द्रंश्च मेदिनां। हथो वृत्राण्यप्रति। युव हि वृत्त्रहन्तमा। याभ्या हम्प्रदेश सुवरजंयन्नग्रं एव। यावांतस्थतुर्भुवंनस्य मध्यें। प्रचंर्षणी वृषणा वर्ज्ञंबाहू। अग्नी इन्द्रांवृत्रहणां हवे वाम्॥५०॥

म्म इन्त्रे गविष्टिषु वर्षु गर्भुः सुवांकः सखां सम वं॥————[५]

उत नंः प्रिया प्रियासुं। सप्तस्वसा सुजुंष्टा। सरंस्वती स्तोम्यांऽभूत्। इमा जुह्वांनायुष्मदा नमोंभिः। प्रति स्तोमर्थ सरस्वति जुषस्व। तव शर्मन्प्रियतंमे दर्धांनाः। उपंस्थेयाम शरणं न वृक्षम्। त्रीणि पदा विचंक्रमे। विष्णुंर्गोपा अदाँभ्यः।

ततो धर्माणि धारयन्॥५१॥

तदंस्य प्रियम्भि पाथों अश्याम्। नरो यत्रं देवयवो मदंन्ति। उरुक्रमस्य स हि बन्धुंरित्था। विष्णौः पदे पर्मे मध्व उथ्सः। कृत्वादा अंस्थु श्रेष्ठः। अद्य त्वां वन्वन्थ्सुरेक्णौः। मर्त आनाश सुवृक्तिम्। इमा ब्रह्म ब्रह्मवाह। प्रिया त आ बर्हिः सींद। वीहि सूर पुरोडाशम्॥५२॥

उपं नः सूनवो गिरंः। शृण्वन्त्वमृतंस्य ये। सुमृडीका भंवन्तु नः। अद्या नो देव सवितः। प्रजावंथ्सावीः सौभंगम्। परां दुःष्वप्निय सुव। विश्वांनि देव सवितः। दुरितानि परां सुव। यद्भद्रं तन्म आ सुंव। शुचिमकेंबृहस्पतिम्॥५३॥

अध्वरेषुं नमस्यत। अनाम्योज् आ चंके। या धारयंन्त देवा सुदक्षा दक्षंपितारा। असुर्याय प्रमंहसा। स इत् क्षेति सुधित ओकंसि स्वे। तस्मा इडां पिन्वते विश्वदानीं। तस्मै विशंः स्वयमेवानंमन्ति। यस्मिन्ब्रह्मा राजंनि पूर्व एतिं। सकूंतिमिन्द्र सच्युंतिम्। सच्युंतिं जघनंच्युतिम्॥५४॥

क्नात्काभात्र आ भंर। प्रयपस्यत्रिंव स्वथ्यौं। वि नं इन्द्र मृधों जिहा कनींखुनिदव सापयन्। अभि नः सुष्टुंतिं नय। प्रजापंतिः स्त्रियां यशः। मुष्कयोरदधाथ्सपम्। कामंस्य तृप्तिमानन्दम्। तस्यौग्ने भाजयेह मां। मोदः प्रमोद आंनन्दः॥५५॥ मुष्कयोर्निहिंतः सपंः। सृत्वेव कामंस्य तृप्याणि। दक्षिणानां प्रतिग्रहे। मनसश्चित्तमाकूंतिम्। वाचः सत्यमंशीमहि। पृश्नाः रूपमन्नस्य। यशः श्रीः श्रयतां मिये। यथाऽहमस्या अतृंपः स्त्रियै पुमान्ं। यथा स्त्री तृप्यंति पुःसि प्रिये प्रिया। पृवं भगस्य तृप्याणि॥५६॥

यज्ञस्य काम्यः प्रियः। ददामीत्यग्निर्वदित। तथेति वायुराह् तत्। हन्तेति स्त्यं चन्द्रमाः। आदित्यः स्त्यमोमिति। आप्स्तथ्सत्यमा भेरन्। यशो यज्ञस्य दक्षिणाम्। असौ मे कामः समृद्धताम्। न हि स्पश्मिविदन्नन्यम्स्मात्। वैश्वान्रात्पुरप्तारम्ग्रेः॥५७॥

अर्थममन्थन्नमृत्ममूराः। वैश्वान्रं क्षेत्रजित्यांय देवाः। येषांमिमे पूर्वे अर्मास् आसन्। अयूपाः सद्म विभृता पुरूणि। वैश्वानर् त्वया ते नुत्ताः। पृथिवीमन्याम्भितंस्थुर्जनांसः। पृथिवीं मातरं महीम्। अन्तरिक्षमुपं ब्रुवे। बृह्तीमृतये दिवम्। विश्वं बिभर्ति पृथिवी॥५८॥

अन्तरिक्षं वि पंप्रथे। दुहे द्यौर्बृह्ती पयंः। न ता नंशन्ति न दंभाति तस्करः। नैनां अमित्रो व्यथिरादंधर्षति। देवाङ्श्च याभिर्यजते ददांति च। ज्योगित्ताभिः सचते गोपंतिः सह। न ता अर्वा रेणुकंकाटो अश्जते। न सङ्स्कृत्त्रमुपं यन्ति ता अभि। उरुगायमभेयं तस्य ता अनुं। गावो मर्त्यंस्य वि

चंरन्ति यज्वंनः॥५९॥

रात्री व्यंख्यदायती। पुरुत्रा देव्यंक्षिभिः। विश्वा अधि श्रियोऽधित। उपं ते गा इवाकंरम्। वृणीष्व दुंहितर्दिवः। रात्री स्तोमं न जिग्युषीं। देवीं वाचंमजनयन्त देवाः। तां विश्वरूपाः पृशवों वदन्ति। सा नों मृन्द्रेष्मूर्जं दुहांना। धेनुवांगुस्मानुष सुष्टुतैतुं॥६०॥

यद्वाग्वदंन्त्यविचेत्नानिं। राष्ट्रीं देवानां निष्सादं मृन्द्रा। चतंस्र ऊर्जं दुदुहे पयार्श्सा। क्रं स्विदस्याः पर्मं जंगाम। गौरी मिंमाय सलिलानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा पर्मे व्योमन्। तस्यार्श्व समुद्रा अधि विक्षंरन्ति। तेनं जीवन्ति प्रदिशश्चतंस्रः॥६१॥

ततः क्षरत्यक्षरम्। तद्विश्वमुपं जीवति। इन्द्रासूरां जनयन्विश्वकर्मा। मुरुत्वारं अस्तु गुणवान्थ्सजातवान्। अस्य स्रुषा श्वशुंरस्य प्रशिष्टिम्। सपत्ना वाचं मनसा उपांसताम्। इन्द्रः सूरों अतर्द्रजारंसि। स्रुषा सपत्ना श्वशुंरोऽयमंस्तु। अयर शत्रूं अयत्र जर्हंषाणः। अयं वाजं जयतु वाजंसातो। अग्निः क्षंत्रभृदनिभृष्टमोजः। स्हस्त्रियों दीप्यतामप्रयुच्छन्। विभ्राजंमानः समिधा न उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहृदगुन्द्याम्॥६२॥

धारयंन्युरोडाशुं बृह्स्पतिं ज्ञधनंच्युतिमानन्दो भगंस्य तृप्याण्युग्नेः पृथिवी यज्वंन एतु प्रदिश्क्षतंस्रो वाजंसातौ चृत्वारि

____[ξ]

वृषाँऽस्य १ शुर्वृष्मायं गृह्यसे। वृषाऽयमुग्रो नृचक्षंसे। दिव्यः कंर्मण्यो हितो बृहन्नामं। वृष्मस्य या कुकुत्। विष्वान् विष्णो भवतु। अयं यो मामको वृषाँ। अथो इन्द्रं इव देवेभ्यः। वि ब्रंवीतु जनेंभ्यः। आयुंष्मन्तं वर्चस्वन्तम्। अथो अधिपतिं विशाम्॥६३॥

अस्याः पृथिव्या अध्यक्षम्। इमिनेन्द्र वृष्भं कृणु। यः सुश्रङ्गेः सुवृष्भः। कृत्याणो द्रोण आहितः। कार्षीवल प्रगाणेन। वृष्भेणं यजामहे। वृष्भेण यजमानाः। अर्क्रूरेणेव सुर्पिषां। मृद्धेश्च सर्वा इन्द्रेण। पृतनाश्च जयामसि॥६४॥

यस्यायमृष्भो ह्विः। इन्द्रांय परिणीयतें। जयांति शत्रुंमायन्तम्। अथो हन्ति पृतन्यतः। नृणामहं प्रणीरसंत्। अग्रं उद्भिन्दतामंसत्। इन्द्र शुष्मं तनुवा मेर्रयस्व। नीचा विश्वां अभितिष्ठाभिमांतीः। नि शृंणीह्याबाधं यो नो अस्ति। उरुं नो लोकं कृणहि जीरदानो॥६५॥

प्रेह्मभि प्रेहि प्र भंग सहंस्व। मा विवेनो वि शृंणुष्वा जनेषु। उदींडितो वृंषम् तिष्ठ शुष्मैः। इन्द्र शत्रूंन्पुरो अस्माकं युध्य। अग्रे जेता त्वं जंय। शत्रूंन्थ्सहस् ओजंसा। वि शत्रून् विमुधी नुद। एतं ते स्तोमं तुविजात विप्रः। रथं न धीरः स्वपां अतक्षम्। यदीदंग्रे प्रतित्वं देव हर्याः॥६६॥

सुवंवितीर्प एंना जयेम। यो घृतेनाभिमांनितः। इन्द्र जैत्रांय जिञ्चे। स नः सङ्कांसु पारय। पृत्नासाह्यंषु च। इन्द्रों जिगाय पृथिवीम्। अन्तिरिक्ष्ट्रं सुवंर्म्हत्। वृत्रहा पुरुचेतनः। इन्द्रों जिगाय सहंसा सहार्रस। इन्द्रों जिगाय पृतंनानि विश्वां॥६७॥

इन्द्रों जातो वि पुरों रुरोज। स नंः पर्स्पा वरिंवः कृणोत्। अयं कृतुरगृंभीतः। विश्वजिदुद्भिदिथ्सोमंः। ऋषिर्विप्रः काव्येन। वायुरंग्रेगा यंज्ञप्रीः। साकङ्गन्मनंसा यज्ञम्। शिवो नियुद्धिः शिवाभिः। वायो शुक्रो अंयामि ते। मध्वो अग्रं दिविष्टिष्॥६८॥

आ यांहि सोमं पीतये। स्वारुहो देव नियुत्वंता। इमिनंद्र वर्धय क्षित्रयांणाम्। अयं विशां विश्पतिंरस्तु राजां। अस्मा इंन्द्र मिह वर्चा १सि धेहि। अवर्चसं कणुिह शत्रुंमस्य। इममा भंज ग्रामे अश्वेषु गोषुं। निर्मुं भंज योऽिमत्रों अस्य। वर्ष्मन् क्षत्रस्यं कुकुभिं श्रयस्व। ततों न उग्रो वि भंजा वसूंनि॥६९॥

अस्मे द्यांवापृथिवी भूरिं वामम्। सन्दुंहाथां घर्मदुघेंव धेनुः। अयः राजां प्रिय इन्द्रंस्य भूयात्। प्रियो गवामोषंधीनामुतापाम्। युनज्मिं त उत्तरावंन्तमिन्द्रम्। येन् जयांसि न परा जयांसै। स त्वांऽकरेकवृष्भः स्वानांम्। अथो राजन्नुत्तमं मान्वानांम्। उत्तर्स्त्वमधेरे ते सप्रताः। एकंवृषा इन्द्रंसखा जिगीवान्॥७०॥ विश्वा आशाः पृतंनाः स्ञ्जयं जयन्। अभि तिष्ठ शत्र्यतः संहस्व। तुभ्यं भरन्ति क्षितयो यविष्ठ। बिलिमंग्ने अन्तित् ओत दूरात्। आ भन्दिष्ठस्य सुमृतिं चिकिद्धि। बृहत्ते अग्ने मिह् शर्म भूद्रम्। यो देह्यो अनंमयद्वध्स्तैः। यो अर्यपत्नीरुषसंश्वकारं। स निरुध्या नहुंषो यह्वो अग्निः। विशंश्वके बलिहृतः सहोभिः॥७१॥

प्र सद्यो अंग्ने अत्यैष्य्न्यान्। आविर्यस्मै चार्रुतरो बुभूथं। ईडेन्यो वपुष्यो विभावा। प्रियो विशामितिथिर्मानुंषीणाम्। ब्रह्मं ज्येष्ठा वीर्या सम्भृंतानि। ब्रह्माग्ने ज्येष्ठं दिव्मा तंतान। ऋतस्य ब्रह्मं प्रथमोत जंज्ञे। तेनांर्हित ब्रह्मणा स्पर्धितुङ्कः। ब्रह्म सुचौ घृतवंतीः। ब्रह्मणा स्वरंवो मिताः॥७२॥

ब्रह्मं यज्ञस्य तन्तंवः। ऋत्विजो ये हंविष्कृतंः। शृङ्गंणीवेष्छृङ्गणा स् सन्दंदिश्रेरे। चषालंवन्तः स्वरंवः पृथिव्याम्। ते देवासः स्वरंवस्तस्थिवा संः। नमः सर्खिभ्यः सन्नान्माऽवंगात। अभिभूरग्निरंतरद्रजा स्सि। स्पृधो विहत्य पृतंना अभिश्रीः। जुषाणो म् आहुंतिं मामिहष्ट। हृत्वा सपत्नान् वरिवस्करन्नः। ईशानं त्वा भुवंनानामिभिश्रयम्। स्तौम्यंग्र उरुकृत स् सुवीरम्। हृविर्जुषाणः सपत्ना स् अभिभूरंसि। जहि शत्रू रप मृधो नुदस्व॥७३॥ विश्वा वर्षाविष्यु वस्ति जिग्रवान्यस्तिमिम् नेश्ववारि च॥——[७]

स प्रंत्वन्नवीयसा। अग्नै द्युम्नेन संयता। बृहत्तंतन्थ भानुना। नवं नु स्तोमंम्ग्नये। दिवः श्येनायं जीजनम्। वसोः कुविद्वनाति नः। स्वारुहा यस्य श्रियो दृशे। र्यिर्वीरवंतो यथा। अग्ने यज्ञस्य चेतंतः। अदाभ्यः पुरएता॥७४॥

अग्निर्विशां मानुंषीणाम्। तूर्णी रथः सदा नवंः। नव्र् सोमाय वाजिनें। आज्यं पर्यसोऽजिन। जुष्ट्र् शुचितम्ं वसुं। नवर् सोम जुषस्व नः। पीयूर्षस्येह तृंण्णुहि। यस्ते भाग ऋता व्यम्। नवस्य सोम ते व्यम्। आ सुंमृतिं वृंणीमहे॥७५॥

स नो रास्व सहस्रिणंः। नव १ ह्विर्जुषस्व नः। ऋतुभिः सोम् भूतंमम्। तद्ङ्ग प्रतिहर्य नः। राजन्थ्सोम स्वस्तयै। नव्रस्तोम् ज्ञव १ ह्विः। इन्द्राग्निभ्यां नि वेदय। तञ्जषेता १ सचेतसा। शुचिं नु स्तोमं नवंजातम् द्य। इन्द्रौग्नी वृत्रहणा जुषेथांम्॥ ७६॥

उभा हि वार् सुहवा जोहंवीमि। ता वाजरं सद्य उंश्ते धेष्ठां। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। इह देवौ संहुस्निणौं। यृज्ञं न आ हि गच्छंताम्। वसुंमन्तर सुवर्विदम्। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। विश्वान्देवाइस्तंप्यत॥७७॥

ह्विषोऽस्य नवंस्य नः। सुवर्विदो हि जंजिरे। एदं बर्हिः सुष्टरीमा नवंन। अयं यज्ञो यजमानस्य भागः। अयं बंभूव भुवंनस्य गर्भः। विश्वं देवा इदम्द्यागंमिष्ठाः। इमे नु द्यावांपृथिवी समीचीं। तुन्वाने यज्ञं पुरुपेशंसन्धिया। आऽस्मैं पृणीतां भुवंनानि विश्वां। प्रजां पृष्टिंममृतं नवंन॥७८॥

इमे धेनू अमृतं ये दुहातैं। पर्यस्वत्युत्तरामेतु पृष्टिः। इमं यज्ञं जुषमाणे नवेन। समीची द्यावापृथिवी घृताचीं। यविष्ठो हव्यवाहंनः। चित्रभानुर्घृतासुंतिः। नवंजातो वि रोचसे। अग्ने तत्ते महित्वनम्। त्वमंग्ने देवताभ्यः। भागे देव न मीयसे॥७९॥

स एंना विद्वान् यंक्ष्यसि। नव् स्तोमं जुषस्व नः। अग्निः प्रंथमः प्राश्ञांतु। स हि वेद यथां ह्विः। शिवा अस्मभ्यमोषंधीः। कृणोतुं विश्वचंर्षणिः। भुद्रान्नः श्रेयः समंनेष्ट देवाः। त्वयांऽवसेन् समंशीमहि त्वा। स नों मयोभूः पिंतो आ विंशस्व। शं तोकायं तनुवें स्योनः। एतमु त्यं मधुना संयुतं यवम्। सरंस्वत्या अधिमनावंचकृषुः। इन्द्रं आसीथ्सीरंपतिः श्तकंतुः। कीनाशां आसन्म्रुतः सुदानंवः॥८०॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

प्राणो रंक्षति विश्वमेजंत्। इर्यो भूत्वा बंहुधा बहूनि। स इथ्सर्वं व्यानशे। यो देवो देवेषुं विभूरन्तः। आवृंदूदात् क्षेत्रियंध्वगद्वृषां। तिमत्प्राणं मन्सोपं शिक्षत। अग्रं देवानांमिदमंत्तु नो हृविः। मनंसुश्चित्तेदम्। भूतं भव्यं च गुप्यते। तिद्धे देवेष्वंग्रियम्॥१॥

आ नं एतु पुरश्चरम्। सह देवैरिम हवम्। मनः श्रेयंसिश्रेयसि। कर्मन् युज्ञपंतिं दर्धत्। जुषतां मे वागिद श् ह्विः। विराङ्देवी पुरोहिता। ह्व्यवाडनंपायिनी। ययां रूपाणिं बहुधा वदंन्ति। पेशा श्रेसि देवाः पंरमे ज्नित्रें। सा नों विराडनंपस्फुरन्ती॥२॥

वाग्देवी जुंषतामिद १ ह्विः। चक्षुंर्देवानां ज्योतिर्मृते न्यंक्तम्। अस्य विज्ञानाय बहुधा निधीयते। तस्य सुम्नमंशीमिह। मा नो हासीद्विचक्षणम्। आयुरिन्नः प्रतीयताम्। अनंन्याश्चक्षुंषा वयम्। जीवा ज्योतिरशीमिह। सुवर्ज्योतिरुतामृतम्। श्रोत्रेण भद्रमुत शृंण्वन्ति सत्यम्। श्रोत्रेण वाचं बहुधोद्यमानाम्। श्रोत्रेण मोदश्च महंश्च श्रूयते। श्रोत्रेण सर्वा दिश् आ शृंणोिम। येन प्राच्यां उत देक्षिणा। प्रतीच्यै दिशः शृण्वन्त्युंत्रात्। तदिच्छ्रोत्रं बहुधोद्यमानम्।

अरान्न नेमिः परि सर्वं बभूव॥३॥

अृष्टियमनंपस्फुरन्ती सुत्य॰ सुप्त चं॥—_____[१]

उदेहिं वाजिन्यो अस्यप्स्वंन्तः। इदः राष्ट्रमा विंश सूनृतांवत्। यो रोहिंतो विश्वंमिदं जजानं। स नों राष्ट्रेषु सुधितान्दधातु। रोहर्श्रोहर्श् रोहिंत आर्रुरोह। प्रजाभिवृद्धिं जनुषांमुपस्थम्। ताभिः सर्श्रेचो अविद्थ्यडुर्वीः। गातुं प्रपश्यंन्निह राष्ट्रमाऽहाः। आऽहांर्षोद्राष्ट्रमिह रोहितः। मृधो व्यास्थदभयं नो अस्तु॥४॥

अस्मभ्यं द्यावापृथिवी शक्वरीभिः। राष्ट्रं दुंहाथामिह रेवतीभिः। विमंमर्श रोहिंतो विश्वरूपः। समाचुऋाणः प्ररुहो रुहंश्च। दिवं गृत्वायं महृता मंहिम्ना। वि नो राष्ट्रम्नेनत्तु पर्यसा स्वेनं। यास्ते विश्वस्तपंसा सं बभूवुः। गायत्रं वृथ्समनु तास्त आऽगुः। तास्त्वा विशन्तु महंसा स्वेनं। सं माता पुत्रो अभ्येतु रोहिंतः॥५॥

यूयमुंग्रा मरुतः पृश्ञिमातरः। इन्द्रेण स्युजा प्रमृंणीथ् शत्रून्। आ वो रोहिंतो अशृणोदिभिद्यवः। त्रिसंप्तासो मरुतः स्वादुसम्मुदः। रोहिंतो द्यावांपृथिवी जंजान। तस्मि इस्तन्तुं परमेष्ठी तंतान। तस्मिञ्छिश्रिये अज एकंपात्। अदर्हद्यावांपृथिवी बलेन। रोहिंतो द्यावांपृथिवी अंदर्हत्। तेन सुवंः स्तिभृतन्तेन नाकंः॥६॥

सो अन्तरिक्षे रजंसो विमानः। तेनं देवाः सुवरन्वंविन्दन्।

सुशेवं त्वा भानवों दीदिवा सम्म। समंग्रासो जुह्वों जातवेदः। उक्षन्तिं त्वा वाजिनमा घृतेनं। सरसंमग्ने युवसे भोजनानि। अग्ने शर्ध मह्ते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सऔस्पत्य सुयममा कृणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा महारंसि॥७॥

पुनंन् इन्द्रो मुघवां ददातु। धनांनि शक्ता धन्यः सुराधाः। अर्वाचीनं कृणतां याचिता मनः। श्रुष्टी नो अस्य ह्विषों जुषाणः। यानि नोऽजिनं धनांनि। जहर्थं शूर मृन्युनां। इन्द्रानुंविन्द नुस्तानिं। अनेनं ह्विषा पुनः। इन्द्र आशांभ्यः परिं। सर्वाभ्योऽभंयं करत्॥८॥

जेता शत्रून् विचंर्षणिः। आकूँत्यै त्वा कामांय त्वा समृधे त्वा। पुरो दंधे अमृत्त्वायं जीवसे आकूंतिम्स्यावंसे। कामंमस्य समृंद्धौ। इन्द्रंस्य युअते धियः। आकूंतिं देवीं मनंसः पुरो दंधे। युज्ञस्यं माता सुहवां मे अस्तु। यदिच्छामि मनंसा सकांमः। विदेयंमेनद्धदंथे निविष्टम्॥९॥

सेदग्निर्ग्नी श्रत्यैत्यन्यान्। यत्रं वाजी तनयो वीडुपांणिः। सहस्रंपाथा अक्षरां समेतिं। आशानां त्वाऽऽशापालेभ्यः। चतुभ्यों अमृतेंभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः। विधेमं ह्विषां वयम्। विश्वा आशा मधुना सश् सृंजामि। अनुमीवा आप ओषंधयो भवन्तु। अयं यजमानो मृधो व्यस्यताम्॥१०॥ अगृंभीताः पृशवंः सन्तु सर्वें। अग्निः सोमो वर्रणो मित्र इन्द्रंः। बृह्स्पतिः सिवता यः संहस्री। पूषा नो गोभि्रवंसा सरंस्वती। त्वष्टां रूपाणि समनक्त युज्ञैः। त्वष्टां रूपाणि दर्धती सरंस्वती। पूषा भगर् सिवता नो ददातु। बृह्स्पतिद्दिदिन्द्रंः सहस्रम्ं। मित्रो दाता वर्रणः सोमो अग्निः॥११॥

क्र्रितिविष्टमस्यतात्रवं च॥————[३]

आ नों भर् भगंमिन्द्र द्युमन्तम्। नि तें देष्णस्यं धीमहि प्ररेके। उर्व इंव पप्रथे कामों अस्मे। तमापृंणा वसुपते वसूंनाम्। इमं कामंं मन्दया गोभिरश्वैः। चन्द्रवंता राधंसा पप्रथंश्च। सुवर्यवों मृतिभिस्तुभ्यं विप्राः। इन्द्रांय वाहंः कृशिकासों अऋन्। इन्द्रंस्य नु वीर्याणे प्रवोचम्। यानिं चकारं प्रथमानिं वृज्री॥१२॥

अह्न्नहिमन्वपस्तंतर्द। प्रवक्षणां अभिनृत्पर्वतानाम्। अह्न्निह्ं पर्वते शिश्रियाणम्। त्वष्टां उस्मै वज्र इं स्वर्यन्ततक्ष। वाश्रा इंव धेनवः स्यन्दंमानाः। अञ्जः समुद्रमवं जग्मुरापः। वृषायमाणोऽवृणीत् सोमम्। त्रिकंद्रुकेष्विपबथ्सुतस्यं। आ सायंकं मघवां दत्त वज्रम्। अहंन्नेनं प्रथमजा महीनाम्॥१३॥

यदिन्द्राह्नंन्प्रथम् जा महीनाम्। आन्मायिनामिनाः प्रोत मायाः। आथ्सूर्यं जनयन्द्यामुषासम्। तादीक्रा शत्रून किलांविविथ्से। अहंन्वृत्रं वृत्रुतर् व्य॰सम्। इन्द्रो वर्ज्रेण महता वधेनं। स्कन्धा ५ सीव कुलिशोनाविवृंक्णा। अहिंः शयत उपपृक्पृंथिव्याम्। अयोध्येव दुर्मद् आ हि जुह्ने। महावीरं तुंविबाधमृंजीषम्॥१४॥

नातारीरस्य समृतिं वधानांम्। स॰ रुजानाः पिपिष् इन्द्रेशत्रुः। विश्वो विहाया अरितः। वसुर्दधे हस्ते दक्षिणे। तरणिर्न शिश्रयत्। श्रवस्यंया न शिश्रयत्। विश्वंस्मा इदिंषुध्यसे। देवत्रा हव्यमूहिंषे। विश्वंस्मा इथ्सुकृते वारंमृण्वति। अग्निर्द्वारा व्यृण्वति॥१५॥

उद्जिहांनो अभि कामंमीरयन्। प्रपृश्चन्विश्वा भुवंनानि पूर्वथां। आ केतुना सुषंमिद्धो यजिष्ठः। कार्मं नो अग्ने अभिहंर्य दिग्भ्यः। जुषाणो हव्यम्मृतंषु दूढ्यः। आ नों र्यिं बंहुलां गोमंतीमिषम्। नि धेहि यक्षंद्मृतेषु भूषन्। अश्विना यज्ञमागंतम्। दाशुषः पुरुंद रससा। पूषा रक्षतु नो रियम्॥१६॥

इमं यज्ञमश्विनां वर्धयंन्ता। इमौ रियं यजंमानाय धत्तम्। इमौ पुशून्नेक्षतां विश्वतो नः। पूषा नः पातु सद्मप्रयच्छन्। प्रते महे संरस्वति। सुभंगे वार्जिनीवति। सत्यवाचे भरे मृतिम्। इदं ते हव्यं घृतवंथ्सरस्वति। सत्यवाचे प्रभेरेमा हवी १ षिं। इमानिं ते दुरिता सौभंगानि। तेभिवय १ सुभगांसः

स्याम॥१७॥

यज्ञो रायो यज्ञ ईशे वसूनाम्। यज्ञः सस्यानामुत सुंक्षितीनाम्। यज्ञ इष्टः पूर्वचित्तिं दधातु। यज्ञो ब्रह्मण्वा १ अप्येतु देवान्। अयं यज्ञो वर्धतां गोभिरश्वैः। इयं वेदिः स्वपत्या सुवीराँ। इदं बर्हिरिते बर्ही १ ष्यन्या। इमं यज्ञं विश्वे अवन्तु देवाः। भगं एव भगंवा १ अस्तु देवाः। तेनं वयं भगंवन्तः स्याम॥१८॥

तं त्वां भग सर्व इज्ञोंहवीमि। स नों भग पुरप्ता भेवेह।
भग प्रणेतर्भग सत्यंराधः। भगेमां धियमुदंव ददेन्नः। भग प्र
णो जनय गोभिरश्वैः। भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम। शश्वंतीः
समा उपयन्ति लोकाः। शश्वंतीः समा उपयन्त्यापः। इष्टं
पूर्त शश्वंतीना समाना शाश्वतेनं। ह्विषेष्वाऽनन्तं लोकं
पर्मा रुरोह॥१९॥

ड्यमेव सा या प्रथमा व्योच्छंत्। सा रूपाणि कुरुते पश्च देवी। द्वे स्वसारौ वयत्स्तन्नमेतत्। सनातनं वितंत्र षणमयूखम्। अवान्या इस्तन्तून्किरतो धृत्तो अन्यान्। नावंपृज्याते न गमाते अन्तम्। आ वो यन्तूदवाहासो अद्य। वृष्टिं ये विश्वे मुरुतो जुनन्ति। अयं यो अग्निर्मरुतः समिद्धः। एतं जुषध्वं कवयो युवानः॥२०॥

धारावरा मुरुतो धृष्णुवोजसः। मृगा न भीमास्तंविषेभि-रूर्मिभिः। अग्नयो न शुंशुचाना ऋजीषिणः। भ्रुमिन्धमन्त उप गा अवृण्वत। वि चंक्रमे त्रिर्देवः। आ वेधसं नीलंपृष्ठं बृहन्तम्। बृह्स्पति १ सदेने सादयध्वम्। सादद्योनिं दम् आ दीदिवा १ सम्। हिरंण्यवर्णमरुष १ संपेम। स हि शुचिः शृतपंत्रः स शुन्ध्यः॥ २१॥

हिरंण्यवाशीरिष्ट्रिः सुंवर्षाः। बृह्स्पतिः स स्वांवेश ऋष्वाः। पूरू सर्खिभ्य आसुतिं करिष्ठः। पूष्ट्रं स्तवं व्रवे व्यम्। नरिष्येम कदाचन। स्तोतारंस्त इह स्मंसि। यास्ते पूषन्ना वो अन्तः संमुद्रे। हिर्ण्ययीर्न्तरिक्षे चरंन्ति। याभिर्यासि दूत्या स्त्रं सूर्यस्य। कामेन कृतश्रवं इच्छमानः॥२२॥

अरंण्यान्यरंण्यान्यसौ। या प्रेव नश्यंसि। कथा ग्रामं न पृंच्छसि। न त्वाभीरिंव विन्दती (३)। वृषार्वाय् वदंते। यदुपावंति चिच्चिकः। आघाटीभिंरिव धावयन्। अर्ण्यानिर्महीयते। उत गावं इवादन्। उतो वेश्मेंव दृश्यते॥२३॥

उतो अंरण्यानिः सायम्। श्कटीरिंव सर्जित। गामुङ्गेष् आ ह्रंयति। दार्वङ्गेष् उपांवधीत्। वसंन्नरण्यान्याः सायम्। अर्नुक्षिदिति मन्यते। न वा अंरण्यानिर्हन्ति। अन्यश्चेन्नाभिगच्छंति। स्वादोः फलंस्य ज्ञग्ध्वा। यत्र कामं नि पंद्यते। आञ्जनगन्धीः सुर्भीम्। बहुन्नामकृषीवलाम्। प्राहं मृगाणां मातरम्। अर्ण्यानीमंशः सिषम्॥२४॥ स्युम् कृरोह युवनः शुन्थरिक्वमाने हरको निपंक्ष चलारि वा [६]

वार्त्रहत्याय शवंसे। पृत्नासाह्यांय च। इन्द्र त्वा वर्तयामिस। सुब्रह्मांणं वीरवंन्तं बृहन्तम्। उरुं गंभीरं पृथुबंध्नमिन्द्र। श्रुतर्षिमुग्रमंभिमातिषाहम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण र रियं दाः। क्षेत्रिये त्वा निर्ऋत्ये त्वा। द्रुहो मुंश्चामि वरुंणस्य पाशांत्। अनागसं ब्रह्मंणे त्वा करोमि॥२५॥

शिव ते द्यावांपृथिवी उमे इमे। शं ते अग्निः सहाद्भिरंस्तु। शं द्यावांपृथिवी सहौषंधीभिः। शम्नतरिक्षः सह वातेन ते। शं ते चतंस्रः प्रदिशों भवन्तु। या दैवीश्चतंस्रः प्रदिशंः। वातंपत्नीर्भि सूर्यों विच्छे। तासाँ त्वा ज्रस् आ दंधामि। प्र यक्ष्मं एतु निर्ऋतिं पराचैः। अमोचि यक्ष्मांद्दिरतादवंत्ये॥२६॥

द्रुहः पाशान्निर्ऋत्यै चोदंमोचि। अहा अवंर्तिमविंदथ्स्योनम्। अप्यंभूद्भद्रे सुंकृतस्यं लोके। सूर्यंमृतं तमंसो ग्राह्या यत्। देवा अमुंश्चन्नसृंजन्व्यंनसः। एवम्हिम्मं क्षेन्त्रियाञ्जांमिश्र्स्सात्। द्रुहो मुंश्चािम् वर्रुणस्य पाशात्। बृहंस्पते युविमन्द्रेश्च वस्वंः। दिव्यस्यंशाथे उत पार्थिवस्य। धृत्तर र्यिः स्तुंवते कीरयंचित्॥२७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। देवायुधिमन्द्रमा जोहुंवानाः। विश्वावृधंमभि ये रक्षंमाणाः। येनं हुता दीर्घमध्वांनुमायन्। अनुन्तमर्थमनिवथ्स्यमानाः। यत्ते सुजाते हिमवंथ्सु भेषजम्। मयोभूः शन्तंमा यद्धृदोऽसिं। ततों नो देहि सीबले। अदो गिरिभ्यो अधि यत्प्रधावंसि। स॰शोभंमाना कन्येंव शुभ्रे॥२८॥

तां त्वा मुद्गंला ह्विषां वर्धयन्ति। सा नः सीबले र्यिमा भाजयेह। पूर्वं देवा अपरेणानुपश्यं जन्मंभिः। जन्मान्यवंरैः पराणि। वेदांनि देवा अयम्स्मीति माम्। अह १ हित्वा शरीरं जरसः प्रस्तांत्। प्राणापानौ चक्षुः श्रोत्रम्ं। वाचं मनंसि सम्भृताम्। हित्वा शरीरं जरसः प्रस्तांत्। आभूतिं भूतिं व्यमंश्वामहै। इमा एव ता उषसो याः प्रथमा व्योच्छन्। ता देव्यः कुर्वते पश्चंरूपा। शश्वंतीर्नावंपृज्यन्ति। न गंमन्त्यन्तम्॥२९॥

वसूनां त्वाऽधीतेन। रुद्राणांमूर्म्या। आदित्यानां तेजंसा। विश्वेषां देवानां ऋतुंना। मुरुतामेम्नां जुहोमि स्वाहाँ। अभि-भूतिरहमार्गमम्। इन्द्रंसखा स्वायुधंः। आस्वाशांसु दुष्यहंः। इदं वर्चो अग्निनां दत्तमार्गात्। यशो भर्गः सह ओजो बलं च॥३०॥

दीर्घायुत्वायं श्तशांरदाय। प्रतिंगृभ्णामि मह्ते वीर्याय। आयुंरिस विश्वायुंरिस। सर्वायुंरिस सर्वमायुंरिस। सर्वं म् आयुंर्भूयात्। सर्वमायुंर्गेषम्। भूर्भुवः सुवंः। अग्निर्धर्मेणान्नादः। मृत्युर्धर्मेणान्नंपितः। ब्रह्मं क्षत्र स्वाहां॥३१॥ प्रजापंतिः प्रणेता। बृह्स्पतिः पुरण्ता। यमः पन्थाः। चन्द्रमाः पुनर्सुः स्वाहां। अग्निरंत्रादोऽत्रंपितः। अन्नाद्यंमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां। सोमो राजा राजंपितः। राज्यमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां। वरुणः सम्राद्थ्सम्राद्वंतिः। साम्राज्यमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां। वरुणः सम्राद्थ्सम्राद्वंतिः। साम्राज्यमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां॥३२॥

मित्रः क्षत्रं क्षत्रपंतिः। क्षत्रमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। इन्द्रो बलं बलंपतिः। बलंमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। बृह्स्पतिर्ब्रह्म ब्रह्मंपतिः। ब्रह्मास्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। स्विता राष्ट्रश् राष्ट्रपंतिः। राष्ट्रमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। पूषा विशां विदेतिः। विशमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। सरंस्वती पृष्टिः पृष्टिपत्नी। पृष्टिमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। सरंस्वती पृष्टिः पृष्टिपत्नी। पृष्टिमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। रूपेणास्मिन् युज्ञे यजमानाय पृष्ट्यान्देदातु स्वाहाँ॥३३॥ व्याहां साम्रांज्यमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां विश्वमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां व्यवारं व (अक्षः सोम्) वर्रण मित्र इन्द्रो वृह्मपिः सविवा पृण्ण सरंस्वती लक्ष्य दर्गणा।।

स ईं पाहि य ऋंजीषी तरुंत्रः। यः शिप्रंवान्वृष्भो यो मंतीनाम्। यो गौंत्रभिद्वंज्रभृद्यो हंरिष्ठाः। स इंन्द्र चित्राः अभि तृन्धि वाजान्। आ ते शुष्मो वृष्भ एतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तौत्। आ विश्वतो अभिसमैत्वर्वाङ्। इन्द्रं द्युम्नः सुवंवंद्धेह्यस्मे। प्रोष्वंस्मै पुरोर्थम्। इन्द्रांय

शूषमंर्चत॥३४॥

अभीकें चिद् लोककृत्। सङ्गे समर्थ्सुं वृत्रहा। अस्माकें बोधि चोदिता। नभन्तामन्यकेषाम्। ज्याका अधि धन्वंसु। इन्द्रं वय श्रुंनासीरम्। अस्मिन् यज्ञे हंवामहे। आ वाजै्रूर्पं नो गमत्। इन्द्रांय शुनासीरांय। सुचा जुंहुत नो हविः॥३५॥

जुषतां प्रति मेधिरः। प्र ह्व्यानि घृतवंन्त्यस्मै। हर्यश्वाय भरता स्जोषाः। इन्द्रर्तुभिब्रह्मणा वावृधानः। शुनासीरी ह्विरिदं जुषस्व। वयः सुपूर्णा उपसेदुरिन्द्रम्। प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुः। मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेऽव बृद्धान्। बृहदिन्द्रांय गायत॥३६॥

मर्रुतो वृत्रहन्तंमम्। येन् ज्योतिरजंनयत्रृतावृधंः। देवं देवाय जागृंवि। कामिहैकाः क इमे पंतुङ्गाः। मान्थालाः कुलिपरिमापतन्ति। अनांवृतैनान्प्रधंमन्तु देवाः। सौपंण् चक्षुंस्तुनुवां विदेय। एवा वन्दस्व वरुणं बृहन्तम्। नमस्याधीरंममृतंस्य गोपाम्। स नः शर्म त्रिवरूथं वियर्स्सत्॥३७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। नाके सुप्णमुप् यत्पतंन्तम्। हृदा वेनंन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वरुणस्य दूतम्। यमस्य योनौं शकुनं भुंर्ण्युम्। शं नों देवीर्भिष्टंये। आपों भवन्तु पीतयैं। शं योर्भि स्रंवन्तु नः।

ईशांना वार्याणाम्। क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्॥३८॥

अपो यांचामि भेषजम्। अपसु मे सोमों अब्रवीत्। अन्तर्विश्वांनि भेषजा। अग्निं चं विश्वशंम्भुवम्। आपश्च विश्वभेषजीः। यद्पसु ते सरस्वति। गोष्वश्वेषु यन्मध्री। तेनं मे वाजिनीवति। मुखंमिङ्गि सरस्वति। या सरस्वती वैशम्भल्या॥३९॥

तस्यां मे रास्व। तस्यांस्ते भक्षीय। तस्यांस्ते भूयिष्ठभाजों भूयास्म। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोंकुकुञ्जांतवेदः। इहैव सन्तत्र सन्तं त्वाऽग्ने। प्राणेनं वाचा मनंसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्॥४०॥

ज्योतिषा त्वा वैश्वान्रेणोपंतिष्ठे। अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथां नो वर्धया र्यिम्। या ते अग्ने यज्ञियां तुनूस्तयेह्यारोहात्माऽऽत्मानम्। अच्छा वसूनि कृण्वन्नस्मे नर्या पुरूणि। यज्ञो भूत्वा यज्ञमा सींद् स्वां योनिम्। जातंवेदो भुव आ जायंमानः सक्षय एहि। उपावंरोह जातवेदः पुनस्त्वम्॥४१॥

देवेभ्यों ह्व्यं वंह नः प्रजानन्। आर्युः प्रजाः र्यिम्स्मासुं धेहि। अजस्रो दीदिहि नो दुरोणे। तिमन्द्रं जोहवीमि मुघवानमुग्रम्। सुत्रा दर्धानुमप्रतिष्कुत्रः शवाः सि। मश्हिष्ठो गीर्भिरा चं यज्ञियों ऽव्वर्तत्। राये नो विश्वां सुपर्थां कृणोतु वृज्ञी। त्रिकंद्रुकेषु महिषो यवांशिरं तुविशुष्मंस्तृपत्। सोमंमिपबृद्धिष्णुंना सुतं यथाऽवंशत्। स ईं ममाद महि कर्म कर्तवे महामुरुम्॥४२॥

सैन र सश्चद्वेवं देवः स्त्यिमिन्दु र स्त्य इन्द्रंः। विदद्यतीं स्रमां रुग्णमद्रैः। मिह् पार्थः पूर्व्य स्मिद्ध्यंक्कः। अग्रं नयथ्सुपद्यक्षंराणाम्। अच्छा रवं प्रथमा जांन्तीगांत्। विदद्गव्य र स्रमां दृढमूर्वम्। येनानुकं मानुषी भोजते विट्। आ ये विश्वाः स्वप्त्यानिं चुकुः। कृण्वानासो अमृत्त्वायं गातुम्। त्वं नृभिनृपते देवहूंतौ॥४३॥

भूरीणि वृत्वा हंर्यश्व हश्सि। त्वन्निदंस्युश्चमुंरिम्। धुनिं चास्वांपयो दभीतंये सुहन्तुं। एवा पांहि प्रत्नथा मन्दंतु त्वा। श्रुधि ब्रह्मं वावृधस्वोत गीर्भिः। आविः सूर्यं कृणुहि पीपिहीषः। जहि शत्रूरं रिभ गा इन्द्र तृन्धि। अग्ने बाधंस्व वि मृधों नुदस्व। अपामीवा अप रक्षारंसि सेध। अस्मार्थ्समुद्राह्मंहतो दिवो नंः॥४४॥

अपां भूमान्मुपं नः सृजेह। यज्ञ प्रतिं तिष्ठ सुमृतौ सुशेवा आ त्वां। वसूंनि पुरुधा विंशन्तु। दीर्घमायुर्यजंमानाय कृण्वन्। अथामृतेन जरितारंमङ्कि। इन्द्रेः शुनावृद्धितंनोति सीरम्। संवथ्सरस्यं प्रतिमाणंमेतत्। अर्कस्य ज्योतिस्तदिदांस ज्येष्ठम्। संवथ्सर शुनव्थ्सीरेमेतत्। इन्द्रेस्य राधः प्रयंतं पुरु त्मना। तदंर्करूपं विमिमानमेति। द्वादंशारे प्रतिं तिष्ठतीद्वृषां। अश्वायन्तों ग्व्यन्तों वाजयंन्तः। हवांमहे त्वोपंगन्तवा उं। आभूषंन्तस्त्वा सुमृतौ नवांयाम्। व्यमिन्द्र त्वा शुन १ हुंवेम॥४५॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

स्वाद्वीं त्वौ स्वादुनौ। तीव्रां तीव्रेणी। अमृतांममृतेन। मधुंमतीं मधुंमता। सृजामि स॰ सोमेन। सोमौऽस्यिश्यौं पच्यस्व। सरंस्वत्यै पच्यस्व। इन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्व। परीतो षिश्चता सुतम्। सोमो य उत्तम॰ हविः॥१॥

द्धन्वा यो नर्यो अपस्वंन्तरा। सुषाव सोम्मिद्रिभिः। पुनातुं ते परिस्रुतम्। सोम् सूर्यस्य दुहिता। वारेण शश्वंता तना। वायुः पूतः प्वित्रेण। प्राङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः। इन्द्रंस्य युज्यः सखा। वायुः पूतः प्वित्रेण। प्रत्यङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः॥२॥

इन्द्रेस्य युज्यः सखाँ। ब्रह्मं क्ष्रत्रं पंवते तेजं इन्द्रियम्। सुरया सोमंः सुत आसुंतो मदांय। शुक्रेणं देव देवताः पिपृग्धि। रसेनात्रं यजमानाय धेहि। कुविद्क्ष यवमन्तो यवश्चित्। यथा दान्त्यनुपूर्वं विययं। इहेहैंषां कृणुत भोजनानि। ये बर्हिषो नमोवृक्तिं न ज्ग्मः। उपयामगृहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वा जुष्टं गृह्णामि॥३॥

सरंस्वत्या इन्द्रांय सुत्राम्णैं। एष ते योनिस्तेजंसे त्वा। वीर्याय त्वा बलाय त्वा। तेजोंऽसि तेजो मियं धेहि। वीर्यमिस वीर्यं मियं धेहि। बलंमिस बलं मियं धेहि। नाना हि वाँ देवहिंतु सदंः कृतम्। मा सश्सृंक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हिश्सीः स्वां योनिमाविशन्॥४॥

उपयामगृहीतोऽस्याश्विनं तेर्जः। सार्स्वतं वीर्यम्। ऐन्द्रं बलम्। एष ते योनिर्मोदांय त्वा। आनन्दायं त्वा महेसे त्वा। ओजोऽस्योजो मियं धेहि। मन्युरंसि मन्युं मियं धेहि। महोऽसि महो मियं धेहि। सहोऽसि सहो मियं धेहि। या व्याघ्रं विषूचिका। उभौ वृकं च रक्षंति। श्येनं पंतित्रण्णं सिष्हम्। सेमं पात्वण्हंसः। सम्पृचंः स्थ सं मां भद्रेणं पृङ्का। विपृचंः स्थ वि मां पाप्मनां पृङ्का। ५॥

हुविः प्रत्यङ्ख्सोमो अतिंद्रुतो गृह्णाम्याविशन्विपूचिका पश्चं च॥————[१]

सोमो राजाऽमृत र सुतः। ऋजीषेणांजहान्मृत्युम्। ऋतेनं सत्यिमिन्द्रियम्। विपान र शुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं। सोमम्द्र्यो व्यंपिबत्। छन्दंसा हुर्सः शुंचिषत्। ऋतेनं सत्यिमिन्द्रियम्। अद्यः क्षीरं व्यंपिबत्॥६॥

त्रुङ्गः क्षिया। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। अन्नात्पिर्स्रुतो रसम्। ब्रह्मणा व्यंपिबत् क्ष्न्रम्। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। रेतो मूत्रं विजंहाति। योनिं प्रविशिदिन्द्रियम्। गर्भो ज्रायुणाऽऽवृतः। उल्बं जहाति जन्मना। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्॥७॥

वेदेन रूपे व्यंकरोत्। सृतासृती प्रजापंतिः। ऋतेनं सृत्यमिन्द्रियम्। सोमेनु सोमौ व्यंपिबत्। सृतासुतौ प्रजापितिः। ऋतेनं स्त्यिमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा रूपे व्याकंरोत्। स्त्यानृते प्रजापितः। अश्रंद्धामनृतेऽदेधात्। श्रद्धाः सत्ये प्रजापितः। ऋतेनं स्त्यिमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा पेरिस्रुतो रसम्। शुक्रेणं शुक्रं व्यंपिबत्। पयः सोमं प्रजापितः। ऋतेनं स्त्यिमिन्द्रियम्। विपानः श्रुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं॥८॥

अञ्चः क्षीरं व्यंपिबुक्कमम्तर्तेनं सुत्यमिन्द्रियः श्रुद्धाः सुत्ये प्रजापंतिरृष्टौ चं॥______[2]

सुरांवन्तं बर्ह्षिदर्ं सुवीरम्ं। युज्ञरं हिंन्वन्ति महिषा नमोभिः। दधांनाः सोमं दिवि देवतांसु। मदेमेन्द्रं यजमानाः स्वर्काः। यस्ते रसः सम्भृत ओषंधीषु। सोमंस्य शुष्मः सुरंया सुतस्यं। तेनं जिन्व यजमानं मदेन। सरंस्वतीमश्विनाविन्द्रंमग्निम्। यमश्विना नमुंचेरासुरादिधं। सरंस्वत्यसंनोदिन्द्रियायं॥९॥

ड्मन्तर शुक्रं मधुंमन्त्रमिन्दुम्ं। सोम्र् राजांनिम्ह भंक्षयामि। यदत्रं रिप्तर रिसनंः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिंबच्छचीभिः। अहं तदंस्य मनंसा शिवेनं। सोम्र् राजांनिम्ह भंक्षयामि। पितृभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। पितामहेभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। प्रपितामहेभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। अक्षंन्पितरः॥१०॥

अमींमदन्त पितरंः। अतींतृपन्त पितरंः। अमींमृजन्त पितरंः। पितरः शुन्धंध्वम्। पुनन्तुं मा पितरंः सोम्यासंः। पुनन्तुं मा पिताम्हाः। पुनन्तु प्रपितामहाः। प्वित्रेण श्तायुंषा। पुनन्तुं मा पिताम्हाः। पुनन्तु प्रपितामहाः॥११॥

प्वित्रेण शृतायुंषा। विश्वमायुर्व्यश्यवे। अग्र आयू १षि पवसेऽग्रे पर्वस्व। पर्वमानः सुवर्जनः पुनन्तुं मा देवज्ञनाः। जातंवेदः प्वित्रंवद्यते प्वित्रंम्चिषि। उभाभ्यां देव सवितर्वेश्वदेवी पुनती। ये संमानाः समनसः। पितरो यम्राज्ये। तेषां लोकः स्वधा नमः। यज्ञो देवेषुं कल्पताम्॥१२॥

ये संजाताः समंनसः। जीवा जीवेषुं मामकाः। तेषा् श्रु श्रीमीयं कल्पताम्। अस्मिँ छोके शत समाः। द्वे स्रुती अशृणवं पितृणाम्। अहं देवानां मृत मर्त्यानाम्। याभ्यां मिदं विश्व मेज्ञथ्समेति। यदंन्तरा पितरं मातरं च। इद सहिवः प्रजनंनं मे अस्तु। दशंवीर सर्वगंण स्वस्तये। आत्मसिनं प्रजासिनं। पृशुसन्यं भयसिनं लोकसिनं। अग्निः प्रजां बंहुलां में करोतु। अन्नं पयो रेतों अस्मासुं धत्त। रायस्पोष् मिष्मूर्जम्समासुं दीधरथ्स्वाहाँ॥१३॥ इत्यायं पितरं शतायंण पुननं मा पितामहः पुनन् प्रिपेतामहः कल्पताः स्वस्तये पर्व चा—[३]

सीसेन तन्नं मनसा मनीषिणंः। ऊर्णासूत्रेणं क्वयों वयन्ति। अश्विनां यज्ञश् संविता सरंस्वती। इन्द्रंस्य रूपं वर्रुणो भिषुज्यन्। तदंस्य रूपमृमृत्श् शचींभिः। तिस्रोऽदंधुर्देवताः सश्रुणाः। लोमानि शष्पैर्बहुधा न तोकांभिः। त्वर्गस्य मार्समम्भवन्न लाजाः। तद्श्विनां भिषजां रुद्रवर्तनी। सर्रस्वती वयति पेशो अन्तरः॥१४॥

अस्थिं मुजानं मासंरैः। कारोतरेण दर्धतो गवाँ त्वचि। सरंस्वती मनसा पेशलं वसुं। नासंत्याभ्यां वयति दर्शतं वपुः। रसं परिस्नुता न रोहितम्। नुग्नहुर्धीर्स्तसंर्न्न वेमं। पर्यसा शुक्रम्मृतंं जनित्रम्ं। सुरंया मूत्रांज्ञनयन्ति रेतः। अपामंतिं दुर्मतिं बार्धमानाः। ऊर्वध्यं वातर्षस्बुवन्तदारात्॥१५॥

इन्द्रंः सुत्रामा हृदंयेन स्त्यम्। पुरोडाशंन सिवृता जंजान। यकृत्क्रोमानं वरुणो भिष्ज्यन्। मतंस्रे वाय्व्यैर्न मिनाति पित्तम्। आत्राणि स्थाली मधु पिन्वंमाना। गुदा पात्राणि सुद्धा न धेनुः। श्येनस्य पत्रं न प्रीहा शवींभिः। आस्नदी नाभिरुदरं न माता। कुम्भो वंनिष्ठुर्जनिता शवींभिः। यस्मित्रग्रे योन्यां गर्भो अन्तः॥१६॥

प्राशीर्व्यंक्तः शतधार् उथ्संः। दुहे न कुम्भी स्वधां पितृभ्यः। मुख् सदस्य शिर् इथ्सदेन। जिह्वा पिवित्रमिश्विना स्र सरंस्वती। चप्पन्न पायुर्भिषगंस्य वालः। वस्तिन शेपो हरसा तर्स्वी। अश्विभ्यां चक्षुंरमृतं ग्रहाँभ्याम्। छागेन तेजो ह्विषां शृतेनं। पक्ष्माणि गोधूमैः क्रेलेरुतानिं। पेशो न शुक्रमितं वसाते॥१७॥

अविर्न मेषो निस वीर्याय। प्राणस्य पन्थां अमृतो ग्रहाँभ्याम्। सरंस्वृत्युप्वाकैंर्व्यानम्। नस्यांनि बर्हिर्बदंरैर्जजान। इन्द्रंस्य रूपमृष्भो बलाय। कर्णांभ्याः श्रोत्रंममृतं ग्रहाँभ्याम्। यवा न बर्हिर्भुवि केसंराणि। कर्कन्धं जज्ञे मधुं सार्घं मुखाँत्। आत्मन्नुपस्थे न वृकंस्य लोमं। मुखे श्मश्रूंणि न व्यांघ्रलोमम्॥१८॥

केशा न शीर्षन् यशंसे श्रियै शिखाँ। सिक्ष्म् लोम् त्विषिरिन्द्रियाणि। अङ्गाँन्यात्मिन्धिजा तद्श्विनाँ। आत्मान्मङ्गः समधाथ्मरंस्वती। इन्द्रंस्य रूपक्ष् श्तमान्मायुंः। चन्द्रेण् ज्योतिर्मृतं दर्धाना। सरंस्वती योन्यां गर्भम्नतः। अश्विभ्यां पत्नी सुकृतं बिभर्ति। अपाक्ष् रसेन् वर्षणो न साम्नाँ। इन्द्रक्षं श्रियै जनयंत्रपस् राजाँ। तेर्जः पश्नाक्ष् ह्विरिन्द्रियावत्। परिस्रुता पर्यसा सार्घं मधुं। अश्विभ्यां दुग्धं भिषजा सरंस्वत्या सुतासुताभ्यांम्। अमृतः सोम् इन्दुः॥१९॥

अन्तर आ्रादुन्तर्वसाते व्याघ्रलोमर राजां चुत्वारि च॥————[४]

मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसि। समृहं विश्वैर्देवैः। क्षुत्रस्य नाभिरिसे। क्षुत्रस्य योनिरिसे। स्योनामा सीद। सुषदामा सीद। मा त्वां हिश्सीत्। मा मां हिश्सीत्। निषंसाद धृतव्रतो वर्रुणः। पुस्त्यांस्वा॥२०॥

साम्राज्याय सुऋतुंः। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंस्वे।

अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। अश्विनोर्भैषंज्येन। तेजंसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। सरंस्वत्यै भैषंज्येन॥२१॥

वीर्यायात्राद्यांयाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। इन्द्रंस्येन्द्र्येणं। श्रिये यशंसे बलायाभिषिश्चामि। कोऽसि कत्मोऽसि। कस्मै त्वा कार्यं त्वा। सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्गलाँ(४) सत्यंराजा(३)न्। शिरो में श्रीः॥२२॥

यशो मुखम्ँ। त्विषिः केशाँश्च श्मश्रूंणि। राजां मे प्राणीं-ऽमृतम्ँ। सम्राद्वक्षुंः। विराद्धोत्रम्ँ। जिह्वा में भुद्रम्। वाङ्गहंः। मनों मुन्युः। स्वराङ्कामंः। मोदाः प्रमोदा अङ्गुलीरङ्गांनि॥२३॥

चित्तं मे सहंः। बाहू मे बर्लमिन्द्रियम्। हस्तौ मे कर्म वीर्यम्। आत्मा क्षत्रमुरो ममं। पृष्टीर्मे राष्ट्रमुदर्म १ सौ। ग्रीवाश्च श्रोण्यौ। ऊरू अंरुब्री जानुनी। विशो मेऽङ्गानि सुर्वतः। नाभिर्मे चित्तं विज्ञानम्। पायुर्मे ५ पंचितिर्भसत्॥ २४॥

आनन्दनन्दावाण्डौ मैं। भगः सौभाँग्यं पसंः। जङ्गाँभ्यां प्रद्यां धर्मों ऽस्मि। विशि राजा प्रतिष्ठितः। प्रतिं क्षुत्रे प्रतिं तिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्वेषु प्रतिं तिष्ठामि गोषुं। प्रत्यङ्गेषु प्रतिं तिष्ठाम्यात्मन्। प्रतिं प्राणेषु प्रतिं तिष्ठामि पुष्टे। प्रति

द्यावांपृथिव्योः। प्रतिं तिष्ठामि यज्ञे॥२५॥

त्रया देवा एकांदश। त्रयस्त्रिष्शाः सुराधंसः। बृह्स्पतिंपुरो-हिताः। देवस्यं सिवतुः सवे। देवा देवैरंवन्तु मा। प्रथमा द्वितीयैः। द्वितीयांस्तृतीयैः। तृतीयाः सत्येनं। सत्यं यज्ञेनं। यज्ञो यजुंभिः॥२६॥

यजूरेषि सामंभिः। सामाँन्यृग्भिः। ऋचो याज्यांभिः। याज्यां वषद्वारेः। वृषद्वारा आहुंतिभिः। आहुंतयो मे कामान्थ्समंधयन्तु। भूः स्वाहाँ। लोमांनि प्रयंतिर्ममं। त्वङ्म आनंतिरागंतिः। मार्सं म् उपनितिः। वस्वस्थि। मुज्जा म् आनंतिः॥२७॥

यद्देवा देव्हेर्डनम्। देवांसश्चकृमा व्यम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यदि दिवा यदि नक्तम्। एना १ सि चकृमा व्यम्। वायुर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यदि जाग्रद्यदि स्वप्नें। एना १ सि चकृमा व्यम्॥ २८॥

सूर्यो मा तस्मादेनंसः। विश्वान्मुञ्चत्व १ हंसः। यद्ग्रामे यदरंण्ये। यथ्सभायां यदिन्द्रिये। यच्छूद्रे यद्ये। एनंश्चकृमा वयम्। यदेकस्याधि धर्मणि। तस्यांवयजंनमसि। यदापो अघ्निया वरुणेति शपांमहे। ततो वरुण नो मुञ्जा २९॥

अवंभृथ निचङ्कुण निचे्रुरंसि निचङ्कुण। अवं

देवैर्देवकृतमेनोंऽयाट्। अव मर्त्यैर्मर्त्यंकृतम्। उरोरा नो देव रिषस्पांहि। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु। दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः। योऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चे व्यं द्विष्मः। द्रुपदादिवेन्मुंमुचानः। स्वित्रः स्नात्वी मलांदिव॥३०॥

पूतं प्वित्रेणेवाऽऽज्यम्। आपः शुन्धन्तु मैनंसः। उद्घयं तमंस्स्परि। पश्यंन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवं देवत्रा सूर्यम्। अगंन्म ज्योतिरुत्तमम्। प्रतियुतो वरुणस्य पाशः। प्रत्यंस्तो वरुणस्य पाशः। प्रत्यंस्तो वरुणस्य पाशः। एधौऽस्येधिषीमहिं। समिदंसि॥३१॥

तेजोऽसि तेजो मियं धेहि। अपो अन्वचारिषम्। रसेन् समंसृक्ष्मिहि। पर्यस्वा अग्नु आगंमम्। तं मा स॰सृंज् वर्चसा। प्रजयां च धनेन च। समावंवित पृथिवी। समुषाः। समु सूर्यः। समु विश्वंमिदं जगत्। वृश्वान्रज्योतिर्भूयासम्। विभुं कामं व्यंश्ञवै। भूः स्वाहां॥३२॥

स्वप्र एनारिक चकुमा व्यं मृश्च मलीवव सुमिवंसि जग्नीवि च॥———[६]

होतां यक्षथ्समिधेन्द्रंमिडस्पदे। नाभां पृथिव्या अधि। दिवो वर्ष्म्नश्यमिध्यते। ओर्जिष्ठश्चर्षणी सहान्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्तननूनपातम्। ऊतिभिर्जेतार्मपंराजितम्। इन्द्रं देव॰ सुंवर्विदम्। पृथिभिर्मध्रंमत्तमैः। नराश॰सेन् तेजंसा॥३३॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्विडांभिरिन्द्रंमीडितम्। आजुह्वांनुममंर्त्यम्। देवो देवैः सवींर्यः। वर्ज्रहस्तः पुरन्दरः। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतांयक्षद्वर्हिषीन्द्रंन्निषद्वरम्। वृष्मं नर्यापसम्। वसुंभीरुद्रैरांदित्यैः। स्युग्भिंर्बर्हिरा-संदत्॥३४॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्रदोजो न वीर्यम्ं। सहो द्वार् इन्द्रंमवर्धयन्। सुप्रायणा विश्रंयन्तामृतावृधंः। द्वार् इन्द्राय मीदुषें। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदुषे इन्द्रंस्य धेनू। सुदुघं मातरौं मही। सवातरौ न तेजंसी। वथ्समिन्द्रंमवर्धताम्॥३५॥

वीतामाज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्षद्देव्या होतांरा। भिषजा सखाया। ह्विषेन्द्रंं भिषज्यतः। क्वी देवौ प्रचेतसौ। इन्द्रांय धत्त इन्द्रियम्। वीतामाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीः। त्रयंस्त्रिधातंवोपसंः। इडा सर्रस्वती भारती॥३६॥

म्हीन्द्रंपत्नीर्ह्विष्मंतीः। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्त्वष्टांर्मिन्द्रं देवम्। भिषज्ञं स्युयजं घृत्श्रियम्। पुरुरूपं सुरेतंसं मघोनिम्। इन्द्रांय त्वष्टा दर्धदिन्द्रियाणि। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्रद्वन्स्पतिम्। शुमितारं शतक्रंतुम्। धियो जोष्टारंमिन्द्रियम्॥३७॥

मध्वां सम्अन्प्थिभिः सुगेभिः। स्वदांति ह्वयं मधुंना घृतेनं। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्विन्द्रङ् स्वाहा-ऽऽज्यंस्य। स्वाहा मेदंसः। स्वाहां स्तोकानांम्। स्वाहां स्वाहांकृतीनाम्। स्वाहां हव्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवा॰

आँज्यपान्। स्वाहेन्द्र १ होत्राञ्जंषाणाः। इन्द्र आज्यंस्य वियन्तु। होतुर्यजं॥३८॥

तेर्जसाऽऽसददवर्धतां भारतीन्द्रियं जुंषाणा द्वे चं (समिधेन्द्रन्तनूनपांतमिडांभिर्बुर्हिष्योर्ज उपे दैव्यां तिस्रस्त्वष्टार्य वनस्पतिमिन्द्रम्॥ समिधेन्द्रं चतुर्वेत्वेको वियन्तु द्विर्वीतामेको वियन्तु द्विर्वेत्वेको वियन्तु होत्वर्यजा॥॥——— ि े

सिमंद्ध इन्द्रं उषसामनीके। पुरोरुचां पूर्वकृद्वांवृधानः। त्रिभिर्देवैस्त्रिष्शता वर्ज्ञंबाहुः। ज्ञ्यानं वृत्रं वि दुरों ववार। नराशरुसः प्रतिशूरो मिमानः। तनूनपात्प्रतिं यज्ञस्य धामं। गोभिर्वपावान्मध्ना समुञ्जन्। हिरंण्येश्चन्द्री यंजिति प्रचेताः। ईडितो देवैर्हिरंवार अभिष्टिः। आजुह्वांनो हृविषा शर्धमानः॥३९॥

पुरन्दरो मघवान् वर्ज्ञबाहुः। आयांतु यज्ञमुपंनो जुषाणः। जुषाणो बर्हिरहरिवान् इन्द्रः। प्राचीन स्मीदत्प्रदिशां पृथिव्याः। उरुव्यचाः प्रथमान स्योनम्। आदित्येर्क्तं वस्निः स्जोषाः। इन्द्रं दुरंः कव्ष्यो धावमानाः। वृषाणं यन्तु जनयः सुपत्नीः। द्वारो देवीर्भितो विश्रयन्ताम्। सुवीरां वीरं प्रथमाना महोभिः॥४०॥

उषासानक्तां बृह्ती बृहन्तम्ं। पर्यस्वती सुद्धे शूरिमन्द्रम्ं। पेशंस्वती तन्तुंना संव्ययंन्ती। देवानां देवं यंजतः सुरुक्ते। देव्या मिमाना मनसा पुरुत्रा। होतांराविन्द्रं प्रथमा सुवाचां। मूर्धन् यज्ञस्य मधुना दर्धाना। प्राचीनं ज्योतिर्ह्विषां वृधातः। तिस्रो देवीर्ह्विषा वर्धमानाः। इन्द्रं जुषाणा वृषंणं न

पत्नीः॥४१॥

अच्छिन्नं तन्तुं पर्यसा सरेस्वती। इडां देवी भारती विश्वतूँर्तिः। त्वष्टा दधिदन्द्रांय शुष्मम्। अपाकोचिष्टुर्यशसें पुरूणि। वृषा यजन्वृषणं भूरिरेताः। मूर्धन् यज्ञस्य समनक्तु देवान्। वनस्पतिरवंसृष्टो न पाशैः। त्मन्यां सम्अञ्छंिमता न देवः। इन्द्रंस्य ह्व्यैर्जुठरं पृणानः। स्वदांति ह्व्यं मधुना घृतेनं। स्तोकानामिन्दुं प्रति शूर इन्द्रः। वृषायमाणो वृष्भस्तुंराषाट्। घृतप्रषा मधुना ह्व्यमुन्दन्। मूर्धन् यज्ञस्यं जुषता इस्वाहाँ॥४२॥

शर्धमानो महोभिः पत्नीर्धृतेनं चुत्वारिं च॥______[८]

आचंर्षणिप्रा विवेष यन्मां। त॰ स्प्रीचीः। सृत्यमित्तन्न त्वावा॰ अन्यो अस्ति। इन्द्रं देवो न मर्त्यो ज्यायान्। अह्नुहिं पिर्शयांनुमर्णः। अवांसृजोऽपो अच्छां समुद्रम्। प्रसंसाहिषे पुरुहूत् शत्रून्। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरस्तु। इन्द्रा भेर दक्षिणेना वसूनि। पितः सिन्धूनामिस रेवतींनाम्। स शेवृंधमिधं धाद्युम्नम्स्मे। महि क्षुत्रं जनाषाडिन्द्र तव्यम्। रक्षां च नो म्घोनः पाहि सूरीन्। राये चं नः स्वपत्या इषे धाः॥४३॥

रेवर्तीनां चुत्वारिं च॥______[९]

देवं ब्र्हिरिन्द्र १ सुदेवं देवैः। वीरवंथस्तीणं वेद्यांमवर्धयत्। वस्तौर्वृतं प्राक्तौर्भृतम्। राया ब्र्हिष्मतोऽत्यंगात्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वार् इन्द्र १ सङ्घाते। विङ्वीर्यामन्नवर्धयन्। आ वृथ्सेन् तर्रुणेन कुमारेणं चमीविता अपार्वाणम्। रेणुकंकाटं नुदन्ताम्। वसुवनं वसुधेर्यस्य वियन्तु यजं॥४४॥

देवी उषासानक्तां। इन्ह्रं यज्ञे प्रयत्यंह्वेताम्। दैवीर्विशः प्रायांसिष्टाम्। सुप्रीते सुधिते अभूताम्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्ट्री वसुधिती। देविमन्द्रंमवर्धताम्। अयांव्यन्याघा द्वेषा सि। आन्यावांक्षीद्वसु वार्याणि। यजंमानाय शिक्षिते॥४५॥

वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी ऊर्जाहंती दुघें सुदुघें। पयसेन्द्रंमवर्धताम्। इष्मूर्जम्न्याऽवांक्षीत्। सिध्र्ः सपीतिम्न्या। नवेन् पूर्वं दयमाने। पुराणेन् नवम्। अधातामूर्जमूर्जाहंती वसु वार्याणि। यजमानाय शिक्षिते। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥४६॥

देवा दैव्या होतांरा। देविमन्द्रंमवर्धताम्। हृताघंश श्सावा-भाष्टां वसुवार्याणि। यजंमानाय शिक्षितौ। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। पितिमिन्द्रंमवर्धयन्। अस्पृक्षद्भारंती दिवम्। रुद्रैर्यज्ञ सरंस्वती। इडा वसुंमती गृहान्॥४७॥

वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जा। देव इन्द्रो नराश १ संः। त्रिवरूथिस्रिवन्धुरः। देविमन्द्रमवर्धयत्। शतेनं शिति-

पृष्ठानामाहितः। सहस्रेण प्रवितते। मित्रावरुणेदेस्य होत्रमर्हतः। बृह्स्पतिः स्तोत्रम्। अश्विनाऽऽध्वेर्यवम्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं॥४८॥

देव इन्द्रो वन्स्पतिः। हिरंण्यपर्णो मधुंशाखः सुपिप्पलः। देविमन्द्रंमवर्धयत्। दिव्मग्रंणाप्रात्। आऽन्तिरक्षं पृथिवीमंद्दश्तित्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं बर्हिवीरितीनाम्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्वास्स्थिमन्द्रेणा-संन्नम्। अन्या बर्ही इष्यभ्यंभूत्। वसुवनं वसुधेयस्यं वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्विष्टं कुर्वन्थ्रित्वेष्टकृत्। स्विष्टम् करोतु नः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥४९॥

वियुन्तु यजं शिक्षिते शिक्षिते वंसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं गृहान् वेतु यजांभूथ्यद्वं (देवं बुर्हिर्देवीद्वारीं देवी उपासानक्तां देवी जोष्ट्रीं देवी ऊर्जाहुंती देवा दैव्या होतांरा शिक्षितौ देवीस्त्रिम्नस्त्रिम्नो देवीदेव इन्द्रो नगुश×सों देव इन्द्रो वनुस्पतिंदेवं बुर्हिवारिंतीनान्देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवम्। वेतु वियुन्तु चुतुर्वीतामेको वियन्तु चुतुर्वैत्ववर्धयदवर्धयृत्रिरंवर्धतामेकोऽ वर्धयश्रश्चतुरंवर्धयत्। वस्तोरा वृथ्सेन् देवीरयावीपश्हताऽस्पृक्षच्छतेन् दिवश्च स्वासुस्यश् स्विष्टश् शिक्षिते शिक्षिते शिक्षितौ॥॥———[१०]

होतां यक्षथ्समिधाऽग्निमिडस्पदे। अश्विनेन्द्रश् सरंस्वतीम्। अजो धूम्रो न गोधूमैः क्वंलैर्भेषजम्। मधु शष्पैर्न तेजं इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्तत्तनूनपाथ्सरंस्वती। अविमेषो न भेषजम्। पथा मधुंमृताभंरन्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्॥५०॥

बदंरैरुप्वाकांभिर्भेषुजं तोकांभिः। पयः सोमः परिस्रुतां

घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षं नराशरसं न नग्नहुम्ं। पित्र सुरांये भेषजम्। मेषः सरंस्वती भिषक्। रथो न चन्द्र्यंश्विनौर्वपा इन्द्रंस्य वीर्यम्। बदंरैरुपवाकांभिर्भेषजं तोकांभिः। पयः सोमंः पिर्स्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होतर्यजं॥५१॥

होतां यक्षिद्दिडेडित आजुह्वांनः सरंस्वतीम्। इन्द्रं बलेन वर्धयन्। ऋषभेण गवेन्द्रियम्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्। यवैः कर्कन्धुंभिः। मधुं लाजैर्न मासंरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वर्हिः सुष्टरीमोर्णम्रदाः। भिषङ्गासंत्या॥५२॥

भिषजाऽश्विनाऽश्वा शिशुंमती। भिषग्धेनुः सरंस्वती। भिषग्दुह इन्द्रांय भेषजम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्दुरो दिशंः। कृव्ष्यों न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशंः। इन्द्रो न रोदंसी दुधैं। दुहे कामान्थ्सरंस्वती॥५३॥

अश्विनेन्द्रांय भेषजम्। शुक्रं न ज्योतिंरिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुपेशंसोषे नक्तं दिवां। अश्विनां सञ्जानाने। समं जाते सरंस्वत्या। त्विषिमिन्द्रे न भेषजम्। श्येनो न रजंसा हृदा। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं॥५४॥

वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षुद्दैव्या होतांरा

भिषजाऽश्विनां। इन्द्रं न जागृंवी दिवा नक्तं न भेषुजैः। शूष्ट्रं सरंस्वती भिषक्। सीसेन दुह इन्द्रियम्। पयः सोर्मः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षित्तिस्रो देवीर्न भेषुजम्। त्रयंस्त्रिधातंवोऽपसंः। रूपिनद्रें हिरण्ययम्॥५५॥

अश्विनेडा न भारती। वाचा सरंस्वती। मह् इन्द्रांय दधुरिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्त्त्वष्टांर्मिन्द्रमश्विनां। भिषजं न सरंस्वतीम्। ओजो न जूतिरिन्द्रियम्। वृको न रंभसो भिषक्। यशः सुरंया भेषुजम्॥५६॥

श्रिया न मासंरम्। पयः सोमंः परिस्रुतां घृतं मध्ं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिम्। शमितार श्रे शतक्रतुम्। भीमं न मृन्यु राजांनं व्याघ्रं नमंसाऽश्विना भामम्। सरंस्वती भिषक्। इन्द्रांय दुह इन्द्रियम्। पयः सोमंः परिस्रुतां घृतं मध्ं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं॥५७॥

होतां यक्षद्ग्निः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्तोकानांम्। स्वाहां मेदंसां पृथंक्। स्वाहा छागंमिश्वभ्यांम्। स्वाहां मेषः सरंस्वत्ये। स्वाहंर्ष्भिमिन्द्रांय सिःशाय सहंसेन्द्रियम्। स्वाहाऽग्निं न भेषजम्। स्वाहा सोमंमिन्द्रियम्। स्वाहेन्द्रः सुत्रामाणः सिवतारं वरुणं भिषजां पितम्। स्वाहा वनस्पितं प्रियं पाथो न भेषजम्। स्वाहां देवाः आंज्यपान्॥५८॥ स्वाहाऽग्निश् होत्राञ्ज्षंषाणो अग्निर्भेष्जम्। पयः सोमंः पिर्म्नुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदिश्वना सरंस्वतीमिन्द्रश्रे सुत्रामाणम्। इमे सोमाः सुरामाणः। छागैर्न मेषेर्ऋष्भः सुताः। शष्पैर्न तोकांभिः। लाजैर्महंस्वन्तः। मदा मासंरेण परिष्कृताः। शुक्राः पर्यस्वन्तोऽमृताः। प्रस्थिता वो मधुश्चृतः। तानिश्वना सरंस्वतीन्द्रः सुत्रामां वृत्रहा। जुषन्ताः सौम्यं मधुं। पिबंन्तु मदंन्तु वियन्तु सोमम्ं। होतर्यजं॥५९॥

सिंद्धो अग्निरंश्विना। तृप्तो घूर्मो विराट्थ्सुतः। दुहे धेनुः सरंस्वती। सोमर् शुक्रमिहेन्द्रियम्। तृनूपा भिषजां सुते। अश्विनोभा सरंस्वती। मध्वा रजारंसीन्द्रियम्। इन्द्रांय पृथिभिर्वहान्। इन्द्रायेन्दुर् सरंस्वती। नराशरसेन नग्नहुं:॥६०॥

अधाताम्श्विना मधुं। भेषजं भिषजां सुते। आजुह्वांना सरंस्वती। इन्द्रांयेन्द्रियाणि वीर्यम्। इडांभिरश्विनाविषम्। समूर्ज्र स॰ र्यिं दंधुः। अश्विना नमुंचेः सुतम्। सोम शुक्रं पंरिस्रुतां। सरंस्वती तमाभरत्। बर्हिषेन्द्रांय पातंवे॥६१॥

कुवृष्यों न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशंः।

इन्द्रो न रोदंसी दुधं। दुहे कामान्थ्सरंस्वती। उषासा नक्तंमिश्वना। दिवेन्द्र सायमिन्द्रियैः। सञ्जानाने सुपेशंसा। समं जाते सरंस्वत्या। पातं नो अश्विना दिवाँ। पाहि नक्त स् सरस्वति॥६२॥

दैव्यां होतारा भिषजा। पातिमन्द्र सर्चां सुते। तिस्रश्चेधा सरंस्वती। अश्विना भारतीडाँ। तीव्रं परिस्रुता सोमम्ं। इन्द्रांय सुषवुर्मदम्ं। अश्विना भेषजं मधुं। भेषजं नः सरंस्वती। इन्द्रे त्वष्टा यशः श्रियम्ं। रूप र रूपमधः सुते। ऋतुथेन्द्रो वनस्पतिः। शशमानः परिस्रुतां। कीलालंमश्विभ्यां मधुं। दुहे धेनः सरंस्वती। गोभिनं सोममिश्विना। मासरेण परिष्कृतां। समधाता सरंस्वत्या। स्वाहेन्द्रे सुतं मधुं॥६३॥

अश्विनां ह्विरिन्द्रियम्। नमुंचेर्धिया सरंस्वती। आ शुक्रमांसुराद्वसु। मुघमिन्द्रांय जभ्रिरे। यमश्विना सरंस्वती। ह्विषेन्द्रमवंर्धयन्। स बिंभेद वृत्ठं मुघम्। नमुंचावासुरे सर्चां। तमिन्द्रं पृशवः सर्चां। अश्विनोभा सरंस्वती॥६४॥

दर्धाना अभ्यंनूषत। ह्विषां यज्ञिमिन्द्रियम्। य इन्द्रं इन्द्रियं द्धुः। स्विता वर्रुणो भर्गः। स सुत्रामां ह्विष्पंतिः। यजमानाय सश्चत। स्विता वर्रुणोऽदर्धत्। यजमानाय दाशुषें। आदंत्त नमुंचेर्वसुं। सुत्रामा बर्लमिन्द्रियम्॥६५॥

वर्रणः क्षुत्रमिन्द्रियम्। भगेन सिवता श्रियम्।

सुत्रामा यशंसा बलम्। दर्धाना यज्ञमांशत। अश्विना गोभिरिन्द्रियम्। अश्वेभिर्वीर्यं बलम्। ह्विषेन्द्र सरंस्वती। यजमानमवर्धयन्। ता नासंत्या सुपेशंसा। हिरंण्यवर्तनी नर्गं। सरंस्वती ह्विष्मंती। इन्द्र कर्मसु नोऽवत। ता भिषजां सुकर्मणा। सा सुदुघा सरंस्वती। स वृंत्रहा श्तकंतुः। इन्द्रांय दध्रिन्द्रियम्॥६६॥

उभा सरस्वती बलिमिन्द्रियत्रम् पद्गा [१३]

देवं ब्र्हिः सरंस्वती। सुदेविमन्द्रं अश्विनां। तेजो न चक्षुंरक्ष्योः। ब्र्हिषां दध्रिन्द्रियम्। वस्वनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवीर्द्वारों अश्विनां। भिषजेन्द्रे सरंस्वती। प्राणं न वीर्यन्त्रिसि। द्वारों दध्रिन्द्रियम्। वस्वनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६७॥

देवी उषासांविश्वनां। भिषजेन्द्रे सरंस्वती। बलं न वार्चमास्यें। उषाभ्यां दधुरिन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्ज। देवी जोष्ट्री अश्विनां। सुत्रामेन्द्रे सरंस्वती। श्रोत्रं न कर्णयोर्यशंः। जोष्ट्रीभ्यां दधुरिन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्ज॥६८॥

देवी ऊर्जाहुंती दुघें सुदुघें। पयसेन्द्र सरंस्वत्यश्विनां भिषजांऽवत। शुक्रं न ज्योतिः स्तनंयोराहुंती धत्त इन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवा देवानांं भिषजां। होतांराविन्द्रंमिश्वनां। वृषद्भारेः सरंस्वती। त्विष्ं न हृदंये मृतिम्। होतृंभ्यां दधुरिन्द्रियम्। वृसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६९॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। सर्रस्वत्यश्विना भारतीडाँ। शूषत्र मध्ये नाभ्याँम्। इन्द्रांय दधुरिन्द्रियम्। वसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देव इन्द्रो नराशश्संः। त्रिवरूथः सर्रस्वत्याऽश्विभ्यांमीयते रथंः। रेतो न रूपम्मृतंं जनित्रम्ं। इन्द्रांय त्वष्टा दधंदिन्द्रियाणि। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥७०॥

देव इन्द्रो वनस्पतिः। हिरंण्यपर्णो अश्विभ्याम्। सरंस्वत्याः सुपिप्पृतः। इन्द्रांय पच्यते मधुं। ओजो न जूतिमृष्भो न भामम्। वनस्पतिनीं दर्धदिन्द्रियाणि। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवं बर्हिर्वारितीनाम्। अध्वरे स्तीर्णमृश्विभ्यांम्। ऊर्णम्रदाः सरंस्वत्याः॥७१॥

स्योनिमंन्द्र ते सदंः। ईशाये मृन्यु राजांनं बर्हिषां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देवान् यंक्षद्यथायथम्। होतांराविन्द्रंमिश्वनां। वाचा वाच् सरंस्वतीम्। अग्नि सोम हितां स्विष्टकृत्। स्विष्ट इन्द्रंः सुत्रामां सिवृता वर्रुणो भिषक्। इष्टो देवो वनस्पतिः। स्विष्टा देवा आंज्यपाः। इष्टो अग्निर्ग्निनां। होतां होत्रे स्विष्टकृत्। यशो न दधंदिन्द्रियम्। ऊर्ज्मपंचिति स्वधाम्। वसुवनं

वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जा॥७२॥

द्वारों दशुरिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् जोष्ट्रींभ्यां दशुरिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् होतृंभ्यां दशुरिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् होतृंभ्यां दशुरिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज्रांन्द्रियाणिं वसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज्रा सरंस्वत्याः वन्स्यितः पद्वं (देवं वर्र्हिर्देवीद्द्रीयं देवी उपासांवश्विनां देवी जोष्ट्रीं देवी उज्जाहृती देवा देवानां भिष्यज्ञां वपद्वारेदेवीस्तिम्रस्तिम्रे देवी इन्द्रों नर्ग्रशश्मों देव इन्द्रों वन्स्यतिर्देवं वर्र्हिर्वारितीनान्द्रेवो अग्रिः स्थिष्टकृद्देवान्। सुमिधाऽग्निं देवं वर्र्हिः सरंस्वत्यश्विन् सर्वं वियन्तु। द्वारस्तिम्रः सर्ववियन्तु। अज इन्द्रमोजोऽग्निं पर्ः सरंस्वतीम्। नक्तं पूर्वः सरंस्वति। अन्यत्र सरंस्वती। भिषक्यूवं दह इन्द्रियम्। अन्यत्रं दशुरिन्द्रियम्। सौत्रामुण्याश् सुंतासुती। अञ्चन्त्ययं यजमानः॥॥———[१४]

अग्निम् होतांरमवृणीत। अय स्रंतासुती यर्जमानः। पर्चन्प्तीः। पर्चन्पुरोडाशान्। गृह्णन्ग्रहान्। ब्रुप्निश्विभ्यां छागु सरंस्वत्या इन्द्रांय। ब्रुप्नन्थ्यरंस्वत्ये मेषिनन्द्रांयाश्विभ्याम्। ब्रुप्निन्द्रांयर्षभम्श्विभ्या सरंस्वत्ये। सूपस्था अद्य देवो वनस्पतिरभवत्। अश्विभ्यां छागेन सरंस्वत्या इन्द्रांय॥७३॥

सरंस्वत्ये मेषेणेन्द्रांयािश्वभ्यांम्। इन्द्रांयर्षभेणािश्वभ्याः सरंस्वत्ये। अक्षः स्तान्मंदस्तः प्रतिपचताग्रंभीषः। अवीवृधन्त ग्रहैंः। अपातामिश्वना सरंस्वतीन्द्रः सुत्रामां वृत्रहा। सोमान्थ्युराम्णः। उपो उक्थामदाः श्रौद्विमदां अदन्। अवीवृधन्ताङ्क्ष्यः। त्वाम् चर्षं आर्षेयर्षीणां नपादवृणीत। अय स्रुतासुती यजमानः। बहुभ्य आ सङ्गतेभ्यः। एष मे देवेषु वसु वार्या येक्ष्यत् इति। ता या देवा देवदानान्यदुः। तान्यंस्मा आ च शास्वं। आ च गुरस्व। इषितश्चं होत्रसिं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः। सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूहि॥७४॥ इत्रां यंव्याः स्व वार्याः स्व वा

उ्शन्तंस्त्वा हवामह आ नों अग्ने सुकेतुनाँ। त्व॰ सोंम

महे भगं त्वश् सोम् प्रचिकितो मनीषा। त्वया हि नेः पितरंः सोम् पूर्वे त्वश् सोम् पितृभिः संविदानः। बर्हिषदः पितर् आऽहं पितृन्। उपहूताः पितरोऽग्निष्वात्ताः पितरः। अग्निष्वात्तानृतुमतो हवामहे। नराशश्मे सोमपीथं य आशुः। ते नो अर्वन्तः सुहवां भवन्तु। शं नो भवन्तु द्विपदे शं चतुंष्पदे। ये अग्निष्वात्ता येऽनंग्निष्वात्ताः॥७५॥

अर्होमुर्चः पितरंः सोम्यासंः। परेऽवंरेऽमृतांसो भवंन्तः। अधि ब्रुवन्तु ते अवन्त्वस्मान्। वान्यांये दुग्धे जुषमांणाः कर्म्भम्। उदीरांणा अवंरे परे च। अग्निष्वात्ता ऋतुभिः संविदानाः। इन्द्रंवन्तो ह्विरिदं जुंषन्ताम्। यदंग्ने कव्यवाहन् त्वमंग्न ईडितो जांतवेदः। मातंली क्व्यैः। ये तांतृपुर्देवत्रा जेहंमानाः। होत्रावृधः स्तोमंतष्टासो अर्कैः। आऽग्ने याहि सुविदत्रेभिर्वाङ्। स्त्यैः क्व्यैः पितृभिर्घम्सिद्धेः। ह्व्यवाहंम् जरं पुरुप्रियम्। अग्निं घृतेनं ह्विषां सप्यन्। उपांसदं कव्यवाहं पितृणाम्। स नंः प्रजां वीरवंती स् समृण्वतु॥ ७६॥

होतां यक्षदिडस्पदे। समिधानं महद्यशंः। सुषंमिद्धं वरेण्यम्। अग्निमिन्द्रं वयोधसम्। गायत्रीं छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षच्छुचिंव्रतम्। तनूनपांतमुद्भिदम्। यं

गर्भमदितिर्द्धे॥७७॥

शुचिमिन्द्रं वयोधसम्। उष्णिह्ं छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाह्ं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदीडेन्यम्। ईडितं वृत्रहन्तंमम्। इडांभिरीड्यक् सहंः। सोम्मिन्द्रं वयोधसम्। अनुष्टुभं छन्दं इन्द्रियम्। त्रिवृथ्सं गां वयो दर्धत्॥७८॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुबर्हिषदम्। पूषण्वन्तममंत्र्यम्। सीदंन्तं बर्हिषिं प्रिये। अमृतेन्द्रं वयोधसम्। बृह्तीं छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतांयक्षुद्धचंस्वतीः। सुप्रायणा ऋतावृधंः॥७९॥

द्वारों देवीर्हिर्ण्ययीः। ब्रह्माण् इन्ह्रंं वयोधसम्। पृङ्किं छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाहं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्यज्ञं। होतां यक्षथ्सुपेशंसे। सुशित्ये बृहती उभे। नक्तोषासा न दंर्शते। विश्वमिन्द्रं वयोधसम्। त्रिष्टुमं छन्दं इन्द्रियम्॥८०॥

पृष्ठवाह्ं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजी होतां यक्षत्प्रचेतसा। देवानांमृत्तमं यशः। होतांरा दैव्यां कवी। स्युजेन्द्रं वयोधसम्। जर्गतीं छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्गाहं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्र्यजी। होतां

यक्षुत्पेशंस्वतीः॥८१॥

तिस्रो देवीर्हिर्ण्ययीः। भारतीर्बृह्तीर्म्हीः। पित्मिन्द्रं वयोधसम्। विराजं छन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुरेतंसम्। त्वष्टांरं पृष्टिवर्धनम्। रूपाणि विभ्रंतं पृथंक्। पृष्टिमिन्द्रं वयोधसम्॥८२॥

द्विपदं छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षाणं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षच्छ्तकंतुम्। हिरंण्य-पर्णमुक्थिनम्। रशनां बिभ्रंतं वृशिम्। भगमिन्द्रं वयोधसम्। ककुभं छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशां वेहतं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्यस्वाहांकृतीः। अग्निं गृहपंतिं पृथंक्। वर्रुणं भेषजं कृविम्। क्षुत्रमिन्द्रं वयोधसम्। अतिंच्छन्दसं छन्दं इन्द्रियम्। बृहद्ष्पभं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं॥८३॥

द्धे दर्भदतावृथं इन्द्रियं पेशंस्वतीर्वयोषस् वेत्वाऽऽज्यस्य होत्यंजं स्प्तः चं (इडस्प्रदेँऽग्निङ्गायतीश्च्यविसं। श्रुचिद्रतृष् शुविद्रतृष् शुविद्रतृष्विस्पालहिन्दित्यवाहम्। ईडेन्य्ष् सोमंमनुष्टुभं त्रिवृध्सम्। सूब्र्तृहृपर्वम्मृतेन्द्रं बृहुतीं पश्चाविम्। व्यचस्वतीः सुप्रायणा द्वारौं बृह्माणंः पृङ्किमिह तुर्यवाहम्। सुपेशंसे विश्वमिन्द्रं त्रिष्टुभं पष्टवाहम्। प्रचेतसा स्युजेन्द्रं जर्गतीमिहानुङ्गाहम्। पेशंस्वतीस्तिम् प्रति विराजिमिह धृत्रत्रः सुरेतंसन्त्वष्टां पृष्टिमिन्द्रं द्विपर्वमिहोक्षाण्त्रः। श्रुतकतुं भग्मिन्द्रं कुकुभैमिह वृशात्रः। स्वाहांकृतीः क्षुत्रमितिच्छन्दसं बृहद्यभं गां वयो दर्धदिन्द्रियमृषिं वसु नवं द्येशहैंन्द्रियमष्टं नव दश् गां न वयो दर्धदिङ्ग्पदे सर्व वेत्॥॥——[१७]

सिमंद्धो अग्निः सिमधां। सुषंमिद्धो वरेंण्यः। गायत्री छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविगींवयां दधुः। तनूनपाच्छुचिंव्रतः। तनूपाच् सरंस्वती। उष्णिक्छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाङ्गोर्वयां दधुः। इडांभिरग्निरीङ्यः। सोमों देवो अमर्त्यः॥८४॥ अनुष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। त्रिव्थ्सो गौर्वयो दधुः। सुबर्हिरग्निः पूषण्वान्। स्तीर्णबर्हिरमर्त्यः। बृह्ती छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविर्गीर्वयो दधुः। दुरो देवीर्दिशो महीः। ब्रह्मा देवो बृह्स्पतिः। पुङ्किश्छन्दं इहिन्द्रियम्। तुर्यवाङ्गौर्वयो दधुः॥८५॥

उषे यही सुपेशंसा। विश्वं देवा अमंर्त्याः। त्रिष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। पृष्ठवाद्गौर्वयां दधुः। दैव्यां होतारा भिषजा। इन्द्रंण स्युजां युजा। जगंती छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्वान्गौर्वयां दधुः। तिस्र इडा सरंस्वती। भारंती मुरुतो विशः॥८६॥

विराद्धन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुर्गौर्न वयो दधः। त्वष्टां तुरीपो अद्भंतः। इन्द्राग्नी पृष्टिवर्धना। द्विपाच्छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षा गौर्न वयो दधः। शमिता नो वनस्पतिः। स्विता प्रस्वन्भगम्। क्कुच्छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशा वेहद्गौर्न वयो दधः। स्वाहां यृज्ञं वर्रुणः। सुक्षत्रो भेषुजं करत्। अतिच्छन्दाश्छन्दं इन्द्रियम्। बृहदंष्भो गौर्वयो दधः॥८७॥

अमर्त्यम्तुर्युवाङ्गोर्वयो दधुर्विशो वृशा वेहद्गीर्न वयो दधुश्चत्वारि च॥————[१८]

वसन्तेन्त्नां देवाः। वसंविश्चिवृतां स्तुतम्। रथन्तरेण् तेजंसा। ह्विरिन्द्रे वयो दधुः। ग्रीष्मेणं देवा ऋतुनां। रुद्राः पंश्चदशे स्तुतम्। बृह्ता यशंसा बलम्ं। ह्विरिन्द्रे वयो दधुः। वर्षाभिर्ऋतुनांऽऽदित्याः। स्तोमे सप्तदशे स्तुतम्॥८८॥

वैरूपेणं विशौजंसा। ह्विरिन्द्रे वयों दधः। शार्देन्र्तनां

देवाः। एकवि १ श ऋभवंः स्तुतम्। वैराजेनं श्रिया श्रियम्। हिविरिन्द्रे वयो दधुः। हेमन्तेन्त्र्नां देवाः। म्रुतंस्त्रिण्वे स्तुतम्। बलेन् शक्वरीः सहंः। हिविरिन्द्रे वयो दधुः। शैशिरेण्त्नां देवाः। त्रयस्त्रि १ श्वेऽमृत १ स्तुतम्। सत्येनं रेवतीः क्षुत्रम्। हिविरिन्द्रे वयो दधुः॥८९॥ स्त्रम्। हिविरिन्द्रे वयो दधुः॥८९॥ स्तर्भ सत्यः सहं हिविरिन्द्रे वयो दधुः॥८९॥

देवं बर्हिरिन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। गायत्रिया छन्दंसेन्द्रियम्। तेज् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वारों देविमन्द्रं वयोधसम्। देवीर्देवमंवर्धयन्। उण्णिह्य छन्दंसेन्द्रियम्। प्राणिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥९०॥

देवी देवं वंयोधसम्। उषे इन्द्रंमवर्धताम्। अनुष्ठभा छन्दंसेन्द्रियम्। वाचमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्ज्ञ। देवी जोष्ट्री देवमिन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमवर्धताम्। बृह्त्या छन्दंसेन्द्रियम्। श्रोत्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्ज्ञ॥९१॥

देवी ऊर्जाहुंती देविमन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। पृङ्ग्या छन्दंसेन्द्रियम्। शुक्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधयंस्य वीतां यजं। देवा दैव्या होतांरा देविमन्द्रं वयोधसम्। देवा देवमंवर्धताम्। त्रिष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। त्विषिमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥९२॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्वयोधसम्। पितिमिन्द्रमवर्धयन्। जगत्या छन्दंसेन्द्रियम्। बलुमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनें वसुधेयस्य वियन्तु यजं। देवो नराशश्सों देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। विराजा छन्दंसेन्द्रियम्। रेत इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनें वसुधेयस्य वेतु यजं॥९३॥

देवो वनस्पतिर्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। द्विपदा छन्दंसेन्द्रियम्। भगमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधयंस्य वेतु यजं। देवं बर्हिवर्गितीनां देविमन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। कुकुभा छन्दंसेन्द्रियम्। यश् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधयंस्य वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृद्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। अतिच्छन्दसा छन्दंसेन्द्रियम्। क्षत्रिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधयंस्य वेतु यजं॥ वसुवनं वसुधयंस्य वेतु यजं॥ वसुवनं वसुधयंस्य वेतु यजं॥ १४॥

वियुन्तु यर्ज वीतां यर्ज वीतां यर्ज वेतु यर्ज वेतु यज्ञ पश्चं च (देवं बुर्हिर्गायत्रिया तेर्जः। देवीद्वरिरं उण्णिहाँ प्राणम्। देवी देवमुषे अंनुष्टुभा वाचम्ँ। देवी जोष्ट्रीं बृह्त्या श्रोत्रम्ं। देवी ऊर्जाहंती पृङ्क्षा शुक्रम्। देवा देव्या होतारा त्रिष्टुभा त्विषिम्ं। देवीस्तिम्रस्तिम्रो देवीः पितं जगत्या बलम्ं। देवो नराशश्यों विराजा रेतः। देवो वनस्पतिर्द्विपदा भगम्ं। देवं बुर्हिवीरितीनां कुकुभा यर्शः। देवो अग्निः स्विष्टुकृदतिष्छन्दसा क्षत्रम्। वेतु वियुन्तु चृतुर्वीतामेको वियन्तु चृतुर्वैत्ववर्थयदवर्थयश्र्वत्रंत्वर्थतामेकोऽवर्थयश्र्वत्रंवर्थता।॥————[२०]

स्वाद्वीं त्वा सोम्ः सुरावन्तर् सीसेन मित्रोऽसि यहेवा होता यक्षथ्यमिधेन्द्रर् सिमेंद्ध इन्द्र आचेर्पणिपा देवं बुर्हिरहोतां यक्षथ्यमिधाऽग्निर सिमेंद्धो अग्निरिश्वनाऽश्विनां हुविरिन्द्रियं देवं बुर्हिः सरस्वत्यग्निमद्योगन्तो होतां यक्षदिडस्पदे सिमेंद्धो अग्निः समिधां वसन्तेनुर्तुनां देवं बुर्हिरिन्द्रं वयोधसं विश्शृतिः॥२०॥

स्वाद्वीं त्वाऽमीमदन्त पितरः साम्राज्याय पूर्व पवित्रेणोषासानक्ता बदेरैरधीतां देव इन्द्रो वनस्पतिः पष्ठवाहङ्गां देवी देवं वयोधसुं चर्तुर्नवतिः॥९४॥

स्वाद्वीं त्वां वेतु यजं॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

त्रिवृथ्स्तोमो भवति। ब्रह्मवर्चसं वै त्रिवृत्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। अग्निष्टोमः सोमो भवति। ब्रह्मवर्चसं वा अग्निष्टोमः। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। रथन्तर साम भवति। ब्रह्मवर्चसं वै रथन्तरम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। परिस्रुजी होतां भवति॥१॥

अरुणो मिर्मिरस्निश्चंत्रः। एतद्वै ब्रह्मवर्चसस्यं रूपम्। रूपेणैव ब्रह्मवर्चसमवं रुन्थे। बृह्स्पतिरकामयत देवानां पुरोधां गंच्छेयमितिं। स एतं बृहस्पतिस्वमंपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजत। ततो वै स देवानां पुरोधामंगच्छत्। यः पुरोधाकांमः स्यात्। स बृहस्पतिसवेनं यजेत॥२॥

पुरोधामेव गंच्छति। तस्यं प्रातः सवने सन्नेषुं नाराश्र्येषुं। एकांदश् दक्षिंणा नीयन्ते। एकांदश् माध्यं दिने सवने सन्नेषुं नाराश्र्येषुं। एकांदश तृतीयसवने सन्नेषुं नाराश्र्येष्ठेश्य प्रकांदश तृतीयसवने सन्नेषुं नाराश्र्येष्ठेश्य नाराश्रयेष्ठेश्य नाराश्रयेष्ठेश्य नाराश्रयेष्ठेश्य नाराश्रयेष्ठेश्य नाराश्रयेष्ठेश्य नाराश्रयेष्ठेश्य नाराश्रयेष्ठेश्य नाराश्रयेष्ठेश्य नाराश्येष्ठेश्य नाराश्रयेष्ठेश्य नाराश्येष्ठेश्य नाराश्येष्ठेशेष्ठेश्य नाराश्येष्ठेशे

प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्शो देवतांनाम्। यावंतीरेव देवताः। ता एवावं रुन्धे। कृष्णाजिनेऽभिषिश्चिति। ब्रह्मणो वा एतद्रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मवर्चसेनैवेन्ष् समर्धयति। आज्येनाभिषिश्चिति। तेजो वा आज्यम्। तेजं एवास्मिन्दधाति॥४॥ यदाँग्नेयो भवंति। अग्निमुंखा ह्यृद्धिः। अथ् यत्पौष्णः। पृष्टिर्वे पूषा। पृष्टिर्वेश्यस्य। पृष्टिमेवावं रुन्धे। प्रस्वायं सावित्रः। अथ् यत्त्वाष्ट्रः। त्वष्टा हि रूपाणिं विक्रोतिं। निर्वरुणत्वायं वारुणः॥५॥

अथो य एव कश्च सन्थ्सूयतें। स हि वांरुणः। अथ् यद्वैश्वदेवः। वैश्वदेवो हि वैश्यः। अथ् यन्मांरुतः। मा्रुतो हि वेश्यः। स्प्तैतानि ह्वी १ पि भवन्ति। स्प्तगंणा वै म्रुतंः। पृश्जिः पष्टौही मांरुत्या लेभ्यते। विश्वे म्रुतंः। विश्वे पृवेतन्मध्यतोऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विशः प्रियः। विश्वो हि मध्यतोऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विशः प्रियः। विश्वो हि मध्यतोऽभिषिच्यते। ऋष्मचर्मेऽध्यभिषिश्चित। स हि प्रजनियता। द्व्राऽभिषिश्चित। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जवेनम्नाद्येन समर्धयति॥६॥

यदाँग्नेयो भवंति। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। अथ् यथ्सौम्यः। सौम्यो हि ब्राँह्मणः। प्रस्वायैव सांवित्रः। अथ् यद्वांर्हस्पृत्यः। पृतद्वे ब्राँह्मणस्यं वाक्पृतीयम्। अथ् यदंग्नीषोमीयः। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। तौ यदा सङ्गच्छेते॥७॥

अर्थ वीर्यावत्तरो भवति। अथु यथ्सारस्वतः। एति प्रति प्रत्यक्षं ब्राह्मणस्यं वाक्पतीयम्। निर्वरुणत्वायैव वारुणः। अथो य एव कश्च सन्थ्सूयते। स हि वारुणः। अथ् यद्यावापृथिव्यः। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। तं द्यावापृथिवी

नान्वंमन्येताम्। तमेतेनैव भांगधेयेनान्वंमन्येताम्॥८॥

वर्ज्रस्य वा एषोऽनुमानायं। अनुंमतवज्ञः सूयाता इति। अष्टावेतानिं ह्वी॰षिं भवन्ति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्री ब्रह्मवर्च्सम्। गायत्रियेव बंह्मवर्च्सम्वं रुन्थे। हिरंण्येन घृतमृत्पुंनाति। तेजंस एव रुचे। कृष्णाजिनेऽभिषिंश्वति। ब्रह्मंणो वा एतदंख्सामयों रूपम्। यत्कृंष्णाजिनम्। ब्रह्मंत्रेवैनंमृख्सामयोरध्यभिषिंश्वति। घृतेनाभिषिंश्वति। तथां वीर्यावत्तरो भवति॥९॥

न वै सोमंन सोमंस्य स्वौंऽस्ति। ह्तो ह्यंषः। अभिष्तो ह्यंषः। न हि हृतः सूयतें। सौमी सूतवंशामा लेभते। सोमो वै रंतोधाः। रेतं पुव तद्दंधाति। सौम्यर्चाऽभिषिश्चिति। रेतोधाः। रेतं पुवास्मिन्दधाति। यत्किं चं राज्यसूयंमृते सोमम्। तथ्सवंं भवति। अषांढं युथ्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षामुफ्खां वृजनंस्य गोपाम्। भूरेषुजा स्पृक्षिति सुश्वंसम्। जयंन्तं त्वामनं मदेम सोम॥१०॥

यो वै सोमेन सूयतें। स देवस्वः। यः पृशुनां सूयतें। स देवस्वः। य इष्ट्यां सूयतें। स मनुष्यस्वः। एतं वै पृथंये देवाः प्रायंच्छन्। ततो वै सोऽप्यांर्ण्यानां पशूनामंसूयत। यावतीः कियतीश्च प्रजा वाचं वदन्ति। तासार् सर्वासार

स्यते॥११॥

य पृतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। नाराश्र्रस्यर्चा-ऽभिषिश्रति। मृनुष्यां वे नराश्रर्सः। निह्नुत्य वावैतत्। अथाभिषिश्रति। यत्किं चं राज्सूयंमनुत्तरवेदीकम्ं। तथ्सर्वं भवति। ये में पञ्जाशतं दृदुः। अश्वांनार स्थस्तुंतिः। द्युमदंग्रे महि श्रवंः। बृहत्कृंधि मुघोनांम्। नृवदंमृत नृणाम्॥१२॥ स्यो स्थस्तिकाणि वा————[५]

पुष गोंस्वः। षुद्भिष्श उक्थ्यों बृहथ्सांमा। पर्वमाने कण्वरथन्तरं भंवति। यो वै वाज्येपयः। स संम्राट्थ्स्वः। यो राज्यस्यः। स वंरुणस्वः। प्रजापंतिः स्वाराज्यं परमेष्ठी। स्वाराज्यं गौरेव। गौरिव भवति॥१३॥

य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। उभे बृहद्रथन्तरे भंवतः। तिद्धे स्वारांज्यम्। अयुतं दक्षिंणाः। तिद्धे स्वारांज्यम्। प्रतिधुषाऽभिषिश्चिति। तिद्धे स्वारांज्यम्। अनुद्धते वेद्ये दक्षिणत आहवनीयंस्य बृह्तः स्तोत्रं प्रत्यभिषिश्चिति। इयं वाव रथन्तरम्॥१४॥

असौ बृहत्। अनयोर्वेनमनंन्तर्हितम्भिषिश्चिति। पृशुस्तोमो वा पृषः। तेनं गोस्वः। षृद्विष्शः सर्वः। रेवज्ञातः सहंसा वृद्धः। क्षत्राणां क्षत्रभृत्तंमो वयोधाः। महान्मंहित्वे तंस्तभानः। क्षत्रे राष्ट्रे चं जागृहि। प्रजापंतेस्त्वा परमेष्ठिनः स्वारांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। स्वारांज्यमेवेनं गमयति॥१५॥ हुव भुविति रुथन्त्रमाहै $^{\frac{1}{6}}$ च॥—————[ξ]

सिर्हे व्याघ्र उत या पृदांकौ। त्विषिरुग्नौ ब्राँह्मणे सूर्ये या। इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या रांजन्ये दुन्दुभावायंतायाम्। अश्वंस्य ऋन्द्ये पुरुषस्य मायौ। इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या हुस्तिनि द्वीपिनि या हिरंण्ये। त्विष्रिश्वंषु पुरुषेषु गोषुं॥१६॥

इन्द्रं या देवी सुभगां ज्जानं। सा न आग्न्वर्चसा संविदाना। रथे अक्षेषुं वृष्भस्य वाजें। वाते पूर्जन्ये वर्रणस्य शृष्में। इन्द्रं या देवी सुभगां ज्जानं। सा न आग्न्वर्चसा संविदाना। राडंसि विराडंसि। सुम्राडंसि स्वराडंसि। इन्द्रांय त्वा तेजंस्वते तेजंस्वन्त श्रीणामि। इन्द्रांय त्वौजंस्वत ओजंस्वन्त श्रीणामि॥१७॥

इन्द्रांय त्वा पर्यस्वते पर्यस्वन्तः श्रीणामि। इन्द्रांय त्वाऽऽयंष्मत् आयंष्मन्तः श्रीणामि। तेजांऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। तेजंस्वदस्तु मे मुखम्। तेजंस्वच्छिरां अस्तु मे। तेजंस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। तेजंसा सम्पिपृग्धि मा। ओजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि॥१८॥

ओर्जस्वदस्तु मे मुखम्ँ। ओर्जस्विच्छिरों अस्तु मे। ओर्जस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। ओर्जसा सं पिपृग्धि मा। पयोऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। पयंस्वदस्तु मे मुखम्। पयंस्वच्छिरो अस्तु मे। पयंस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। पयंसा सं पिपृग्धि मा॥१९॥

आयुंरिस। तत्ते प्र यंच्छामि। आयुंष्मदस्तु मे मुखम्ँ। आयुंष्मच्छिरों अस्तु मे। आयुंष्मान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। आयुंषा सं पिंपृग्धि मा। इममंग्र आयुंषे वर्चसे कृधि। प्रिय॰ रेतों वरुण सोम राजन्। मातेवाँस्मा अदिते शर्म यच्छ। विश्वें देवा जरंदष्टिर्यथाऽसंत्॥२०॥

आयुंरिस विश्वायुंरिस। सर्वायुंरिस सर्वमायुंरिस। यतो वातो मनोजवाः। यतः क्षरेन्ति सिन्धंवः। तासाँ त्वा सर्वासार रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। समुद्र इंवासि गृह्मनाँ। सोमं इवास्यदाँभ्यः। अग्निरिंव विश्वतः प्रत्यङ्कः। सूर्यं इव ज्योतिंषा विभूः॥२१॥

अपां यो द्रवंणे रसंः। तम्हम्स्मा आंमुष्यायणायं। तेजंसे ब्रह्मवर्चसायं गृह्णामि। अपां य ऊर्मी रसंः। तम्हम्स्मा आं-मुष्यायणायं। ओजंसे वीर्याय गृह्णामि। अपां यो मध्यतो रसंः। तम्हम्स्मा आंमुष्यायणायं। पृष्ठौ प्रजनंनाय गृह्णामि। अपां यो यज्ञियो रसंः। तम्हम्स्मा आंमुष्यायणायं। आयुंषे दीर्घायुत्वायं गृह्णामि॥२२॥

गोष्वोजंस्वन्तः श्रीणाम्योजौऽसि तत्ते प्रयंच्छामि पर्यसा सम्पिपृग्धि माऽसिंद्विभूर्यिज्ञयो रसो द्वे चं॥ \longrightarrow $\left[\begin{tabular}{c} oldsymbol{9} \end{tabular} \right]$

अभिप्रेहिं वी्रयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपब्रहा। आतिष्ठ

मित्रवर्धनः। तुभ्यं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्काव्भित् आतिष्ठ वृत्रहृत्रथम्। आतिष्ठंन्तं परि विश्वं अभूषन्। श्रियं वसानश्चरित स्वरोचाः। महत्तद्स्यासुरस्य नामं। आ विश्वरूपो अमृतांनि तस्थौ। अनु त्वेन्द्रों मद्त्वनु बृहुस्पितः॥२३॥

अनु सोमो अन्वग्निरांवीत्। अनुं त्वा विश्वं देवा अंवन्तु। अनुं सप्त राजांनो य उताभिषिक्ताः। अनुं त्वा मित्रावरुंणाविहावतम्। अनु द्यावांपृथिवी विश्वशंम्भू। सूर्यो अहोंभिरनुं त्वाऽवतु। चन्द्रमा नक्षंत्रेरनुं त्वाऽवतु। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिंकिता सोमों अग्निः। आऽयं पृंणक्तु रजंसी उपस्थम्॥२४॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्। स एतं प्रजापंतिरोदनमंपश्यत्। सोऽन्नं भूतोंऽतिष्ठत्। ता अन्यत्रान्नाद्यमविंत्वा। प्रजापंतिं प्रजा उपावंतन्त। अन्नमेवेनं भूतं पश्यंन्तीः प्रजा उपावंतन्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। सर्वाण्यन्नांनि भवन्ति॥२५॥

सर्वे पुरुषाः। सर्वांण्येवान्नान्यवं रुन्धे। सर्वान्पुरुषान्। राडंसि विराड्सीत्यांह। स्वारांज्यमेवेनं गमयति। यद्धिरंण्यं ददांति। तेज्रस्तेनावं रुन्धे। यत्तिंसृधुन्वम्। वीर्यं तेनं।

यदष्ट्रौम्॥२६॥

पुष्टिं तेनं। यत्कंमण्डलुम्ं। आयुष्टेनं। यद्धिरंण्यमा बुध्नातिं। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिंरेवास्मिन्दधाति। अथो तेजो वै हिरंण्यम्। तेजं एवाऽऽत्मन्धंत्ते। यदोद्नं प्राश्ञातिं। एतदेव सर्वमवरुध्यं॥२७॥

तदंस्मिन्नेक्धाऽधाँत्। रोहिण्यां कार्यः। यद्वाँह्मण एव रोहिणी। तस्मादेव। अथो वर्ष्मैवैन र्समानानां करोति। उद्यता सूर्येण कार्यः। उद्यन्तं वा एतर सर्वाः प्रजाः प्रतिनन्दन्ति। दिदृक्षेण्यो दर्शनीयो भवति। य एवं वेदं। ब्रह्मवादिनो वदन्ति॥२८॥

अवेत्योऽवभृथा (३) ना (३) इति। यद्दर्भपुञ्जीकैः प्वयंति। तथ्स्वंदेवावैति। तन्नावैति। त्रिभिः पंवयति। त्रयं इमे लोकाः। पृभिरेवैनं लोकैः पंवयति। अथो अपां वा पृतत्तेजो वर्चः। यद्दर्भाः। यद्दर्भपुञ्जीकैः प्वयंति। अपामेवैनं तेर्जसा वर्चसा-ऽभिषिञ्चति॥२९॥

प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामितिं। स एतं पंश्वशार्दीयंमपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनायजत। ततो वै स बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयांन्थ्स्यामितिं। स पंश्वशार्दीयंन यजेत। बहोरेव भूयांन्भवति। मुरुथ्स्तोमो वा एषः। मुरुतो हि देवानां भूयिष्ठाः॥३०॥

बहुर्भवति। य एतेन यजेते। य उंचैनमेवं वेदं। पश्चशारदीयों भवति। पश्च वा ऋतवंः संवथ्सरः। ऋतुष्वेव संवथ्सरे प्रति तिष्ठति। अथो पञ्चौक्षरा पङ्किः। पाङ्को यज्ञः। यज्ञमेवावं रुन्धे। सप्तदशङ् स्तोमा नाति यन्ति। सप्तदशः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै॥३१॥

अगस्त्यों मुरुद्धं उक्ष्णः प्रौक्षंत्। तानिन्द्र आदंत्त। त एंनुं वर्ज्रमुद्यत्याभ्यायन्त। तानुगस्त्यंश्चैवेन्द्रंश्च कयाशुभीयेनाशमयताम्। ताञ्छान्तानुपौह्वयत। यत्कयाश्भीयं भवंति शान्त्यै। तस्मांदेत ऐन्द्रामारुता उक्षाणः सवनीयां भवन्ति। त्रयः प्रथमेऽहन्ना लेभ्यन्ते। एवं द्वितीये। एवं तृतीयें"॥३२॥

पुवं चंतुर्थे। पश्चौत्तमेऽहन्ना लेभ्यन्ते। वर्षिष्ठमिव ह्यंतदहंः। वर्षिष्ठः समानानां भवति। य एतेन यजंते। य उंचैनमेवं वेदे। स्वारांज्यं वा एष युज्ञः। एतेन् वा एक्या वा कान्दमः स्वारौज्यमगच्छत्। स्वारौज्यं गच्छति। य एतेन यजंते॥३३॥

य उं चैनमेवं वेदं। मारुतो वा एषः स्तोमंः। एतेन वै मुरुतो देवानां भूयिष्ठा अभवन्। भूयिष्ठः समानानां भवति। य एतेन यजते। य उं चैनमेवं वेदे। पश्चशारदीयो वा एष यज्ञः। आ पंश्रमात्पुरुषादन्नमित्ति। य एतेन यजीते। य उ चैनमेवं वेदं। स्प्तद्शङ् स्तोमा नातिं यन्ति। स्प्तद्शः प्रजा-पंतिः। प्रजापंतेरेव नैतिं॥३४॥

अस्या जरांसो दमा मृरित्राः। अर्चर्द्वमासो अग्नयः पावकाः। श्विचीचयः श्वात्रासो भुरण्यवः। वनर्षदो वायवो न सोमाः। यजां नो मित्रावरुणा। यजां देवा र ऋतं बृहत्। अग्ने यक्षि स्वन्दमम्। अश्विना पिबंत र सुतम्। दीद्यंग्नी श्वित्रता। ऋतुनां यज्ञवाहसा॥३५॥

द्वे विरूपे चरतः स्वर्थैं। अन्याऽन्यां वृथ्समुपं धापयेते। हरिंग्न्यस्यां भवंति स्वधावान्। शुक्रो अन्यस्यां दहशे सुवर्चाः। पूर्वाप्रं चंरतो माययैतौ। शिशू कीडंन्तौ परिं यातो अध्वरम्। विश्वान्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टें। ऋतून्न्यो विदधंज्ञायते पुनः। त्रीणिं शृता त्रीषृहस्राण्यग्निम्। त्रिष्शचं देवा नवं चाऽसपर्यन्॥३६॥

औक्षं घृतेरास्तृंणन्बर्हिरंस्मै। आदिद्धोतांरं न्यंषादयन्त। अग्निनाऽग्निः समिध्यते। कृविर्गृहपंतिर्युवां। हृव्यवाङ्गुह्वांऽऽस्यः। अग्निर्देवानां जठरम्। पूतदंक्षः कृविक्रंतुः। देवो देवेभिरा गंमत्। अग्निश्रियों मुरुतों विश्वकृष्टयः। आ त्वेषमुग्रमवं ईमहे वयम्॥३७॥

ते स्वानिनों रुद्रियां वर्षनिंणिजः। सिर्हा न हेषक्रंतवः

सुदानंवः। यदुंत्तमे मंरुतो मध्यमे वाँ। यद्वांऽवमे सुंभगासो दिवि छ। ततों नो रुद्रा उत वाऽन्वस्यं। अग्ने वित्ताद्धविषो यद्यजांमः। ईडे अग्निः स्ववंसन्नमोंभिः। इह प्रंस्प्तो वि चं यत्कृतं नः। रथैरिव प्रभेरे वाज्यद्भिः। प्रदक्षिणिन्म्रुताः स्तोमंमृद्धाम्॥३८॥

श्रुधि श्रुंत्कर्ण् वहिंभिः। देवैरंग्ने स्यावंभिः। आसींदन्तु बर्हिषिं। मित्रो वरुंणो अर्यमा। प्रात्यावांणो अध्वरम्। विश्वेषामिदंतिर्यज्ञियांनाम्। विश्वेषामितंथिर्मानुंषाणाम्। अग्निर्देवानामवं आवृणानः। सुमृडीको भेवतु विश्ववेदाः। त्वे अग्ने सुमितं भिक्षंमाणाः॥३९॥

दिवि श्रवों दिधरे युज्ञियांसः। नक्तां च चुकुरुषसा विरूपे। कृष्णं च वर्णमरुणं च सन्धुः। त्वामंग्न आदित्यासं आस्यम्। त्वां जिह्वा १ शुचंयश्चकिरे कवे। त्वा १ रांतिषाचों अध्वरेषुं सिश्चरे। त्वे देवा ह्विरंदन्त्याहुंतम्। नि त्वां युज्ञस्य सार्धनम्। अग्ने होतांरमृत्विजम्। वनुष्वद्देव धीमिह् प्रचेतसम्। जीरं द्तममंर्त्यम्॥४०॥

तिष्ठा हरी रथ आ युज्यमांना याहि। वायुर्न नियुतों नो अच्छं। पिबास्यन्धों अभिसृष्टो अस्मे। इन्द्रः स्वाहां रिमा ते मदांय। कस्य वृषां सुते सचां। नियुत्वांन्वृष्भो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। इन्द्रं वयं महाधने। इन्द्रमर्भे हवामहे। युजं वृत्रेषुं वृज्जिणम्॥४१॥

द्विता यो वृंत्रहन्तंमः। विद इन्द्रः शतकंतुः। उपं नो हरिंभिः सुतम्। स सूर् आजनयं ज्योतिरिन्द्रम्ं। अया धिया त्रिण्रिद्रिबर्हाः। ऋतेनं शुष्मी नवंमानो अर्कैः। व्यंस्निधों अस्रो अद्रिर्विभेद। उतत्यदाश्वश्वियम्। यदिन्द्र नाहुंषी्ष्वा। अग्रे विक्षु प्रतीदंयत्॥४२॥

भरेष्विन्द्र स्मुहव हिवामहे। अहिते मुच समुकृतं दैव्यं जनम्। अग्निं मित्रं वर्रण सातये भगम्। द्यावापृथिवी मुरुतः स्वस्तये। मुहि क्षेत्रं पुरुश्चन्द्रं वि विद्वान्। आदिथ्मिखंभ्यश्चरथ समैरत्। इन्द्रो नृभिरजनद्दीद्यांनः साकम्। सूर्यमुषसं गातुम्ग्निम्। उरुं नो लोकमन् नेषि विद्वान्। सुर्वर्वुङ्योतिरभय स्वस्ति॥४३॥

ऋष्वा तं इन्द्रं स्थविंरस्य बाहू। उपंस्थेयाम शर्णा बृहन्तां। आ नो विश्वांभिरूतिभिः सजोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हर्यश्व याहि। वरींवृज्धस्थविंरेभिः सुशिप्र। अस्मे दधृद्वृषंणु शुष्मंमिन्द्र। इन्द्रांय गावं आशिरम्ं। दुदुह्ने वृज्जिणे मधुं। यथ्सींमुपह्वरे विदत्। तास्ते विज्ञिन्धेनवो जोजयुर्नः॥४४॥

गर्भस्तयो नियुतों विश्ववाराः। अहंरहुर्भूय इञ्जोगुंवानाः। पूर्णा इंन्द्र क्षुमतो भोजनस्य। इमां ते धियं प्र भेरे महो महीम्। अस्य स्तोत्रे धिषणा यत्तं आनुजे। तमुंथ्सवे चं प्रस्वे चं सास्हिम्। इन्द्रं देवासः शवंसा मदं ननुं॥४५॥ वृज्जिणंमयथ्यवृक्षिः जींजयुर्गः स्म चं॥———[१३]

प्रजापंतिः प्शूनंसृजत। तेंंऽस्माथ्सृष्टाः परांं च आयन्। तानंग्निष्टोमेन् नाऽऽप्नोंत्। तानुक्थ्यंन् नाऽऽप्नोंत्। तान्थ्यांड्शिना नाऽऽप्नोंत्। तान्नात्रिया नाऽऽप्नोंत्। तान्थ्यन्थिना नाऽऽप्नोंत्। सोंऽग्निमंब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेतिं। तानृग्निस्त्रिवृता स्तोमेन् नाऽऽप्नोंत्॥४६॥

स इन्द्रंमब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेतिं। तानिन्द्रः पश्चद्रशेन् स्तोमेन नाऽऽप्नौत्। स विश्वौन्देवानंब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सतेतिं। तान् विश्वेदेवाः संप्तद्रशेन् स्तोमेन् नाऽऽप्नुंबन्। स विष्णुंमब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेतिं। तान् विष्णुंरेकविर्शेन् स्तोमेनाऽऽप्नोत्। वार्वन्तीयेनावारयत॥४७॥

ड्दं विष्णुर्वि चंक्रम् इति व्यंक्रमत। यस्मौत्पृशवः प्रप्रेव् भ्रश्शेरन्। स एतेनं यजेत। यदाप्नौत्। तद्प्तोर्यामंस्याप्तोर्याम्-त्वम्। एतेन् वे देवा जैत्वांनि जित्वा। यं काम्मकांमयन्त् तमाँऽऽप्रुवन्। यं कामंं कामयंते। तमेतेनाँऽऽप्नोति॥४८॥ स्रोमेन् नाऽप्रोदेवारयत् वर्षं च॥————[१४]

व्याघ्रोंऽयम्ग्रौ चंरित प्रविष्टः। ऋषींणां पुत्रो अंभिशस्तिपा अयम्। नमस्कारेण नमंसा ते जुहोमि। मा देवानौं मिथुयाकंर्म भागम्। सावीर्हि देव प्रस्वायं पित्रे। वर्ष्माणंमस्मै विरमाणंमस्मै। अथास्मभ्यं सवितः सर्वतांता। दिवेदिंव आ सुंवा भूरिं पृश्वः। भूतो भूतेषुं चरित प्रविष्टः। स भूतानामधिंपतिर्बभूव॥४९॥

तस्यं मृत्यौ चंरित राज्ञसूयम्ं। स राजां राज्यमनुं मन्यतामिदम्। येभिः शिल्पैः पप्रथानामद्दर्हत्। येभिर्द्याम्भ्यिपर्श्वतप्रजापितः। येभिर्वाचं विश्वरूपार समव्यंयत्। तेनेममंग्र इह वर्चसा समिद्धाः। येभिरादित्यस्तपित् प्र केतुभिः। येभिः सूर्यो दृद्शे चित्रभानुः। येभिर्वाचं पुष्कुलेभिरव्यंयत्। तेनेममंग्र इह वर्चसा समिद्धिः॥५०॥

आऽयं भांतु शर्वसा पश्चं कृष्टीः। इन्द्रं इव ज्येष्ठो भंवतु प्रजावान्। अस्मा अस्तु पुष्कुलं चित्रभांनु। आऽयं पृणक्तु रजंसी उपस्थम्। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंत्पुष्कुलं चित्रभांनु। यस्मिन्थ्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्। तस्मिन्नाजांनुमधि विश्रंयेमम्। द्यौरंसि पृथिव्यंसि। व्याघ्रो वैयाघ्रेऽधिं॥५१॥

विश्रंयस्व दिशों महीः। विशंस्त्वा सर्वां वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमिधं भ्रशत्। या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवुः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। तासां त्वा सर्वासार रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। अभि त्वा वर्चसाऽसिचं दिव्येनं। पर्यसा सह। यथासां राष्ट्रवर्धनः॥५२॥

तथाँ त्वा सविता कंरत्। इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्।

समुद्रव्यंचस्ङ्गिरंः। र्थीतंमः रथीनाम्। वाजांनाः सत्पंतिं पितम्। वसंवस्त्वा पुरस्तांद्भिषिश्चन्तु गायत्रेण् छन्दंसा। रुद्रास्त्वां दक्षिण्तोऽभिषिश्चन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। आदित्यास्त्वां पश्चाद्भिषिश्चन्तु जागंतेन् छन्दंसा। विश्वं त्वा देवा उत्तर्तोऽभिषिश्चं त्वाऽनुंष्टुभेन् छन्दंसा। बृह्स्पतिंस्त्वोपरिष्टाद्भिषिश्चतु पाङ्केन् छन्दंसा॥५३॥

अरुणं त्वा वृकंमुग्रङ्कं जङ्करम्। रोचंमानं मुरुतामग्रें अर्चिषंः। सूर्यवन्तं मुघवानं विषासिहम्। इन्द्रंमुक्थेषुं नामहूर्तम हवेम। प्र बाहवां सिसृतं जीवसे नः। आ नो गर्व्यातिमुक्षतं घृतेनं। आ नो जने श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इन्द्रंस्य ते वीर्यकृतः। बाहू उपावं हरामि॥५४॥

बुभूबाव्यंयत्तेनेममंग्र इह वर्चसा समिक्कि वैयाघ्रेऽधि राष्ट्रवर्धनः पाङ्केन छन्दसोपावंहरामि॥————[१५]

अभि प्रेहिं वीरयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपत्नहा। आतिष्ठ वृत्रहन्तमः। तुभ्यं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्कावभितो रथं यौ। ध्वान्तं वांताग्रमनुं स्श्चरंन्तौ। दूरेहेतिरिन्द्रियावाँन्पत्त्री। ते नोऽग्नयः पप्रयः पारयन्तु। नमंस्त ऋषे गद। अव्यंथायै त्वा स्वधायै त्वा॥५५॥

मा नं इन्द्राभितस्त्वदृष्वारिष्टासः। एवा ब्रंह्मन्तवेदंस्तु। तिष्ठा रथे अधि यद्वज्रंहस्तः। आ र्श्मीन्देव युवसे स्वर्श्वः। आ तिष्ठ वृत्रहन्नातिष्ठंन्तं परिं। अनु त्वेन्द्रों मद्त्वनुं त्वा मित्रावर्रुणौ। द्यौर्श्वं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिंकिता सोमों अग्निः। अनुं त्वाऽवतु सविता सवेन ॥५६॥

इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्। समुद्रव्यंचसङ्गिरंः। रथीतंम १ रथीनाम्। वाजाना ५ सत्पतिं पतिम्। परिमा सेन्या घोषाः। ज्यानां वृञ्जन्तु गृध्नवंः। मेथिष्ठाः पिन्वंमाना इह। मां गोपंतिमभि संविंशन्तु। तन्मेऽनुंमतिरनुं मन्यताम्। तन्माता पृंथिवी तत्पिता द्यौः॥५७॥

तद्भावांणः सोमसुतों मयोभुवंः। तदंश्विना शृणुत ५ सौभगा युवम्। अवं ते हेड उद्तुत्तमम्। एना व्याघ्रं पंरिषस्वजानाः। सिर्हर हिन्वन्ति महते सौर्भगाय। सुमुद्रं न सुह्वंन्तस्थिवा १ सम्। मुर्मृज्यन्ते द्वीपिनं मुफ्स्वंन्तः। उद्सावेतु सूर्यः। उदिदं मांमकं वर्चः। उदिहि देव सूर्य। सह वुगुना ममं। अहं वाचो विवाचनम्। मयि वागंस्त् धर्णसिः। यन्तुं नदयो वर्षन्तु पर्जन्यौः। सुपिप्पला ओषंधयो भवन्तु। अन्नंवतामोदनवंतामामिक्षंवताम्। एषा ४ राजां भूयासम्॥५८॥
स्वर्थायं त्वा स्वेन् द्योः सूर्य स्वर्भ ची-

ये केशिनंः प्रथमाः सुत्रमासंत। येभिराभृतं यदिदं विरोचंते। तेभ्यों जुहोमि बहुधा घृतेनं। रायस्पोषेणेमं वर्चसा स र सृंजाथ। नर्ते ब्रह्मणस्तपंसो विमोकः। द्विनाम्नी दीक्षा वृशिनी ह्यंग्रा। प्र केशाः सुवते काण्डिनो भवन्ति। तेषां ब्रह्मेदीशे वर्पनस्य नान्यः। आ रोह प्रोष्टं विषंहस्व शत्रून्। अवासाग्दीक्षा वृशिनी ह्यंग्रा॥५९॥

देहि दक्षिणां प्रतिरस्वायुः। अथांमुच्यस्व वर्रुणस्य पाशांत। येनावंपथ्सिवृता क्षुरेणं। सोमंस्य राज्ञो वर्रुणस्य विद्वान्। तेनं ब्रह्माणो वपतेदम्स्योर्जेमम्। रय्या वर्चसा सण् सृंजाथ। मा ते केशाननं गाद्वर्चं पृतत्। तथां धाता करोतु ते। तुभ्यमिन्द्रो बृहस्पतिः। सविता वर्च आदंधात्॥६०॥

तेभ्यों निधानं बहुधा व्यैच्छन्। अन्तरा द्यावापृथिवी अपः सुवंः। दर्भस्तम्बे वीर्यकृते निधायं। पौइस्येनेमं वर्चसा सहस्राज्ञथा बलं ते बाहुवोः संविता दंधातु। सोमंस्त्वाऽनक्तु पर्यसा घृतेनं। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौइस्येनेमं वर्चसा सहस्रेजाथ। यथ्सीमन्तं कङ्कतस्ते लिलेखं। यद्वौ क्षुरः परिववर्ज् वपइस्ते। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौइस्येनेम सहस्रोनेम सहस्राज्ञथा वीर्यण॥६१॥ अवांस्रान्था विश्वी हंप्राऽदंधाहुवर्ज् वपई स्ते हे वे॥ [१७]

इन्द्रं वै स्वाविशों मुरुतो नापांचायन्। सोऽनंपचाय्यमान एतं विघनमंपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजता तेनैवासान्तर सर्इ स्तम्भं व्यंहन्। यद्यहन्ं। तिद्वेघनस्यं विघनत्वम्। वि पाप्मानं भ्रातृंव्यर् हते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं

वेदं॥६२॥

य राजांनं विशो नाप्चायेयः। यो वा ब्राह्मणस्तमंसा पाप्मना प्रावृंतः स्यात्। स एतेनं यजेत। विघनेनैवैनंद्विहत्यं। विशामाधिपत्यं गच्छति। तस्य द्वे द्वांद्शे स्तोत्रे भवंतः। द्वे चंतुर्वि १ शे। औद्भिंद्यमेव तत्। एतद्वे क्षुत्रस्यौद्भिंद्यम्। यदंस्मै स्वाविशो बलि १ हर्रन्ति॥६३॥

हर्गन्त्यस्मै विशो बिलिम्। ऐन्मप्रतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं। प्रबाहुग्वा अग्रे क्षुत्राण्यातेपुः। तेषामिन्द्रः क्षुत्राण्यादेत्त। न वा इमानि क्षुत्राण्यंभूविन्निति। तन्नक्षेत्राणां नक्षत्रत्वम्। आ श्रेयंसो भ्रातृं व्यस्य तेजं इन्द्रियं देत्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥६४॥

तद्यथां हु वै संचिक्तिणौ कप्लंकावुपावंहितौ स्यातांम्। पृवमेतौ युग्मन्तौ स्तोमौं। अयुक्षु स्तोमेषु क्रियेते। पाप्मनो-ऽपंहत्यै। अपं पाप्मानं भ्रातृंव्य हते। य पृतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। तद्यथां हु वै सूंतग्रामण्यंः। पृवं छन्दा हिस। तेष्वसावांदित्यो बृंहतीर्भ्यूंढः॥६५॥

स्तोबृहतीषु स्तुवते स्तो बृहन्। प्रजयां पृशुभिरसानीत्येव। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तं वै क्षत्रं विशा। विशेवनं क्षत्रेण व्यतिषजति। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो वै ग्रांमणीः संजातैः। स्जातैरेवैनं व्यतिषजति। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो वै पुरुषः पाप्मभिः। व्यतिषक्ताभिरेवास्यं

पाप्मनों नुदते॥६६॥

वेद हर्रन्त्येनमेवं वेदाभ्यूंढः पाप्मभिरेकं च॥———[१८]

त्रिवृद्धदाँग्नेयाँ ऽग्निमुंखा ह्युद्धिर्यदाँग्नेय आँग्नेयो न वै सोमेंन् यो वै सोमेंन्य गोंसुवः सि्र्हें ऽभि प्रेहिं मित्रवर्धनः प्रजापंतिस्ता ओंद्नं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भ्यांनगस्त्योस्या जरांसस्तिष्ठा हरीं प्रजापंतिः पृश्च्याप्रोंऽयम्भिप्रेहिं वृत्रहन्तंमो ये केशिन् इन्द्रं वा अष्टादंश॥१८॥
त्रिवृद्धो वै सोमेनायुंरिस बहुर्भवित् तिष्ठा हरी्रथ् आयं भांतु तेभ्यों निधान् ए षट्थ्यष्टिः॥६६॥
त्रिवृत्याप्मनों नृदते॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

पीवौँन्ना रियृवधंः सुमेधाः। श्वेतः सिंपक्ति नियुतां-मिश्रीः। ते वायवे समंनसो वितंस्थः। विश्वेन्नरंः स्वपत्यानिं चक्रः। रायेऽनु यञ्जज्ञतू रोदंसी उभे। राये देवी धिषणां धाति देवम्। अधां वायुं नियुतंः सश्चत् स्वाः। उत श्वेतं वसुंधितिन्निरेके। आ वायो प्र याभिः। प्र वायुमच्छां बृह्ती मंनीषा॥१॥

बृहद्रीयं विश्ववाराः रथप्राम्। द्युतद्यांमा नियुतः पत्यंमानः। कविः कविमियक्षसि प्रयज्यो। आ नो नियुद्धिः शतिनीभिरध्वरम्। सहस्निणीभिरुपं याहि यज्ञम्। वायो अस्मिन् ह्विषिं मादयस्व। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जुहुमस्तं नो अस्तु॥२॥

वय स्याम् पत्यो रयीणाम्। रयीणां पतिं यज्तं बृहन्तम्। अस्मिन्भरे नृतमं वाजसातौ। प्रजापतिं प्रथम्जामृतस्य। यजाम देवमिधं नो ब्रवीतु। प्रजापते त्वन्निधिपाः पुराणः। देवानां पिता जनिता प्रजानाम्। पतिर्विश्वस्य जगेतः परस्पाः। हिवर्नो देव विह्वे जुंषस्व। तवेमे लोकाः प्रदिशो दिशंश्च॥३॥

प्रावतों निवतं उद्वतंश्च। प्रजांपते विश्वसृज्जीवधंन्य इदं

नो देव। प्रतिहर्य ह्व्यम्। प्रजापितिं प्रथमं यज्ञियांनाम्। देवानामग्रे यज्ञतं यंजध्वम्। स नो ददातु द्रविण १ सुवीर्यम्। रायस्पोषं वि ष्यंतु नाभिमस्मे। यो राय ईशे शतदाय उक्थ्यः। यः पंशूना १ रिक्षेता विष्ठितानाम्। प्रजापितिः प्रथम्जा ऋतस्यं॥४॥

स्हस्रंधामा जुषता हिवर्नः। सोमांपूषणेमौ देवौ। सोमांपूषणा रजंसो विमानम्। सप्तचंकु रथमविश्वमिन्वम्। विषूवृतं मनंसा युज्यमानम्। तं जिन्वथो वृषणा पश्चरिष्टमम्। दिव्यंन्यः सदंनं चक्र उच्चा। पृथिव्यामन्यो अध्यन्तरिक्षे। तावस्मभ्यं पुरुवारं पुरुक्षुम्। रायस्पोषं विष्यंतान्नाभिंमस्मे॥५॥

धियं पूषा जिन्वतु विश्वमिन्वः। र्यिश् सोमों रियपितिर्दधातु। अवंतु देव्यदितिरन्वां। बृहद्वंदेम विदर्थं सुवीराः। विश्वान्यन्यो भुवंना जजानं। विश्वमन्यो अभिचक्षांण एति। सोमांपूषणाववंतं धियं मे। युवभ्यां विश्वाः पृतंना जयेम। उद्तुन्तमं वंश्रणास्तंभ्राद्याम्। यत्किं चेदं कित्वासः। अवं ते हेड्स्तत्त्वां यामि। आदित्यानामवंसा न दक्षिणा। धारयंन्त आदित्यासंस्तिस्रो भूमीर्धारयन्। यज्ञो देवानाः शुचिर्पः॥६॥

ते शुक्रासः शुचंयो रश्मिवन्तंः। सीदंन्नादित्या अधिं

बर्हिषिं प्रिये। कामेंन देवाः स्रथंं दिवो नंः। आ याँन्तु यज्ञमुपं नो जुषाणाः। ते सूनवो अदितेः पीवसामिषम्ँ। घृतं पिन्वत्प्रतिहर्यन्नृतेजाः। प्र यज्ञिया यजमानाय येमुरे। आदित्याः कामंं पितुमन्तंम्स्मे। आ नंः पुत्रा अदितेर्यान्तु यज्ञम्। आदित्यासंः पथिभिर्देवयानैः॥७॥

अस्मे कामं दाश्षे सन्नमंन्तः। पुरोडाशं घृतवंन्तं ज्ञुषन्ताम्। स्कुभायत् निर्ऋति सेधृतामंतिम्। प्र रिश्मिभिर्यतमाना अमृध्राः। आदित्याः काम् प्रयंतां वर्षद्कृतिम्। ज्ञुषध्वं नो ह्व्यदांतिं यजत्राः। आदित्यान्काम्मवंसे हुवेम। ये भूतानिं जनयंन्तो विचिख्युः। सीदंन्तु पुत्रा अदितेरुपस्थम्। स्तीणं बर्हिर्हंविरद्यांय देवाः॥८॥

स्तीर्णं बर्हिः सींदता युज्ञे अस्मिन्। ध्राजाः सेधंन्तो अमंतिं दुरेवांम्। अस्मभ्यं पुत्रा अदितेः प्र यश्सत। आदित्याः कामं ह्विषो जुषाणाः। अग्ने नयं सुपर्था राये अस्मान्। विश्वानि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मञ्जंहुराणमेनः। भूयिष्ठान्ते नमं उक्तिं विधेम। प्र वंः शुक्रायं भानवे भरध्वम्। ह्व्यं मृतिं चाग्नये सुपूंतम्॥९॥

यो दैव्यांनि मानुषा जनूरषिं। अन्तर्विश्वांनि विद्मना जिगांति। अच्छा गिरों मृतयों देवयन्तीः। अग्निं यन्ति द्रविणं भिक्षंमाणाः। सुसन्दशर्र सुप्रतींक्र् स्वश्रम्॥ ह्व्यवाहंमर्तिं मानुंषाणाम्। अग्ने त्वम्स्मद्यंयोध्यमीवाः। अनिग्नित्रा अभ्यंमन्त कृष्टीः। पुनंर्स्मभ्य सुवितायं देव। क्षां विश्वंभिरजरंभिर्यजत्र॥१०॥

अग्ने त्वं पारया नव्यों अस्मान्। स्वस्तिभिरतिं दुर्गाणि विश्वां। पूश्चं पृथ्वी बंहुला नं उवीं। भवां तोकाय तनयाय शं योः। प्रकारवो मन्ना वच्यमानाः। देवद्रीचीं नयथ देवयन्तंः। दक्षिणावाङ्वाजिनी प्राच्येति। ह्विभरंन्त्यग्नये घृताचीं। इन्द्रं नरों युजे रथम्ं। जुगुभ्णाते दक्षिणिमन्द्र हस्तम्॥११॥

वस्यवो वस्पते वस्नाम्। विद्या हि त्वा गोपंति शर् गोनाम्। अस्मर्स्यं चित्रं वृषंण र रियन्दाः। तवेदं विश्वंम्भितः पश्व्यम्। यत्पश्यंसि चक्षंसा सूर्यस्य। गवांमसि गोपंतिरेकं इन्द्र। भक्षीमिहं ते प्रयंतस्य वस्वंः। सिनंद्र णो मनंसा नेषि गोभिः। सर सूरिभिर्मघवन्थ्स इस्वस्त्या। सं ब्रह्मंणा देवकृतं यदस्ति॥१२॥

सं देवाना रे सुमृत्या यृज्ञियांनाम्। आराच्छत्रुमपं बाधस्व दूरम्। उग्रो यः शम्बंः पुरुहूत तेनं। अस्मे धेहि यवंमुद्गोमंदिन्द्र। कुधीधियंं जिर्त्रे वाजंरलाम्। आ वेधस् सहि शुचिंः। बृह्स्पितिः प्रथमं जायंमानः। महो ज्योतिषः पर्मे व्योमन्। स्प्तास्यंस्तुविजातो रवेण। वि स्प्तरंश्मिरधम्त्तमा रेसि॥१३॥ बृह्स्पतिः समंजयद्वसूनि। महो व्रजान्गोमंतो देव एषः। अपः सिषांस्न्थ्सुव्रप्रतित्तः। बृह्स्पतिर्हन्त्यमित्रंमकैः। बृहंस्पते पर्येवा पित्रे। आ नो दिवः पावीरवी। इमा जुह्वांना यस्ते स्तनंः। सरंस्वत्यभि नो नेषि। इय शृष्मेभिर्बिस्खा इंवारुजत्। सानुं गिरीणां तंविषेभिरूर्मिभिः। पारावद्घ्रीमवंसे सुवृक्तिभिः। सरंस्वतीमा विवासेम धीतिभिः॥१४॥

सोमों धेनु सोमों अर्वन्तमाशुम्। सोमों वीरं केर्मण्यं ददातु। साद्वन्यं विद्थ्य समेयम्। पितुः श्रवंणं यो ददांशदस्मे। अषांढं युथ्सु त्व सोम ऋतुंभिः। या ते धामांनि ह्विषा यर्जन्ति। त्विममा ओषंधीः सोम विश्वाः। त्वमपो अंजनयस्त्वङ्गाः। त्वमातंतन्थोर्वन्तिरिक्षम्। त्वं ज्योतिंषा वि तमो ववर्थ॥१५॥

या ते धामांनि दिवि या पृंथिव्याम्। या पर्वतेष्वोषंधीष्वपस्। तेभिर्नो विश्वैः सुमना अहेंडन्। राजैन्थ्सोम् प्रति ह्व्या गृंभाय। विष्णोर्नुकं तदस्य प्रियम्। प्र तिद्वष्णुः। प्रो मात्रया तनुवां वृधान। न ते मिह्त्वमन्वंश्जुवन्ति। उभे ते विद्या रजंसी पृथिव्या विष्णों देव त्वम्। परमस्यं विथ्से॥१६॥

विचंक्रमे त्रिर्देवः। आ ते महो यो जात एव। अभि गोत्राणि। आभिः स्पृधीं मिथतीररिषण्यन्। अमित्रस्य व्यथया मृन्युमिन्द्र। आभिर्विश्वां अभियुजो विषूंचीः। आर्याय विशोवंतारीर्दासींः। अय शृंण्वे अध् जयंत्रुत घ्रन्। अयमुत प्र कृंणुते युधा गाः। यदा सृत्यं कृंणुते मन्युमिन्द्रंः॥१७॥

विश्वं दृढं भंयत् एजंदस्मात्। अनुं स्वधामंक्षर्न्नापों अस्य। अवर्धत् मध्य आ नाव्यांनाम्। सुधीचीनेन मनसा तिमेन्द्र ओजिष्ठेन। हन्मंनाहन्नुभिद्यून्। मुरुत्वंन्तं वृषुभं वांवृधानम्। अकंवारिं दिव्य शासिमन्द्रम्। विश्वासाह्मवेसे नूतंनाय। उग्र संहोदामिह त हंवेम। जिनेष्ठा उग्रः सहंसे तुरायं॥१८॥

मन्द्र ओजिष्ठो बहुलाभिमानः। अवधिन्निन्द्रं म्रुतंश्चिदत्रं। माता यद्वीरं द्धनृद्धनिष्ठा। क्रस्यावो मरुतः स्वधाऽऽसीत्। यन्मामेक समर्धत्ताहिहत्यै। अह इह्यंग्रस्तंविषस्तुविष्मान्। विश्वंस्य शत्रोरनंमं वध्स्रेः। वृत्रस्यं त्वा श्वसथा दीषंमाणाः। विश्वं देवा अंजहुर्ये सखायः। म्रुद्धिरिन्द्र सुख्यं ते अस्तु॥१९॥

अथेमा विश्वाः पृतंना जयासि। वधीं वृत्रं मंरुत इन्द्रियेणं। स्वेन भामेन तिवृषो बंभूवान्। अहमेता मनवे विश्वश्चंन्द्राः। सुगा अपश्चंकर् वर्ज्ञंबाहुः। स यो वृषा वृष्णियेभिः समोकाः। महो दिवः पृथिव्याश्चं सम्राट्। सतीनसंत्वा हव्यो भरेषु। मरुत्वां नो भवत्विन्द्रं ऊती। इन्द्रों वृत्रमंतरद्वृत्रतूर्ये॥२०॥ अनाधृष्यो मघवा शूर इन्द्रंः। अन्वेनं विशो अमदन्त पूर्वीः। अय राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। स एव वीरः स उ वीर्यावान्। स एकराजो जगंतः पर्स्पाः। यदा वृत्रमतंरच्छूर इन्द्रंः। अथांभवद्दमिताभिकंतूनाम्। इन्द्रो यज्ञं वर्धयंन्विश्ववेदाः। पुरोडाशंस्य जुषता रहिवर्नः। वृत्रं तीत्वां दान्वं वर्ज्रंबाहुः॥२१॥

दिशोंऽह ५ हृ ६ हृता ह ५ हंणेन। इमं यृज्ञं वर्धयंन्विश्व-वंदाः। पुरोडाशं प्रति गृभ्णात्विन्द्रः। यदा वृत्रमतंर्च्छूर् इन्द्रः। अथैकराजो अभवञ्जनानाम्। इन्द्रो देवाञ्छंम्बर्हत्यं आवत्। इन्द्रो देवानामभवत्पुरोगाः। इन्द्रो यृज्ञे हृविषां वावृधानः। वृत्रतूर्नो अभय १ शर्म य १ सत्। यः सप्त सिन्धू १ रदंधात्पृथिव्याम्। यः सप्त लोकानकृणोद्दिशंश्च। इन्द्रो हृविष्मान्थ्सगंणो मुरुद्धिः। वृत्रतूर्नो यृज्ञमिहोपं यासत्॥ २२॥

इन्द्रस्तरंस्वानिभगतिहोग्रः। हिरंण्यवाशीरिषिरः सुंवर्षाः। तस्यं वय १ सुंमृतौ यज्ञियंस्य। अपि भद्रे सौमन्से स्याम। हिरंण्यवर्णो अभयं कृणोतु। अभिमातिहेन्द्रः पृतंनासु जिष्णुः। स नः शर्म त्रिवरूथं वि य १ सत्। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। इन्द्र १ स्तुहि वृज्जिण् १ स्तोमंपृष्ठम्। पुरोडाशंस्य जुषता १ हृविर्नः॥२३॥ ह्त्वाऽभिमांतीः पृतंनाः सहंस्वान्। अथाभंयं कृणुहि विश्वतों नः। स्तुहि शूरं विज्ञिणमप्रंतीत्तम्। अभिमातिहनं पुरुह्तमिन्द्रम्। य एक इच्छुतपंतिर्जनंषु। तस्मा इन्द्रांय हिवरा जुंहोत। इन्द्रों देवानांमिध्पाः पुरोहितः। दिशां पितंरभवद्वाजिनीवान्। अभिमातिहा तिव्षस्तुविष्मान्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण रियन्दांत्॥२४॥

य इमे द्यावांपृथिवी मंहित्वा। बलेनाह रहिदिभमातिहेन्द्रंः। स नों हिवः प्रतिं गृभ्णातु रातयें। देवानां देवो निंधिपा नों अव्यात्। अनंवस्ते रथं वृष्णे यत्तें। इन्द्रंस्य नु वीर्याण्यहन्नहिम्। इन्द्रों यातोऽवंसितस्य राजां। शमंस्य च शृङ्गिणो वर्ज्ञंबाहुः। सेदु राजां क्षेति चर्षणीनाम्। अरान्न नेमिः परि ता बंभूव॥२५॥

अभि सिध्मो अंजिगादस्य शत्रून्। वितिग्मेनं वृष्भेणा पुरोभेत्। सं वर्ज्रेणासृजद्वृत्रमिन्द्रंः। प्र स्वां मृतिमंतिरुच्छाशंदानः। विष्णुं देवं वर्रुणमूतये भगम्। मेदंसा देवा वृपयां यजध्वम्। ता नो यज्ञमागंतं विश्वधंना। प्रजावंदस्मे द्रविणेह धंत्तम्। मेदंसा देवा वृपयां यजध्वम्। विष्णुं च देवं वर्रुणं च रातिम्॥२६॥

ता नो अमीवा अप बार्धमानौ। इमं यज्ञं जुषमाणावुपेतम्। विष्णूवरुणा युवमंध्वरायं नः। विशे जनाय महि शर्म यच्छतम्। दीर्घप्रयञ्ज्यू हुविषां वृधाना। ज्योतिषा-ऽरांतीर्दहत्न्तमा १सि। ययोरोजंसा स्कभिता रजा १सि। वीर्येभिर्वीरतंमा शविष्ठा। याऽपत्ये ते अप्रतीत्ता सहोभिः। विष्णूं अगुन्वरुणा पूर्वहूंतौ॥२७॥

विष्णूंवरुणाविभिशस्तिपावांम्। देवा यंजन्त ह्विषां घृतेनं। अपामीवा स्मेधत स्प्रसम्भ्रः। अथाधत्तं यजमानाय शं योः। अस्होमुचां वृष्मा सुप्रतूर्ती। देवानां देवतंमा शचिष्ठा। विष्णूंवरुणा प्रतिहर्यतन्नः। इदं नरा प्रयंतमूतये ह्विः। मही नु द्यावांपृथिवी इह ज्येष्ठें। रुचा भवता स् शुचयंद्भिर्कैः॥२८॥

यथ्सीं वरिष्ठे बृह्ती विमिन्वन्। नृवद्योक्षा पंप्रथानेभिरेवैंः। प्रपूर्वजे पितरा नव्यंसीभिः। गीर्भिः कृंणुध्व सदेने ऋतस्यं। आ नौ द्यावापृथिवी दैव्यंन। जनेन यातं मिहं वां वरूथम्। स इथ्स्वपा भुवंनेष्वास। य इमे द्यावांपृथिवी ज्जानं। उर्वी गंभीरे रजंसी सुमेकें। अव शो धीरः शच्या समैरत्॥२९॥

भूरिं द्वे अचंरन्ती चरंन्तम्। पृद्वन्तं गर्भम्पदीदधाते। नित्यं न सूनुं पित्रोरुपस्थैं। तं पिपृत र रोदसी सत्यवाचम्ं। इदं द्यांवापृथिवी सृत्यमंस्तु। पितृमांतृर्यदिहोपं ब्रुवे वाम्। भूतं देवानांमवमे अवोभिः। विद्यामेषं वृज्जनं जीरदांनुम्। उवीं पृथ्वी बहुले दूरे अन्ते। उपं ब्रुवे नमंसा युज्ञे अस्मिन्। दर्धाते ये सुभगं सुप्रतूर्ती। द्यावा रक्षंतं पृथिवी नो अभ्वांत्।

या जाता ओषंध्योऽति विश्वाः परिष्ठाः। या ओषंधयः सोमंराज्ञीरश्वावृती सोमवृतीम्। ओषंधीरितिं मातरोऽन्या वो अन्यामंवतु॥३०॥

हुविर्नो दाद्भभूव रातिं पूर्वहूंतावुकॅरैरदिस्मन्पश्चं च॥————[४]

शुचिं नु स्तोम् श्र्व्यद्वृत्तम्। उभा वांमिन्द्राग्नी प्र चंर्षणिभ्यः। आ वृत्तहणा गीर्भिर्विप्रः। ब्रह्मणस्पते त्वमस्य यन्ता। सूक्तस्यं बोधि तनयं च जिन्व। विश्वं तद्भद्रं यद्वन्तिं देवाः। बृहद्वंदेम विदथे सुवीराः। स ईंश् स्तयेभिः सर्विभिः शुचद्धिः। गोधायसं विधेन्सैरतर्दत्। ब्रह्मणस्पतिर्वृषंभिर्वराहैः॥३१॥

घर्मस्वेदेभिद्रविणं व्यानट्। ब्रह्मण्स्पतेरभवद्यथाव्शम्। सत्यो मन्युर्मिह् कर्मा करिष्यतः। यो गा उदाज्ञथ्स दिवे वि चाभजत्। महीवं रीतिः शवंसा सर्त्पृथंक्। इन्धानो अग्निं वंनवद्वनुष्यतः। कृतब्रह्मा शूशुवद्रातहं व्य इत्। जातेनं जातमित्सृत्प्र सृर्सते। यं यं युजं कृणुते ब्रह्मण्स्पतिः। ब्रह्मणस्पते सुयमंस्य विश्वहाँ॥३२॥

रायः स्यांम रथ्यो विवंस्वतः। वीरेषुं वीरा उपंपृिङ्गि नस्त्वम्। यदीशांनो ब्रह्मणा वेषिं मे हवम्। स इज्जनेन स विशा स जन्मना। स पुत्रैर्वाजं भरते धना नृभिः। देवानां यः पितरंमा विवासित। श्रद्धामना ह्विषा ब्रह्मणस्पतिम्। यास्ते पूषन्नावो अन्तः। शुक्रं ते अन्यत्पूषेमा आशाः। प्रपंथे

प्थामंजनिष्ट पूषा॥३३॥

प्रपंथे दिवः प्रपंथे पृथिव्याः। उमे अभि प्रियतंमे स्थस्थैं। आ च परां च चरित प्रजानन्। पूषा सुबन्धंर्दिव आ पृंथिव्याः। इडस्पितंम्घवां दस्मवंर्चाः। तं देवासो अदंदः सूर्यायैं। कामेन कृतं त्वस्कृ स्वश्रम्। अजाऽश्वः पशुपा वाजंबस्त्यः। धियं जिन्वो विश्वे भुवंने अपितः। अष्ट्रां पूषा शिंथिरामुद्धरींवृजत्॥३४॥

स्श्रक्षांणो भुवंना देव ईयते। शुचीं वो ह्व्या मंरुतः शुचींनाम्। शुचिर्ं हिनोम्यध्वर शुचिंभ्यः। ऋतेनं सत्यमृत्सापं आयन्। शुचिंजन्मानः शुचयः पावकाः। प्रचित्रमकं गृंणते तुरायं। मारुताय स्वतंवसे भरध्वम्। ये सहार्ंस् सहंसा सहंन्ते। रेजंते अग्ने पृथिवी मुखेभ्यः। अरुसेष्वा मंरुतः खादयों वः॥३५॥

वक्षंः सुरुका उपं शिश्रियाणाः। वि विद्युतो न वृष्टिभीं रुचानाः। अनुं स्वधामायुंधैर्यच्छंमानाः। या वः शर्मं शशमानाय सन्ति। त्रिधातूंनि दाशुषं यच्छताधि। अस्मभ्यं तानिं मरुतो वियन्त। र्यिं नो धत्त वृषणः सुवीरम्ं। इमे तुरं मुरुतो रामयन्ति। इमे सहः सहंस् आ नमन्ति। इमे शर्संवनुष्यतो नि पान्ति॥३६॥

गुरुद्वेषो अरंरुषे दधन्ति। अरा इवेदचंरमा अहंव। प्रप्रं

जायन्ते अर्कवा महोभिः। पृश्वेः पुत्रा उपमासो रभिष्ठाः। स्वयां मृत्या मृरुतः सं मिमिक्षः। अनुं ते दायि मृह इंन्द्रियायं। स्त्रा ते विश्वमनुं वृत्रहत्यें। अनुं क्षत्रमनु सहो यजत्र। इन्द्रं देवेभिरनुं ते नृषह्यें। य इन्द्रं शुष्मो मघवन्ते अस्ति॥३७॥

शिक्षा सर्खिभ्यः पुरुहूत नृभ्यः। त्व हि टुढा मघवन्विचेताः। अपावृधि परिवृतिं न राधः। इन्द्रो राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। अधिक्षमि विषुंरूपं यदस्ति। ततो ददातु दाशुषे वसूनि। चोद्द्राध उपस्तुतश्चिद्वांक्। तमुष्टुहि यो अभिभूत्योजाः। वन्वन्नवांतः पुरुहूत इन्द्रः। अषांढमुग्र हि सहंमानमाभिः॥३८॥

गीर्भिर्वर्ध वृष्मं चंर्षणीनाम्। स्थूरस्यं रायो बृंह्तो य ईशैं। तम् ष्टवाम विदथेष्विन्द्रम्। यो वायुना जयंति गोमंतीष्। प्र धृंष्णुया नंयति वस्यो अच्छं। आ ते शुष्मो वृष्म एतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तौत्। आ विश्वतो अभिसमैत्वर्वाङ्। इन्द्रं द्युम्न सुवंवद्धेह्यस्मे॥३९॥

आ देवो यांतु सिवता सुरत्नः। अन्तिरिक्षप्रा वहंमानो अश्वैः। हस्ते दर्धानो नर्या पुरूणि। निवेशयं च प्रसुवं च भूमं। अभीवृंतं कृशंनैर्विश्वरूपम्। हिरंण्यशम्यं यज्ततो बृहन्तम्। आस्थाद्रथर् सिवता चित्रभानुः। कृष्णा रजार्सि तिवेषीं दर्धानः। सर्घा नो देवः संविता सुवायं। आ

सांविषद्वसुंपतिर्वसूंनि॥४०॥

विश्रयंमाणो अमंतिमुरूचीम्। मूर्तभोजंनमधंरासतेन। विजनां ज्छावाः शिंतिपादों अख्यन्। रथ् हर्णयप्रउगं वहंन्तः। शश्वद्दिशंः सवितुर्दैव्यंस्य। उपस्थे विश्वा भुवंनानि तस्थः। वि सुंपूर्णो अन्तरिक्षाण्यख्यत्। गुभीरवेपा असुंरः सुनीथः। क्वेदानी सूर्यः कश्चिकत। कृतमान्द्या स्रिमरस्या त्तान॥४१॥

भगं धियं वाजयंन्तः पुरेन्धिम्। नराशश्सो ग्नास्पतिनीं अव्यात्। आ ये वामस्यं सङ्ग्थे रंयीणाम्। प्रिया देवस्यं सिवतः स्यांम। आ नो विश्वे अस्क्रांगमन्तु देवाः। मित्रो अर्थमा वरुणः सजोषाः। भुवन् यथां नो विश्वे वृधासः। करंन्थ्रमुषाहां विथुरं न शवंः। शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु। शश् सरंस्वती सह धीभिरंस्तु॥४२॥

शर्मभिषाचः शर्मु रातिषाचः। शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः। ये संवितः सत्यसंवस्य विश्वें। मित्रस्यं व्रते वर्रणस्य देवाः। ते सौभंगं वीरवद्गोमदप्रः। दधांतन् द्रविंणं चित्रम्समे। अग्ने याहि दूत्यं वारिषेण्यः। देवाः अच्छां ब्रह्मकृतां गणेनं। सर्रस्वतीं मुरुतों अश्विनापः। यक्षि देवानंब्रधेयांय विश्वान्॥४३॥

द्यौः पिंतुः पृथिवि मात्रधूंक्। अग्नै भ्रातर्वसवो मृडतां नः। विश्वं आदित्या अदिते सजोषौः। अस्मभ्य शर्म बहुलं वि यंन्त। विश्वं देवाः शृणुतेम॰ हवं मे। ये अन्तरिक्षे य उप द्यवि ष्ठ। ये अग्निजिह्वा उत वा यजंत्राः। आसद्यास्मिन्बर्हिषं मादयध्वम्। आ वां मित्रावरुणा हव्यजुंष्टिम्। नमंसा देवाववंसाऽऽववृत्याम्॥४४॥

अस्माकं ब्रह्म पृतेनासु सह्या अस्माकम्। वृष्टिर्दिव्या सुंपारा। युवं वस्त्राणि पीवसा वंसाथे। युवोरिच्छंद्रा मन्तेवो ह सर्गाः। अवांतिरतमनृतानि विश्वाः। ऋतेनं मित्रावरुणा सचेथे। तथ्सु वां मित्रावरुणा महित्वम्। ईमा तस्थुषीरहंभिदुंदुह्ने। विश्वाः पिन्वथ् स्वसंरस्य धेनाः। अनुं वामेकः पविरा वंवर्ति॥४५॥

यद्व १ हिष्ठन्नाति विदे सुदान्। अच्छिंद्र १ शर्म भुवंनस्य गोपा। ततों नो मित्रावरुणाववीष्टम्। सिषांसन्तो जीग्वा १ संः स्याम। आ नो मित्रावरुणा ह्व्यदांतिम्। घृतैर्गव्यूंतिमुक्षत्मिडांभिः। प्रतिं वामत्र वर्मा जनांय। पृणीतमुद्रो दिव्यस्य चारौंः। प्र बाहवां सिसृतं जीवसे नः। आ नो गव्यूंतिमुक्षतं घृतेनं॥ ४६॥

आ नो जनें श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इमा रुद्रायं स्थिरधंन्वने गिरः। क्षिप्रेषंवे देवायं स्वधाम्नें। अषांढाय सहंमानाय मीढुषें। तिग्मायंधाय भरता शृणोतंन। त्वादंत्तेभी रुद्र शन्तंमेभिः। शृत हिमां अशीय भेषुजेभिः। व्यस्मद्वेषो वित्रं व्यश्हेः। व्यमीवाङ्श्वातयस्वा विषूचीः॥४७॥

अर्हंन्बिभर्षि मा नंस्तोके। आ ते पितर्मरुता समुम्रेतु। मा नः सूर्यस्य स्न्हशो युयोथाः। अभि नो वीरो अर्वति क्षमेत। प्र जायमिह रुद्र प्रजाभिः। एवा बंभ्रो वृषभ चेकितान। यथां देव न हंणी्षे न ह स्सिं। हावनश्रूनों रुद्रेह बोधि। बृहद्वंदेम विदथे सुवीराः। परिं णो रुद्रस्यं हेतिः स्तुहि श्रुतम्। मीढुंष्टमार्हंन्बिभर्षि। त्वमंग्ने रुद्र आ वो राजानम्॥४८॥ वस्ति ततानस् विश्वतं ववति पूर्तेन विष्की श्रुतके वं ———[६]

सूर्यो देवीमुषस् रोचंमानामर्यः। न योषांमभ्येति पृश्चात्। यत्रा नरो देवयन्तो युगानि। वितन्वते प्रति भद्रायं भद्रम्। भद्रा अश्वां हरितः सूर्यंस्य। चित्रा एदंग्वा अनुमाद्यांसः। नमस्यन्तो दिव आ पृष्ठमंस्थः। परि द्यावांपृथिवी यंन्ति सद्यः। तथ्सूर्यस्य देवत्वं तन्मंहित्वम्। मुध्या कर्तोर्वितंत् रू सञ्जंभार॥४९॥

यदेदयंक्त हिरतंः सधस्थांत्। आद्रात्री वासंस्तनुते सिमस्मैं। तिन्मित्रस्य वर्णणस्याभिचक्षें। सूर्यो रूपं कृणते द्योरुपस्थें। अनुन्तमृन्यद्रुशंदस्य पार्जः। कृष्णमृन्यद्धरितः सं भेरन्ति। अद्या देवा उदिता सूर्यस्य। निर॰हंसः पिपृतान्निरंवद्यात्। तन्नो मित्रो वर्रणो मामहन्ताम्। अदितिः

सिन्धुं: पृथिवी उत द्यौ:॥५०॥

दिवो रुका उरुचक्षा उदिति। दूरे अर्थस्तरणिभ्रजिमानः।
नूनं जनाः सूर्येण प्रसूताः। आयन्नर्थानि कृणवन्नपार्शसे। शं
नो भव चक्षेसा शं नो अहाँ। शं भानुना शर हिमा शं घृणेने।
यथा शम्समै शमसंदुरोणे। तथ्सूर्य द्रविणं धेहि चित्रम्। चित्रं
देवानामुदंगादनीकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः॥५१॥

आप्रा द्यावांपृथिवी अन्तिरिक्षम्। सूर्यं आत्मा जगंतस्त्स्थुषंश्च। त्वष्टा दध्तन्नंस्तुरीपम्। त्वष्टां वीरं पिशङ्गंरूपः। दश्मन्त्वष्टुंर्जनयन्त् गर्भम्। अतंन्द्रासो युवतयो बिभेर्त्रम्। तिग्मानींक्ड् स्वयंशसं जनेषु। विरोचंमानं परिषीन्नयन्ति। आविष्ट्यों वर्धते चारुंरासु। जिह्मानांमूर्ध्वस्वयंशा उपस्थे॥५२॥

उभे त्वष्टुंर्बिभ्यतुर्जायंमानात्। प्रतीची सि॰्हं प्रति-जोषयेते। मित्रो जनान्त्र स मित्र। अयं मित्रो नंमस्यंः सुशेवंः। राजां सुक्षत्रो अंजिनष्ट वेधाः। तस्यं वय॰ सुमृतौ युज्ञियंस्य। अपि भुद्रे सौमनुसे स्यांम। अनुमीवास् इडंया मदंन्तः। मितज्मंवो वरिमन्ना पृथिव्याः। आदित्यस्यं वृतम्पृक्ष्यन्तंः॥५३॥

वयं मित्रस्यं सुमृतौ स्यांम। मित्रं न ई१ शिम्या गोषुं गृव्यवंत्। स्वाधियों विदथें अपस्वजीजनन्। अरेजयता ५ रोदंसी पाजंसा गिरा। प्रतिं प्रियं यंजतं जनुषामवंः। महा१ आंदित्यो नर्मसोप्सर्यः। यात्यज्ञंनो गृण्ते सुशेवंः। तस्मां एतत्पन्यंतमाय जुष्टम्। अग्नौ मित्रायं ह्विरा जुंहोत। आ वार रथो रोदंसी बद्धधानः॥५४॥

हिर्ण्ययो वृषंभिर्यात्वश्वैः। घृतवंतिनः प्विभीरुचानः। इषां वोढा नृपतिर्वाजिनीवान्। स पंप्रथानो अभि पश्च भूमं। त्रिवन्धुरो मन्साऽऽयांतु युक्तः। विशो येन गच्छंथो देवयन्तीः। कुत्रां चिद्यामंमिश्वना दर्धाना। स्वश्वां यशसा-ऽऽयांतम्वांक्। दस्रां निधिं मधुमन्तं पिबाथः। वि वार् रथों वध्वां यादंमानः॥५५॥

अन्तान्दिवो बांधते वर्तनिभ्याम्। युवोः श्रियं परि योषांवृणीत। सूरों दृहिता परितिक्सयायाम्। यद्देवयन्तमवंथः शचींभिः। परिघ्रष्ट्रं सवां मनांवां वयोगाम्। यो ह्स्यवार्षं रथिरावस्तं उस्राः। रथो युजानः परियातिं वर्तिः। तेनं नः शं योरुषसो व्युष्टौ। न्यंश्विना वहतं युज्ञे अस्मिन्। युवं भुज्युमवंविद्धं समुद्रे॥५६॥

उदूंहथुरणंसो अस्रिधानैः। प्तित्रिभिरश्रमैरंव्यथिभिः। दुर्सनांभिरिश्वना पारयंन्ता। अग्नीषोमा यो अद्य वाँम्। इदं वर्चः सप्यितिं। तस्मै धत्तर सुवीर्यम्। गवां पोष्ड् स्विश्वयम्। यो अग्नीषोमां ह्विषां सप्यात्। देवद्रीचा मनसा यो घृतेनं। तस्यं व्रतर रक्षतं पातमरहंसः॥५७॥ विशे जनांय मिह् शर्म यच्छतम्। अग्नीषोमा य आहुंतिम्। यो वां दाशाँ खुविष्कृंतिम्। स प्रजयां सुवीर्यम्। विश्वमायुर्व्यश्चवत्। अग्नीषोमा चेति तद्वीर्यं वाम्। यदमुंष्णीतमवसं पणिङ्गोः। अवांतिरतं प्रथंयस्य शेषंः। अविंन्दतं ज्योतिरेकं बहुभ्यंः। अग्नीषोमाविम स् स्मेऽग्नीषोमा हविषः प्रस्थितस्य॥५८॥

जुभारु द्यौरुग्नेरुपस्थं उपुक्ष्यन्तों बद्वधानो बुध्वां यार्दमानः समुद्रेऽ१हंसः प्रस्थितस्य॥————[७]

अहमंस्मि प्रथम्जा ऋतस्यं। पूर्वं देवेभ्यां अमृतंस्य नाभिः। यो मा ददांति स इदेव माऽऽवाः। अहमन्नमन्नं-मदन्तंमिद्मा। पूर्वमग्नेरिपं दहृत्यन्नम्। यृत्तौ हांसाते अहमुत्तरेषुं। व्यात्तंमस्य पृश्चवंः सुजम्भम्। पश्यंन्ति धीराः प्रचंरन्ति पाकाः। जहाँम्यन्यन्न जंहाम्यन्यम्। अहमन्नं वश्मिचरामि॥५९॥

समानमर्थं पर्येमि भुञ्जत्। को मामन्नं मनुष्यो दयेत। पराके अन्नं निहितं लोक एतत्। विश्वैदिंवैः पितृभिर्गृप्तमन्नम्। यद्द्यते लुप्यते यत्परोप्यते। शृत्तमी सा तनूमें बभूव। महान्तौ चरू संकृद्दुग्धेनं पप्रौ। दिवं च पृश्चिं पृथिवीं चं साकम्। तथ्सम्पिबंन्तो न मिनन्ति वेधसंः। नैतद्भयो भवंति नो कनीयः॥६०॥

अर्न्न प्राणमन्नमपानमांहुः। अर्न्न मृत्युं तम् जीवातुंमाहुः।

अन्नं ब्रह्माणों जरसं वदन्ति। अन्नमाहुः प्रजनंनं प्रजानाम्। मोघमन्नं विन्दते अप्रचेताः। सत्यं ब्रंवीमि वध इथ्स तस्यं। नार्यमणुं पुर्ष्यति नो सर्खायम्। केवंलाघो भवति केवलादी। अहं मेघः स्तुनयुन्वर्षंन्नस्मि। मामंदन्त्यहमंद्रयुन्यान्॥६१॥

अह सद्मृतों भवामि। मदांदित्या अधि सर्वे तपन्ति। देवीं वार्चमजनयन्त् यद्वाग्वदंन्ती। अनुन्तामन्तादधि निर्मितां महीम्। यस्यां देवा अंदधुर्भोजंनानि। एकांक्षरां द्विपदा पदंदां च। वार्चं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वार्चं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वार्चं पश्वां पश्वां मनुष्याः। वार्चीमा विश्वा भुवंनान्यर्पिता॥६२॥

सा नो हवं जुषतामिन्द्रंपत्नी। वागृक्षरं प्रथम्जा ऋतस्यं। वेदानां माताऽमृतंस्य नाभिः। सा नो जुषाणोपं यज्ञमागाँत्। अवन्ती देवी सुहवां मे अस्तु। यामृषंयो मञ्जकृतों मनीषिणः। अन्वैच्छं देवास्तपंसा श्रमेण। तान्देवीं वाच र् ह्विषां यजामहे। सा नो दधातु सुकृतस्यं लोके। चृत्वारि वाक्परिमिता पदानिं॥६३॥

तानि विदुर्बाह्मणा ये मंनीषिणंः। गुहा त्रीणि निहिंता नेङ्गंयन्ति। तुरीयं वाचो मंनुष्यां वदन्ति। श्रृद्धयाऽग्निः समिध्यते। श्रुद्धयां विन्दते ह्विः। श्रुद्धां भगंस्य मूर्धनिं। वचुसा वेदयामसि। प्रियक् श्रेद्धे ददंतः। प्रियक् श्रेद्धे

दिदांसतः। प्रियं भोजेषु यज्वंसु॥६४॥

इदं में उदितं कृषि। यथां देवा असुरेषु। श्रद्धामुग्रेषुं चित्रेरे। एवं भोजेषु यज्वंसु। अस्माकंमुदितं कृषि। श्रद्धां देवा यजमानाः। वायुगोपा उपांसते। श्रद्धाः हंद्य्यंया-ऽऽकूत्या। श्रद्धयां ह्यते हिवः। श्रद्धां प्रातर्हंवामहे॥६५॥

श्रृद्धां मध्यन्दिनं परि। श्रृद्धाः सूर्यस्य निम्नुचि। श्रद्धे श्रद्धांपयेह मा। श्रृद्धा देवानिधं वस्ते। श्रृद्धा विश्वमिदं जगंत्। श्रृद्धां कामस्य मातरम्। हृविषां वर्धयामिस। ब्रह्मं जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात। वि सीमृतः सुरुचो वेन आवः। स बुिध्रयां उप मा अस्य विष्ठाः॥६६॥

सृतश्च योनिमसंतश्च विवः। पिता विराजांमृष्भो रयीणाम्। अन्तरिक्षं विश्वरूप् आविवेश। तमकैर्भ्यंचिन्त वृथ्सम्। ब्रह्म सन्तं ब्रह्मणा वृधयंन्तः। ब्रह्मं देवानंजनयत्। ब्रह्म विश्वंमिदं जगत्। ब्रह्मणः क्षत्रं निर्मितम्। ब्रह्मं ब्राह्मण आत्मना। अन्तरंस्मित्रिमे लोकाः॥६७॥

अन्तर्विश्वंमिदं जगंत्। ब्रह्मैव भूतानां ज्येष्ठम्ं। तेन् कोऽर्हित् स्पर्धितुम्। ब्रह्मेन्देवास्त्रयंस्त्रि॰शत्। ब्रह्मेन्निन्द्रप्रजापती। ब्रह्मेन् ह् विश्वां भूतानि। नावीवान्तः स्माहिता। चतस्त्र आशाः प्रचरन्त्वग्नयः। इमं नो यज्ञं नयतु प्रजानन्। घृतं पिन्वंन्नजर्॰ सुवीरम्ं॥६८॥ ब्रह्मं स्मिद्धंवत्याहुंतीनाम्। आ गावों अग्मत्रुत भ्द्रमंक्रन्। सीदंन्तु गोष्ठे रणयंन्त्वस्मे। प्रजावंतीः पुरुरूपां इह स्युः। इन्द्रांय पूर्वीरुषसो दुहानाः। इन्द्रो यज्वंने पृण्ते चं शिक्षति। उपेद्दंदाति न स्वं मुंषायति। भूयोभूयो र्यिमिदंस्य वर्धयन्। अभिन्ने खिल्ले नि दंधाति देवयुम्। न ता नंशन्ति न ता अर्वा॥६९॥

गावो भगो गाव इन्द्रों मे अच्छात्। गावः सोमंस्य प्रथमस्य भृक्षः। इमा या गावः सर्जनास् इन्द्रंः। इच्छामीद्धृदा मनसा चिदिन्द्रम्। यूयं गांवो मेदयथा कृशं चित्। अश्लीलं चित्कृणुथा सुप्रतीकम्। भृद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचः। बृहद्वो वयं उच्यते सभासुं। प्रजावंतोः सूयवंस रिशन्तीः। शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबन्तीः। मा वः स्तेन ईशत माऽघशर्सः। परि वो हेती रुद्रस्यं वृञ्च्यात्। उपेदमुपपर्चनम्। आसु गोषूपंपृच्यताम्। उपंर्षभस्य रेतिस। उपेन्द्र तवं वीर्ये॥७०॥ च्याम कन्तिया प्रवान यव्वस हवामहे विष्ठा लोकः सुवीयम्व प्रवंत प्रवान [८]

ता सूँर्याचन्द्रमसां विश्वभृत्तंमा महत्। तेजो वसुंमद्राजतो दिवि। सामात्माना चरतः सामचारिणां। ययोंर्वृतं न मुमे जातुं देवयोंः। उभावन्तौ परि यात् अर्म्यां। दिवो न र्ष्ट्मी इस्तंनुतो व्यंर्ण्वे। उभा भुंवन्ती भुवंना क्विकंत्। सूर्या न चन्द्रा चंरतो हुतामंती। पतीं द्युमिद्वंश्वविदां उभा दिवः। सूर्या उभा चन्द्रमंसा विचक्षणा॥ ७१॥

विश्ववारा वरिवोभा वरेण्या। ता नोंऽवतं मित्मन्ता मिहिंवता। विश्ववपंरी प्रतरंणा तर्न्ता। सुवर्विदां दृशये भूरिंरश्मी। सूर्या हि चन्द्रा वस् त्वेषदंर्शता। मनस्विनोभानंचरतोनु सन्दिवम्। अस्य श्रवो नद्याः सप्त विश्वति। द्यावा क्षामां पृथिवी दंर्शतं वपुः। अस्म सूर्याचन्द्रमसांऽभिचक्षे। श्रद्धेकिमेन्द्र चरतो विचर्तुरम्॥७२॥

पूर्वाप्रं चंरतो माययैतौ। शिशू क्रीडंन्तौ परिं यातो अध्वरम्। विश्वान्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टें। ऋतून्न्यो विदधंज्ञायते पुनंः। हिरंण्यवर्णाः शुचंयः पावका यासाः राजां। यासां देवाः शिवेनं मा चक्षुंषा पश्यत। आपो भूद्रा आदित्पंश्यामि। नासंदासीन्नो सदांसीत्तदानींम्। नासीद्रजो नो व्योमा पुरो यत्। किमावंरीवः कुह कस्य शर्मन्॥७३॥

अम्भः किर्मासीद्गहेनं गभीरम्। न मृत्युर्मृतं तर्हि न। रात्रिया अह्रं आसीत्प्रकेतः। आनीदवातः स्वधया तदेकम्। तस्माँ द्धान्यं न पुरः किश्चनासं। तमं आसीत्तमंसा गूढमग्रे प्रकेतम्। स्रिल्रं सर्वमा इदम्। तुच्छेनाभ्विपिहितं यदासीत्। तमंस्रतन्महिना जांयतैकम्। कामस्तदग्रे समंवर्तताधि॥७४॥

मनंसो रेतः प्रथमं यदासींत्। स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। तिर्श्वीनो वितंतो र्श्मिरंषाम्। अधः स्विंदासी(३)दुपरिं स्विदासी(३)त्। रेतोधा आंसन्मिह्मानं आसन्। स्वधा अवस्तात्प्रयंतिः प्रस्तात्। को अद्धा वेंद् क इह प्र वोंचत्। कुत् आजांता कुतं इयं विसृष्टिः। अविग्देवा अस्य विसर्जनाय॥७५॥

अथा को वेद यतं आब्भूवं। इयं विसृष्टिर्यतं आब्भूवं। यदिं वा द्धे यदिं वा न। यो अस्याध्यंक्षः पर्मे व्योमन्। सो अङ्ग वेद यदिं वा न वेदं। किङ्स्विद्वनङ्क उ स वृक्ष आंसीत्। यतो द्यावांपृथिवी निष्टतृक्षुः। मनीषिणो मनसा पृच्छतेदुतत्। यद्ध्यतिष्टद्भुवंनानि धारयन्। ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्॥ ७६॥

यतो द्यावांपृथिवी निष्टतक्षुः। मनींषिणो मनसा विब्रंवीमि वः। ब्रह्माध्यतिष्ठद्भुवंनानि धारयन्। प्रातरिग्नं प्रातरिन्द्र रे हवामहे। प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरिश्वनां। प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिम्। प्रातः सोममुत रुद्र हुवेम। प्रातर्जितं भगमुग्र हुवेम। व्यं पुत्रमिदंतेर्यो विधर्ता। आधिश्वद्यं मन्यमानस्तुरिश्चेत्॥७७॥

राजां चिद्यं भगंं भृक्षीत्याहं। भग् प्रणेतुर्भग् सत्यंराधः। भगेमां धियमुदंव ददंत्रः। भग् प्रणों जनय गोभिरश्वैः। भग् प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम। उतेदानीं भगंवन्तः स्याम। उत प्रपित्व उत मध्ये अह्नौम्। उतोदिता मघवन्थ्सूर्यस्य। व्यं देवाना र सुमृतौ स्याम। भगं एव भगंवार अस्तु देवाः॥७८॥

तेनं वयं भगवन्तः स्याम। तं त्वां भगु सर्व इञ्जोहवीमि। स

नो भग पुर एता भेवेह। समेध्वरायोषसो नमन्त। द्धिकावेव शुचेये प्दायं। अर्वाचीनं वस्वविदं भगं नः। रथेमिवाश्वां वाजिन आवंहन्तु। अश्वांवतीर्गोमतीर्न उषासंः। वीरवंतीः सदंमुच्छन्तु भुद्राः। घृतं दुहांना विश्वतः प्रपीनाः। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥७९॥

विच्रुक्षणा विंचर्तुरः शर्मुत्रिथे विसर्जनाय ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्तुरिश्चिदेवाः प्रपीना एकं च॥———[९] पीवौत्रान्ते शुक्रासः सोमों धेनुमिन्द्रस्तरंस्वाञ्छुचिमा देवो यांतु स्यौं देवीमहर्मिस्म ता सूँर्याचन्द्रमसा नवं॥९॥ पीवौत्रामग्ने त्वं पारयानाधृष्यः शुचिं नु विश्रयंमाणो दिवो कृक्मोऽत्रं प्राणमत्रन्ता सूँर्याचन्द्रमसा नवंसप्ततिः॥७९॥ पीवौत्रां यूयं पात स्वुस्तिभिः सर्वा नः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टकम् ३॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अग्निर्नः पातु कृत्तिंकाः। नक्षेत्रं देविमिन्द्रियम्। इदमासां विचक्षणम्। ह्विरासं जुंहोतन। यस्य भान्ति रश्मयो यस्यं केतवः। यस्येमा विश्वा भुवनानि सर्वां। स कृत्तिंकाभि-रिभसंवसानः। अग्निर्नो देवः सुंविते देधातु। प्रजापंते रोहिणी वेतु पत्नीं। विश्वरूपा बृह्ती चित्रभानुः॥१॥

सा नो यज्ञस्यं सुविते दंधातु। यथा जीवेम श्ररदः सवीराः। रोहिणी देव्युदंगात्पुरस्तात्। विश्वां रूपाणि प्रतिमोदंमाना। प्रजापंति १ ह्विषां वर्धयंन्ती। प्रिया देवानामुपंयातु यज्ञम्। सोमो राजां मृगशीर्षेण आगन्। शिवं नक्षेत्रं प्रियमंस्य धामं। आप्यायंमानो बहुधा जनेषु। रेतः प्रजां यजंमाने दधातु॥२॥

यत्ते नक्षेत्रं मृगशीर्षमस्ति। प्रिय राजन् प्रियतंमं प्रियाणांम्। तस्मै ते सोम ह्विषां विधेम। शं नं एधि द्विपदे शं चतुंष्पदे। आईयां रुद्रः प्रथंमा न एति। श्रेष्ठों देवानां पतिरिष्ट्रियानांम्। नक्षेत्रमस्य ह्विषां विधेम। मा नंः प्रजा रिरिष्नमोत वीरान्। हेती रुद्रस्य परिं णो वृणक्तु। आईरा नक्षेत्रं जुषता हिवर्नः॥३॥

प्रमुश्रमांनौ दुरितानि विश्वां। अपाघश र सन्नुदतामरांतिम्।

पुनर्नो देव्यदितिः स्पृणोतु। पुनर्वसू नः पुनरेतां यज्ञम्। पुनर्नो देवा अभियन्तु सर्वे। पुनः पुनर्वो ह्विषां यजामः। एवा न देव्यदितिरन्वा। विश्वस्य भूत्री जगेतः प्रतिष्ठा। पुनर्वसू हविषां वर्धयन्ती। प्रियं देवानामप्येतु पार्थः॥४॥

बृह्स्पतिः प्रथमं जायंमानः। तिष्यं नक्षंत्रम्भि सम्बंभूव। श्रेष्ठो देवानां पृतंनासु जिष्णुः। दिशोऽनु सर्वा अभयं नो अस्तु। तिष्यः पुरस्तांदुत मध्यतो नः। बृह्स्पतिर्नः परि पातु पश्चात्। बाधेतां द्वेषो अभयं कृणुताम्। सुवीर्यस्य पत्यः स्याम। इद स्पेभ्यो ह्विरंस्तु जुष्टम्। आश्रेषा येषांमनुयन्ति चेतः॥५॥

ये अन्तिरक्षं पृथिवीं क्षियन्तिं। ते नेः सूर्पासो हवमागिमिष्ठाः। ये रोचने सूर्यस्यापि सूर्पाः। ये दिवं देवीमनुं स्थ्ररन्ति। येषांमाश्रेषा अनुयन्ति कामम्। तेभ्यः सूर्पभ्यो मध्मञ्जहोमि। उपहूताः पितरो ये मुघासुं। मनोजवसः सुकृतः सुकृत्याः। ते नो नक्षेत्रे हवमागिमिष्ठाः। स्वधाभिर्यज्ञं प्रयंतं जुषन्ताम्॥६॥

ये अंग्निद्ग्धा येऽनंग्निदग्धाः। येऽमुं लोकं पितरंः क्षियन्ति। याङ्श्चं विद्य याः उं च न प्रविद्य। मघासुं यज्ञः सुकृतं जुषन्ताम्। गवां पितः फल्गुंनीनामिस् त्वम्। तदर्यमन्वरुणमित्र चारुं। तं त्वां वयः संनितारः सनीनाम्। जीवा जीवन्तमुप संविशेम। येनेमा विश्वा भुवनानि सर्ञिता। यस्यं देवा अनु सं यन्ति चेतः॥७॥

अर्यमा राजाऽजर्स्तुविष्मान्। फल्गुंनीनामृष्भो रोरवीति। श्रेष्ठो देवानां भगवो भगासि। तत्त्वां विदुः फल्गुंनीस्तस्यं वित्तात्। अस्मभ्यं क्षुत्रमुजर्रं सुवीर्यम्। गोमदश्वंवदुप सन्नुंदेह। भगों ह दाता भग इत्प्रंदाता। भगों देवीः फल्गुंनीरा विवेश। भगस्येत्तं प्रंसुवं गंमेम। यत्रं देवैः संधुमादं मदेम॥८॥

आयांतु देवः संवितोपंयातु। हिर्ण्ययंन सुवृता रथेन। वहुन् हस्तर् सुभगं विद्यनापंसम्। प्रयच्छंन्तं पपंरिं पुण्यमच्छं। हस्तः प्रयंच्छत्वमृतं वसीयः। दक्षिणेन् प्रति-गृभ्णीम एनत्। दातारंम् संविता विदेय। यो नो हस्तांय प्रसुवाति यज्ञम्। त्वष्टा नक्षंत्रम्भ्येति चित्राम्। सुभ र संसं युवति रोचंमानाम्॥९॥

निवेशयंत्रमृतान्मर्त्या ईश्च। रूपाणि पि श्वन् भुवंनानि विश्वा। तत्रस्त्वष्टा तदुं चित्रा विचंष्टाम्। तत्रक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तत्रः प्रजां वीरवंती स् सनोतु। गोभिनीं अश्वेः समनक्तु यज्ञम्। वायुर्नक्षंत्रमभ्येति निष्ट्याम्। तिग्मर्श्वज्ञो वृष्भो रोरुवाणः। समीरयन् भुवंना मात्रिश्वा। अप् द्वेषा स्सि नुदतामरांतीः॥१०॥

तन्नो वायुस्तदु निष्ट्यां शृणोतु। तन्नक्षंत्रं भूरिदा अस्तु मह्मम्। तन्नो देवासो अनुंजानन्तु कामम्। यथा तरेम दुरितानि विश्वां। दूरम्समच्छत्रं वो यन्तु भीताः। तदिन्द्राग्नी कृणतां तद्विशांखे। तन्नों देवा अनुमदन्तु यज्ञम्। पृश्चात् पुरस्तादभंयं नो अस्तु। नक्षंत्राणामधिपत्नी विशांखे। श्रेष्ठांविन्द्राग्नी भुवंनस्य गोपौ॥११॥

विषूचः शत्रूंनप् बाधंमानौ। अप् क्षुधं नुदतामरांतिम्। पूर्णा पृश्चादुत पूर्णा पुरस्तात्। उन्मंध्यतः पौर्णमासी जिंगाय। तस्यां देवा अधि संवसंन्तः। उत्तमे नाकं इह मांदयन्ताम्। पृथ्वी सुवर्चा युवतिः स्जोषाः। पौर्णमास्युदंगाच्छोभंमाना। आप्याययंन्ती दुरितानि विश्वां। उरुं दुहां यजंमानाय यज्ञम्॥१२॥

चित्रभांनुर्यजमाने दधातु हविर्नुः पाथुश्चेतों जुषन्ताश्चेतों मदेम् रोचमानामरातीर्गोपौ युज्ञम्॥—————[१]

ऋखास्मं ह्व्यैर्नमंसोप्सद्यं। मित्रं देवं मित्र्धेयं नो अस्तु। अनूराधान् ह्विषां वर्धयन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः सवीराः। चित्रं नक्षेत्रमुदंगात्पुरस्तात्। अनूराधास् इति यद्वदंन्ति। तिम्त्र एति पृथिभिदेवयानैः। हिर्ण्ययैर्वितंतैर्न्तरिक्षे। इन्द्रौ ज्येष्ठामन् नक्षेत्रमेति। यस्मिन्वृत्रं वृत्रुतूर्ये तृतार्ग॥१३॥

तस्मिन्वयम्मृतं दुहानाः। क्षुधं तरेम् दुरितिं दुरिष्टिम्। पुर्न्दरायं वृष्भायं धृष्णवें। अषांढाय सहंमानाय मीढुषें। इन्द्राय ज्येष्ठा मधुम्दुहाना। उरुं कृणोतु यर्जमानाय लोकम्। मूलं प्रजां वीरवंतीं विदेय। पराँच्येतु निर्ऋतिः पराचा। गोभिर्नक्षेत्रं पृशुभिः समंक्तम्। अहंभूयाद्यर्जमानाय

मह्यम्ं॥१४॥

अहंनी अद्य सुंवित दंधातु। मूलं नक्षंत्रमिति यद्वदंन्ति। परांचीं वाचा निर्ऋतिं नुदामि। शिवं प्रजाये शिवमंस्तु मह्मम्। या दिव्या आपः पर्यंसा सम्बभूवः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। यासांमषाढा अनुयन्ति कामम्। ता न आपः शङ् स्योना भंवन्तु। याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैशन्तीरुत प्रांस्चीर्याः॥१५॥

यासांमषाढा मधुं भृक्षयंन्ति। ता न आपः शङ् स्योना भंवन्तु। तन्नो विश्वे उपं शृण्वन्तु देवाः। तदंषाढा अभिसंयन्तु यज्ञम्। तन्नक्षंत्रं प्रथतां पृशुभ्यः। कृषिर्वृष्टिर्यजंमानाय कल्पताम्। शुभ्राः कृन्यां युवतयः सुपेशंसः। कृर्मकृतः सुकृतों वीर्यावतीः। विश्वान् देवान् ह्विषां वर्धयंन्तीः। अषाढाः काम्मुपं यान्तु युज्ञम्॥१६॥

यस्मिन् ब्रह्माऽभ्यजंयथ्सवंमेतत्। अमुं चं लोकमिदमूं च सर्वम्। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विजित्यं। श्रियं दधात्वहंणीय-मानम्। उभौ लोकौ ब्रह्मणा सञ्जितेमौ। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विचंष्टाम्। तस्मिन्वयं पृतंनाः सञ्जयेम। तन्नो देवासो अनुंजानन्तु कामम्। शृण्वन्ति श्रोणाममृतंस्य गोपाम्। पुण्यांमस्या उपंशृणोमि वाचम्॥१७॥

महीं देवीं विष्णुंपत्नीमजूर्याम्। प्रतीचीमेना हिवषां

यजामः। त्रेधा विष्णुंरुरुगायो विचंक्रमे। मृहीं दिवं पृथिवीम्न्तिरक्षम्। तच्छ्रोणैतिश्रवं इच्छमांना। पुण्यक् श्लोकं यजमानाय कृण्वती। अष्टौ देवा वसंवः सोम्यासंः। चतंस्रो देवीरजराः श्रविष्ठाः। ते यज्ञं पान्तु रजंसः प्रस्तात्। संवथ्सरीणंममृतक् स्वस्ति॥१८॥

यज्ञं नेः पान्तु वसंवः पुरस्तांत्। दक्षिणतों-ऽभियंन्तु श्रविष्ठाः। पुण्यं नक्षंत्रम्भि संविशाम। मा नो अरातिरघशु साऽगन्। क्षत्रस्य राजा वर्रुणोऽधिराजः। नक्षंत्राणा श्रातिभंषु ग्वसिष्ठः। तौ देवेभ्यः कृणुतो दीर्घमार्युः। श्रात सहस्रां भेषु जानि धत्तः। यज्ञं नो राजा वर्रुण उपयातु। तन्नो विश्वे अभि संयंन्तु देवाः॥१९॥

तन्नो नक्षंत्र श्वतिभेषग्जुषाणम्। दीर्घमायुः प्रति-रद्भेषजानि। अज एकंपादुदंगात्पुरस्तांत्। विश्वां भूतानि प्रति मोदंमानः। तस्यं देवाः प्रंस्वं यंन्ति सर्वे। प्रोष्ठपदासों अमृतंस्य गोपाः। विभ्राजंमानः समिधान उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहृदगुन्द्याम्। तर सूर्यं देवम्जमेकंपादम्। प्रोष्ठपदासो अनुंयन्ति सर्वे॥२०॥

अहिंर्बुध्नियः प्रथमान एति। श्रेष्ठों देवानांमुत मानुंषाणाम्। तं ब्राँह्मणाः सोम्पाः सोम्यासंः। प्रोष्ठपदासो अभि रक्षन्ति सर्वे। चुत्वार् एकंमुभि कर्म देवाः। प्रोष्ठपदास् इति यान् वदंन्ति। ते बुधियंं परिषद्य र्रं स्तुवन्तः। अहिर्ं रक्षन्ति नमंसोप्सद्यं। पूषा रेवत्यन्वेति पन्थांम्। पुष्टिपतीं पशुपा वार्जवस्त्यौ॥२१॥

ड्मानि ह्व्या प्रयंता जुषाणा। सुगैर्नो यानैरुपंयातां यज्ञम्। क्षुद्रान् पृशून् रंक्षतु रेवतीं नः। गावों नो अश्वाः अन्वेतु पूषा। अन्नः रक्षंन्तौ बहुधा विरूपम्। वाजः सन्तां यजंमानाय यज्ञम्। तद्श्विनांवश्वयुजोपंयाताम्। शुभुङ्गिष्ठौ सुयमेभिरश्वैः। स्वं नक्षंत्रः ह्विषा यजंन्तौ। मध्वा सम्पृंक्तौ यजुंषा समंक्तौ॥२२॥

यौ देवानां भिषजौं हव्यवाहौ। विश्वंस्य दूतावमृतंस्य गोपौ। तौ नक्षंत्रं जुजुषाणोपंयाताम्। नमोऽश्विभ्यां कृणुमोऽश्वयुग्भ्यांम्। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। तद्यमो राजा भगवान् विचंष्टाम्। लोकस्य राजां मह्तो महान् हि। सुगं नः पन्थामभंयं कृणोतु। यस्मिन्नक्षंत्रे यम एति राजां। यस्मिन्नेनम्भ्यिषश्चन्त देवाः। तदंस्य चित्र र ह्विषां यजाम। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। निवेशनी यत्तं देवा अदंधुः॥२३॥

तृतार् मह्मं प्रासुचीर्या याँन्तु युज्ञं वाचक्षं स्वस्ति देवा अनुयन्ति सर्वे वाजंबस्त्यो समंक्तौ देवास्त्रीणि च॥[२]

नवोनवो भवति जायंमानो यमादित्या अर्शुमाँप्याययंन्ति। ये विरूपे समनसा संव्ययंन्ती। समानं तन्तुं परितातना तैं। विभू प्रभू अनुभू विश्वतों हुवे। ते नो नक्षेत्रे हवमागंमेतम्। व्यं देवी ब्रह्मणा संविदानाः। सुरत्नांसो देववीतिं दर्धानाः। अहोरात्रे ह्विषां वर्धयन्तः। अतिं पाप्मानमतिं मुक्त्या गमेम। प्रत्युवदृश्यायती॥२४॥

व्युच्छन्तीं दिह्ता दिवः। अपो मही वृंणते चक्षुंषा। तमो ज्योतिंष्कृणोति सूनरीं। उदुस्नियाः सचते सूर्यः। सचां उद्यन्नक्षंत्रमर्चिमत्। तवेदुंषो व्युषि सूर्यस्य च। सं भक्तेनं गमेमहि। तन्नो नक्षंत्रमर्चिमत्। भानुमक्तेजं उचरंत्। उपयुज्ञमिहागंमत्॥२५॥

प्र नक्षंत्राय देवायं। इन्द्रायेन्दु हवामहे। स नंः सिवता संवथ्मिनम्। पृष्टिदां वीरवंत्तमम्। उदुत्यं चित्रम्। अदितिर्न उरुष्यतु महीमूषु मातरम्। इदं विष्णुः प्रतिद्वष्णुः। अग्निर्मूर्धा भुवंः। अनुनोऽद्यानुंमित्रिरिन्वदंनुमते त्वम्। हृव्यवाहु इ स्विष्टम्॥२६॥

आयुत्यंगम्थिवंष्टम्॥_____[3]

अग्निर्वा अंकामयत। अन्नादो देवाना इंस्यामिति। स एतम्ग्नये कृत्तिंकाभ्यः पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। ततो वै सौंऽन्नादो देवानांमभवत्। अग्निर्वे देवानांमन्नादः। यथां ह् वा अग्निर्देवानांमन्नादः। एव इ ह् वा एष मंनुष्यांणां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा कृत्तिंकाभ्यः स्वाहाँ। अम्बाये स्वाहां दुलाये स्वाहाँ। नित्त्ये स्वाहाऽभ्रयंन्त्ये स्वाहां। मेघयंन्त्ये स्वाहां

व्रूषयंन्त्यै स्वाहाँ। चुपुणीकांयै स्वाहेतिं॥२७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्। तासा रे रोहिणीम्भ्यंध्यायत्। सोंऽकामयत। उप मा वंर्तेत। समेंनया गच्छेयेतिं। स एतं प्रजापंतये रोहिण्ये च्रं निरंवपत्। ततो वै सा तमुपावंर्तत। समेंनया गच्छत। उपं हु वा एनं प्रियमावंर्तते। सं प्रियेणं गच्छते। य एतेनं हुविषा यजंते। य उंचैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहां रोहिण्ये स्वाहां। रोचंमानाये स्वाहां प्रजाभ्यः स्वाहेतिं॥२८॥

सोमो वा अंकामयत। ओषंधीना र राज्यम्भिजंयेयमितिं। स एत र सोमांय मृगशीर्षायं श्यामाकं च्रं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स ओषंधीना र राज्यम्भ्यंजयत्। समानाना र ह वै राज्यम्भिजंयित। य एतेनं हिवषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सोमांय स्वाहां मृगशीर्षाय स्वाहां। इन्वकाभ्यः स्वाहौषंधीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥२९॥

रुद्रो वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामिति। स एतः रुद्रायाऽऽर्द्रायै प्रैय्यंङ्गवं चरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो व स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् ह व भंवति। य एतेन हिवषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। रुद्राय स्वाहाऽऽर्द्रायै स्वाहां। पिन्वंमानायै स्वाहां पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥३०॥

ऋक्षा वा इयमंलोमकांऽऽसीत्। साऽकांमयत। ओषंधीभिवंनस्पतिंभिः प्रजायेयेतिं। सैतमदिंत्ये पुनंवंसुभ्यां चरुं निरंवपत्। ततो वा इयमोषंधीभिवंनस्पतिंभिः प्राजांयत। प्रजांयते हु वै प्रजयां पृशुभिः। य पृतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अदित्ये स्वाहा पुनंवंसुभ्याम्। स्वाहा भूँत्ये स्वाहा प्रजांत्ये स्वाहेतिं॥३१॥

बृह्स्पतिर्वा अंकामयत। ब्रह्मवर्च्सी स्यामिति। स एतं बृह्स्पतिये तिष्यांय नैवारं चरुं पर्यासे निरंवपत्। ततो वै स ब्रह्मवर्च्स्यंभवत्। ब्रह्मवर्च्सी हु वै भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहां तिष्यांय स्वाहां। ब्रह्मवर्च्साय स्वाहेतिं॥३२॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवाः सर्पेभ्यं आश्रेषाभ्य आज्यं कर्म्मं निरंवपन्। तानेताभिरेव देवतांभिरुपानयन्। एताभिर्ह् वे देवतांभिर्द्धिषन्तं भ्रातृंव्यमुपंनयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सर्पेभ्यः स्वाहांऽऽश्रेषाभ्यः स्वाहां। दन्दशूकेंभ्यः स्वाहेतिं॥३३॥

पितरो वा अंकामयन्त। पितृलोक ऋष्यामेति। त एतं पितृभ्यो मघाभ्यः पुरोडाश्र पद्भपालं निरंवपन्। ततो वे ते पितृलोक आध्रुवन्। पितृलोके ह् वा ऋष्रोति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पितृभ्यः स्वाहां मघाभ्यः। स्वाहांऽनघाभ्यः स्वाहांऽगदाभ्यः। स्वाहां-

ऽरुन्धतीभ्यः स्वाहेतिं॥३४॥

अर्यमा वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामिति। स एतमेर्यम्णे फल्गुनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् ह वै भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अर्यम्णे स्वाहा फल्गुनीभ्या इं स्वाहाँ। पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥३५॥

भगो वा अंकामयत। भगी श्रेष्ठी देवाना ईस्यामिति। स एतं भगाय फल्गुंनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स भगी श्रेष्ठी देवानांमभवत्। भगी हु वै श्रेष्ठी संमानानां भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। भगाय स्वाहा फल्गुंनीभ्या इं स्वाहां। श्रेष्ठ्यांय स्वाहेति॥३६॥

स्विता वा अंकामयत। श्रन्में देवा दधीरन्। स्विता स्यामिति। स पृत सिवित्रे हस्तांय पुरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपदाशूनां व्रीहीणाम्। ततो वै तस्मै श्रद्देवा अदंधत। स्विताऽभंवत्। श्रद्धवा अंस्मै मनुष्यां दधते। स्विता संमानानां भवति। य पृतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। स्वित्रे स्वाहा हस्तांय। स्वाहां ददते स्वाहां पृण्ते। स्वाहां प्रयच्छंते स्वाहां प्रतिगृभ्णते स्वाहतिं॥३७॥

त्वष्टा वा अंकामयत। चित्रं प्रजां विंन्देयेतिं। स एतं त्वष्ट्रं चित्रायें पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपत्। ततो वै स चित्रं प्रजामंविन्दत। चित्र ह वै प्रजां विन्दते। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। त्वष्ट्रे स्वाहां चित्रायै स्वाहां। चैत्रांय स्वाहां प्रजायै स्वाहेतिं॥३८॥

वायुर्वा अंकामयत। कामचारंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमितिं। स एतद्वायवे निष्ट्यांयै गृष्ट्यै दुग्धं पयो निरंवपत्। ततो वै स कामचारंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। कामचार ह वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वायवे स्वाहा निष्ट्यांयै स्वाहाँ। कामचारांय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥३९॥

इन्द्राग्नी वा अंकामयेताम्। श्रेष्ठ्यं देवानांम्भिजंयेवेतिं। तावेतिमेन्द्राग्निभ्यां विशांखाभ्यां पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपताम्। ततो वे तौ श्रेष्ठ्यं देवानांमभ्यंजयताम्। श्रेष्ठ्यं हु वे संमानानांम्भि जंयति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्राग्निभ्याः स्वाहा विशांखाभ्याः स्वाहां। श्रेष्ठ्यांय स्वाहाऽभिजित्ये स्वाहेतिं॥४०॥

अथैतत्पौर्णमास्या आज्यं निर्वपति। कामो वै पौर्णमासी। काम आज्यम्। कामेनेव काम् समर्थयति। क्षिप्रमेन् स् सकाम उपनमित। येन कामेन् यजते। सोऽत्रं जुहोति। पौर्णमास्य स्वाहा कामाय स्वाहाऽऽगत्य स्वाहेति॥४१॥ अधिः पर्थदश प्रजापितः पोर्डण् सोम एकांदश रुद्रो दश्क्षंकांदश् बहुस्पतिर्दशं देवासुरा नवं पितर् एकांदशार्थमा भगे दशं दश सविता चर्त्रदेश त्वर्षा वाप्रिस्ताभी दशं दशावेततौर्णमास्या अष्टो पर्थदशा———[४]

मित्रो वा अंकामयत। मित्रधेयंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमितिं। स एतं मित्रायांनूराधेभ्यंश्चरुं निर्ग्वपत्। ततो वै स मित्रधेयंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। मित्रधेय १ ह् वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। मित्राय स्वाहांऽनूराधेभ्यः स्वाहां। मित्रधेयांय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥४२॥

इन्द्रो वा अंकामयत। ज्यैष्ठ्यं देवानांम्भिजंयेय्मितिं। स एतमिन्द्रांय ज्येष्ठायं पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपन्महाव्रींहीणाम्। ततो वै स ज्यैष्ठ्यं देवानांम्भ्यंजयत्। ज्यैष्ठ्यं हु वै संमानानांम्भिजंयति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्रांय स्वाहां ज्येष्ठाये स्वाहां। ज्यैष्ठ्यांय स्वाहाऽभिजित्ये स्वाहेतिं॥४३॥

प्रजापंतिर्वा अंकामयत। मूलं प्रजां विन्देयेति। स एतं प्रजापंतये मूलांय चरुं निरंवपत्। ततो वै स मूलंं प्रजामंविन्दत। मूलर्ं हु वै प्रजां विन्दते। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहा मूलांय स्वाहां। प्रजाये स्वाहेति॥४४॥

आपो वा अंकामयन्त। समुद्रं कार्मम्भिजंयेमेतिं। ता एतम्ब्रोंऽषाढाभ्यंश्चरुं निरंवपन्। ततो वै ताः संमुद्रं कार्मम्भ्यंजयन्। समुद्र॰ हु वै कार्मम्भिजंयति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अब्र्यः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। समुद्राय स्वाहा कामांय स्वाहां। अभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥४५॥

विश्वे वै देवा अंकामयन्त। अनुपुज्य्यं जंयेमेति। त एतं विश्वेभ्यो देवेभ्योऽषाढाभ्यंश्वरुं निरंवपन्। ततो वै ते-ऽनपज्य्यमंजयन्। अनुपुज्य्यः हु वै जंयति। य एतेनं हुविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। अनुपुज्य्याय स्वाहा जित्ये स्वाहेतिं॥४६॥

ब्रह्म वा अंकामयत। ब्रह्मलोकम्भिजंयेय्मिति। तदेतं ब्रह्मणेऽभिजिते च्रं निरंवपत्। ततो वै तद्वेतं ब्रह्मणेऽभिजिते च्रं निरंवपत्। ततो वै तद्वेह्मलोकम्भ्यंजयत्। ब्रह्मलोक ह् वा अभिजंयित। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। ब्रह्मणे स्वाहांऽभिजिते स्वाहां। ब्रह्मलोकाय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥४७॥

विष्णुर्वा अंकामयत। पुण्युङ् श्लोक १ शृण्वीय। न मां पापी कीर्तिरागंच्छेदिति। स एतं विष्णंवे श्रोणायै पुरोडाशं त्रिकपालं निरंवपत्। ततो वै स पुण्युङ् श्लोकंमशृणुत। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छत्। पुण्य १ हु वै श्लोक १ शृणुते। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहां श्लोणाये स्वाहां। श्लोकांय स्वाहां श्लाय स्वाहेति॥४८॥

वसंवो वा अंकामयन्त। अग्रं देवतांनां परीयामेति। त एतं वसुंभ्यः श्रविष्ठाभ्यः पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपन्। ततो वै तेऽग्रं देवतांनां पर्यायन्। अग्रं हु वै संमानानां पर्येति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वसुंभ्यः स्वाहा श्रविष्ठाभ्यः स्वाहां। अग्रांय स्वाहा परींत्यै स्वाहेतिं॥४९॥

इन्द्रो वा अंकामयत। दृढोऽशिंथिलः स्यामितिं। स एतं वर्रुणाय शृतिभेषजे भेषजेभ्यः पुरोडाशं दर्शकपालं निर्रवपत्कृष्णानां व्रीहीणाम्। ततो वै स दृढोऽशिंथिलो-ऽभवत्। दृढो हु वा अशिंथिलो भवति। य एतेनं हृविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वर्रुणाय स्वाहां शृतभिषजे स्वाहां। भेषजेभ्यः स्वाहेति॥५०॥

अजो वा एकंपादकामयत। तेजस्वी ब्रंह्मवर्च्सी स्यामिति। स एतम्जायैकंपदे प्रोष्ठपदेभ्यंश्चरं निरंवपत्। ततो वै स तेजस्वी ब्रंह्मवर्चस्यंभवत्। तेजस्वी हृ वै ब्रंह्मवर्च्सी भंवति। य एतेनं ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अजायैकंपदे स्वाहाँ प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहाँ। तेजंसे स्वाहाँ ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेतिं॥५१॥

अहिर्वे बुधियोऽकामयत। इमां प्रतिष्ठां विन्देयेति। स एतमहये बुधियाय प्रोष्ठप्देभ्यः पुरोडाशं भूमिकपालं निरंवपत्। ततो वै स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। इमा॰ ह वै प्रतिष्ठां विन्दते। य प्रतेनं ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अहंये बुिध्रयाय स्वाहां प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठाये स्वाहेतिं॥५२॥

पूषा वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामिति। स एतं पूष्णे रेवत्यैं चुरुं निरंवपत्। ततो वे स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् ह् वे भंवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पूष्णे स्वाहां रेवत्यै स्वाहां। पृशुभ्यः स्वाहेति॥५३॥

अश्विनौ वा अंकामयेताम्। श्रोत्रस्विनावबंधिरौ स्यावेतिं। तावेतमश्विभ्यांमश्वयुग्भ्यां पुरोडाशं द्विकपालं निरंवपताम्। ततो वे तौ श्रोत्रस्विनावबंधिरावभवताम्। श्रोत्रस्वी ह वा अबंधिरो भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अश्विभ्याङ् स्वाहाँऽश्वयुग्भ्याङ् स्वाहाँ। श्रोत्रांय स्वाहा श्रुत्ये स्वाहेतिं॥५४॥

यमो वा अंकामयत। पितृणा र राज्यम्भिजंयेयमिति। स एतं यमायांपभरंणीभ्यश्चरं निरंपवत्। ततो वै स पितृणा र राज्यम्भ्यंजयत्। समानाना र ह वै राज्यम्भि जंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। यमाय स्वाहांऽपभरंणीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥५५॥

अथैतदेमावास्यांया आज्यं निर्वपति। कामो वा अमावास्यां। काम आज्यम्ं। कामेनैव काम समर्धयति। क्षिप्रमेन् सकाम् उपनमित। येन् कामेन् यजंते। सोऽत्रं जुहोति। अमावास्याये स्वाहा कामाय स्वाहाऽऽगंत्ये स्वाहेति॥५६॥

चन्द्रमा वा अंकामयत। अहोरात्रानंधमासान्मासांनृतून्थ्सं-वथ्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य स् सलोकतांमाप्रयामिति। स एतं चन्द्रमंसे प्रतीदृष्ट्यांये पुरोडाशं पश्चंदशकपालं निरंवपत्। ततो वै सोंऽहोरात्रानंधमासान्मासांनृतून्थ्संवथ्सर-मास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य सलोकतांमाप्नोत्। अहोरात्रान् ह वा अंधमासान्मासांनृतून्थ्संवथ्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। चन्द्रमंसे स्वाहां प्रतीदृष्ट्यांये स्वाहां। अहोरात्रेभ्यः स्वाहांऽर्धमासेभ्यः स्वाहां। मासेंभ्यः स्वाहुर्तुभ्यः स्वाहां। संवथ्सराय स्वाहेति॥५७॥

अहोरात्रे वा अंकामयेताम्। अत्यंहोरात्रे मुंच्येविह।
न नांवहोरात्रे आंप्रुयातामितिं। ते एतमंहोरात्राभ्यां च्रं
निरंवपताम्। द्वयानां व्रीहीणाम्। शुक्कानां च कृष्णानां च।
स्वात्योर्दुग्धे। श्वेतायं च कृष्णायं च। ततो व ते अत्यंहोरात्रे
अंमुच्येते। नैनं अहोरात्रे आंप्रुताम्। अतिं ह् वा अंहोरात्रे
मुंच्यते। नैनंमहोरात्रे आंप्रुतः। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं
चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अह्रे स्वाहा रात्रिये स्वाहां।

अतिमुक्त्यै स्वाहेतिं॥५८॥

उषा वा अंकामयत। प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगां स्यामितिं। सैतमुषसं चुरुं निरंवपत्। ततो वे सा प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगांऽभवत्। प्रियो ह वे संमानाना र सुभगों भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। उषसे स्वाहा व्युंष्ट्ये स्वाहां। व्यूष्ट्ये स्वाहां व्युच्छन्त्ये स्वाहां। व्युंष्टाये स्वाहेतिं॥५९॥

अथैतस्मै नक्षंत्राय चुरुं निर्वपिति। यथा त्वं देवानामिसं। एवमहं मंनुष्याणां भूयासमिति। यथां हु वा एतद्देवानाम। एव॰ हु वा एष मंनुष्याणां भवति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। नक्षंत्राय स्वाहोदेष्यते स्वाहां। उद्यते स्वाहोदिताय स्वाहां। हरंसे स्वाहा भरंसे स्वाहां। भ्राजंसे स्वाहा तेजंसे स्वाहां। तपंसे स्वाहां ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेति॥६०॥

सूर्यो वा अंकामयत। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा स्यामितिं। स एत॰ सूर्याय नक्षंत्रेभ्यश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स नक्षंत्राणां प्रतिष्ठाऽभंवत्। प्रतिष्ठा हु वै संमानानां भवति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सूर्याय स्वाहा नक्षंत्रेभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६१॥

अथैतमदित्यै चुरुं निर्वपति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव

प्रथमः प्रश्नः 311

प्रतिं तिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। अदिंत्यै स्वाहाँ प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६२॥

अथैतं विष्णंवे चुरुं निर्वपति। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञ एवान्तृतः प्रतिं तिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहां यज्ञाय स्वाहां। प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६३॥

चन्द्रमाः पश्चेदशाहोरात्रे स्प्तदंशोषा एकोदशाधेतस्मे नक्षंत्राय त्रयोदश् सूर्यो दशाधेतमदित्ये पश्चाधेतं विष्णेव पदथ्स्प्त (स्विताऽऽशॄनां व्रीहीणामिन्द्रीं महाव्रीहीणामिन्द्रं कृष्णानां व्रीहीणामेहोरात्रे द्वयानां व्रीहीणाम्। पितरः पद्धंपाल॰ सविता द्वादंशकपालमिन्द्रांश्री एकांदशकपालमिन्द्रं एकांदशकपालमिन्द्रो दशंकपालं विष्णुंश्लिकपालमिक्द्रिमेंकपालमुश्चिनौं द्विकपालं चन्द्रमाः पश्चंदशकपालमुश्चिन्त्वयां वसंवोऽष्टाकंपालमुन्यत्रं चुरुम्। कृद्राँऽर्युमा पूषा पंशुमान्थ्स्याः सोमों कृद्रो बृहुस्पितः पर्यसि वायुः पयः सोमों वायुरिन्द्राग्री मित्र इन्द्र आपो ब्रह्मं यमोऽभिजित्ये त्वष्टां प्रजापितः प्रजाये पौर्णमास्या अंमावास्याया अर्गत्ये विश्वे जित्यां अश्विनो श्रुत्ये। ब्रह्म तदेतं विष्णुः स एतं वायुः स एतदापुस्ताः। पितरो विश्वे वसंवोऽकामयन्त् मेति त एतित्रिरंवपन्। आपोऽकामयन्त् मेति ता एतित्रिरंवपन्। इन्द्राग्री अश्विनांवकामयेतां वेति तावेतित्रिरंवपताम्। अन्तर्याकामयेति स एतित्ररंवपत्। इन्द्राग्री श्रेष्ठ्यमिन्द्रो उपेष्ठ्यमिन्द्रो इढः। अहिः स्याँऽदित्ये विष्णेव प्रतिष्ठायै। सोमों युमः संमानानांम्। अग्निनौ रीरिषद्नयत्रत्रं रीरिषः॥)॥

अग्निर्न ऋध्यास्म् नवीनवोऽग्निर्मित्रश्चन्द्रमाः षद्॥६॥ अग्निर्नस्तत्री वायुरिहेर्बुप्रियं ऋक्षा वा इयमथैतत्यौर्णमास्या अजो वा एकपाथ्सूर्यस्निपष्टिः॥६३॥ अग्निर्नः पातु प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयत्र्या-ऽहंरत्। तस्यं पूर्णमंच्छिद्यत। तत्पूर्णोऽभवत्। तत्पूर्णस्यं पर्णत्वम्। ब्रह्म वै पूर्णः। यत्पंणशाखयां वथ्सानंपाकरोति। ब्रह्मणैवैनानपाकरोति। गायत्रो वै पूर्णः। गायत्राः पृशवंः॥१॥

तस्मात्रीणित्रीण पूर्णस्यं पलाशानि। त्रिपदां गायत्री। यत्पंर्णशाखया गाः प्रापंयति। स्वयैवैनां देवतंया प्रापंयति। यं कामयेतापृशः स्यादिति। अपूर्णान्तस्मै शुष्कांग्रामाहंरेत्। अपूर्शरेव भंवति। यं कामयेत पशुमान्थस्यादिति। बहुपूर्णान्तस्मै बहुशाखामाहंरेत्। पृशुमन्तंमेवैनं करोति॥२॥

यत्प्राचीमा हरैंत्। देवलोकम्भि जंयेत्। यदुदीचीं मनुष्यलोकम्। प्राचीमुदीचीमा हरिति। उभयौर्लोकयोर्भि-जित्यै। इषे त्वोर्जे त्वेत्याह। इषमेवोर्जं यर्जमाने दधाति। वायवः स्थेत्याह। वायुर्वा अन्तरिक्षस्याध्यक्षाः। अन्तरिक्षदेवत्यौः खलु वै पुशर्वः॥३॥

वायवं एवैनान्परि ददाति। प्र वा एंनानेतदा कंरोति। यदाहे। वायवः स्थेत्युंपायवः स्थेत्यांह। यजंमानायैव पृशूनुपं ह्वयते। देवो वंः सिवता प्रापंयत्वित्यांह प्रसूत्यै। श्रेष्ठंतमाय कर्मण इत्यांह। युज्ञो हि श्रेष्ठंतमं कर्म। तस्मांदेवमांह।

आप्यांयध्वमघ्रिया देवभागमित्यांह॥४॥

वृथ्सेभ्यंश्च वा एताः पुरा मनुष्येभ्यश्चाप्यांयन्त। देवेभ्यं एवेना इन्द्रायाप्यांययित। ऊर्जस्वतीः पर्यस्वतीरित्यांह। ऊर्ज् हि पर्यः सम्भरंन्ति। प्रजावंतीरनमीवा अयक्ष्मा इत्यांह प्रजांत्ये। मा वंः स्तेन ईशत माऽघशर्रस् इत्यांह गुप्त्यैं। रुद्रस्यं हेतिः परिं वो वृण्कित्यांह। रुद्रादेवेनांस्नायते। ध्रुवा अस्मिन्गोपंतौ स्यात बह्वीरित्यांह। ध्रुवा एवास्मिन्बह्वीः करोति॥५॥

यजंमानस्य पृश्न्पाहीत्यांह। पृश्न्नां गोंपीथायं। तस्मांथ्सायं पृशव् उपसमावंर्तन्ते। अनंधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव् निदंधाति। उपरीव् हि सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ठ्ये॥६॥

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इत्यंश्वप्र्श्वमादंते प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह यत्यैं। यो वा ओषंधीः पर्वशो वेदं। नैनाः स हिनस्ति। प्रजापंतिर्वा ओषंधीः पर्वशो वेद। स एना न हिनस्ति। अश्वपृश्वा बर्हिरच्छैति। प्राजापत्यो वा अश्वंः सयोनित्वायं॥७॥

ओषंधीनामहि ५ंसायै। यज्ञस्यं घोषद्सीत्यांह। यजंमान

एव र्यिं देधाति। प्रत्युंष्ट्र रक्षः प्रत्युंष्टा अरातय इत्याह। रक्षंसामपंहत्ये। प्रेयमंगाद्धिषणां ब्र्हिरच्छेत्यांह। विद्या वै धिषणां। विद्ययैवैनदच्छैति। मनुंना कृता स्वधया वितष्टेत्यांह। मानवी हि पर्शुं स्वधाकृता॥८॥

त आवंहिन्त क्वयंः पुरस्तादित्यांह। शुश्रुवाश्सो वै क्वयंः। यज्ञः पुरस्तांत्। मुख्त एव यज्ञमा रंभते। अथो यदेतदुक्ता यतः कृतंश्चा हरंति। तत्प्राच्यां एव दिशो भंवित। देवेभ्यो जुष्टंमिह ब्र्हिरासद इत्यांह। ब्र्हिषः समृंख्यै। कर्मणोऽनंपराधाय। देवानां परिषूतम्सीत्यांह॥९॥

यद्वा इदं किं चं। तद्देवानां परिषूतम्। अथो यथा वस्यंसे प्रतिप्रोच्याहेदं कंरिष्यामीति। एवमेव तदंध्वर्युर्देवेभ्यः प्रतिप्रोच्यं बुर्हिर्दाति। आत्मनोऽहिर्श्सायै। यावंतः स्तम्बान्पंरिदिशेत्। यत्तेषांमुच्छिड्ष्यात्। अति तद्यज्ञस्यं रेचयेत्। एकई स्तम्बं परिदिशेत्। तर सर्वं दायात्॥१०॥

युज्ञस्यानंतिरेकाय। वर्षवृंद्धम्सीत्यांह। वर्षवृंद्धा वा ओषंधयः। देवंबर्हिरित्यांह। देवेभ्यं एवैनंत्करोति। मा त्वा-ऽन्वङ्गा तिर्यगित्याहाहि रंसायै। पर्वं ते राध्यासमित्याहध्यैं। आच्छेत्ता ते मा रिषमित्यांह। नास्याऽऽत्मनो मीयते। य एवं वेदं॥११॥

देवंबर्हिः शृतवंल्शुं विरोहेत्यांह। प्रजा वै ब्रहिः।

प्रजानां प्रजनंनाय। सहस्रंवल्शा वि वय र रहेमेत्यांह। आमेवेतामा शांस्ते। पृथिव्याः सम्पृचंः पाहीत्यांह प्रतिष्ठित्ये। अयुंङ्गायुङ्गान्मुष्टीं लुंनोति। मिथुन्त्वाय प्रजांत्ये। सुसम्भृतां त्वा सम्भंरामीत्यांह। ब्रह्मंणैवेनथ्सम्भंरति॥१२॥

अदित्यै रास्राऽसीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवेन्द्रास्नां करोति। इन्द्राण्ये सन्नहंनुमित्यांह। इन्द्राणी वा अग्ने देवतांना समंनह्यत। साऽऽभ्नांत। ऋद्धे सन्नह्यति। प्रजा वे ब्र्हिः। प्रजानामपंरावापाय। तस्माथ्स्नावंसन्तताः प्रजा जांयन्ते॥१३॥

पूषा तें ग्रन्थिं ग्रंशातित्यांह। पुष्टिमेव यर्जमाने दधाति। स ते मास्थादित्याहाहि रेसायै। पृश्चात्प्राश्चमुपंगूहित। पृश्चाद्वै प्राचीन् रेतों धीयते। पृश्चादेवास्में प्राचीन् रेतों दधाति। इन्द्रंस्य त्वा बाहुभ्यामुद्यंच्छ इत्यांह। इन्द्रियमेव यर्जमाने दधाति। बृह्स्पतेंर्मूर्भा हंग्मीत्यांह। ब्रह्म वे देवानां बृहस्पतिं:॥१४॥

ब्रह्मणैवैनंद्धरित। उर्वन्तिरिक्षमिन्वहीत्यांहु गत्यै। देवङ्गमम्सीत्यांह। देवानेवैनंद्रमयित। अनेधः सादयित। गर्भाणां धृत्या अप्रेपादाय। तस्माद्धर्भाः प्रजानामप्रेपादुकाः। उपरीव नि देधाति। उपरीव हि सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्ये लोकस्य सम्ष्रि॥१५॥

स्योनित्वार्यं स्वधाकृताऽसीत्यांह दायाद्वेदं भरति जायन्ते बृह्स्पतिः समध्ये॥————[२

पूर्वेद्युरिध्माब्र्हिः करोति। यज्ञमेवारभ्यं गृहीत्वोपंवसित। प्रजापंतिर्यज्ञमंसृजत। तस्योखे अंस्रश्सेताम्। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यथ्सांन्नाय्योखे भवंतः। यज्ञस्यैव तदुखे उपंदधात्यप्रंस्रश्साय। शुन्धंध्वं दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्यांह। देवयुज्यायां एवैनांनि शुन्धित। मात्रिश्वंनो घुर्मोऽसीत्यांह॥१६॥

अन्तरिक्षं वै मांतिरश्वंनो घर्मः। एषां लोकानां विधृत्यै। द्यौरंसि पृथिव्यंसीत्यांह। दिवश्च ह्यंषा पृथिव्याश्च सम्भृता। यदुखा। तस्मादेवमांह। विश्वधाया असि पर्मेण धाम्नेत्यांह। वृष्टिवै विश्वधायाः। वृष्टिमेवावं रुन्धे। दृश्हंस्व मा ह्वारित्यांह धृत्यै॥१७॥

वसूनां प्वित्रम्सीत्यांह। प्राणा वै वसंवः। तेषां वा एतद्भागधेयम्। यत्पवित्रम्। तेभ्यं एवैनंत्करोति। शृतधार सहस्रधारमित्यांह। प्राणेष्वेवायुर्दधाति सर्वृत्वायं। त्रिवृत्पंलाशशाखायां दर्भमयं भवति। त्रिवृद्वै प्राणः। त्रिवृतंमेव प्राणं मध्यतो यजंमाने दधाति॥१८॥

सौम्यः पूर्णः संयोनित्वायं। साक्षात्पवित्रं दुर्भाः। प्राख्सायमधिनि दंधाति। तत्प्राणापानयो रूपम्। तिर्यक्प्रातः। तद्दर्शस्य रूपम्। दार्श्यं होतदहंः। अत्रं वै चन्द्रमाः। अत्रं प्राणाः। उभयमेवोपैत्यजांमित्वाय॥१९॥

तस्मदिय सर्वतः पवते। हुतः स्तोको हुतो द्रफ्स

इत्यांह् प्रतिष्ठित्यै। ह्विषोऽस्कंन्दाय। न हि हुत इ स्वाहांकृत इ स्कन्दंति। दिवि नाको नामाग्निः। तस्यं विप्रुषो भागधेयम्। अग्नयं बृह्ते नाकायेत्यांह। नाकंमेवाग्निं भागधेयेन समर्धयति। स्वाहा द्यावांपृथिवीभ्यामित्यांह। द्यावांपृथिव्योरेवैन्त्प्रतिष्ठापयति॥२०॥

प्वित्रंवत्यानंयित। अपां चैवौषंधीनां च रस् सर्श्नंजित। अथो ओषंधीष्वेव प्शून्प्रतिष्ठापयित। अन्वारभ्य वाचं यच्छित। यज्ञस्य धृत्यै। धारयंत्रास्ते। धारयंन्त इव हि दुहन्तिं। कामंधुक्ष इत्याहाऽऽतृतीयंस्यै। त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकान् यर्जमानो दुहे॥२१॥

अमूमिति नामं गृह्णाति। भुद्रमेवासां कर्मा विष्कंरोति। सा विश्वायुः सा विश्वव्यंचाः सा विश्वक्रमेंत्यांह। इयं वे विश्वायुः। अन्तरिक्षं विश्वव्यंचाः। असौ विश्वकंर्मा। इमानेवेताभिर्लोकान् यंथापूर्वं दुहे। अथो यथां प्रदात्रे पुण्यंमाशास्तें। एवमेवेनां एतदुपंस्तौति। तस्मात्प्रादादित्युन्नीय वन्दंमाना उपस्तुवन्तंः पृशून्दुं-हन्ति॥२२॥

बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यों ह्विरिति वाचं विसृंजते। यथादेवतमेव प्रसौंति। दैव्यंस्य च मानुषस्यं च व्यावृंत्यै। त्रिराह। त्रिषंत्या हि देवाः। अवांचं यमोऽनंन्वार्भ्योत्तंराः। अपंरिमितमेवावं रुन्थे। न दांरुपात्रेणं दुह्यात्। अग्निवद्वै दारुपात्रम्। यद्दारुपात्रेणं दुह्यात्॥२३॥

यातयाँम्ना ह्विषां यजेत। अथो खल्वांहुः। पुरोडाशंमुखानि वै ह्वी॰िषं। नेत इंतः पुरोडाश॰ ह्विषो यामोऽस्तीतिं। काममेव दांरुपात्रेणं दुह्यात्। शूद्र एव न दुंह्यात्। असंतो वा एष सम्भूतः। यच्छूद्रः। अहंविरेव तदित्यांहुः। यच्छूद्रो दोग्धीतिं॥२४॥

अग्निहोत्रमेव न दुंह्याच्छूद्रः। तद्धि नोत्पुनिति। यदा खलु वै प्वित्रंमत्येति। अथ् तद्धविरिति। सम्पृंच्यध्वमृतावरीरित्याह। अपां चैवौषंधीनां च रस्र सर् सृंजिति। तस्माद्पां चौषंधीनां च रस्मुपंजीवामः। मृन्द्रा धनंस्य सात्य इत्याह। पृष्टिंमेव यजमाने दधाति। सोमेन् त्वातंनच्मीन्द्रांय दधीत्यांह॥२५॥

सोमं मेवैनंत्करोति। यो वै सोमं भक्षयित्वा। संवथ्सर सोमं न पिबंति। पुनुर्भक्ष्यौं उस्य सोमपीथो भंवति। सोमः खलु वै साँन्नाय्यम्। य एवं विद्वान्थ्साँन्नाय्यं पिबंति। अपुनुर्भक्ष्यौं उस्य सोमपीथो भंवति। न मृन्मयेनापि दध्यात्। यन्मृन्मयेनापिद्ध्यात्। पितृदेवत्य स्थात्॥२६॥

अयस्पात्रेणं वा दारुपात्रेण वाऽपिं दधाति। तिष्कि सदेवम्। उद्न्वद्भवति। आपो वै रंक्षोघ्रीः। रक्षंसामपंहत्यै। अदंस्तमसि विष्णंवे त्वेत्यांह। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञायैवैनददंस्तं करोति। विष्णों हव्य रंक्षुस्वेत्यांह गुप्त्यै। अनंधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव निदंधाति। उपरीव हि सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्ये॥२७॥

असीत्यांहु धृत्ये यजमाने दधात्यजामित्वाय स्थापयित दुहे दुहन्ति दुह्याद्दोर्ग्धीत् दधीत्यांह स्याथ्सादयित् पश्चं च॥ 🗦 🕽

कर्मणे वां देवेभ्यः शकेयमित्यांह् शक्त्यौ। यज्ञस्य वै सन्तितमन् प्रजाः पशवो यजमानस्य सन्तायन्ते। यज्ञस्य विच्छिंत्तिमन् प्रजाः पशवो यजमानस्य विच्छिंद्यन्ते। यज्ञस्य सन्तितिरिस यज्ञस्यं त्वा सन्तित्ये स्तृणामि सन्तित्ये त्वा यज्ञस्येत्याहंवनीयाथ्सन्तेनोति। यजमानस्य प्रजाये पशूनाः सन्तित्ये। अपः प्रणयति। श्रद्धा वा आपः। श्रद्धामेवारभ्यं प्रणीय प्रचरित। अपः प्रणयति। यज्ञो वा आपः॥२८॥

युज्ञमेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरित। अपः प्रणंयित। वज्रो वा आपः। वज्रमेव भ्रातृंव्येभ्यः प्रहृत्यं प्रणीय प्रचंरित। अपः प्रणंयित। आपो वै रक्षोघ्नीः। रक्षंसामपहत्यै। अपः प्रणंयित। आपो वै देवानां प्रियं धामं। देवानांमेव प्रियं धामं प्रणीय प्रचंरित॥२९॥

अपः प्रणंयति। आपो वै सर्वा देवताः। देवतां एवाऽऽरभ्यं प्रणीय प्रचंरति। वेषांय त्वेत्यांह। वेषांय ह्यंनदादत्ते। प्रत्युष्ट रक्षः प्रत्युंष्टा अरातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्ये। धूरसीत्यांह। एष वै धुर्योऽग्निः। तं यदनुंपस्पृश्यातीयात्॥३०॥

अध्वर्यं च यजमानं च प्रदेहेत्। उपस्पृश्यात्येति।

अध्वर्योश्च यजंमानस्य चाप्रंदाहाय। धूर्व तं यौंस्मान्धूर्वति तं धूर्व यं व्यं धूर्वाम् इत्यांह। द्वौ वाव पुरुषौ। यं चैव धूर्वति। यश्चेनं धूर्वति। तावुभौ शुचाऽपंयति। त्वं देवानांमसि सिन्नं पप्रिंतमं जुष्टंतमं विह्नंतमं देवहूतंम्मित्यांह। यथायजुरेवैतत्॥३१॥

अहुंतमिस हिव्धानिमित्याहानांत्र्ये। द १ हंस्व मा ह्यारित्यांह धृत्यें। मित्रस्यं त्वा चक्षुंषा प्रेक्ष इत्यांह मित्रत्वायं। मा भेमा संविंक्था मा त्वां हि १ सिष्मित्याहाहि १ सायै। यद्वे किं च वातो नाभि वातिं। तथ्सर्वं वरुणदेवत्यम्। उरु वातायेत्यांह। अवांरुणमेवेनंत्करोति। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रमुव इत्यांह प्रसूत्ये। अश्विनोंर्बाहुभ्यामित्यांह॥३२॥

अश्विनौ हि देवानां मध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तां भ्यामित्यां हृ यत्यें। अग्नये जुष्टं निर्वपामीत्यां ह। अग्नयं पृवेनां जुष्टं निर्वपति। त्रिर्यज्ञंषा। त्रयं इमे लोकाः। पृषां लोकानामास्यें। तूष्णीं चंतुर्थम्। अपंरिमितमेवावं रुन्थे। स पृवमेवानुं पूर्व १ ह्वी १ षि निर्वपति॥ ३३॥

इदं देवानांमिदम् नः सहेत्यांह् व्यावृंत्यै। स्फात्यै त्वा नारात्या इत्यांह् गृत्यैं। तमंसीव वा एषोंऽन्तश्चंरति। यः पंरीणहिं। सुवंरिभ वि ख्यंषं वैश्वान्रं ज्योतिरित्यांह। सुवंरेवाभि वि पंश्यति वैश्वान्रं ज्योतिंः। द्यावांपृथिवी हुविषिं गृहीत उदंवेपेताम्। दृश्हंन्तान्दुर्या द्यावांपृथिव्योरित्यांह।
गृहाणां द्यावांपृथिव्योर्धृत्यै। उवंन्तरिक्षमिन्वहीत्यांह गत्यै।
अदित्यास्त्वोपस्थे सादयामीत्यांह। इ्यं वा अदितिः। अस्या
पुवैनंदुपस्थे सादयति। अग्ने ह्व्यश्र रेक्ष्स्वेत्यांह गृह्यै॥३४॥
पूजो व आग्ने धार्म प्रणीय प्रचंत्यतीयादेतहाहुभ्यामित्यांह हुवीशिष् निवंति गत्ये च्वारि व॥——[४]

इन्द्रों वृत्रमंहन्। सोंऽपः। अभ्यंम्रियत। तासां यन्मेध्यं यिज्ञयु सदेवमासींत्। तदपोदंक्रामत्। ते दुर्भा अभवन्। यद्भैर्प उंत्पुनातिं। या एव मेध्यां यिज्ञयाः सदेवा आपः। ताभिरवेना उत्पुनाति। द्वाभ्यामृत्पुनाति॥३५॥

द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्यै। देवो वंः सिवतोत्पुंनात्वित्यांह। सिवतृप्रंसूत एवेना उत्पुंनाति। अच्छिंद्रेण पिवत्रेणेत्यांह। असौ वा आदित्योऽच्छिंद्रं पिवत्रम्ं। तेनैवेना उत्पुंनाति। वसोः सूर्यस्य रिश्मिभिरित्यांह। प्राणा वा आपंः। प्राणा वर्सवः। प्राणा रश्मयंः॥३६॥

प्राणैरेव प्राणान्थ्सं पृंणिक्ति। सावित्रियर्चा। सवितृप्रंसूतं मे कर्मासदिति। सवितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गांयित्रया त्रिष्यमृद्धत्वायं। आपो देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्यांह। रूपमेवासामेतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। अग्रं इमं यज्ञं नंयताग्रं यज्ञपंतिमित्यांह। अग्रं एव यज्ञं नंयन्ति। अग्रं युज्ञपंतिम्॥३७॥

युष्मानिन्द्रों ऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रमवृणीध्वं वृत्रतूर्य

इत्याह। वृत्र १ हिन्ष्यित्रिन्द्र आपो वव्रे। आपो हेन्द्रं वित्रे। संज्ञामेवासांमेतथ्सामानं व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्याह। तेनाऽऽपः प्रोक्षिताः। अग्नये वो जुष्टं प्रोक्षांम्यग्नीषोमांभ्यामित्यांह। यथादेवतमेवैनान्प्रोक्षंति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥३८॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। शुन्धंध्वं दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्यांह। देवयुज्यायां एवेनांनि शुन्धित। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। अवंधूत्र रक्षोऽवंधूता अर्रातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वगुसीत्यांह। इयं वा अदिंतिः॥३९॥

अस्या एवैन्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वित्यांह् प्रतिष्ठित्ये। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवृमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चः पृशवो मेध्मुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्पुजा मृगं ग्राहुंकाः। यज्ञो देवेभ्यो निलायत। कृष्णों रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विर्पध्यवहन्तिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। हविषोऽस्कन्दाय॥४०॥

अधिषवंणमसि वानस्पत्यमित्यांह। अधिषवंण-मेवैनत्करोति। प्रति त्वाऽदिंत्यास्त्वग्वेत्त्वित्यांह सयत्वायं। अग्नेस्त्नर्सीत्यांह। अग्नेर्वा एषा तुन्। यदोषंधयः। वाचो विसर्जनमित्यांह। यदा हि प्रजा ओषंधीनामुश्जन्तिं। अथ वाचं विसृंजन्ते। देववीतये त्वा गृह्णामीत्यांह॥४१॥ देवतांभिरेवैन्थ्समंध्यति। अद्रिरिस वानस्पृत्य इत्यांह। ग्रावाणमेवैनंत्करोति। स इदं देवेभ्यों ह्व्य स्पृशमिं शिम्ष्वेत्यांह् शान्त्यै। हिविष्कृदेहीत्यांह। य एव देवाना रे हिव्ष्कृतंः। तान् ह्वंयति। त्रिह्वंयति। त्रिषंत्या हि देवाः। इषमावदोर्जमावदेत्यांह॥४२॥

इषमेवोर्जं यजंमाने दधाति। द्युमद्वंदत वय संङ्घातं जेष्मेत्यांह् भ्रातृंव्याभिभूत्यै। मनोः श्रृद्धादेवस्य यजंमानस्या-सुर्घ्री वाक्। यृज्ञायुधेषु प्रविष्टाऽऽसीत्। तेऽसुर्ग् यावंन्तो यज्ञायुधानांमुद्वदंतामुपाशृण्वन्। ते पर्राभवन्। तस्माथ्स्वानां मध्येऽवसायं यजेत। यावंन्तोऽस्य भ्रातृंव्या यज्ञायुधानां-मुद्धदंतामुपशृण्वन्तिं। ते पर्रा भवन्ति। उच्चेः समाहंन्त् वा आंह विजित्यै॥४३॥

वृङ्क एषामिन्द्रियं वीर्यम्। श्रेष्ठं एषां भवति। वर्षवृंद्धमस्ि प्रतिं त्वा वर्षवृंद्धं वेत्त्वित्यांह। वर्षवृंद्धा वा ओषंधयः। वर्षवृंद्धा इषीकाः समृंद्धौ। यज्ञ र रक्षाङ्स्यनु प्राविंशन्। तान्यस्रा पशुभ्यों निरवांदयन्त। तुषैरोषंधीभ्यः। परांपूत्र रक्षः परांपूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥४४॥

रक्षंसां भागों ऽसीत्यांह। तुषैरेव रक्षा रेसि निरवंदयते। अप उपंस्पृशति मेध्यत्वायं। वायुर्वो विविनक्तित्यांह। पवित्रं वै वायुः। पुनात्येवैनान्ं। अन्तरिक्षादिव वा एते प्रस्कंन्दन्ति। ये शूर्पात्। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिंगृह्णात्वित्यांह प्रतिंष्ठित्यै। हविषोऽस्कंन्दाय। त्रिष्फलीकंर्तवा त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथों मेध्यत्वायं॥४५॥

द्वाभ्यामुत्युंनाति रुष्मयो नयुन्त्यग्रे युज्ञपंति युज्ञोऽदितिरस्कंन्दाय गृह्णामीत्याह वदेत्याहु विजित्या अपहत्या अस्कंन्दाय

अवंधूत १ रक्षो ऽवंधूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वगुसीत्याह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैनत्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वित्यांह प्रतिष्ठित्यै। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मध्यत्वायं। तस्मौत्पुरस्तौत्यृत्यश्चः पृशवो मेधुमुपंतिष्ठन्ते। तस्मौत्युजा मृगं ग्राहुंकाः। युज्ञो देवेभ्यो निलायत॥४६॥

कृष्णों रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने हविरंधिपिनष्टिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्का। हविषोऽस्केन्दायां द्यावांपृथिवी सुहास्ताम्। ते शंम्यामात्रमेकमहर्वेता १ शम्यामात्रमेकमहंः। दिवः स्कंम्भिनरंसि प्रति त्वाऽदिंत्यास्त्वग्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योवींत्यैं। धिषणांऽसि पर्वत्या प्रतिं त्वा दिवः स्कंम्भनिर्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योर्विधृंत्यै॥४७॥

धिषणां ऽसि पार्वतेयी प्रतिं त्वा पर्वतिर्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योर्धृत्यैं। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंसव इत्यांह प्रस्तये। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्ताम्। पूष्णो हस्ताभ्यामित्यांह यत्त्यै। अधिवपामीत्यांह। यथादेवतमेवैनानिधं वपति। धान्यंमिस धिनुहि देवानित्यांह। पुतस्य यर्जुषो वीर्येण॥४८॥

यावदेकां देवतां कामयंते यावदेकां। तावदाहुंतिः प्रथते। न हि तदस्तिं। यत्तावंदेव स्यात्। यावंज्जुहोतिं। प्राणायं त्वाऽपानाय त्वेत्यांह। प्राणानेव यजंमाने दधाति। दीर्घामनु प्रसितिमायुंषे धामित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। अन्तरिक्षादिव वा एतानि प्रस्केन्दन्ति। यानि दृषदंः। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिंगृह्णात्वित्यांह प्रतिंष्ठित्यै। हिवषोऽस्केन्दाय। असंवपन्ती पिश्षाणूनि कुरुतादित्यांह मेध्यत्वायं॥४९॥

निलायत् विधृत्ये वीर्येण स्कन्दन्ति चुत्वारिं च॥——————[६]

धृष्टिंरसि ब्रह्मं युच्छेत्यांह् धृत्यैं। अपाँग्नेऽग्निमामादं जिह् निष्क्रव्यादर्श्या देवयर्जं वहेत्यांह। य एवाऽऽमात्क्रव्यात्। तमंपहत्यं। मेध्येऽग्नौ कृपालुमुपंदधाति। निर्दंग्ध्र्थ् रक्षो निर्दंग्धा अरांतय इत्यांह। रक्षार्थ्स्येव निर्दंहति। अग्निवत्युपंदधाति। अस्मिन्नेव लोके ज्योतिंर्धत्ते। अङ्गांरमिधं वर्तयति॥५०॥

अन्तरिक्ष एव ज्योतिर्धत्त। आदित्यमेवामुष्मिँ होके ज्योतिर्धत्ते। ज्योतिष्मन्तोऽस्मा इमे लोका भवन्ति। य एवं वेदं। ध्रुवमंसि पृथिवीं दृश्हेत्यांह। पृथिवीमेवैतेनं दृश्हित। धर्त्रमंस्यन्तरिक्षं दृश्हेत्यांह। अन्तरिक्षमेवैतेनं दृश्हित। ध्रुणंमसि दिवं दृश्हेत्यांह। दिवंमेवैतेनं दृश्हित॥५१॥

धर्मासि दिशों हु हेत्यांह। दिशं पुवैतेनं ह ५ हित।

इमानेवैतैर्लोकान्ह रहित। हर्हन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पृश्निः। य एवं वेदं। त्रीण्यग्नें कृपालान्युपंदधाति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामाध्यै। एक्मग्नें कृपालमुपं दधाति। एकं वा अग्नें कृपालं पुरुषस्य सम्भवंति॥५२॥

अथ द्वे। अथ त्रीणिं। अथं चत्वारिं। अथाष्टौ। तस्मांदृष्टा-कंपालं पुरुषस्य शिरंः। यदेवं कृपालांन्युपदधांति। यज्ञो वै प्रजापतिः। यज्ञमेव प्रजापंति स् सङ्स्करोति। आत्मानंमेव तथ्सङ्स्करोति। तस् सङ्स्कृतमात्मानम्॥५३॥

अमुष्मिँ ह्योके ऽनु परैति। यद्ष्टावृंप्दधांति। गायत्रिया तथ्सम्मितम्। यन्नवं। त्रिवृता तत्। यद्दशं। विराजा तत्। यदेकांदश। त्रिष्टुभा तत्। यद्वादंश॥५४॥

जगत्या तत्। छन्दंः सम्मितानि स उपदर्धत्कपालांनि। इमाँ ह्योकानंनुपूर्वं दिशो विधृत्ये द १ हित। अथा ऽऽयुंः प्राणान्यजां पृशून् यजंमाने दधाति। सृजातानंस्मा अभितो बहुलान्करोति। चितः स्थेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। भृगूंणामङ्गिरसां तपंसा तप्यध्वमित्यांह। देवतांनामेवैनांनि तपंसा तपति। तानि ततः सङ्स्थिते। यानि घर्मे कपालान्युपचिन्वन्ति वेधस् इति चतुंष्पदय्चां वि मुंश्चिति। चतुंष्पादः पृश्चवंः। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रति तिष्ठति॥५५॥ वर्ष्यते विविवेवेते द १ हित सम्भवित तर सङ्स्कृतमालानं इत्ये सङ्स्वेत विविवेवेते द १ हित सम्भवित वर सङ्स्कृतमालानं इत्ये सङ्स्वेत विविवेवेते वर्षाः [७]

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्व इत्यांह् प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्ताम्। पूष्णो हस्ताभ्यामित्यांह् यत्यै। सं वंपामीत्यांह। यथादेवतमेवेनांनि संवंपति। समापो अद्भिरंग्मत् समोषंधयो रसेनेत्यांह। आपो वा ओषंधीर्जिन्वन्ति। ओषंधयोऽपो जिन्वन्ति। अन्या वा एतासांमन्या जिन्वन्ति॥५६॥

तस्मदिवमाह। स॰ रेवतीर्जगंतीभिर्मध्रंमतीर्मध्रंमतीभिः सृज्यध्वमित्यांह। आपो वै रेवतीः। पृशवो जगंतीः। ओषंधयो मध्रंमतीः। आप ओषंधीः पृशून्। तानेवास्मां एक्धा स्॰सृज्यं। मध्रंमतः करोति। अद्भः परि प्रजांताः स्थ समद्भः पृंच्यध्वमितिं पूर्याप्लांवयति। यथा सुवृष्ट इमामनुविसृत्यं॥५७॥

आप् ओषंधीर्महयंन्ति। ताहगेव तत्। जनंयत्ये त्वा संयौमीत्यांह। प्रजा एवेतेनं दाधार। अग्नयें त्वाऽग्नीषोमांभ्यामित्यांह् व्यावृत्त्ये। मुखस्य शिरो-ऽसीत्यांह। युज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्पुंरोडाशंः। तस्मादेवमांह॥५८॥

घुर्मोऽसि विश्वायुरित्यांह। विश्वंमेवायुर्यजंमाने दधाति। उरु प्रथस्वोरु ते युज्ञपंतिः प्रथतामित्यांह। यजंमानमेव प्रजयां पृश्विमिः प्रथयति। त्वचं गृह्णीष्वेत्यांह। सर्वमेवैन्श् सर्तनुं करोति। अथाऽऽप आनीय परिमार्ष्टि। माश्स एव तत्त्वचं दधाति। तस्मौत्त्वचा माश्सं छुन्नम्। घुर्मो वा एषो-ऽशौन्तः॥५९॥ अर्धमासैंऽर्धमासे प्रवृंज्यते। यत्पुंरोडाशः। स ईंश्वरो यजमान श्रुचा प्रदहः। पर्यग्नि करोति। पृशुमेवेनमकः। शान्त्या अप्रदाहाय। त्रिः पर्यग्नि करोति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथो रक्षंसामपंहत्ये। अन्तरित् रक्षोऽन्तरिता अरातय इत्याह॥६०॥

रक्षंसाम्नतर्हित्यै। पुरोडाशं वा अधिश्रित्र रक्षा इंस्य-जिघा इसन्। दिवि नाको नामाग्री रक्षोहा। स एवास्माद्रक्षा इस्यपाहन्। देवस्त्वां सिवता श्रंपयत्वित्यांह। सिवतृ प्रमूत एवैन इस्थि। वर्षिष्ठे अधि नाक् इत्याह। रक्षंसामपहत्यै। अग्निस्तं तुनुवं माऽतिंधागित्याहा-ऽनंतिदाहाय। अग्ने हव्य इस्वस्वत्यांह गुप्त्यै॥६१॥

अविंदहन्तः श्रपयतेति वाचं विसृजते। यज्ञमेव ह्वी इष्यंभिव्याहृत्य प्रतंनुते। पुरोरुचमविंदाहाय शृत्यें करोति। मुस्तिष्को वै पुरोडार्शः। तं यन्नाभिं वासर्येत्। आविर्मस्तिष्केः स्यात्। अभिवांसयित। तस्माद्गुहां मस्तिष्केः। भरमंनाऽभिवांसयित। तस्मान्मा इसेनास्थिं छन्नम्॥६२॥

वेदेनाभिवांसयित। तस्मात्केशैः शिरंश्छुन्नम्। अखंलिति-भावुको भवति। य एवं वेदं। पृशोर्वे प्रतिमा पुरोडार्शः। स नायजुष्कंमभिवास्यः। वृथेव स्यात्। ईश्वरा यजंमानस्य पृशवः प्रमेतोः। सं ब्रह्मणा पृच्यस्वेत्यांह। प्राणा वै ब्रह्मं॥६३॥ प्राणाः प्रावंः। प्राणेरेव प्रान्थ्सम्पृणिक्ति। न प्रमायुंका भवन्ति। यजंमानो वै पुंरोडाशंः। प्रजा प्रावः पुरीषम्। यदेवमंभिवासयंति। यजंमानमेव प्रजयां प्राुभिः समर्धयति। देवा वै ह्विर्भृत्वाऽब्रुंवन्। कस्मिन्निदं म्रंक्ष्यामह् इतिं। सौंऽग्निरंब्रवीत्॥६४॥

मियं तुनूः सं निधंध्वम्। अहं वस्तं जनियिष्यामि। यस्मिन्मुक्ष्यध्व इति। ते देवा अग्नौ तुनूः सन्न्यंदधत। तस्मादाहुः। अग्निः सर्वा देवता इति। सोऽङ्गारेणाऽऽपः। अभ्यंपातयत्। ततं एकतोऽजायत। स द्वितीयंमुभ्यं-पातयत्॥६५॥

ततों द्वितोंऽजायत। स तृतीयंम्भ्यंपातयत्। ततंस्त्रितों-ऽजायत। यद्द्योऽजांयन्त। तदाप्यानांमाप्यत्वम्। यदात्मभ्योऽजांयन्त। तदात्म्यानांमात्म्यत्वम्। ते देवा आप्येष्वंमृजत। आप्या अंमृजत् सूर्यांभ्युदिते। सूर्यांभ्युदितः सूर्यांभिनिम्रुक्ते॥६६॥

सूर्याभिनिमुक्तः कुन्खिनि। कुन्खी श्यावदंति। श्यावदंत्रग्रदिधिषो। अग्रदिधिषुः परिवित्ते। परिवित्तो वीर्हणि। वीर्हा ब्रंह्महणि। तद्वंह्महणुं नात्यच्यवत। अन्तर्वेदि निन्यत्यवंरुद्धे। उल्मुकेनाभि गृह्णाति शृत्त्वायं। शृतकामा इव हि देवाः॥६७॥ अन्य जिन्त्यन विस्त्वेवमाहाशांन आह् गृत्यं कुत्र ब्रह्मांब्रवीद्वितीयंम्-यंपातपृथ्स्यांभिनिमुक्ते देवाः॥—[८]

अया जिंन्वत्यमु विस्त्येवमाहाशांन्त आहू गुर्ये छुत्रं ब्रह्माँबवीद्वितीयंमुभ्यंपातय्थसूर्याभिनिमुक्ते देवाः॥——[८] देवस्ये त्वा सवितुः प्रसव इति स्फामादंत्ते प्रस्तये।

अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्यै। आदंद इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। सहस्रंभृष्टिः शततेजा इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। वायुरंसि तिग्मतेजा इत्यांह। तेजो व वायुः॥६८॥ तेजं एवास्मिन्दधाति। विषाद्वै नामांसुर आंसीत्। सोऽबिभेत्। यज्ञेनं मा देवा अभिभविष्यन्तीतिं। स पृंथिवीम्भ्यंवमीत्। सा मेध्याऽभवत्। अथो यदिन्द्रों वृत्रमहन्। तस्य लोहितं पृथिवीमनु व्यंधावत्। सा

पृथिवीम्भ्यवमीत्। सा मृध्याऽभवत्। अथो यदिन्द्री वृत्रमहन्। तस्य लोहितं पृथिवीमनु व्यंधावत्। सा मृध्याऽभवत्। पृथिवि देवयज्नीत्यांह॥६९॥ मध्यांमेवैनां देवयजंनीं करोति। ओषंध्यास्ते मूलं मा हिर्ससेष्मित्यांह। ओषंधीनामहिर्स्सायै। ब्रजं

मध्यामुबना दब्यजना कराता आषध्यास्त मूल् मा हि सेसिष्मित्यांह। ओषंधीनामहि सेसायै। व्रजं गंच्छ गोस्थानमित्यांह। छन्दा सेसि वै व्रजो गोस्थानंः। छन्दा इंस्येवास्मैं व्रजं गोस्थानं करोति। वर्षंतु ते द्यौरित्यांह। वृष्टिवें द्यौः। वृष्टिंमेवावं रुन्थे। बुधान देव सवितः परमस्यां परावतीत्यांह॥७०॥

द्वौ वाव पुरुषौ। यं चैव द्वेष्टिं। यश्चैनं द्वेष्टिं। तावुभौ बंध्नाति पर्मस्यां परावितं शतेन पाशैंः। योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मस्तमतो मा मौगित्याहानिं मुक्त्यै। अररुर्वे नामां सुर आंसीत्। स पृथिव्यामुपं मुप्तोऽशयत्। तं देवा अपंहतो-ऽररुः पृथिव्या इतिं पृथिव्या अपांच्नन्। भ्रातृं व्यो वा अररुः।

अपंहतोऽरर्रुः पृथिव्या इति यदाहं॥७१॥

भ्रातृं व्यमेव पृंथिव्या अपहिन्ति। तेंऽमन्यन्त। दिवं वा अयमितः पतिष्यतीतिं। तम्ररुंस्ते दिवं माऽस्कानितिं दिवः पर्यंबाधन्त। भ्रातृं व्यो वा अरुंगः। अरुंग्स्ते दिवं मा स्कानिति यदाहं। भ्रातृं व्यमेव दिवः परिंबाधते। स्तम्बयुजुरहंरित। पृथिव्या एव भ्रातृं व्यमपहिन्ति। द्वितीय हरित॥७२॥

अन्तिरिक्षादेवैन्मपंहिन्ति। तृतीयर् हरित। दिव पृवैन्मपंहिन्ति। तूष्णीं चंतुर्थर हंरित। अपंरिमितादेवैन्मपं-हिन्ति। असुंराणां वा इयमग्रं आसीत्। यावदासीनः परापश्यंति। तावंदेवानाम्। ते देवा अंब्रुवन्। अस्त्वेव नोऽस्यामपीति॥७३॥

क्यंत्रो दास्यथेतिं। यावंथ्स्वयं पंरिगृह्णीथेतिं। ते वसंवस्त्वेतिं दक्षिणतः पर्यगृह्णन्। रुद्रास्त्वेतिं पश्चात्। आदित्यास्त्वेत्यंत्तर्तः। तेंऽग्निना प्राञ्चोऽजयन्। वसुंभिदिक्षिणा। रुद्रैः प्रत्यर्ञ्चः। आदित्येरुदंश्चः। यस्यैवं विदुषो वेदिं परिगृह्णन्ति॥७४॥

भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंच्यो भवति। देवस्यं सिवृतुः स्व इत्यांह् प्रसूँत्यै। कर्म कृण्वन्ति वेधस् इत्यांह। इषितः हि कर्म क्रियतें। पृथिच्ये मेध्यं चामेध्यं च व्युदंक्रामताम्। प्राचीनंमुदीचीनं मेध्यम्। प्रतीचीनं दक्षिणाऽमेध्यम्। प्राचीमुदीचीं प्रवृणां करोति। मेध्यांमेवैनां देव्यर्जनीं करोति॥७५॥

प्राश्चौ वेद्यश्सावुन्नयित। आहुवनीयंस्य परिगृहीत्यै। प्रतीची श्रोणौ। गार्हपत्यस्य परिगृहीत्यै। अथो मिथुनत्वायं। उद्धन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। उद्धन्ति। तस्मादोषंधयः परांभवन्ति॥७६॥

मूर्लं छिनत्ति। भ्रातृंव्यस्यैव मूर्लं छिनत्ति। मूलं वा अंतितिष्ठद्रक्षा्र्स्यनूत्पिपते। यद्धस्तेन छिन्द्यात्। कुन्खिनीः प्रजाः स्युः। स्फोर्न छिनत्ति। वज्रो वै स्फाः। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षा्र्स्यपंहन्ति। पितृदेवत्याऽतिंखाता। इयंतीं खनति॥७७॥

प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताम्। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां चतुरङ्गुलेऽन्वंविन्दन्। तस्माँचतुरङ्गुलं खेयाँ। चतुरङ्गुलं खंनति। चतुरङ्गुले ह्योषंधयः प्रतितिष्ठंन्ति। आ प्रंतिष्ठायै खनति। यजमानमेव प्रंतिष्ठां गमयति। दक्षिणतो वर्षीयसीं करोति। देवयजनस्यैव रूपमंकः॥७८॥

पुरीषवतीं करोति। प्रजा वै पृशवः पुरीषम्। प्रजयैवैनं पृशिमः पुरीषवन्तं करोति। उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। पृतावती वै पृथिवी। यावती वेदिः। तस्यां पृतावत एव भ्रातृंव्यं निर्भज्यं। आत्मन् उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। ऋतमंस्यृतसदंनमस्यृतश्रीरसीत्यांह। यथायजुरेवैतत्॥७९॥

कूरिमंव वा एतत्कंरोति। यद्वेदिं क्रोति। धा असि स्वधा असीतिं योयुप्यते शान्त्यैं। उर्वी चासि वस्वीं चासीत्यांह। उर्वीमेवैनां वस्वीं करोति। पुरा कूरस्यं विस्पों विरिष्शिन्नित्यांह मेध्यत्वायं। उदादायं पृथिवीं जीरदांनुर्यामेरंयं चन्द्रमंसि स्वधाभिरित्यांह। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदंपहत्यं। मेध्यां देवयजंनीं कृत्वा॥८०॥

यद्दश्चन्द्रमंसि मेध्यम्। तद्स्यामेर्यति। तां धीरांसो अनुदृश्यं यजन्त् इत्याहानुंख्यात्यै। प्रोक्षंणीरा सांदय। इध्माब्र्हिरुपंसादय। स्रुवं च स्रुचंश्च सम्मृंड्डि। पत्नी स् सन्नंह्य। आज्येनोदेहीत्यांहानुपूर्वतांयै। प्रोक्षंणीरा सांदयति। आपो वै रंक्षोघ्नीः॥८१॥

रक्षंसामपंहत्ये। स्फास्य वर्त्मंन्थ्सादयति। युज्ञस्य सन्तंत्ये। उवाच हासितो दैवलः। पृतावंतीवां अमुष्मिं श्लोक आपं आसन्। यावंतीः प्रोक्षंणीरिति। तस्माद्धह्वीरासाद्याः। स्फामुदस्यन्। यं द्विष्यात्तं ध्यायेत्। शुचैवैनंमपंयति॥८२॥ व वापुर्गह पगुवतीत्याहाहं द्वितीयरं हर्तितिं परिगृह्वन्तं वेव्यवंति करीति भवन्ति खनत्यकर्ततकृत्वा रक्षोग्रीर्थवि॥ [१]

वज्रो वै स्फाः। यद्नवश्चं धारयेंत्। वज्रेंऽध्वर्युः क्षंण्वीत। पुरस्तांत्तिर्यश्चं धारयति। वज्रो वै स्फाः। वज्रेंणैव यज्ञस्यं दक्षिणतो रक्षाङ्स्यपंहन्ति। अग्निभ्यां प्राचंश्च प्रतीचंश्च। स्फोनोदींचश्चाधराचंश्च। स्फोन वा एष वज्रेंणास्यै पाप्मानं

भ्रातृंव्यमपहत्यं। उत्करेऽधि प्रवृंश्चति॥८३॥

यथोपधार्यं वृश्चन्त्येवम्। हस्ताववं नेनिक्ते। आत्मानंमेव पंवयते। स्फ्यं प्रक्षांलयति मेध्यत्वार्यः। अथो पाप्मनं एव भ्रातृंव्यस्य न्युङ्गं छिनित्ति। इध्माबुर्हिरुपंसादयति युक्त्यै। यज्ञस्यं मिथुन्त्वार्यः। अथो पुरोरुचंमेवेतां दंधाति। उत्तरस्य कर्मणोऽनुंख्यात्यै। न पुरस्तांत्प्रत्यगुपंसादयेत्॥८४॥

यत्पुरस्तौत्प्रत्यगुंपसादयौत्। अन्यत्रोऽऽहुतिप्थादि्ध्मं प्रतिंपादयेत्। प्रजा वै ब्र्हिः। अपंराध्रुयाद्वर्हिषां प्रजानां प्रजनंनम्। पृश्चात्प्रागुपंसादयित। आहुतिपथेने्ध्मं प्रतिं-पादयित। सम्प्रत्येव ब्र्हिषां प्रजानां प्रजनंनम्पैति। दक्षिणिम्ध्मम्। उत्तरं ब्र्हिः। आत्मा वा इध्मः। प्रजा ब्र्हिः। प्रजा ह्यात्मन् उत्तरितरा तीर्थे। ततो मेधंमुप्नीयं। यथादेवतमेवनत्प्रतिष्ठापयित। प्रति तिष्ठति प्रजयां पश्मिर्यजमानः॥८५॥

तृतीयंस्यां देवस्यांश्वपुर्शुं यो वे पूँवेंद्युः कर्मणे वामिन्द्रों वृत्रमंहुन्थ्सोंऽपोऽवंधूत्ं धृष्टिंदेवस्येत्यांहु सं वंपामि देवस्य स्फामा दंदे वज्रो वे स्फामे दर्शा॥१०॥ तृतीयंस्यां यज्ञस्यानंतिरेकाय पृवित्रंवत्यध्वयुं चांधिषवंणमस्यन्तरिक्ष एव रक्षंसामन्तर्हित्ये द्वौ वाव पुरुषो यद्दश्रन्द्रमंसि मेध्यं पञ्चाशीतिः॥८५॥ तृतीयंस्यां यज्ञमानः॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

प्रत्युंष्ट्र रक्षः प्रत्युंष्ट्य अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अग्नेर्वस्तेजिष्ठेन तेजंसा निष्टंपामीत्यांह मेध्यत्वायं। स्रुचः सम्माष्टिं। स्रुवमग्रें। पुमार्स्समेवाभ्यः सङ्श्यंति मिथुन्त्वायं। अथं जुहूम्। अथोप्भृतम्ं। अथं ध्रुवाम्। असौ वै जुहूः॥१॥

अन्तरिक्षमुप्भृत्। पृथिवी ध्रुवा। इमे वै लोकाः स्रुचेः। वृष्टिः सम्मार्जनानि। वृष्टिर्वा इमाँ लोकानंनुपूर्वं केल्पयित। ते ततः क्रुप्ताः समेधन्ते। समेधन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां प्शुभिः। य एवं वेदं। यदिं कामयेत् वर्षुंकः पूर्जन्यः स्यादितिं। अग्रतः सम्मृंज्यात्॥२॥

वृष्टिंमेव नि यंच्छति। अवाचीनांग्रा हि वृष्टिः। यदिं कामयेतावंर्षुकः स्यादितिं। मूलतः सम्मृंज्यात्। वृष्टिंमेवोद्यंच्छति। तदु वा आंहुः। अग्रत एवोपरिंष्टाथ्सम्मृं-ज्यात्। मूलतोऽधस्तांत्। तदंनुपूर्वं कंल्पते। वर्षुंको भवतीतिं॥३॥

प्राचींमभ्याकारम्। अग्रैरन्तर्तः। एविमेव ह्यन्नंम्ह्यते। अथो अग्राद्वा ओषंधीनामूर्जं प्रजा उपंजीवन्ति। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धे। अधस्तांत्प्रतीचींम्। दण्डम्तंतम्तः। मूलेन मूलं प्रतिष्ठित्ये। तस्मांदर्त्नो प्राञ्च्यपरिष्टाल्लोमानि। प्रत्यश्चधस्तांत्॥४॥ सुग्ध्येषा। प्राणो वै सुवः। जुहूर्दक्षिणो हस्तः। उपभृथ्सव्यः। आत्मा ध्रुवा। अन्न सम्मार्जनानि। मुख्तो वै प्राणोऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नं प्रविश्यं। बाह्यतस्तन्व स् शुभयति। तस्माध्स्रुवमेवाग्रे सम्माधि। मुख्तो हि प्राणो-ऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नमाविशति। तौ प्राणापानो। अर्व्यर्धुकः प्राणापानाभ्यां भवति। य पृवं वेदं॥५॥ जुह्र्पंज्याद्ववर्गति प्रत्वश्च्यस्तंमाष्ट्रि पश्च व॥ [१]

दिवः शिल्पमवंततम्। पृथिव्याः कुक्भिं श्रितम्। तेनं वयः सहस्रंवल्शेन। सपत्नं नाशयामसि स्वाहेति स्रुख्सम्मार्जनान्यग्रौ प्र हंरति। आपो वै दर्भाः। रूपमेवैषांमेतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। अनुष्टुभूर्चा। आनुष्टुभः प्रजापंतिः। प्राजापत्यो वेदः। वेदस्याग्रः ई

सुख्स्म्मार्जनानि॥६॥

स्वेनैवैनानि छन्दंसा। स्वयां देवतंया समर्धयति। अथो ऋग्वाव योषां। दुर्भो वृषां। तन्मिथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। प्रजायते प्रजयां पृशुभिर्यजमानः। तान्येके वृथैवापांस्यन्ति। तत्तथा न कार्यम्। आरंब्धस्य य्जियंस्य कर्मणः सविंदोहः॥७॥

यद्येनानि पृशवोंऽभि तिष्ठेयुः। न तत्पृशुभ्यः कम्। अद्भिर्मौर्जयित्वोत्करे न्यंस्येत्। यद्वै युज्ञियंस्य कर्मणो्- ऽन्यत्राऽऽहुंतीभ्यः सन्तिष्ठंते। उत्करो वाव तस्यं प्रतिष्ठा। एता हि तस्मैं प्रतिष्ठां देवाः समभंरन्। यद्द्भिर्मार्जयंति। तेनं शान्तम्। यदुंत्करे न्यस्यति। प्रतिष्ठामेवैनांनि तद्गंमयति॥८॥

प्रति तिष्ठति प्रजयां प्रशुभिर्यजंमानः। अथौं स्तम्बस्य वा पृतद्रूपम्। यथ्स्रुंख्सम्मार्जनानि। स्तम्ब्रशो वा ओषंधयः। तासां जरत्कक्षे प्रावो न रंमन्ते। अप्रियो ह्येषां जरत्कक्षः। यावंदप्रियो ह वै जरत्कक्षः पंशूनाम्। तावंदप्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्यन्यत्राग्नेर्दधंति। न्वदाव्यांसु वा ओषंधीषु प्रावो रमन्ते॥९॥

न्वदावो ह्येषां प्रियः। यावंत्प्रियो हु वै नंवदावः पंशूनाम्। तावंत्प्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्यग्रौ प्रहरंन्ति। तस्मादेतान्यग्रावेव प्रहरेत्। यत्रस्मिन्थ्सम्मृज्यात्। पृशूनां धृत्यैं। यो भूतानामधिपतिः। रुद्रस्तंन्तिचरो वृषां। पृशूनस्माकं मा हि सीः। पृतदंस्तु हुतं तव स्वाहेत्यंग्रिस्ममार्जनान्यग्रौ प्रहरिते। पृषा वा पृतेषां योनिः। पृषा प्रतिष्ठा। स्वामेवेनांनि योनिम्ं। स्वां प्रतिष्ठां गंमयति। प्रति तिष्ठति प्रजया पृशुभिर्यजमानः॥१०॥

वेदस्याग्रई सुख्सुम्मार्जनानि विदोहो गंमयति पृशवीं रमन्ते हिश्सीः षद चं॥———[२]

अयंज्ञो वा एषः। योऽप्रत्नीकः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्र्यन्वास्ते। युज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजननाय। यत्तिष्ठंन्ती स्त्रह्येत। प्रियं ज्ञाति १ रुन्ध्यात्। आसीना सन्नह्यते। आसीना ह्येषा वीर्यं करोति॥११॥

यत्पश्चात्प्राच्युन्वासीत। अनयां समदेन्दधीत। देवानां पित्रंया समदेन्दधीत। देशाँदक्षिणत उदीच्यन्वाँस्ते। आत्मनों गोपीथायं। आशासाना सौमन्सिमत्यांह। मेध्यांमेवैनां केवंलीं कृत्वा। आशिषा समर्धयिति। अग्नेरनुं- व्रता भूत्वा सन्नंह्ये सुकृताय किमत्यांह। एतद्वै पित्नंये व्रतोपनयंनम्॥१२॥

तेनैवैनां व्रतम्पंनयति। तस्मांदाहुः। यश्चैवं वेद् यश्च न। योर्ऋमेव युंते। यम्नवास्तें। तस्यामुष्मिं ह्योके भंवतीति योर्ऋण। यद्योक्रम्। स योगः। यदास्तें। स क्षेमः॥१३॥

योगक्षेमस्य क्रुप्त्यै। युक्तं क्रियाता आशीः कामें युज्याता इतिं। आशिषः समृद्धे। ग्रन्थिं ग्रंशाति। आशिषं एवास्यां परिं गृह्णाति। पुमान् वै ग्रन्थिः। स्त्री पत्नीं। तन्मिथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। प्र जांयते प्रजयां पश्मिर्यजमानः॥१४॥

अथों अर्धो वा एष आत्मनंः। यत्पर्नीं। यज्ञस्य धृत्या अर्शिथिलं भावाय। सुप्रजसंस्त्वा वय स्पूप्रकीरुपं सेदिमेत्यांह। यज्ञमेव तन्मिथुनीकरोति। ऊनेऽतिरिक्तं धीयाता इति प्रजात्यै। महीनां पयोऽस्योषंधीना स् रस् इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। तस्य तेऽक्षीयमाणस्य निर्वपामि देवयुज्याया इत्यांह। आ-मेवैतामा शांस्ते॥१५॥

कुरोतिं व्रतोपनयंनुं क्षेमो यर्जमानः शास्ते॥

[3]

घृतं च वै मध्रं च प्रजापंतिरासीत्। यतो मध्यांसीत्। ततः प्रजा अंसृजत। तस्मान्मध्रंषि प्रजनंनिमवास्ति। तस्मान्मध्रंषा न प्रचंरन्ति। यातयांम् हि। आज्येन् प्रचंरन्ति। यज्ञो वा आज्यम्। यज्ञेनैव यज्ञं प्रचंरन्त्ययांतयामत्वाय। पत्र्यवेक्षते॥१६॥

मिथुन्त्वाय प्रजांत्यै। यद्वै पत्नीं यज्ञस्यं क्रोतिं। मिथुनं तत्। अथो पत्निया एवेष यज्ञस्यांन्वारम्भोऽनंवच्छित्त्यै। अमेध्यं वा एतत्कंरोति। यत्पत्यवेक्षंते। गार्हंपत्येऽधिं श्रयति मेध्यत्वायं। आहुवनीयंम्भ्युद्रवति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। तेजोऽस् तेजोऽनु प्रेहीत्यांह॥१७॥

तेजो वा अग्निः। तेज आज्यम्। तेजंसैव तेजः समर्धयित। अग्निस्ते तेजो मा विनैदित्याहाहि स्मायै। स्फ्यस्य वर्त्मं स्थादयित। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अग्नेर्जिह्वाऽसिं सुभूर्देवानामित्यांह। यथायजुरेवैतत्। धाम्नेधाम्ने देवेभ्यो यजुंषेयजुषे भवेत्यांह। आमेवैतामा शांस्ते॥१८॥

तद्वा अर्तः प्वित्राभ्यामेवोत्प्नाति। यजमानो वा आज्यम्। प्राणापानौ प्वित्रे। यजमान एव प्रांणापानौ दंधाति। पुन्राहारम्। पुविभव हि प्रांणापानौ स्थरंतः। शुक्रमंसि ज्योतिरिस् तेजोऽसीत्याह। रूपमेवास्यैतन्महिमानं व्याचेष्टे। त्रिर्यज्ञंषा। त्रयं इमे लोकाः॥१९॥

पुषां लोकानामार्स्यै। त्रिः। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वार्य। अथाऽऽज्यंवतीभ्याम्पः। रूपमेवासांमेतद्वर्णं दधाति। अपि वा उताऽऽहुंः। यथां हु वै योषां सुवर्ण्ष्ट्रं हिरंण्यं पेश्नलं बिभ्रंती रूपाण्यास्तें। एवमेता एतर्हीतिं। आपो वै सर्वा देवताः॥२०॥

पुषा हि विश्वेषां देवानां तृनः। यदाज्यम्। तृत्रोभयोंमीमा स्मा। जामि स्यात्। यद्यजुषाऽऽज्यं यजुषाऽप उत्पुनीयात्। छन्दंसाऽप उत्पुनात्यजामित्वाय। अथो मिथुनत्वायं। सावित्रियर्चा। सवितृप्रंसूतं मे कर्मासदिति। सवितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गांयत्रिया त्रिष्षमृद्धत्वायं। अद्भिरेवौषंधीः सं नयति। ओषंधीभिः पृशून्। पृशुभिर्यजंमानम्। शुक्रं त्वां शुक्रायां ज्योतिंस्त्वा ज्योतिंष्यर्चिस्त्वाऽर्चिषीत्यांह सर्वत्वायं। पर्यांप्र्या अनंन्तरायाय॥२१॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स एतमिन्द्र आज्यंस्याव-काशमंपश्यत्। तेनावैक्षता ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः। य एवं विद्वानाज्यंम्वेक्षंते। भवंत्यात्मनाः। पराःऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदाज्यंनान्यानि हवी इष्यंभिघारयंति॥२२॥

अथ् केनाऽऽज्यमिति। सृत्येनेति ब्रूयात्। चक्षुर्वे सृत्यम्। सृत्येनैवैनंद्भि घारयति। ईश्वरो वा एषौऽन्यो भवितोः। यश्चक्षुषाऽऽज्यंम्वेक्षंते। निमील्यावैक्षेत। दाधारात्मश्चक्षुंः। अभ्याज्यं घारयति। आज्यं गृह्णाति॥२३॥

छन्दा रेस् वा आज्यम्। छन्दा रेस्येव प्रीणाति। चतुर्जुह्वां गृह्णाति। चतुंष्पादः पृशवंः। पृश्न्वेवावं रुन्धे। अष्टावृंपभृतिं। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रः प्राणः। प्राणमेव पृश्वं दधाति। चतुर्ध्रवायाम्॥२४॥

चतुंष्पादः प्शवंः। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भातृव्यदेवत्योपभृत्। चतुर्जुह्रां गृह्णन्भूयो गृह्णीयात्। अष्टावंपभृतिं गृह्णन्कनीयः। यजंमानायैव भातृंव्यमुपंस्तिं करोति। गौर्वे सुचंः। चतुर्जुह्रां गृह्णाति। तस्माचतुंष्पदी॥२५॥

अष्टावंपभृतिं। तस्मांद्रष्टाशंफा। चतुर्ध्रुवायांम्। तस्मा्चतुंः स्तना। गामेव तथ्सङ्स्करोति। साऽस्मै सङ्स्कृतेषमूर्जं दहे। यञ्जुह्वां गृह्वातिं। प्रयाजेभ्यस्तत्। यदंपभृतिं। प्रयाजानूयाजेभ्यस्तत्। सर्वस्मै वा एतद्यज्ञायं गृह्यते।

यद्भुवायामाज्यम्॥२६॥

अभिघारयंति गृह्णाति ध्रुवायां चतुंप्पदी प्रयाजानूयाजेभ्यस्तद्वे चं॥————[५]

आपों देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्यांह। रूपमेवासांमेतन्मंहि-मानं व्याचेष्टे। अग्रं इमं यज्ञं नंयताग्रं यज्ञपंतिमित्यांह। अग्रं एव यज्ञं नंयन्ति। अग्रं यज्ञपंतिम्। युष्मानिन्द्रों-ऽवृणीत वृत्रत्यें यूयमिन्द्रंमवृणीध्वं वृत्रत्यं इत्यांह। वृत्र हं हिन्ष्यित्रिन्द्र आपों वव्रे। आपो हेन्द्रं विव्रेर। संज्ञामेवासांमेतथ्सामानं व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्यांह॥२७॥

तेनाऽऽपः प्रोक्षिताः। अग्निर्देवेभ्यो निर्लायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। स वनस्पतीन्प्राविशत्। कृष्णो ऽस्याखरेष्ठो ऽग्नये त्वा स्वाहेत्याह। अग्नयं एवेनं जुष्टं करोति। अथो अग्नेरेव मेधमवे रुन्धे। वेदिरिस बर्हिषे त्वा स्वाहेत्याह। प्रजा व बर्हिः। पृथिवी वेदिः॥२८॥

प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयित। बर्हिरेसि स्रुग्भ्यस्त्वा स्वाहेत्यांह। प्रजा वै बर्हिः। यजंमानः स्रुचंः। यजंमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयित। दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथिव्ये त्वेतिं बर्हिरासाद्य प्रोक्षंति। पृभ्य पृवैनं ह्योकेभ्यः प्रोक्षंति। अथ ततः सह स्रुचा पुरस्तौत्प्रत्यश्चं ग्रन्थं प्रत्युक्षिति। प्रजा वै बर्हिः। यथा सूत्ये काल आपंः पुरस्ताद्यन्ति॥२९॥

ताहगेव तत्। स्वधा पितृभ्य इत्याह। स्वधाकारो हि

पितृणाम्। ऊर्ग्नवं बर्हिषद्ध्य इति दक्षिणायै श्रोणेरोत्तरस्यै निनयति सन्तंत्यै। मासा वै पितरों बर्हिषदंः। मासांनेव प्रीणाति। मासा वा ओषंधीर्वर्धयंन्ति। मासाः पचन्ति समृंद्धौ। अनंतिस्कन्दन् ह पूर्जन्यों वर्षित। यत्रैतदेवं क्रियते॥३०॥

ऊर्जा पृथिवीं गंच्छुतेत्यांह। पृथिव्यामेवोर्जं दधाति। तस्मांत्पृथिव्या ऊर्जा भुंअते। ग्रुन्थिं वि स्र रंसयित। प्रजनयत्येव तत्। ऊर्ध्वं प्राश्चमुद्भूढं प्रत्यश्चमा यंच्छिति। तस्मांत्प्राचीन् रेतों धीयते। प्रतीचींः प्रजा जांयन्ते। विष्णोः स्तूपोऽसीत्याह। युज्ञो वै विष्णुं:॥३१॥

यज्ञस्य धृत्यै। पुरस्तांत्प्रस्तरं गृह्णाति। मुख्यंमेवेनं करोति। इयंन्तं गृह्णाति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। युज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। युज्पुरुषा सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। पुतावृद्वे पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥३२॥

अपंरिमितं गृह्णाति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धै। तस्मिन्प्वित्रे अपि सृजति। यजमानो वै प्रस्तरः। प्राणापानौ प्वित्रे। यजमान एव प्राणापानौ दंधाति। ऊर्णामदसं त्वा स्तृणामीत्यांह। यथायजुरेवेतत्। स्वास्स्थं देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं एवैनंथ्स्वास्स्थं करोति॥३३॥

ब्रहः स्तृंणाति। प्रजा वै ब्रहः। पृथिवी वेदिः। प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। अनंतिदृश्जः स्तृणाति। प्रजयैवैनं पृशुभिरनंतिदृश्ञं करोति। धारयंन्प्रस्तरं पंरिधीन्परिं दधाति। यजमानो वै प्रंस्तरः। यजमान एव तथ्स्वयं पंरिधीन्परिं दधाति। गुन्धुर्वोऽसि विश्वावंसुरित्यांह॥३४॥

विश्वमेवायुर्यजंमाने दधाति। इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्याह। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। मित्रावरुंणौ त्वोत्तर्तः परिधत्तामित्यांह। प्राणापानौ मित्रावरुंणौ। प्राणापानावेवास्मिन्दधाति। सूर्यंस्त्वा पुरस्तांत् पात्वित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। कस्यांश्चिद्भिशंस्त्या इत्यांह। अपंरिमितादेवेनंं पाति॥३५॥

वीतिहौंत्रं त्वा कव इत्यांह। अग्निमेव होत्रेण् समर्धयित। द्युमन्त्र सिमधीम्हीत्यांह सिमेद्धौ। अग्ने बृहन्तंमध्वर इत्यांह वृद्धौ। विशो यन्ने स्थ इत्यांह। विशां यत्यौ। उदीचीनांग्ने नि दंधाति प्रतिष्ठित्यै। वसूनार रुद्राणांमादित्यानार् सर्दसि सीदेत्यांह। देवतांनामेव सदेने प्रस्तुर सांदयित। जुहूरंसि घृताची नाम्नेत्यांह॥३६॥

असौ वै जुहूः। अन्तरिक्षमुप्भृत्। पृथिवी ध्रुवा। तासामेतदेव प्रियं नामं। यद्घृताचीतिं। यद्घृताचीत्याहं। प्रियेणैवेना नाम्नां सादयति। एता अंसदन्थ्सुकृतस्यं लोक इत्याह। सृत्यं वै सुंकृतस्यं लोकः। सृत्य एवेनाः सुकृतस्यं लोके सांदयति। ता विष्णो पाहीत्यांह। युज्ञो वै विष्णुः। युज्ञस्य धृत्यैं। पाहि युज्ञं पाहि युज्ञपंतिं पाहि मां यंज्ञनियमित्यांह। युज्ञाय यजमानायाऽऽत्मनें। तेभ्यं एवाऽऽशिषमाशास्तेऽनांत्यं॥३७॥

 ξ — ξ स्थेत्यांह पृथिवी वेदिर्यन्ति क्रियते वीणुर्वीर्यसम्मितं करोत्याह पाति नाम्नेत्यांह लोके सादयति पद चं॥ ξ

अग्निना वै होत्रां। देवा असुंरान्भ्यंभवन्। अग्नयं सिम्ध्यमानायानुंब्रूहीत्यांह् भ्रातृंव्याऽभिभूत्ये। एकंविश्याति-मिध्मदारूणिं भवन्ति। एकविश्यो वै पुरुषः। पुरुषस्याऽऽस्यै। पश्चंदशेध्मदारूण्यभ्या दंधाति। पश्चंदश् वा अर्धमासस्य रात्रंयः। अर्धमास्याः संवथ्सर आप्यते। त्रीन्पंरिधीन्परिं दधाति॥३८॥

ऊर्ध्वे स्मिधावा दंधाति। अन्याजेभ्यंः स्मिध्मितं शिनष्टि। षद्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनोपं वाजयित। प्राजापत्यो वै वेदः। प्राजापत्यः प्राणः। यजमान आहवनीयंः। यजमान एव प्राणं दंधाति॥३९॥

त्रिरुपं वाजयित। त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। वेदेनोप्यत्यं स्रुवेणं प्राजापत्यमांघारमा घारयित। यज्ञो वै प्रजापितः। यज्ञमेव प्रजापितिं मुख्त आरंभते। अथौं प्रजापितः सर्वा देवताः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। अग्निमंग्नीत्रिस्तिः सं मृङ्कीत्यांह। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥४०॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। परिधीन्थ्सं माँष्टिं। पुनात्येवैनान्। त्रिस्त्रिः सं माँष्टिं। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथो मेध्यत्वाये। अथो एते वै देवाश्वाः। देवाश्वानेव तथ्सं माँष्टिं। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्ये। आसीनोऽन्यमांघारमा घारयति॥४१॥ तिष्ठंत्रन्यम्। यथाऽनों वा रथं वा युआत्। एवमेव तदंध्वर्युर्यज्ञं युनिक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्याभ्यूँढ्यै। वहंन्त्येनं ग्राम्याः प्रावंः। य एवं वेदं। भुवंनमिस वि प्रंथुस्वेत्यांह। यज्ञो वै भुवंनम्। यज्ञ एव यजंमानं प्रजयां पृशुभिः प्रथयति। अग्ने यष्टंरिदं नम् इत्यांह॥४२॥

अग्निर्वे देवानां यष्टां। य एव देवानां यष्टां। तस्मां एव नमंस्करोति। जुह्नेह्यग्निस्त्वां ह्वयति देवयज्याया उपंभृदेहिं देवस्त्वां सिवृता ह्वयति देवयज्याया इत्याह। आग्नेयी वै जुहूः। सावित्र्युपभृत्। ताभ्यांमेवैने प्रसूत आदंत्ते। अग्नांविष्णू मा वामवं ऋमिष्मित्यांह। अग्निः पुरस्तांत्। विष्णुंर्यज्ञः पश्चात्॥४३॥

ताभ्यांमेव प्रंतिप्रोच्यात्या क्रांमित। विजिंहाथां मा मा सन्तांमित्याहाहि रेसायै। लोकं में लोककृतों कृणुत्मित्यांह। आमेवेतामा शांस्ते। विष्णोः स्थानंमसीत्यांह। युज्ञो वै विष्णुंः। पृतत्खलु वे देवानामपंराजितमायतंनम्। यद्यज्ञः। देवानांमेवापंराजित आयतंने तिष्ठति। इत इन्द्रों अकृणोद्वीर्याणीत्यांह॥४४॥

इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। समारभ्योर्ध्वो अध्वरो दिविस्पृश्मित्यांह् वृद्धौं। आघारमांघार्यमांणमनुं समारभ्यं। एतस्मिन्काले देवाः सुंवर्गं लोकमायन्। साक्षादेव यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। अथो समृद्धेनैव यज्ञेन यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। अहुंतो युज्ञो युज्ञपंतेरित्याहानांत्र्यै। इन्द्रांवान्थ्स्वाहेत्यांह। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। बृहद्भा इत्यांह॥४५॥

सुवर्गो वै लोको बृहद्भाः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्ये। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। प्राण आधारः। यथ्म ईस्पर्शयैत्। भ्रातृंव्येऽस्य प्राणं देध्यात्। अस ईस्पर्शयन्नत्या क्रांमति। यजमान एव प्राणं देधाति। पाहि माँउग्ने दुर्श्वरितादा मा सुचरिते भुजेत्याह॥४६॥

अग्निर्वाव प्वित्रम्। वृजिनमनृतं दुश्चरितम्। ऋजुक्रमं स्त्य स्चेरितम्। अग्निरेवैनं वृजिनादनृताद्दश्चरितात्पाति। ऋजुक्में सत्ये सुचेरिते भजति। तस्मादेवमा शांस्ते। आत्मनों गोपीथायं। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यदांघारः। आत्मा ध्रुवा॥४७॥

आघारमाघार्यं ध्रुवा १ समंनक्ति। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रति दधाति। द्विः समंनक्ति। द्वौ हि प्राणापानौ। तदांहः। त्रिरेव समंभ्यात्। त्रिधांतु हि शिर् इतिं। शिरं इवैतद्यज्ञस्यं। अथो त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। मुखस्य शिरोऽसि सभ्योतिषा ज्योतिरङ्गामित्यांह। ज्योतिरेवास्मा उपिरष्टादधाति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्ये॥४८॥ परिवर्णात प्राणं देधाति हि युक्ते घरिरणी नम् इत्यांह पृथाहीयांणीत्यांह भ इत्यांह पृथविष्टिन्यां [10]

धिष्णिया वा एते न्युंप्यन्ते। यद्ग्रह्मा। यद्भोतां। यदंध्वर्युः।

यद्ग्रीत्। यद्यजंमानः। तान् यदंन्तरेयात्। यजंमानस्य प्राणान्थ्सङ्कर्षेत्। प्रमायुंकः स्यात्। पुरोडाशंमप्गृह्य सश्चरत्यध्वर्युः॥४९॥

यजंमानायैव तल्लोक शिर्षित। नास्यं प्राणान्थ्स ह्रंर्षित। न प्रमायंको भवति। पुरस्तांत प्रत्यङ्कासीनः। इडांया इडामा दंधाति। हस्त्या होत्रें। प्शवो वा इडां। प्शवः पुरुषः। पृशुष्वेव पृशून्प्रतिष्ठापयति। इडांयै वा एषा प्रजांतिः॥५०॥

तां प्रजांतिं यजंमानोऽनु प्र जांयते। द्विर्ङ्गुलांवनिक्ति पर्वणोः। द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्यै। स्कृदुपं स्तृणाति। द्विरा दंधाति। स्कृद्भि घांरयति। चृतुः सम्पंद्यते। चृत्वारि वै पृशोः प्रतिष्ठानांनि। यावांनेव पृशुः। तमुपंह्वयते॥५१॥

मुखंमिव प्रत्युपंह्वयेत। सम्मुखानेव प्शूनुपं ह्वयते। प्शवो वा इडाँ। तस्माथ्साऽन्वारभ्याँ। अध्वर्युणां च यजंमानेन च। उपंहूतः पशुमानंसानीत्यांह। उप ह्येनौ ह्वयंते होताँ। इडांयै देवतांनामुपहुवे। उपंहूतः पशुमान्भंवति। य पृवं वेदं॥५२॥

यां वै हस्त्यामिडांमादधांति। वाचः सा भांगधेयम्। यामुंपह्वयंते। प्राणाना सा। वाचं चैव प्राणा श्र्यावं रुन्धे। अथ वा एतर्ह्युपंहूतायामिडांयाम्। पुरोडाशंस्यैव बंहि्षदों मीमा सा। यजंमानं देवा अंब्रुवन्। ह्विर्नो निर्व्पेतिं। नाहमंभागो निर्वपस्यामीत्यं ब्रवीत्॥ ५३॥

न मयांऽभागयाऽनुंवक्ष्यथेति वागंब्रवीत्। नाहमंभागा पुरोनुवाक्यां भविष्यामीतिं पुरोनुवाक्यां। नाहमंभागा याज्यां भविष्यामीतिं याज्यां। न मयांऽभागेन वर्षद्वरिष्यथेतिं वषद्वारः। यद्यंजमानभागं निधायं पुरोडाशं बर्हिषदं करोतिं। तानेव तद्वागिनंः करोति। चतुर्धा करोति। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वंव प्रतिं तिष्ठति। बर्हिषदं करोति॥५४॥

यजंमानो वै पुरोडाशंः। प्रजा बर्हिः। यजंमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयति। तस्मादस्थ्राऽन्याः प्रजाः प्रतितिष्ठंन्ति। मार्सेनान्याः। अथो खल्वांहुः। दक्षिणा वा एता हंविर्यज्ञस्यांन्तर्वेद्यवं रुध्यन्ते। यत्पुरोडाशं बर्हिषदं करोतीतिं। चतुर्धा कंरोति। चत्वारो ह्यंते हंविर्यज्ञस्यर्त्विजंः॥५५॥

ब्रह्मा होताँ ऽध्वर्युर्ग्नीत्। तम्भि मृंशेत्। इदं ब्रह्मणंः। इदं होतुंः। इदमंध्वर्योः। इदम्ग्नीध् इतिं। यथैवादः सौम्येँ ऽध्वरे। आदेशंमृत्विग्भ्यो दक्षिणा नीयन्तें। ताद्दगेव तत्। अग्नीधे प्रथमाया दंधाति॥५६॥

अग्निम्ंखा ह्यृद्धिः। अग्निम्ंखामेवर्द्धिं यजंमान ऋभ्नोति। सकृदुंपस्तीर्य द्विरादधंत्। उपस्तीर्य द्विर्भि घांरयति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रींणाति। वेदेनं ब्रह्मणे ब्रह्मभागं परिंहरति। प्राजापत्यो वै वेदः। प्राजापत्यो ब्रह्मा॥५७॥ स्विता यज्ञस्य प्रसूत्यै। अथ कार्मम्न्येनं। ततो होत्रैं। मध्यं वा एतद्यज्ञस्यं। यद्धोतौं। मध्यत एव यज्ञं प्रीणाति। अथौध्वर्यवैं। प्रतिष्ठा वा एषा यज्ञस्यं। यद्ध्वर्युः। तस्मौद्धविर्यज्ञस्यैतामेवाऽऽवृतमनुं॥५८॥

अन्या दक्षिणा नीयन्ते। यज्ञस्य प्रतिष्ठित्यै। अग्निमंग्नीथ्सकृथ्संकृथ्सं मृङ्कीत्यांह। परांङिव ह्यंतर्हिं यज्ञः। इषिता दैव्या होतार इत्यांह। इषित हि कर्म क्रियतें। भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुंषः सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूहीत्यांह। आमेवेतामा शांस्ते। स्वगा दैव्या होतृभ्य इत्यांह। यज्ञमेव तथ्स्वगा करोति। स्वस्तिर्मानुषभ्य इत्यांह। आमेवेतामा शांस्ते। शं योर्बूहीत्यांह। शंयुमेव बार्हस्पत्यं भाग्धेयेन समर्धयति॥५९॥

च्युत्युष्युर्युः प्रजातिर्ह्वयते वेदाँबवीद्वर्तिषदं करोत्यृत्विजां दथाति ब्रह्माऽनुंकरोति चृत्वारिं च॥———[८]

अथ सुर्चावनुष्टुग्भ्यां वार्जवतीभ्यां व्यूहित। प्रतिष्ठा वा अनुष्टुक्। अत्रं वाजः प्रतिष्ठित्यै। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। प्राचीं जुहूमूहिति। जातानेव भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। प्रतीचींमुप्भृतम्। जिन्ष्यमाणानेव प्रतिनुदते। सविषूच एवापोह्यं सपत्नान् यर्जमानः। अस्मिँ होके प्रतिं तिष्ठति॥६०॥

द्वाभ्यांम्। द्विप्रंतिष्ठो हि। वसुंभ्यस्त्वा रुद्रेभ्यंस्त्वा-ऽऽदित्येभ्यस्त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। स्रुक्षु प्रंस्त्रमंनक्ति। इमे वै लोकाः स्रुचंः। यजंमानः प्रस्तरः। यजंमानमेव तेजंसाऽनक्ति। त्रेधाऽनंक्ति। त्रयं इमे लोकाः॥६१॥

पृभ्य पृवैनं लोकेभ्योऽनिक्तः। अभिपूर्वमंनिकः। अभिपूर्वमेव यजमानं तेजसाऽनिक्तः। अक्तः रिहाणा इत्याहः। तेजो वा आज्यम्। यजमानः प्रस्तरः। यजमानमेव तेजसाऽनिकः। वियन्तु वयु इत्याहः। वयं पृवैनं कृत्वाः। सुवृगं लोकं गंमयति॥६२॥

प्रजां योनिं मा निर्मृक्षमित्यांह। प्रजायें गोपी्थायं। आप्यांयन्तामाप् ओषंधय इत्यांह। आपं एवौषंधी्रा प्यांययति। मुरुतां पृषंतयः स्थेत्यांह। मुरुतो वे वृष्ट्यां ईशते। वृष्टिंमे्वावं रुन्धे। दिवं गच्छ् ततों नो वृष्टिमेर्येत्यांह। वृष्टिंवें द्यौः। वृष्टिंमे्वावं रुन्धे॥६३॥

यावृद्वा अध्वर्युः प्रस्तरं प्रहरित। तावेदस्यायुंमीयते। आयुष्पा अंग्रेऽस्यायुंमें पाहीत्यांह। आयुंरेवाऽऽत्मन्धंते। यावृद्वा अध्वर्युः प्रस्तरं प्रहरित। तावेदस्य चक्षुंमीयते। चक्षुष्पा अंग्रेऽसि चक्षुंमें पाहीत्यांह। चक्षुंरेवाऽऽत्मन्धंते। ध्रुवाऽसीत्यांह् प्रतिष्ठित्यै। यं परिष्धं पूर्यधंत्था इत्यांह॥६४॥

यथायज्ञरेवैतत्। अग्ने देव पणिभिर्वीयमाण इत्याह। अग्नयं एवेनं जुष्टं करोति। तन्तं एतमनु जोषं भरामीत्यांह। सजातानेवास्मा अनुंकान्करोति। नेदेष त्वदंपचेतयांता इत्याहानुंख्यात्ये। यज्ञस्य पाथ उप समित्तिमत्यांह। भूमानंमेवोपैति। परिधीन्त्र हंरति। यज्ञस्य समिष्ट्ये॥६५॥ सुचौ सं प्रस्नांवयित। यदेव तत्रं ऋूरम्। तत्तेनं शमयित। जुह्वामुंपभृतम्। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। यजमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। सङ्स्रावभागाः स्थेत्यांह। वसंवो वै रुद्रा आंदित्याः सङ्स्रावभागाः। तेषां तद्भागधेयम्॥६६॥

तानेव तेनं प्रीणाति। वैश्वदेव्यर्चा। एते हि विश्वं देवाः। त्रिष्टुग्भवति। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। अग्नेर्वामपन्नगृहस्य सदिस सादयामीत्यांह। इयं वा अग्निरपन्नगृहः। अस्या एवैने सदेने सादयति। सुम्नायं सुम्निनी सुम्ने मां धत्तमित्यांह॥६७॥

प्रजा वै प्शवंः सुम्नम्। प्रजामेव प्शूनात्मन्धेत्ते। धुरि धुर्यौ पात्मित्यांह। जायापत्योर्गोपीथायं। अग्नेंऽदब्धायोऽशीततनो इत्यांह। यथायजुरेवैतत्। पाहि माऽद्य दिवः पाहि प्रसित्ये पाहि दुरिष्ट्ये पाहि दुंरद्मन्ये पाहि दुर्श्वरितादित्यांह। आमेवेतामा शाँस्ते। अविषन्नः पितुं कृणु सुषदा योनिङ् स्वाहेतींध्मसंवृश्चनान्यन्वाहार्यपचंनेऽभ्याधायं फलीकरणहोमं जुंहोति। अतिरिक्तानि वा इंध्मसं वृश्चनानि॥६८॥

अतिरिक्ताः फलीकरणाः। अतिरिक्तमाज्योच्छेषणम्। अतिरिक्त पुवातिरिक्तं दधाति। अथो अतिरिक्तेनैवातिरिक्त-मास्वाऽवं रुन्धे। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां वेदेनान्वंविन्दन्। वेदेन् वेदिं विविदुः पृथिवीम्। सा पंप्रथे पृथिवी पार्थिवानि। गर्भं बिभर्ति भुवंनेष्वन्तः। ततो यज्ञो जांयते विश्वदानिरितिं पुरस्तां थस्तम्बयजुषों वेदेन वेदिरं सम्मार्छ्यनुंवित्त्ये॥६९॥

अथो यद्वेदश्च वेदिश्च भवंतः। मिथुनत्वाय प्रजाँत्यै। प्रजापंतेर्वा एतानि श्मश्रृंणि। यद्वेदः। पत्निया उपस्थ आस्यंति। मिथुनमेव कंरोति। विन्दतें प्रजाम्। वेद १ होता-ऽऽहंवनीयाँथ्स्तृणन्नेति। यज्ञमेव तथ्सन्तंनोत्योत्तंरस्मादर्ध-मासात्। त॰ सन्तंतमुत्तंरेऽर्धमास आलंभते॥७०॥

तं कालेकांल आगंते यजते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। स त्वा अध्वर्युः स्यात्। यो यतो यज्ञं प्रयुङ्का। तदेनं प्रतिष्ठापयतीति। वाताद्वा अध्वर्युर्यज्ञं प्रयुंङ्के। देवां गातुविदो गातुं वित्वा गातुमितेत्याह। यतं एव यज्ञं प्रयुङ्के। तदेनं प्रतिष्ठापयति। प्रति तिष्ठति प्रजयां पशुभिर्यजमानः॥७१॥

तिष्ठतीम लोका गंमवित बौर्वृष्टिमेवावं रूथे पूर्यश्रत्था इत्यांह् समिष्टी भाग्धेयंश्वत्तमित्यांह् वा इंध्मसं वृक्षंनान्यन्वित्त्ये

यो वा अयंथादेवतं यज्ञम्पचरित। आ देवताभ्यो वृश्यते। पापीयान्भवति। यो यथादेवतम्। न देवताभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति। वारुणो वै पार्शः। इमं विष्यामि वरुणस्य पाशमित्यांह। वरुणपाशादेवैनांं मुश्रति। सवितृप्रंसूतो यथादेवतम्॥ ७२॥

न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति। धातुश्च योनौं सुकृतस्यं लोक इत्यांह। अग्निर्वे धाता। पुण्यं सुकृतस्यं लोकः। अग्निरेवैनां धाता। पुण्ये कर्मी

सुकृतस्यं लोके दंधाति। स्योनं में सह पत्यां करोमीत्यांह। आत्मनश्च यजमानस्य चानांत्ये सन्त्वायं। समायुंषा सं प्रजयेत्याह॥७३॥

आमेवैतामा शाँस्ते पूर्णपात्रे। अन्ततों ऽनुष्टुभाँ। चतुंष्पद्वा एतच्छन्दः प्रतिष्ठितं पित्रिये पूर्णपात्रे भविति। अस्मिँ होके प्रति तिष्ठानीति। अस्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठति। अथो वाग्वा अनुष्टुक्। वाङ्गिं थुनम्। आपो रेतः प्रजननम्। एतस्माद्वे मिथुनाद्विद्योतंमानः स्तनयंन्वर्षित। रेतः सिश्चन्॥७४॥

प्रजाः प्रजनयन्। यद्वै यज्ञस्य ब्रह्मणा युज्यतें। ब्रह्मणा वै तस्यं विमोकः। अद्भिः शान्तिः। विम्नुंकं वा एतर्हि योक्रं ब्रह्मणा। आदायेन्त्पत्नीं सहाप उपंगृह्णीते शान्त्यै। अञ्जलौ पूर्णपात्रमा नयति। रेतं एवास्यां प्रजां देधाति। प्रजया हि मनुष्यः पूर्णः। मुखं वि मृष्टे। अवभृथस्यैव रूपं कृत्वोत्तिष्ठति॥७५॥

सुवितुप्रमूतो यथादेवतं प्रजयेत्याह सिश्चन्मृष्ट् एकं च॥————[१०]

प्रिवेषो वा एष वनस्पतीनाम्। यदुंपवेषः। य एवं वेदं। विन्दतें परिवेष्टारम्। तमुंत्करे। यं देवा मंनुष्येषु। उपवेषमधारयन्। ये अस्मदर्प चेतसः। तानस्मभ्यमिहा कुरु। उपवेषोपं विष्टि नः॥७६॥

प्रजां पृष्टिमथो धनम्। द्विपदो नृश्चतुंष्पदः। ध्रुवाननंप-गान्कुर्विति पुरस्तांत्प्रत्यश्चमुपं गूहति। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चंः शूद्रा अवंस्यन्ति। स्थ्विम्त उपंगूहति। अप्रंतिवादिन एवैनांन्कुरुते। धृष्टि्वा उपवेषः। शुचर्तो वज्रो ब्रह्मणा सर्शितः। योपंवेषे शुक्। साऽमुमृंच्छतु यं द्विष्म इति॥७७॥

अथाँस्मै नाम् गृह्य प्रहेरित। निर्मुन्नुंद् ओकंसः। सपत्नो यः पृंतन्यितं। निर्बाध्येन हिविषां। इन्द्रं एणं परांशरीत्। इहि तिस्रः पंरावतः। इहि पश्च जना अति। इहि तिस्रोऽतिं रोचनायावत्। सूर्यो असंदिवि। पुरमान्त्वां परावतम्॥७८॥

इन्द्रों नयतु वृत्रहा। यतो न पुन्रायंसि। शृश्वतीभ्यः समाभ्य इति। त्रिवृद्वा एष वज्रो ब्रह्मणा सश्शितः। श्रुचैवैनं विध्वा। एभ्यो लोकेभ्यों निर्णुद्यं। वज्रेण ब्रह्मणा स्तृणुते। हृतोंऽसाववंधिष्मामुमित्यांह स्तृत्यैं। यं द्विष्यात्तं ध्यांयेत्। शुचैवैनंमर्पयति॥७९॥

प्रत्युष्टं दिवः शिल्पुमयंज्ञो घृतं चं देवासुराः स एतमिन्द्र आपों देवीर्ग्निना धिष्णिया अथ् स्रुचौ यो वा अयंथादेवतं परिवेषो वा एकांदश॥११॥ प्रत्युष्टमयंज्ञ एषा हि विश्वेषां देवानांमूर्जा पृथिवीमथो रक्षंसान्तां प्रजातिं द्वाभ्यां तं कालेकांले नवंसप्ततिः॥७९॥ प्रत्युष्टमर्पयति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

ब्रह्मणे ब्राह्मणमालंभते। क्षुत्रायं राज्नन्यम्। मुरुद्धो वैश्यम्। तपंसे शूद्रम्। तमसे तस्करम्। नारंकाय वीर्हणम्। पाप्मने क्रीबम्। आक्रयायांयोगूम्। कामांय पुङ्श्वलूम्। अतिंकुष्टाय मागुधम्॥१॥

गीतायं सूतम्। नृत्तायं शैलूषम्। धर्माय सभाचरम्। नर्मायं रेभम्। निरेष्ठाये भीमृलम्। हसाय कारिम्। आनुन्दायं स्त्रीषुखम्। प्रमुदं कुमारीपुत्रम्। मेधाये रथकारम्। धेर्याय तक्षाणम्॥२॥

श्रमांय कौलालम्। मायायै कार्मारम्। रूपायं मणिकारम्। शुभे वपम्। शुरव्याया इषुकारम्। हेत्यै धंन्वकारम्। कर्मणे ज्याकारम्। दिष्टायं रञ्जसर्गम्। मृत्यवे मृग्युम्। अन्तंकाय श्वनितम्॥३॥

स्न्धयें जारम्। गेहायोपपतिम्। निर्ऋत्ये परिवित्तम्। आर्त्ये परिविविदानम्। अराध्ये दिधिषूपतिम्। प्वित्रांय भिषजम्। प्रज्ञानांय नक्षत्रदर्शम्। निष्कृत्ये पेशस्कारीम्। बलांयोपदाम्। वर्णायानूरुधम्॥४॥

न्दीभ्यः पौञ्जिष्टम्। ऋक्षीकाँभ्यो नैषांदम्। पुरुष्व्याघ्रायं दुर्मदम्। प्रयुद्ध उन्मंत्तम्। गुन्धर्वापस्तराभ्यो व्रात्यम्। सुर्पदेव- जनेभ्योऽप्रंतिपदम्। अवेभ्यः कित्वम्। इर्यताया अर्कितवम्। पिशाचेभ्यो बिदलकारम्। यातुधानेभ्यः कण्टककारम्॥५॥

उथ्मादेभ्यः कुज्जम्। प्रमुदे वामनम्। ह्याभ्यः स्रामम्। स्वप्नायान्थम्। अधमाय बिध्रम्। स्ंज्ञानाय स्मरकारीम्। प्रकामोद्यायोपसदम्। आशिक्षायै प्रश्चिनम्। उपशिक्षायां अभिप्रश्चिनम्। मर्यादाये प्रश्चिववाकम्॥६॥

ऋत्यैं स्तेनहंदयम्। वैरंहत्याय पिशुंनम्। विवित्त्ये क्षतारम्। औपंद्रष्टाय सङ्ग्रहीतारम्। बलायानुचरम्। भूम्ने पंरिष्कुन्दम्। प्रियायं प्रियवादिनम्। अरिष्ट्या अश्वसादम्। मेधाय वासः पल्पूलीम्। प्रकामायं रजियत्रीम्॥७॥

भायै दार्वाह् । प्रभायां आग्नेन्थम्। नाकंस्य पृष्ठायांभि-षेक्तारम्। ब्रध्नस्यं विष्ठपाय पात्रनिर्णेगम्। देवलोकायं पेशितारम्। मनुष्यलोकायं प्रकरितारम्। सर्वेभ्यो लोकेभ्यं उपसेक्तारम्। अवंत्ये वधायोपमन्थितारम्। सुवर्गायं लोकायं भागद्वम्। वर्षिष्ठाय नाकाय परिवेष्टारम्॥८॥

अर्मेभ्यो हस्तिपम्। ज्वायाँश्वपम्। पुष्टौ गोपालम्। तेजंसेऽजपालम्। वीर्यायाविपालम्। इरांयै कीनाशम्। कीलालांय सुराकारम्। भुद्रायं गृहुपम्। श्रेयंसे वित्तुधम्। अध्यक्षायानुक्षुत्तारम्॥९॥

मुन्यवेऽयस्तापम्। क्रोधांय निस्रम्। शोकांयाभिस्रम्।

उत्कूलिवकूलाभ्यां त्रिस्थिनम्। योगांय योक्तारम्। क्षेमांय विमोक्तारम्। वर्पुषे मानस्कृतम्। शीलांयाञ्जनीकारम्। निर्ऋत्यै कोशकारीम्। यमायासूम्॥१०॥

युम्यै यमसूम्। अर्थर्वभ्योऽवंतोकाम्। संवथ्सरायं पर्यारिणीम्। परिवथ्सरायाविजाताम्। इदावथ्सरायापु-स्कद्वरीम्। इद्वथ्सरायातीत्वरीम्। वथ्सराय विजर्जराम्। संवथ्सराय पर्लिक्रीम्। वनाय वनपम्। अन्यतोरण्याय दावपम्॥११॥

सरोंभ्यो धेवरम्। वेशंन्ताभ्यो दाशम्ँ। उपस्थावंरीभ्यो बैन्दम्ँ। नुङ्गुलाभ्यः शौष्कलम्। पार्याय कैवर्तम्। अवार्याय मार्गारम्। तीर्थेभ्यं आन्दम्। विषंमेभ्यो मैनालम्। स्वनेंभ्यः पर्णकम्। गृहाँभ्यः किरांतम्। सानुंभ्यो जम्भंकम्। पर्वतेभ्यः किम्पूंरुषम्॥१२॥

प्रतिश्रुत्कांया ऋतुलम्। घोषांय भृषम्। अन्तांय बहुवादिनम्। अनुन्ताय मूकम्। महंसे वीणावादम्। क्रोशांय तूणव्ध्मम्। आकृन्दायं दुन्दुभ्याघातम्। अवरस्परायं शङ्खध्मम्। ऋभुभ्योजिनसन्धायम्। साध्येभ्यंश्चर्म्मणम्॥१३॥

बीभ्थ्सायै पौल्क्सम्। भूत्यै जागर्णम्। अभूँत्यै स्वपनम्। तुलायै वाणिजम्। वर्णाय हिरण्यकारम्। विश्वैभ्यो देवेभ्यः सिध्मलम्। पृश्चाद्दोषायं ग्लावम्। ऋत्यै जनवादिनम्। व्यृद्धा अपगुल्भम्। सुरुश्वरायं

प्रच्छिदम्ं॥१४॥

हसाय पुङ्श्वलूमा लंभते। वीणावादं गणेकं गीताये। यादंसे शाबुल्याम्। नुर्मायं भद्रवृतीम्। तूण्वध्मं ग्रांमण्यं पाणिसङ्घातं नृत्तायं। मोदांयानुक्रोशंकम्। आनुन्दायं तलवम्॥१५॥

अक्षराजायं कित्वम्। कृतायं सभाविनम्ं। त्रेतांया आदि-नवद्र्शम्। द्वाप्रायं बिहुः सदम्। कलंये सभास्थाणुम्। दुष्कृतायं चरकांचार्यम्। अध्वंने ब्रह्मचारिणम्ं। पिशाचेभ्यंः सैल्गम्। पिपासायं गोव्यच्छम्। निर्ऋत्ये गोघातम्। क्षुधे गोविकर्तम्। क्षुतृष्णाभ्यान्तम्। यो गां विकृन्तंन्तं मार्सं भिक्षंमाण उपतिष्ठंते॥१६॥

भूम्यै पीठसर्पिणमा लेभते। अग्नयेऽ५स्लम्। वायवे चाण्डालम्। अन्तरिक्षाय व॰शन्तिनम्। दिवे खंलतिम्। सूर्याय हर्यक्षम्। चन्द्रमंसे मिर्मिरम्। नक्षेत्रेभ्यः किलासम्। अहे शुक्रं पिङ्गलम्। रात्रियै कृष्णं पिङ्गाक्षम्॥१७॥

वाचे पुरुषमा लेभते। प्राणमंपानं व्यानमुंदानः संमानं तान् वायवें। सूर्याय चक्षुरा लेभते। मनश्चन्द्रमंसे। दिग्भ्यः श्रोत्रम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१८॥

अथैतानरूपेभ्य आर्लभते। अतिहस्वमितदीर्घम्। अतिकृश्मत्यर्भसलम्। अतिशुक्रमितिकृष्णम्। अतिश्रक्षण्-मितलोमशम्। अतिकिरिटमितदन्तुरम्। अतिमिर्मिर्मिति-

चतुर्थः प्रश्नः

मेमिषम्। आशायै जामिम्। प्रतीक्षायै कुमारीम्॥१९॥

ब्रह्मणे गीतायु श्रमाय सुन्धये नुदीभ्यं उथ्सादेभ्य ऋत्ये भाया अर्मैभ्यो मृन्यवे युम्यें दशंदश् सरौभ्यो द्वादंश प्रतिश्रुत्काये वीभृथ्साये दशंदश् हसाय सप्ताक्षंगुजाय त्रयोंदश् भूम्ये दशं वाचे षडथ् नवेकान्नविरंशितः॥१९॥ ब्रह्मणे युम्ये नवंदश॥१९॥ ब्रह्मणे कुमगुरीम्॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

स्तयं प्रपेद्ये। ऋतं प्रपेद्ये। अमृतं प्रपेद्ये। प्रजापेतेः प्रियां तनुव्मनातां प्रपेद्ये। इदम्हं पेश्चद्येन् वर्जेण। द्विषन्तं भ्रातृंव्यमवं क्रामामि। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। भूभृंवः सुवंः। हिम्॥१॥

मुत्यं दर्श॥_____[१]

प्र वो वाजां अभिद्यंवः। ह्विष्मंन्तो घृताच्यां। देवाञ्जिंगाति सुमृयुः। अग्न आयांहि वीतयें। गृणानो ह्व्यदांतये। नि होतां सिथ्स बर्हिषिं। तं त्वां समिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामिस। बृहच्छोंचा यविष्ठ्य। स नः पृथुः श्रवाय्यम्॥२॥

अच्छां देव विवासिस। बृहदंग्ने सुवीर्यम्। ईडेन्यों नम्स्यंस्तिरः। तमा रेसि दर्शृतः। सम्ग्रिरिध्यते वृषां। वृषों अग्निः समिध्यते। अश्वो न देववाहंनः। तर ह्विष्मंन्त ईडते। वृषंणं त्वा वृयं वृषन्ं। वृषांणः समिधीमहि॥३॥

अग्रे दीर्घतं बृहत्। अग्निं दूतं वृंणीमहे। होतांरं विश्ववंदसम्। अस्य यज्ञस्यं सुऋतुम्ं। समिध्यमांनो अध्वरे। अग्निः पांवक ईड्यः। शोचिष्केशस्तमीमहे। समिद्धो अग्न आहुत। देवान् यंक्षि स्वध्वर। त्व॰ हि हंव्यवाडसिं। आ जुंहोत दुवस्यतं। अग्निं प्रयत्यंध्वरे। वृणीध्व॰ हंव्यवाहंनम्। त्वं वर्रुण उत मित्रो अंग्ने। त्वां वंधन्ति मतिभिवंसिष्ठाः। त्वे वसुं सुषण्नानिं सन्तु। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥४॥

अग्ने महा असि ब्राह्मण भारत। असावसौँ। देवेद्धो मन्विद्धः। ऋषिष्ठुतो विप्रांनुमदितः। कृविश्वस्तो ब्रह्मंस शितो घृताहंवनः। प्रणीर्यज्ञानाम्। र्थीरध्वराणाम्। अतूर्तो होता। तूर्णिर्हव्यवाट्। आस्पात्रं जुहूर्देवानाम्॥५॥

चम्सो देवपानः। अराश् इंवाग्ने नेमिर्देवाश्स्त्वं पंरिभूरिस। आ वह देवान् यजंमानाय। अग्निमंग्न आवंह। सोम्मावंह। अग्निमावंह। प्रजापंतिमावंह। अग्नीषोमावावंह। इन्द्राग्नी आवंह। इन्द्रमावंह। महेन्द्रमावंह। देवाश् आंज्यपाश् आवंह। अग्निश् होत्रायाऽऽवंह। स्वं मंहिमान्मावंह। आ चाँग्ने देवान् वहं। सुयजां च यज जातवेदः॥६॥

अग्निर्होता वेत्वग्निः। होत्रं वैंत्तु प्रावित्रम्। स्मो वयम्। साधु ते यजमान देवतां। घृतवंतीमध्वर्यो सुच्मास्यंस्व। देवायुवं विश्ववाराम्। ईडामहै देवा ईडेन्यान्। नुम्स्यामं नमस्यान्। यजांम यज्ञियान्॥७॥

स्मिधों अग्न आज्यंस्य वियन्तु। तनूनपांदग्न आज्यंस्य वेतु। इडो अंग्न आज्यंस्य वियन्तु। ब्रहिरंग्न आज्यंस्य वेतु। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहा सोमम्। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहाँ प्रजापंतिम्। स्वाहाऽग्नीषोमौ। स्वाहैन्द्राग्नी। स्वाहेन्द्रम्॥ स्वाहां महेन्द्रम्। स्वाहां देवा॰ आँज्यपान्। स्वाहाऽग्नि॰ होत्राञ्जंषाणाः। अग्न आज्यंस्य वियन्तु॥८॥

अग्निर्वृत्राणि जङ्घनत्। द्रविणस्युर्विप्न्ययां। सिमिद्धः शुक्र आहुंतः। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। त्व सोमासि सत्पंतिः। त्व राजोत वृंत्रहा। त्वं भद्रो असि कर्तुः। जुषाणः सोम् आज्यंस्य ह्विषो वेतु। अग्निः प्रत्नेन जन्मंना। शुम्भांनस्त्नुव्र् स्वाम्। क्विविप्रेण वावृधे। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। सोमं गीर्भिष्ट्वां व्यम्। वर्धयांमो वचोविदः। सुमृडीको न आविंश। जुषाणः सोम् आज्यंस्य ह्विषो वेतु॥९॥

--स्वा॰ षट् चं॥---------[६्

अग्निर्मूर्धा दिवः कुकुत्। पितः पृथिव्या अयम्। अपार रेतार्रस जिन्वति। भुवो यज्ञस्य रजंसश्च नेता। यत्रां नियुद्धिः सचंसे शिवाभिः। दिवि मूर्धानं दिधेषे सुवर्षाम्। जिह्वामंग्ने चकृषे हव्यवाहम्। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जहुमस्तं नो अस्तु॥१०॥

वय स्याम् पत्यो रयीणाम्। स वेद पुत्रः पितर् समातरम्। स सूनुर्भृवथ्स भुवत्पुनर्मघः। स द्यामौर्णोदन्तरिक्ष स स सुवंः। स विश्वा भुवो अभव्थ्स आभवत्। अग्नीषोमा सर्वेदसा। सहूती वनत्ङ्गिरंः। सन्देवत्रा बंभूवथुः। युवमेतानि दिवि रोंचनानिं। अग्निश्चं सोम सर्ऋतू अधत्तम्॥११॥

युव सिन्धू रे रिभशंस्तेरवद्यात्। अग्नीषोमावम् अतं गृभीतान्। इन्द्रौग्नी रोचना दिवः। परि वाजेषु भूषथः। तद्वौश्चेति प्रवीर्यम्। श्वथंद्वृत्रमुत संनोति वाजम्। इन्द्रायो अग्नी सहुरी सप्यात्। इर्ज्यन्तां वस्व्यंस्य भूरैः। सहंस्तमा सहंसा वाज्यन्तौ। एन्द्रं सान्सि रियम्॥१२॥

स्जित्वांन सदासहम्। वर्षिष्ठमूतये भर। प्रसंसाहिषे पुरुहूत शत्रूनं। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरंस्तु। इन्द्रा भंर दक्षिणेना वसूंनि। पितः सिन्धूंनामिस रेवतींनाम्। महा इन्द्रो य ओजंसा। पूर्जन्यो वृष्टिमा इंव। स्तोमैंर्व्थसस्यं वावृधे। महा इन्द्रो नृवदाचंर्षणिप्राः॥१३॥

उत द्विबर्हां अमिनः सहोभिः। अस्मद्रियंग्वावृधे वीर्याय। उरुः पृथुः सुकृंतः कुर्तृभिंभूत्। पिप्रीहि देवार उंशतो यंविष्ठ। विद्वार ऋतूर्रऋंतुपते यजेह। ये दैव्यां ऋत्विज्सतेभिंरग्ने। त्वर होतॄंणामस्यायंजिष्ठः। अग्निर्श् स्विष्टकृतम्। अयांडग्निर्ग्नेः प्रिया धामांनि। अयाद्थ्सोमंस्य प्रिया धामांनि॥१४॥

अयांड्ग्नेः प्रिया धामांनि। अयांद्वजापंतेः प्रिया धामांनि। अयांड्ग्नीषोमयोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्राग्नियोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्रस्य प्रिया धामांनि। अयांण्महेन्द्रस्यं प्रिया धामांनि। अयांड्वेवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेर्होतुंः प्रिया धार्मानि। यक्ष्म्यं मंहिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता १ हिवः। अग्ने यद्द्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्वर हि यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। ह्व्या वंह यविष्ठ या ते अद्या१५॥

 $_{-}$ अस्त्वुध्तु $_{-}$ र्यिं चंर्षणिप्राः सोर्मस्य प्रिया धामानीषुः षद्वं॥ $_{-}$

उपंहूत रथन्तर सह पृथिव्या। उपं मा रथन्तर सह पृथिव्या ह्वंयताम्। उपंहूतं वामदेव्य सहान्तिरिक्षेण। उपं मा वामदेव्य सहान्तिरिक्षेण ह्वयताम्। उपंहूतं बृहथ्सह दिवा। उपं मा बृहथ्सह दिवा ह्वंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्रौः। उपं मा सप्त होत्रौ ह्वयन्ताम्। उपंहूता धेनुः सहर्षंभा। उपं मा धेनुः सहर्षंभा ह्वयताम्॥१६॥

उपंहूतो भृक्षः सर्खां। उपं मा भृक्षः सर्खां ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। उपो अस्मा १ इडां ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। मान्वी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृत्मुपंहृतम्॥१७॥

दैव्यां अध्वर्यव उपहूताः। उपहूता मनुष्याः। य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंतिं वर्धान्। उपहूते द्यावापृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपुंत्रे। उपहूतोऽयं यज्ञमानः। उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपहूतः। भूयंसि हिव्ष्करण उपहूतः। दिव्ये धामुन्नुपहूतः। इदं में देवा हिवर्जुषन्तामिति

तस्मिन्नुपंहूतः। विश्वंमस्य प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य प्रियस्योपंहूतस्योपंहूतः॥१८॥

महर्षमा ह्वयामुपंहतः हविष्करंण उपंहतक्षवारि च॥————————————————[८]

देवं बर्हिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो नराशक्संः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविंणा मन्द्रः कविः। सत्यमंन्मायजी होतां। होतुंरहोतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयांट। याक् अपिंप्रेः। ये ते होत्रे अमंध्यत। ताक्ष्समुषीक् होत्रान्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूः। वसुवनं वसुधेयंस्य नमोवाके वीहिं॥१९॥

अपिंप्रेः पर्श्वं च॥______[१]

इदं द्यांवापृथिवी भुद्रमंभूत्। आध्मं सूक्तवाकम्। उत नंमोवाकम्। ऋध्यास्मं सूक्तोच्यंमग्ने। त्व स् सूक्तवागंसि। उपंश्रितो दिवः पृथिव्योः। ओमंन्वती तेऽस्मिन् युज्ञे यंजमान् द्यावांपृथिवी स्ताम्। शृङ्गये जीरदान्। अत्रंस्रू अप्रंवेदे। उरुगंव्यूती अभयं कृतौं॥२०॥

वृष्टिद्यांवा रीत्यांपा। शम्भवौं मयोभवौं। ऊर्जस्वती च् पर्यस्वती च। सूप्चरणा चं स्वधिचरणा चं। तयोराविदिं। अग्निरिद हिवरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोऽकृत। सोमं इद १ हिवरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अग्निरिद १ हिवरंजुषत॥ २१॥ अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। प्रजापंतिरिदः हिवरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। अग्नीषोमांविदः हिवरंजुषेताम्। अवींवृधेतां महो ज्यायोंऽकाताम्। इन्द्राग्नी इदः हिवरंजुषेताम्। अवींवृधेतां महो ज्यायोंऽकाताम्। इन्द्राग्नी इदः हिवरंजुषेताम्। अवींवृधेतां महो ज्यायोंऽकाताम्। इन्द्रं इदः हिवरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। महेन्द्र इदः हिवरंजुषत॥२२॥

अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। देवा आँज्यपा आज्यंमजुषन्त। अवीवृधन्त महो ज्यायोऽकृत। अग्निरहोत्रेणेद १ ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अस्यामृध्द्धोत्रांयान्देवङ्गमायांम्। आशांस्तेऽयं यजंमानोऽसौ। आयुरा शांस्ते। सुप्रजास्त्वमा शांस्ते। स्जात्वनस्यामा शांस्ते॥२३॥

उत्तरान्देवयुज्यामा शाँस्ते। भूयों हिव्ष्करंणमा शाँस्ते। दिव्यं धामा शाँस्ते। विश्वं प्रियमा शाँस्ते। यद्नेनं हिवषाऽऽशाँस्ते। तदंश्यात्तदंध्यात्। तदंस्मै देवा रांसन्ताम्। तद्ग्निर्देवो देवेभ्यो वनंते। व्यम्ग्नेर्मानुषाः। इष्टं चं वीतं चं। उभे चं नो द्यावापृथिवी अश्हंसस्पाताम्। इह गतिर्वामस्येदं चं। नमों देवेभ्यंः॥२४॥

अभुयं कृतांवकृताृष्ठिरिद॰ हुविरंजुषत महेन्द्र हुद॰ हुविरंजुषत सजातवनुस्यामा शाँस्ते वीतं च त्रीणि च॥[१०]

तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीं स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे॥२५॥

तच्छुं योर्ष्टौ॥————[११]

आप्यांयस्व सन्तें। इह त्वष्टांरमग्रियं तन्नंस्तुरीपम्ं। देवानां पत्नीरुश्तीरंवन्तु नः। प्रावंन्तु नस्तुजये वाजंसातये। याः पार्थिवासो या अपामिषं व्रते। ता नों देवीः सहवाः शर्म यच्छत। उत ग्रा वियन्तु देवपंत्नीः। इन्द्राण्यंग्राय्यश्विनी राट्। आ रोदंसी वरुणानी शृंणोतु। वियन्तुं देवीर्य ऋतुर्जनीनाम्॥२६॥

अग्निर्होतां गृहपंतिः स राजां। विश्वां वेद् जिनेमा जातवेदाः। देवानांमुत यो मर्त्यानाम्। यिजेष्ठः स प्र यंजतामृतावां। व्यम् त्वा गृहपते जनांनाम्। अग्ने अकंर्म समिधां बृहन्तम्। अस्थूिर णो गार्हंपत्यानि सन्तु। तिग्मेनं नस्तेजंसा सर्शिशाधि॥२७॥

उपहूत रथन्तर स्मह पृथिव्या। उप मा रथन्तर स्मह पृथिव्या ह्वंयताम्। उपहूतं वामदेव्य स्महान्तरिक्षेण। उप मा वामदेव्य स्महान्तरिक्षेण ह्वयताम्। उपहूतं बृहथ्सह दिवा। उप मा बृहथ्सह दिवा ह्वंयताम्। उपहूताः सप्त होत्राः। उप मा सप्त होत्रां ह्वयन्ताम्। उपहूता धेनुः सहर्षभा। उप मा धेनुः सहर्षभा ह्वयताम्॥२८॥

उपंहूतो भृक्षः सर्खां। उपं मा भृक्षः सरखां ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। उपो अस्मा १ इडां ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडाँ। मान्वी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृतमुपंहृतम्॥२९॥

दैव्यां अध्वर्यव उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः।
य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंत्रीं वर्धान्। उपंहूते
द्यावापृथिवी। पूर्वजे ऋतावरी। देवी देवपुंत्रे। उपंहूतेयं
यज्ञमाना। इन्द्राणीवांऽविध्वा। अदितिरिव सुपुत्रा।
उत्तरस्यान्देवयञ्यायामुपंहूता। भूयंसि हिव्ष्करंण उपंहूता।
दिव्ये धामृत्रुपंहूता। इदं में देवा ह्विर्जुषन्तामिति
तस्मिन्नुपंहूता। विश्वंमस्याः प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य
प्रियस्योपंहतस्योपंहता॥३०॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

अञ्जन्ति त्वामंध्वरे देवयन्तंः। वनंस्पते मधुना दैव्येन। यदूर्ध्वस्तिष्ठाद्वविणेह धंत्तात्। यद्वा क्षयो मातुरस्या उपस्थै। उच्छ्रंयस्व वनस्पते। वर्ष्मंन्पृथिव्या अधि। सुमिती मीयमानः। वर्चोधा यज्ञवाहसे। समिद्धस्य श्रयंमाणः पुरस्तात्। ब्रह्मं वन्वानो अजर ५ सुवीरम्॥१॥

आरे अस्मदमंतिं बार्धमानः। उच्छ्रंयस्व मह्ते सौभंगाय। ऊर्ध्व ऊ षु णं ऊतयें। तिष्ठां देवो न संविता। ऊर्ध्वा वार्जस्य सनिता यदिक्षिभिः। वाघिद्विर्विह्वयांमहे। ऊर्ध्वा नेः पाह्य १ हंसो नि केतुनां। विश्व १ सम्त्रिणं दह। कुधी ने ऊर्ध्वां च रथांय जीवसें। विदा देवेषुं नो दुवंः॥२॥

जातो जांयते सुदिन्त्वे अह्राँम्। सम्पर्य आ विदथे वर्धमानः। पुनन्ति धीरां अपसां मनीषा। देवया विप्र उदिंयर्ति वाचम्ं। युवां सुवासाः परिवीत् आगांत्। स उ श्रेयांन्भवित् जायंमानः। तं धीरांसः क्वय् उन्नंयन्ति। स्वाधियो मनंसा देवयन्तः। पृथुपाजा अमर्त्यः। घृतिनंणिंख्स्वाहुतः। अग्निर्यज्ञस्यं हव्यवाद। त॰ स्वाधों यतः स्नुंचः। इत्था धिया यज्ञवंन्तः। आचं कुर्गिन्निर्वासेष्ठाः। त्वं वर्रण उत मित्रो अग्ने। त्वां वंधन्ति मृतिभिर्वसिष्ठाः। त्वे वसुं सुषण्नानिं सन्तु। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥३॥

सुवीरुं दुवः स्वांहुतोऽष्टौ चं॥

[8]

होतां यक्षद्ग्निः स्मिधां सुष्मिधा समिद्धं नाभां पृथिव्याः संङ्ग्थे वामस्यं। वर्ष्मन्दिव इडस्पदे वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्मन्तूनपांत्मिदितेर्गर्भं भुवंनस्य गोपाम्। मध्वाद्य देवो देवेभ्यो देवयानांन्प्यो अनक् वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्मत्रराशः सं नृश्स्यं नृशः प्रणेत्रम्। गोभिर्वृपावान्थ्र्याद्वीरेः शक्तीवान्नथः प्रथम्या वा हिरंण्येश्चन्द्री वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्गिमिड ईडितो देवो देवाः आवंश्वदूतो हंव्यवाडमूरः। उपमं यज्ञमुपेमां देवो देवहूतिमवतु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वर्ग्रिमिड होतां यक्षद्वर्र्हाः सुष्टरीमोर्णमदा अस्मिन् यज्ञे वि च प्र चं प्रथताः स्वास्रथं देवेभ्यः। एमेनद्द्य वसंवो रुद्रा आदित्याः संदन्तु प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं॥४॥

होतां यक्षद्द्रं ऋष्वाः केव्षयो कोषधावनीरुदातांभीर्जिहंतां विपक्षोंभिः श्रयन्ताम्। सुप्रायणा अस्मिन् यज्ञे विश्रयन्तामृतावृधों वियन्त्वाज्यस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदुषासानक्तां बृह्ती सुपेशंसा नृशः पितिभ्यो योनिं कृण्वाने। स्र्इस्मयंमाने इन्द्रंण देवैरेदं ब्र्हिः सींदतां वीतामाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्देव्या होतांरा मन्द्रा पोतांरा क्वी प्रचेतसा। स्विष्टम्द्यान्यः कंरिद्षा स्वंभिगूर्तमृन्य ऊर्जा सर्तवसेमं यज्ञं दिवि देवेषुं धत्तां

वीतामाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीर्पसांम्पस्तंमा अच्छिंद्रम् द्वेतर्यं स्वविर्देवमपो वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षत्त्वष्टांर्मचिष्टुमपांक रत्तोधां विश्रवसं यशोधाम्। पुरुरूपमकांमकर्शन र स्पोषः पोषः स्याथ्सुवीरो वीरेर्वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षद्वनस्पतिमुपावंस्रक्षद्धियो जोष्टार श्रशम्त्ररः। स्वदाथ्स्वधितिर्ऋतुथाद्य देवो देवेभ्यो ह्व्यावाङ्वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षद्गिश्च स्वाहाऽऽज्यंस्य स्वाहा प्रेतंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षद्गिश्च स्वाहाऽऽज्यंस्य स्वाहा ह्व्यस्तृत्तिनाम् स्वाहां देवा वेत्रभ्यो ह्व्यावाङ्वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षद्गिश्च स्वाहांकृतीनाः स्वाहां ह्व्यसूत्तीनाम्। स्वाहां देवा आज्यपान्थ्स्वाहाऽग्निश् होत्राञ्चं पाणा अग्न आज्यंस्य वियन्तु होत्र्यंजं॥५॥

प्रियमित्रंस्यान्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं सुवीर्थं वियन्तु होत्यंजं वियन्तु हिर्वेत्वकं वियन्तु होत्यंजं॥॥ वियन्तु हिर्वेत्वकं वियन्तु होत्यंजं॥॥ वियन्तु होत्यंजं॥॥ वियन्तु हिर्वेत्वकं वियन्तु होत्यंजः॥॥ वियन्तु होत्यंजः॥॥ वियन्तु होत्यंजः॥॥ वियन्तु होत्यंजः॥॥ वियन्तु होत्यंजः॥ वियन्तु होत्यंजः॥ वियन्तु होत्यंजः॥ वियन्तु होत्यंजः॥ वियन्तु होत्यंजः॥ वियन्तु होत्यंजः॥ वियन्तु होत्यंवकं।॥ वियन्तु होत्यंजः॥ वियन्तु होत्यं वियन्तु होत्यंज्यं वि

सिमिद्धो अद्य मनुषो दुरोणे। देवो देवान् यंजिसि जातवेदः। आ च वहं मित्रमहिश्चिकित्वान्। त्वं दूतः क्विरिस् प्रचेताः। तनूनपात्पथ ऋतस्य यानान्। मध्यां सम्अन्थ्स्वंदया सुजिह्व। मन्मांनि धीभिरुत यज्ञमृन्धन्। देवत्रा चं कृणुह्यध्वरं नंः। नराशः संस्य महिमानंमेषाम्। उपं स्तोषाम यजतस्यं यज्ञैः॥६॥

ते सुक्रतंवः शुचंयो धियन्धाः। स्वदंन्तु देवा उभयांनि ह्व्या। आजुह्वांन् ईड्यो वन्द्यंश्च। आयाँह्यग्ने वसुंभिः सजोषाः। त्वं देवानांमिस यह्व होताः। स एनान् यक्षीिषतो यजीयान्। प्राचीनं बर्हिः प्रदिशां पृथिव्याः। वस्तोरस्या वृंज्यते अग्रे अहाँम्। व्यं प्रथते वित्रं वरीयः। देवेभ्यो अदितये स्योनम्॥७॥

व्यचंस्वतीरुर्विया विश्रंयन्ताम्। पतिंभ्यो न जनंयः शुम्भंमानाः। देवींर्द्वारो बृहतीर्विश्वमिन्वाः। देवेभ्यो भवथ सुप्रायणाः। आसुष्वयंन्ती यज्तते उपांके। उषासानक्तां सदतां नि योनौं। दिव्ये योषंणे बृह्ती सुंरुक्मे। अधि श्रियर् शुक्रपिशं दर्धाने। दैव्या होतारा प्रथमा सुवाचौ। मिमाना यज्ञं मनुषो यज्ञंध्यै॥८॥

प्रचोदयंन्ता विदर्थेषु कारू। प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशां दिशन्तां। आ नो यज्ञं भारती तूयमेतु। इडां मनुष्वदिह चेतयंन्ती। तिस्रो देवीर्बर्हिरेद स्योनम्। सरंस्वती स्वपंसः सदन्तु। य इमे द्यावांपृथिवी जिनेत्री। रूपैरिप श्रुद्भवंनानि विश्वां। तमद्य होतिरिषितो यजीयान्। देवं त्वष्टांरिमेह यक्षि विद्वान्॥९॥

उपावंसृज्तमन्यां सम्अन्। देवानां पाथं ऋतुथा ह्वी १षिं। वनस्पतिः शिम्ता देवो अग्निः। स्वदंन्तु ह्व्यं मधुना घृतेनं। सद्यो जातो व्यंमिमीत यज्ञम्। अग्निर्देवानांमभवत्पुरोगाः। अस्य होतुः प्रदिश्यृतस्यं वाचि। स्वाहांकृत १ ह्विरंदन्तु देवाः॥१०॥

अग्निर्होतां नो अध्वरे। वाजी सन्परिणीयते। देवो देवेषुं यज्ञियः। परित्रिविष्ट्यंध्वरम्। यात्यग्नी र्थीरिव। आ देवेषु प्रयो दर्धत्। परि वाजंपतिः कविः। अग्निर्ह्व्यान्यंक्रमीत्। दधद्रत्नांनि दाशुषे॥११॥

अग्निरहोतां नो नवं॥—_____[४]

अजैंद्गिः। असंनुद्वाज्ञिन्नि। देवो देवेभ्यों हृव्यावाँट्। प्राञ्जोभिर्हिन्वानः। धेर्नाभिः कल्पंमानः। यज्ञस्यायुः प्रतिरन्। उप प्रेष्यं होतः। हृव्या देवेभ्यः॥१२॥

अर्जेदृष्टो॥______[प्

दैव्याः शमितार उत मंनुष्या आरंभध्वम्। उपंनयत् मेध्या दुरंः। आशासांना मेधंपतिभ्यां मेधम्। प्रास्मां अग्निं भंरत। स्तृणीत बर्हिः। अन्वेनं माता मंन्यताम्। अनुं पिता। अनु भ्राता सर्गर्भ्यः। अनु सखा सयूँथ्यः। उदीचीना अस्य पदो निधंत्तात॥१३॥

सूर्यं चक्षुंर्गमयतात्। वातं प्राणम्नववंसृजतात्। दिशः श्रोत्रम्। अन्तिरिक्षमसुम्। पृथिवी शरीरम्। एकधाऽस्य त्वचमाच्छ्यंतात्। पुरा नाभ्यां अपिशसों वपामुत्खिंदतात्। अन्तरेवोष्माणं वारयतात्। श्येनमंस्य वक्षः कृणुतात्। प्रशसां बाहू॥१४॥

शृला दोषणीं। कृश्यपेवा १ साँ। अच्छिंद्रे श्रोणीं। कृवषोरू स्रेकपंर्णाष्ठीवन्तां। षड्वि १ शतिरस्य वङ्क्ष्यः। ता अनुष्ठ्योच्यांवयतात्। गात्रं गात्रम्स्यानूंनं कृणुतात्। ऊव्ध्यगोहं पार्थिवं खनतात्। अस्ना रक्षः सःसृजतात्। विनिष्ठमस्य मा रांविष्ट॥१५॥

उर्रूकं मन्यंमानाः। नेद्वंस्तोके तनये। रवितारवेच्छमितारः। अधिंगो शमीध्वम्। सुशमि शमीध्वम्। शुमीध्वमंधिगो। अधिंगुश्चापांपश्च। उभौ देवाना रेशिम्तारौँ। ताविमं पृशू इश्रंपयतां प्रविद्वा रसौँ। यथांयथा उस्य श्रपंणुन्तथांतथा॥१६॥ ध्राह्म संविष्ट् वर्षांतथा॥——[६]

जुषस्वं स्प्रथंस्तमम्। वचों देवपसंरस्तमम्। ह्व्या जुह्वांन आसिनं। इमं नों यज्ञम्मृतेषु धेहि। इमा ह्व्या जांतवेदो जुषस्व। स्तोकानांमग्ने मेदंसो घृतस्यं। होतः प्राशांन प्रथमो निषद्यं। घृतवंन्तः पावक ते। स्तोकाः श्लोतन्ति मेदंसः। स्वधंमं देववींतये॥१७॥

श्रेष्ठं नो धेहि वार्यम्। तुभ्य इंस्तोका घृंतश्चतंः। अग्ने विप्राय सन्त्य। ऋषिः श्रेष्ठः सिमध्यसे। यज्ञस्यं प्राविता भंव। तुभ्य इंश्वोतन्त्यिप्रगो शचीवः। स्तोकासो अग्ने मेदसो घृतस्यं। कविश्वस्तो बृंहता भानुनागाः। ह्व्या जुंषस्व मेधिर। ओजिंष्ठन्ते मध्यतो मेद उद्गृंतम्। प्र ते वयं देदामहे। श्वोतंन्ति ते वसो स्तोका अधित्वचि। प्रति तान्देवशोविंहि॥१८॥ विवर्गत्व उद्गृंतभागं वा—[७]

आवृंत्रहणा वृत्रहिभः शुष्मैः। इन्द्रं यातन्नमोभिरग्ने अर्वाक्।

युव र राधों भिरकं वेभिरिन्द्र। अग्नें अस्मे भंवतमुत्त्मे भिंः। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागंस्य वृपाया मेदंसः। जुषेता रे ह्विः। होत्र्यं जं। विह्यख्यन्मनंसा वस्यं इच्छन्। इन्द्रौग्नी ज्ञास उत वां सजातान्॥१९॥

नान्या युवत्प्रमंतिरस्ति मह्यम्। स वां धियं वाज्यन्तीमतक्षम्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। पुरोडाशंस्य जुषेता हिवः। होत्र्यजं। त्वामींडते अजिरं दूत्यांय। हिविष्मंन्तः सदिमन्मानुषासः। यस्यं देवैरासंदो बर्हिरंग्ने। अहाँन्यस्मै सुदिनां भवन्तु। होतां यक्षदिग्नम्। पुरोडाशंस्य जुषता हिवः। होत्र्यजं॥२०॥

सुजातानुष्रिन्द्वे चं॥————————————————[८]

गीर्भिर्विप्रः प्रमंतिमिच्छमानः। ईट्टे र्यिं यशसं पूर्वभाजम्। इन्द्रांग्नी वृत्रहणा सुवज्रा। प्र णो नव्येभिस्तिरतं देष्णैः। माच्छेंद्म रश्मीश्रिति नाधंमानाः। पितृणाश् शक्तीरनु-यच्छंमानाः। इन्द्राग्निभ्यां कं वृषंणो मदन्ति। ताह्यद्रीधिषणांया उपस्थें। अग्निश् सुंदीतिश् सुद्दशं गृणन्तः। नमस्यामस्त्वेड्यं जातवेदः। त्वां दूतमंर्तिश् हंव्यवाहम्। देवा अंकृण्वन्नमृतंस्य नाभिम्॥२१॥

जातुबेदो हे चं॥———[९

त्वः ह्यंग्ने प्रथमो म्नोताँ। अस्या धियो अभंवो दस्महोताँ। त्वः सीँ वृषन्नकृणोर्दुष्टरीतु। सहो विश्वंस्मै सहंसे सहंध्ये। अधा होता न्यंसीदो यजीयान्। इडस्पद इषयन्नीड्यः सन्। तं त्वा नर्रः प्रथमं देवयन्तः। महो राये चितयंन्तो अनुंग्मन्। वृतेव यन्तं बहुभिर्वस्व्यैः। त्वे र्यिं जांगृवा स्मो अनुंग्मन्॥२२॥

रुशंन्तमृग्निं देर्शतं बृहन्तम्। वृपावंन्तं विश्वहां दीदिवा स्मम्। पृदं देवस्य नर्मसा वियन्तः। श्रृवस्यवः श्रवं आपृत्रमृंक्तम्। नामानि चिद्दिधिरे यृज्ञियांनि। भृद्रायां ते रणयन्त सन्दंष्टौ। त्वां वर्धन्ति क्षित्रयः पृथिव्याम्। त्व रायं उभयांसो जनांनाम्। त्वं त्राता तंरणे चेत्यों ऽभूः। पिता माता सद्मिन्मानुंषाणाम्॥२३॥

सपूर्येण्यः स प्रियो विक्ष्वंग्निः। होतां मृन्द्रो निषंसादा यजीयान्। तं त्वां वयं दम् आ दीदिवा स्मम्। उपंज्ञुबाधो नमंसा सदेम। तं त्वां वय स्पृधियो नव्यंमग्ने। सुम्नायवं ईमहे देवयन्तंः। त्वं विशो अनयो दीद्यानः। दिवो अंग्ने बृह्ता रोचनेनं। विशां कृविं विश्पित् शर्श्वतीनाम्। नितोशंनं वृष्मं चंर्षणीनाम्॥२४॥

प्रेतीषणि मिषयंन्तं पावकम्। राजंन्तमृग्निं यंज्तरः रंयीणाम्। सो अंग्न ईजे शश्मे च मर्तः। यस्त आनंदथ्समिधां ह्व्यदांतिम्। य आहुंतिं परि वेदा नमोंभिः। विश्वथ्सवामा दंधते त्वोतः। अस्मा उं ते मिहं मृहे विधेम। नमोंभिरग्ने समिधोत हव्यैः। वेदींसूनो सहसो गीर्भिरुक्थैः।

आ ते भद्राया ५ सुमतौ यंतेम॥२५॥

आ यस्ततन्थ रोदंसी विभासा। श्रवोभिश्च श्रवस्यंस्तरुतः। बृहद्भिवांजैः स्थविरिभिर्स्मे। रेवद्भिरग्ने वितरं वि भांहि। नृवद्धंसो सदमिद्धेंह्यस्मे। भूरितोकाय तनयाय पृश्वः। पूर्वीरिषों बृहतीरारे अंघाः। अस्मे भुद्रा सौंश्रवसानि सन्तु। पुरूण्यंग्ने पुरुधा त्वाया। वसूनि राजन्वसुतांते अश्याम्। पुरूणि हि त्वे पुरुवार सन्ति। अग्ने वसु विधृते राजनित्वे॥२६॥ जागुवारसो अनुम्मनात्वाणाश्वरपणीन वित्रार्था वे। [१०]

आभेरत शक्षितं वज्रबाहू। अस्मा ईन्द्राग्नी अवत श्र्मींभिः। इमे नु ते र्श्मयः सूर्यस्य। येभिः सिपृत्वं पितरों न् आयन्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागंस्य ह्विष् आत्तांम्द्य। मध्यतो मेद उद्गृतम्। पुरा द्वेषौभ्यः। पुरा पौरुषेय्या गृभः। घस्तौन्नूनम्॥२७॥

घासे अंज्राणां यवंसप्रथमानाम्। सुमत्क्षंराणाः शतरुद्रि-याणाम्। अग्निष्वात्तानां पीवोपवसनानाम्। पार्श्वतः श्रोणितः शितामृत उथ्साद्तः। अङ्गादङ्गादवंत्तानाम्। करंत एवेन्द्राग्नी। जुषेताः हिवः। होत्र्यजं। देवेभ्यों वनस्पते ह्वीःषिं। हिरंण्यपणं प्रदिवंस्ते अर्थम्॥२८॥

प्रदक्षिणिद्रंशनयां निययं। ऋतस्यं विक्षे पृथिभी रिजेष्ठेः। होतां यक्षद्वनस्पतिम्भिहि। पिष्टतंमया रिभेष्ठया रशनयाधित। यत्रैन्द्राग्नियोश्छागंस्य हविषंः प्रिया धार्मानि। यत्र वनस्पतेः प्रिया पाथा रसि। यत्रं देवानांमाज्यपानां प्रिया धार्मानि। यत्राग्नेरहोतुः प्रिया धार्मानि। तत्रैतं प्रस्तुत्येवोप्स्तुत्ये वोपावंस्रक्षत्। रभीया समिव कृत्वी॥२९॥

करंदेवं देवो वनस्पतिः। जुषता हिवः। होत्र्यजी।
पिप्रीहि देवा उंशतो यंविष्ठ। विद्वा ऋतू र ऋतू पते यजेह।
ये देव्यां ऋत्विज् स्तेभिरग्ने। त्व होतृंणामस्यायंजिष्ठः।
होतां यक्षदिग्न स्विष्टकृतम्। अयांडग्निरिन्द्राग्नियोश्छागंस्य
ह्विषंः प्रिया धामांनि। अयाङ्गनस्पतेः प्रिया पाथा सि।
अयाङ्गेवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंदग्नेरहोतुः
प्रिया धामांनि। यक्ष्यस्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या
इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता हिवः।
होत्र्यजं॥३०॥

नूनमर्थं कृत्वी पाथार्रसि सप्त चं॥—————[११]

उपों ह् यद्विदर्थं वाजिनो गूः। गीर्भिर्विप्राः प्रमंतिमिच्छमानाः। अर्वन्तो न काष्ठान्नक्षंमाणाः। इन्द्राग्नी जोहुंवतो नर्स्ते। वनस्पते रश्नयांऽभिधायं। पिष्टतंमया वयुनांनि विद्वान्। वहं देवत्रा दिधिषो ह्वी १षिं। प्र चंदातारंम्मृतेषु वोचः। अग्नि स्वष्टकृतम्। अयांडग्निरिन्द्राग्नियोश्छागंस्य हविषंः प्रिया धामांनि॥३१॥

अयाङ्वनस्पतेः प्रिया पाथा १सि। अयाङ्वेवानांमाज्यपानां

प्रिया धार्मानि। यक्षंदग्नेर्होतुंः प्रिया धार्मानि। यक्षथ्स्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता १ हविः। अग्ने यदद्य विशो अध्वरस्य होतः। पार्वक शोचे वेष्ट्वं हि यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। हव्या वंह यविष्ठ या तें अद्य॥३२॥

धार्मानि भूरेकं च। -[१२]

देवं बुर्हिः सुंदेवं देवैः स्याथ्सुवीरं वीरैर्वस्तौर्वृज्येताक्तोः प्रभियेतात्यन्यात्राया ब्रहिष्मंतो मदेम वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वारंः सङ्घाते विड्वीर्यामंञ्छिथिरा ध्रुवा देवहूंतौ वथ्स ईमेनास्तरुंण आमिंमीयात्कुमारो वा नवंजातो मैना अर्वा रेणुकंकाटः पृणंग्वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवी उषासानक्ताऽद्यास्मिन् यज्ञे प्रंयत्यंह्वेतामपि नूनं दैवीविशः प्रायांसिष्टार सुप्रीते सुधिते वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्ट्री वसुंधिती ययोर्न्या-ऽघाद्वेषा ५ सि युयवदान्यावं क्षुद्वसु वार्याणि यजंमानाय वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्ज। देवी ऊर्जाह्ंती इषमूर्जमन्यावंक्षथ्मग्धिः सपीतिमन्या नवेन दयमानाः स्यामं पुराणेन नवं तामूर्जमूर्जाहुंती ऊर्जयमाने अधातां वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजा। देवा दैव्या होतांरा नेष्टांरा पोतांरा हताघंश सावाभरद्वंसू वसुवनें वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीरिडा सरेस्वती भारती द्यां भारत्यादित्यैरेस्पृक्षथ्सरेस्वतीम १ रुद्रैर्यज्ञमांवीदिहैवेडंया वसुंमत्या सधमादं मदेम वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जा। देवो नराश १ संस्निशीर्षा षंडक्षः शतमिदंन शितिपृष्ठा आदंधति सहस्रंमीं प्रवंहन्ति मित्रावरुणेदंस्य होत्रमर्हंतो बृहस्पतिः स्तोत्रमश्विना-ऽऽध्वंर्यवं वसुवनं वसुधेयस्यं वेतु यर्जा। देवो वनस्पतिर्वर्षप्रांवा घृतनिर्णिग्द्यामग्रेणास्पृक्षदान्तरिक्षं मध्येनाप्राः पृथिवीमुपंरेणाद १ ही द्वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजी। देवं ब्रहिर्वारितीनां निधेषांऽसि प्रच्युंतीनामप्र-च्युतन्निकामधरेणं पुरुस्पार्हं यशस्वदेना बुर्हिषाऽन्या बर्ही इष्यिभ ष्यांम वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्जा। देवो अग्निः स्विष्टुकृथ्सुद्रविणा मुन्द्रः कविः सत्यमेन्माऽऽयजी होता होतुंर्होतुरायंजीयानमे यान्देवानयाङ्या अपिप्रेर्ये तें होत्रे अमंध्सत तार संसनुषीर होत्रांं देवङ्गमान्दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेम इस्विष्टकृ चाग्ने होता ८ मूर्वस्वने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि यर्ज॥३३॥

यजैर्क च॥_____[१३]

देवं ब्र्हिः। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु। देवीर्द्वारः। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु। देवी उषासानक्ताः। वसुवने वसुधेयंस्य वीताम्। देवी जोष्ट्रीः। वसुवने वसुधेयंस्य वीताम्। देवी

ऊर्जाहुंती। वृसुवने वसुधेयस्यं वीताम्॥३४॥

देवा दैव्या होतांरा। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु। देवो नराशक्तंः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो वनस्पतिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो वनस्पतिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवं बर्हिवीरितीनाम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु॥३५॥

देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मृन्द्रः कृविः। स्त्यमंन्मायजी होतां। होतुंर्होतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयांट्। या अपिप्रेः। ये ते होत्रे अमेथ्सत। ता र संस्नुषी होताऽभूः। व्सुवने वेषुं यज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूः। वस्वने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहिं॥३६॥

वीतां वेत्वभूरेकं च।

[88]

अग्निम्द्य होतांरमवृणीतायं यजंमानः पर्चन्पक्तीः पर्चन्पुरोडाशं ब्रभ्निन्द्राग्निभ्यां छाग्रं सूप्स्था अद्य देवो वन्स्पतिरभवदिन्द्राग्निभ्यां छाग्रेनाघंस्तान्तं मेंद्स्तः प्रतिपचताग्रंभीष्टामवींवृधेतां पुरोडाशेन त्वाम्द्यर्षं आर्षेय ऋषीणां नपादवृणीतायं यजमानो बहुभ्य आ सङ्गतेभ्य एष में देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इति ता या देवा देवदानान्यदुस्तान्यंस्मा आ च शास्वा चं गुरस्वेषितश्चं होत्रसीं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकायं सूक्ता

ब्रूंहि॥३७॥

अुश्रिमुद्यैकम्॥______[१५]

अञ्चन्ति होतां यक्ष्रथ्सिमिद्धो अद्याग्निरजैदैच्यां जुपस्वा वृंत्रहणा गीर्भिस्त्वः ह्याभेरत्मुपोंह् यद्देवं बुर्हिः सुंदेवं देवं बुर्हिर्गिन्नम्य पर्श्वदशाश्या अञ्चन्त्रगिन्निर्मा पर्श्वदशाश्या अञ्चन्त्रगिन्निर्मा क्षेत्रभावाद्यानिक्षां हु यद्दिदर्थं बाजिनः सप्तित्रिर्शत्॥३७॥ अञ्चन्तिं सुक्ताबृंहि॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

सर्वान् वा एषों ऽग्नौ कामान्प्रवेशयति। यों ऽग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैति। सयदिनेष्ट्वा प्रयायात्। अकांमप्रीता एनं कामा नानुप्रयायुः। अतेजा अवीर्यः स्यात्। स जुंहुयात्। तुभ्यं ता अङ्गिरस्तम। विश्वाः सुक्षितयः पृथंक्। अग्ने कामांय येमिर् इति। कामांनेवास्मिन्दधाति॥१॥

कामंप्रीता एनं कामा अनु प्रयाँन्ति। तेज्स्वी वीर्यावान्भवति। सन्तंतिर्वा एषा यज्ञस्यं। यौंऽग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैतिं। स यदुद्वायंति। विच्छिंत्तिरेवास्य सा। तं प्रार्श्वमुद्धृत्यं। मन्सोपंतिष्ठेत। मनो वै प्रजापंतिः। प्राजापत्यो यज्ञः॥२॥

मनंसैव युज्ञ सन्तंनोति। भूरित्यांह। भूतो वै प्रजा-पंतिः। भूतिंमेवोपैति। वि वा एष इन्द्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यस्याऽऽहिंताग्नेर्ग्निरंपक्षायंति। यावच्छम्यंया प्रविध्येत्। यदि तावंदपक्षायेत्। त सम्भरेत्। इदं त एकं प्र उं त एकम्॥३॥

तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशंनस्तनुवै चारुरिध। प्रिये देवानां पर्मे जनित्र इति। ब्रह्मणैवैन् सम्भरित। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यदि परस्तरामंपृक्षायेत। अनुप्रयायावंस्येत्। सो एव ततः प्रायंश्चित्तः। ओषंधीवा

एतस्यं पुशून्पयः प्रविंशति। यस्यं ह्विषे वृथ्सा अपार्कृता धर्यन्ति॥४॥

तान् यद्दुह्यात्। यातयाँम्ना ह्विषां यजेत। यन्न दुह्यात्। यज्ञपुरुरुन्तरियात्। वायव्यां यवागूं निर्वपेत्। वायुर्वे पयंसः प्रदापयिता। स पुवास्मे पयः प्रदापयति। पयो वा ओषंधयः। पयः पयंः। पयंसेवास्मे पयोऽवं रुन्धे॥५॥

अथोत्तंरस्मै ह्विषे वृथ्सान्पार्कुर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अन्यत्रान् वा एष देवान्भांगुधेयेन् व्यर्धयित। ये यर्जमानस्य सायं गृहमा गच्छंन्ति। यस्यं सायं दुग्धः ह्विरार्तिमार्च्छतिं। इन्द्रांय ब्रीहीन्निरुप्योपं वसेत्। पयो वा ओषंधयः। पयं पुवाऽऽरभ्यं गृहीत्वोपं वसति। यत्प्रातः स्यात्। तच्छृतं कुर्यात्॥६॥

अथेतंर ऐन्द्रः पुंरोडाशंः स्यात्। इन्द्रिये एवास्मैं समीचीं दधाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पयंः। पयंसैवास्मै पयो-ऽवं रुन्थे। अथोत्तंरस्मै ह्विषं वृथ्सान्पाकुर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। उभयान् वा एष देवान्भांगुधेयेन् व्यंर्धयति। ये यजंमानस्य सायं चं प्रातश्चं गृहमा गच्छंन्ति। यस्योभयर् ह्विरार्तिमार्च्छतिं॥७॥

ऐन्द्रं पश्चंशरावमोद्नं निर्वपेत्। अग्निं देवतानां प्रथमं यंजेत्। अग्निमुंखा एव देवताः प्रीणाति। अग्निं वा अन्वन्या देवताः। इन्द्रमन्वन्याः। ता एवोभर्याः प्रीणाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पयंः। पयंसैवास्मै पयोऽवं रुन्धे। अथोत्तरस्मै हविषे वथ्सानुपाकुंर्यात्॥८॥

सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अर्धो वा एतस्यं यज्ञस्यं मीयते। यस्य व्रत्येऽह्न्यल्यंनालम्भुका भवंति। तामंप्रुध्यं यजेत। सर्वेणेव यज्ञेनं यजते। तामिष्ट्वोपं ह्वयेत। अमूहमंस्मि। सा त्वम्। द्यौर्हम्। पृथिवी त्वम्। सामाहम्। ऋक्तम्। तावेहि सम्भवाव। सह रेतों दधावहै। पुर्से पुत्राय वेत्तंवै। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्यायेति। अर्ध एवैनामुपं ह्वयते। सैव ततः प्रायंश्चित्तः॥९॥

यद्विष्यंण्णेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनांयतने निनयेत्। अनायतनः स्यात्। प्राजापृत्ययुर्चा वंल्मीकवृपायामवं नयेत्। प्राजापृत्यो वै वृल्मीकः। युज्ञः प्रजापंतिः। प्रजापंतावेव युज्ञं प्रतिष्ठापयति। भूरित्यांह। भूतो वै प्रजापंतिः॥१०॥

भूतिंमेवोपैति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनेर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्कीटावंपन्नेन जुहुयात्। अप्रजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनांयतने निनयेत्। अनायतनः स्यात्। मध्यमेनं पूर्णेनं द्यावापृथिव्यय्चाऽन्तः परिधि निनयेत्। द्यावापृथिव्यय्वाऽन्तः परिधि निनयेत्। द्यावापृथिव्योर्वेन्त्प्रतिष्ठापयति॥११॥

तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनेर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यदवेवृष्टेन जुहुयात्। अपंरूपमस्याऽऽत्मञ्जायेत। किलासो वास्यादंर्श्वसो वा। यत्प्रत्येयात्। यृज्ञं विच्छिन्द्यात्। स जुहुयात्। मित्रो जनान्कल्पयति प्रजानन्॥१२॥

मित्रो दांधार पृथिवीमुत द्याम्। मित्रः कृष्टीरिनंमिषाऽभि चंष्टे। स्त्यायं हृव्यं घृतवंज्जहोतेतिं। मित्रेणैवैनंत्कल्पयति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंरहोत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्पूर्वंस्यामाहुंत्या १ हुतायामुत्तराऽऽहुंतिः स्कन्देंत्। द्विपाद्भिः पृशिभियंजंमानो व्यृध्येत। यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥१३॥

चतुंष्पाद्भिः पृशुभिर्यजंमानो व्यृध्येत। यत्र वेत्थं वनस्पते देवानां गृह्या नामांनि। तत्रं ह्व्यानिं गाम्येतिं वानस्पत्ययुर्चा स्मिधंमाधायं। तूष्णीमेव पुनर्जुहुयात्। वनस्पतिनैव यज्ञस्यातां चानांतां चाऽऽहुंती वि दांधार। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनरहोत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गारः स्कन्देंत्। अध्वर्यवे च यजंमानाय चाक इं स्यात्॥१४॥

यदंक्षिणा। ब्रह्मणे च यजंमानाय चाकई स्यात्। यत्प्रत्यक्। होत्रे च पित्रिये च यजंमानाय चाकई स्यात्। यदुदङ्कं। अग्नीधे च पृशुभ्यंश्च यजंमानाय चाकई स्यात्। यदंभिजुहुयात्। रुद्रौंऽस्य पृशून्यातुंकः स्यात्।

यन्नाभिजुहुयात्। अशाँन्तः प्रह्नियेत॥१५॥

स्रुवस्य बुध्नेनाभिनिदेध्यात्। मा तमो मा यज्ञस्तंमन्मा यजंमानस्तमत्। नमंस्ते अस्त्वायते। नमो रुद्र परायते। नमो यत्रं निषीदंसि। अमुं मा हि सीर्मुं मा हि सीरिति येन स्कन्देंत्। तं प्रहंरेत्। सहस्रंश्वङ्गो वृष्मो जातवेंदाः। स्तोमंपृष्ठो घृतवान्थ्सुप्रतींकः। मा नो हासीन्मेत्थितो नेत्त्वा जहांम। गोपोषं नो वीरपोषं चं यच्छेतिं। ब्रह्मंणैवैनं प्र हंरति। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः॥१६॥

वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणध्यते। यस्याऽऽहिंताग्ने-रिग्नर्मध्यमानो न जायंते। यत्रान्यं पश्येत्। ततं आहृत्यं होत्व्यम्। अग्नावेवास्यांग्निहोत्र हुतं भेवति। यद्यन्यन्न विन्देत्। अजाया होत्व्यम्। आग्नेयी वा एषा। यद्जा। अग्नावेवास्यांग्निहोत्र हुतं भेवति॥१७॥

अजस्य तु नाश्जीयात्। यद्जस्याँश्जीयात्। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामंद्यात्। तस्मांद्जस्य नाश्यम्ं। यद्यजान्न विन्देत्। ब्राह्मणस्य दक्षिणे हस्ते होत्व्यम्। एष वा अग्निवैश्वान्रः। यद्वाँह्मणः। अग्नावेवास्याँग्निहोत्रः हुतं भंवति॥१८॥

ब्राह्मणं तु वंसत्यै नापं रुन्ध्यात्। यद्ग्रौह्मणं वंसत्या

अंपरुन्थ्यात्। यस्मिन्नेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तं भाग्धेयेन् व्यर्धयेत्। तस्माँ द्वाह्मणो वस्त्ये नाप्रध्यः। यदिं ब्राह्मणं न विन्देत्। दुर्भस्तम्बे होत्व्यम्। अग्निवान् वै दर्भस्तम्बः। अग्नावेवास्याँग्निहोत्र हुतं भवति। दुर्भाङ्स्तु नाध्यांसीत॥१९॥

यद्दर्भान्ध्यासीत। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामध्यांसीत। तस्माँद्दर्भा नाध्यांसित्व्याः। यदि दर्भान्न विन्देत्। अपसु होत्व्यम्। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांस्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भेवति। आप्स्तु न परिचक्षीत। यदापः परिचक्षीत॥२०॥

यामेवाफ्स्वाहुंतिं जुहुयात्। तां परिचक्षीत। तस्मादापो न परिचक्ष्याः। मेध्यां च वा एतस्यांमेध्या चं तनुवौ सर् सृंज्येते। यस्याऽऽहिंताग्नेर्न्यैर्ग्निभिर्ग्नयः सर्मुज्यन्तै। अग्नये विविचये पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निवंपत्। मेध्यां चैवास्यांमेध्यां चं तनुवौ व्यावर्तयति। अग्नये व्रतपंतये पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निवंपत्। अग्निमेव व्रतपंतिक् स्वेनं भाग्धेयेनोपं धावति। स एवैनं व्रतमा लम्भयति॥२१॥

गर्भ्ड् स्रवंन्तमग्दमंकः। अग्निरिन्द्रस्त्वष्टा बृह्स्पतिः। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतत्। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैः। रेतो वा पृतद्वाजिनमाहिताग्नेः। यदंग्निहोत्रम्। तद्यथ्सवैत्।

रेतौंऽस्य वार्जिन इसवेत्। गर्भ इसवंन्तमगुदमंकुरित्यांह। रेतं एवास्मिन्वार्जिनं दधाति॥२२॥

अग्निरित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। इन्द्र इत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। त्वष्टेत्यांह। त्वष्टा वै पंशूनां मिथुनाना रे रूपकृत्। रूपमेव पृशुषुं दधाति। बृह्स्पतिरित्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणेवास्मैं प्रजाः प्र जंनयति। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतदित्यांह। अस्यामेवैन्त्प्रतिष्ठापयति। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैरित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥२३॥

याः पुरस्तांत्प्रस्रवंन्ति। उपरिष्टाध्सर्वतंश्च याः। ताभी रश्मिपंवित्राभिः। श्रृद्धां यज्ञमा रंभे। देवां गातुविदः। गातुं यज्ञायं विन्दत। मनंस्स्पतिना देवेनं। वातांद्यज्ञः प्र युज्यताम्। तृतीयंस्यै दिवः। गायत्रिया सोम् आर्भृतः॥२४॥

सोमपीथाय सन्नियतुम्। वर्कलमन्तिरमा देदे। आपो देवीः शुद्धाः स्थे। इमा पात्राणि शुन्धत। उपातङ्क्यांय देवानांम्। पूर्णवल्कमुत शुन्धत। पयो गृहेषु पयो अघ्नियासुं। पयो वथ्सेषु पय इन्द्रांय ह्विषे ध्रियस्व। गायत्री पंर्णवल्कनं। पयः सोमं करोत्विमम्॥२५॥

अभिं गृंह्णामि सुरथं यो मंयोभूः। य उद्यन्तंमारोहंति सूर्यमहैं। आदित्यं ज्योतिषां ज्योतिरुत्तमम्। श्वो यज्ञायं रमतां देवतांभ्यः। वसूंत्रुद्रानांदित्यान्। इन्द्रेण सह देवताः। ताः पूर्वः परिं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। इमामूर्जं पश्चदशीं ये प्रविष्टाः। तान्देवान्परिं गृह्णामि पूर्वः॥२६॥

अग्निर्हं व्यवाडिह ताना वंहतु। पौर्णमास हिविरेदमें षां मिये। आमावास्य हिविरेदमें षां मिये। अन्तराऽग्नी पृशवंः। देवस सदमा गंमन्। तान्पूर्वः पिरं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। इह प्रजा विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। ताः पूर्वः पिरं गृह्णामि॥२७॥

स्व आयतंने मनीषयाँ। इह पृशवों विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। तान्पूर्वः परिं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयाँ। अयं पितृणामृग्निः। अवाङ्कव्या पितृभ्य आ। तं पूर्वः परिं गृह्णामि। अविषन्नः पितुं करत्। अजस्त्रं त्वा संभापालाः॥२८॥

विज्यभाग् सिन्धताम्। अग्ने दीदांय मे सभ्य। विजित्ये श्रदः श्तम्। अन्नमावस्थीयम्। अभि हंराणि श्रदः श्तम्। आवस्थे श्रियं मन्नम्। अहिर्बुध्नियो नि यंच्छत्। इदमहम्भिज्येष्ठभ्यः। वस्भ्यो यज्ञं प्रब्रंवीमि। इदमहमिन्द्रंज्येष्ठभ्यः॥२९॥

रुद्रेभ्यों युज्ञं प्र ब्रंबीमि। इदमहं वर्रुणज्येष्ठेभ्यः। आदित्येभ्यों युज्ञं प्र ब्रंबीमि। पर्यस्वतीरोषंधयः। पर्यस्वद्वीरुधां पर्यः। अपां पर्यसो यत्पर्यः। तेन मामिन्द्र स॰ सृंज। अग्ने व्रतपते वृतं चरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। वायों व्रतपत् आदित्य व्रतपते॥३०॥

वृतानां व्रतपते वृतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। इमां प्राचीमुदीचीम्। इष्मूर्जमिभ सङ्स्कृताम्। बहुपूर्णामशृष्काग्राम्। हरामि पशुपामहम्। यत्कृष्णो रूपं कृत्वा। प्राविश्वस्त्वं वनस्पतीन्। तत्स्त्वामेकविश्शित्धा। सम्भेरामि सुसम्भृतां॥३१॥

त्रीन्पंरिधी इस्तिस्रः स्मिधंः। यज्ञायुंरनुसश्चरान्। उपवेषं मेक्षणं धृष्टिम्। सं भेरामि सुसम्भृतां। या जाता ओषंधयः। देवेभ्यंस्रियुगं पुरा। तासां पर्वं राध्यासम्। परिस्तरमाहरन्। अपां मेध्यं यज्ञियम्। सदेव शिवमंस्तु मे॥३२॥

आच्छ्रेता वो मा रिषम्। जीवांनि श्ररदेः श्रतम्। अपंरिमितानां परिमिताः। सन्नेह्ये सुकृताय कम्। एनो मा निगांङ्कृतमच्चनाहम्। पुनंशृत्थायं बहुला भवन्तु। सकृदाच्छिन्नं बर्हिरूणांमृदु। स्योनं पितृभ्यंस्त्वा भराम्यहम्। अस्मिन्थ्सीदन्तु मे पितरंः सोम्याः। पितामहाः प्रपितामहाश्चानुगैः सह॥३३॥

त्रिवृत्पंलाशे दर्भः। इयाँन्प्रादेशसंम्मितः। यज्ञे पवित्रं पोतृंतमम्। पयों हृव्यं कंरोतु मे। इमौ प्राणापानौ। यज्ञस्याङ्गांनि सर्वृशः। आप्याययंन्तौ सर्श्वरताम्। पवित्रे हव्यशोधंने। पुवित्रें स्थो वैष्णुवी। वायुर्वां मनंसा पुनातु॥३४॥

अयं प्राणश्चापानश्चं। यजमान्मपिं गच्छताम्। यज्ञे ह्यभूतां पोतारो। पवित्रे हव्यशोधंने। त्वया वेदिं विविदुः पृथिवीम्। त्वयां यज्ञो जांयते विश्वदानिः। अच्छिद्रं यज्ञमन्वेषि विद्वान्। त्वया होता सन्तंनोत्यर्धमासान्। त्रयस्त्रिष्शोऽसि तन्तूनाम्। पवित्रेण सहागंहि॥३५॥

शिवय र रज्जुंरिभ्धानीं। अघ्नियामुपं सेवताम्। अप्रम्म स्साय यज्ञस्य। उखे उपद्धाम्यहम्। पृशुभिः सन्नीतं बिभृताम्। इन्द्रांय शृतं दिधे। उपवेषोऽसि यज्ञाय। त्वां परिवेषमधारयन्। इन्द्रांय हिवः कृण्वन्तः। शिवः शृग्मो भेवासि नः॥३६॥

अमृंन्मयन्देवपात्रम्। यज्ञस्याऽऽयुंषि प्र युंज्यताम्। तिरः पिवत्रमितनिताः। आपो धारय मातिगुः। देवेनं सिवतोत्पूंताः। वसोः सूर्यस्य रिश्मिभिः। गां दोहपिवते रज्जुम्। सर्वा पात्राणि शुन्धत। एता आ चंरिन्ति मधुंमृद्दुहानाः। प्रजावंतीर्यशसो विश्वरूपाः॥३७॥

बह्वीर्भवंन्तीरुप्जायंमानाः। इह व इन्द्रों रमयतु गावः। पूषा स्थं। अयुक्ष्मा वंः प्रजया सः सृंजािम। रायस्पोषंण बहुलाभवंन्तीः। ऊर्जं पयः पिन्वंमाना घृतं चं। जीवो जीवंन्तीरुपंवः सदेयम्। द्यौश्चेमं यज्ञं पृंथिवी च सन्दुंहाताम्। धाता सोमंन सह वातेन वायुः। यजनानाय

द्रविणं दधातु॥३८॥

उथ्सं दुहन्ति कुलशं चतुंर्बिलम्। इडाँ देवीं मधुंमती १ सुवर्विदम्। तदिन्द्राग्नी जिन्वत १ सूनृतांवत्। तद्यजंमान-ममृतत्वे देधातु। कामधुक्षः प्र णौ ब्रूहि। इन्द्रांय ह्विरिन्द्रियम्। अमूं यस्याँ देवानाम्। मनुष्याणां पयो हितम्। बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यः। हव्यमा प्यांयतां पुनः॥३९॥

वृथ्सेभ्यो मनुष्येभ्यः। पुनुर्दोहायं कल्पताम्। यज्ञस्य सन्तं-तिरिस। यज्ञस्य त्वा सन्तंतिमनु सन्तंनोमि। अदंस्तमिस् विष्णंवे त्वा। यज्ञायापि दधाम्यहम्। अद्भिरिक्तेन पात्रंण। याः पूताः पंरिशेरंते। अयं पयः सोमं कृत्वा। स्वां योनिमिपं गच्छतु॥४०॥

पूर्णविल्कः प्वित्रम्ं। सौम्यः सोमाद्धि निर्मितः। इमौ पूर्णं चं दुर्भं चं। देवाना १ हव्यशोधंनौ। प्रात्वेषायं गोपाय। विष्णों ह्व्य १ हि रक्षंसि। उभावग्नी उपस्तृण्ते। देवता उपवसन्तु मे। अहं ग्राम्यानुपं वसामि। मह्यं गोपंतये पृशून्॥४१॥ अर्थत इसं गृहामि पूर्वस्ताः पूर्वः परिगृहामि सभापाला इन्द्रं उपेव्य इतपते सुस्मृतों मे सह प्नात गिह ने विश्वस्त्रा द्यातु पुनंपंच्छतु पृश्न (याः पुरस्तादिमामूर्जमिह प्रजा इह पृश्वोऽयं पितृणामुक्तिः।)॥—[४]

देवां देवेषु पराँक्रमध्वम्। प्रथंमा द्वितीयेषु। द्वितीयास्तृतीयेषु। त्रिरेकादशा इह मांऽवत। इद॰ शंकेयं यदिदं क्रोमिं। आत्मा करोत्वात्मनें। इदं करिष्ये भेषजम्। इदं में विश्वभेषजा। अश्विना प्रावंतं युवम्। इदम्ह॰ सेनांया अभीत्वंर्ये॥४२॥ मुख्नपोहामि। सूर्यं ज्योतिर्वि भांहि। मह्त इंन्द्रियायं। आ प्यायतां घृतयोनिः। अग्निर्ह्व्याऽनुं मन्यताम्। खर्मङ्क्ष् त्वचंमङ्क्षा सुरूपं त्वां वसुविदम्। पृश्नां तेजंसा। अग्नये जुष्टंमभि घांरयामि। स्योनं ते सदेनं करोमि॥४३॥

घृतस्य धारंया सुशेवं कल्पयामि। तस्मिन्थ्सीदामृते प्रतिं तिष्ठ। ब्रीहीणां मेध सुमन्स्यमानः। आर्द्रः प्रथस्नुर्भुवंनस्य गोपाः। शृत उथ्म्नांति जनिता मंतीनाम्। यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। देवानां विष्ठामनु यो वितस्थे। आत्मन्वान्थ्सोम घृतवान् हि भूत्वा। देवान्गंच्छ् सुवंविन्द यजंमानाय मह्मम्। इरा भूतिः पृथिव्ये रसो मोत्म्रंमीत्॥४४॥

देवाः पितरः पितंरो देवाः। योऽहमंस्मि स सन् यंजे। यस्यांस्मि न तम्नतरेमि। स्वं मं इष्टश् स्वं दत्तम्। स्वं पूर्तश् स्वश् श्रान्तम्। स्वश् हुतम्। तस्यं मेऽग्निरुंपद्रष्टा। वायुरुंपश्चोता। आदित्योऽनुख्याता। द्यौः पिता॥४५॥

पृथिवी माता। प्रजापंतिर्बन्धुः। य एवास्मि स सन् यंजे। मा भेमी संविक्था मा त्वां हिश्सिषम्। मा ते तेजोऽपं क्रमीत्। भरतमुद्धेरेमनुंषिश्च। अवदानांनि ते प्रत्यवदास्यामि। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। यदंवदानांनि तेऽवद्यन्। विलोमाकांर्षमात्मनः॥४६॥

आज्येन प्रत्यंनज्म्येनत्। तत्त् आ प्यायतां पुनः।

अज्यायो यवमात्रात्। आव्याधात्कृत्यतामिदम्। मा रूरुपाम यज्ञस्यं। शुद्ध स्विष्टमिद हिवः। मनुना दृष्टां घृतपंदीम्। मित्रावरुणसमीरिताम्। दक्षिणार्धादसंम्भिन्दन्। अवंद्याम्येकतोमुंखाम्॥४७॥

इडें भागं जुंषस्व नः। जिन्व गा जिन्वार्वतः। तस्याँस्ते भक्षिवाणः स्याम। सर्वात्मांनः सर्वगंणाः। ब्रध्न पिन्वंस्व। ददंतो मे मा क्षांयि। कुर्वतो मे मोपंदसत्। दिशां क्रुप्तिंरिस। दिशों मे कल्पन्ताम्। कल्पन्तां मे दिशः॥४८॥

देवींश्च मानुंषिश्च। अहोरात्रे में कल्पेताम्। अर्धमासा में कल्पन्ताम्। मासां मे कल्पन्ताम्। ऋतवों मे कल्पन्ताम्। सुंवृथ्सरो में कल्पताम्। क्रृप्तिरिस् कल्पंतां मे। आशांनां त्वाऽऽशापालेभ्यः। चृतुभ्यों अमृतेंभ्यः। इदं भूतस्याध्यक्षेभ्यः॥४९॥

विधेमं ह्विषां वयम्। भजंतां भागी भागम्। मा भागोऽभंक्ता निरंभागं भंजामः। अपस्पिन्व। ओषंधीर्जिन्व। द्विपात्पांहि। चतुंष्पादव। दिवो वृष्टिमेरंय। ब्राह्मणानांमिद॰ ह्विः॥५०॥

सोम्याना रे सोमपीथिनांम्। निर्मुक्तो ब्राह्मणः। नेहा ब्राह्मणस्यास्ति। समंङ्कां बर्हिर्ह्विषां घृतेनं। समादित्यैर्वसुंभिः सं मुरुद्भिः। समिन्द्रेण विश्वेभिर्देवेभिरङ्काम्। दिव्यं नभो गच्छतु यथ्स्वाहां। इन्द्राणीवांविधवा भूयासम्। अदितिरिव सुपुत्रा। अस्थूरि त्वां गार्हपत्य॥५१॥

उपनिषंदे सुप्रजास्त्वायं। सं पत्नी पत्यां सुकृतेनं गच्छताम्। यज्ञस्यं युक्तौ धुर्यावभूताम्। सञ्जानानौ विजंहतामरांतीः। दिवि ज्योतिरजरमा रंभेताम्। दशंते तनुवो यज्ञ यज्ञियाः। ताः प्रीणातु यजंमानो घृतेनं। नारिष्ठयौः प्रशिष्मीडंमानः। देवानां दैव्येऽपि यजंमानोऽमृतोऽभूत्। यं वां देवा अंकल्पयन्॥५२॥

ऊर्जी भाग श्रांतऋतू। एतद्वां तेनं प्रीणानि। तेनं तृप्यतम १ हहै। अहं देवाना रे सुकृतांमस्मि लोके। ममेदिम् छं न मिथुर्भवाति। अहं नारिष्ठावनं यजामि विद्वान्। यदाँ भ्यामिन्द्रो अद्धाद्भाग्धेयम्। अदारसृद्भवत देवसोम। अस्मिन् यज्ञे मंरुतो मृडता नः। मा नो विदद्भिभामो अर्शस्तः॥ ५३॥

मा नो विदद्धृजना द्वेष्या या। ऋष्मं वाजिनं वयम्। पूर्णमांसं यजामहे। स नो दोहता स्वीर्यम्। रायस्पोष सहिम्नणम्। प्राणायं सुराधंसे। पूर्णमांसाय स्वाहां। अमावास्यां सुभगां सुशेवां। धेनुरिंव भूयं आप्यायंमाना। सा नो दोहता स्वीर्यम्। रायस्पोष सहिम्नणम्। अपानायं सुराधंसे। अमावास्यांये स्वाहां। अभि स्तृंणीहि परि धेहि वेदिम्। जामिं मा हि सीरम्या शयांना। होतृषदंना हिरताः सुवर्णाः। निष्का इमे यजंमानस्य

ब्रध्ने॥५४॥

परिस्तृणीत् परिधत्ताग्निम्। परिहितोऽग्निर्यजंमानं भुनक्तु। अपा रस् ओषंधीना र सुवर्णः। निष्का इमे यजंमानस्य सन्तु कामदुर्घाः। अमुत्रामुष्मिं ह्लोके। भूपंते भुवंनपते। महतो भूतस्यं पते। ब्रह्माणं त्वा वृणीमहे। अहं भूपंतिरहं भुवंनपतिः। अहं महतो भूतस्य पतिः॥५५॥

देवनं सिवता प्रसूत् आर्त्विज्यं करिष्यामि। देवं सिवतरेतं त्वां वृणते। बृह्स्पितुं दैव्यं ब्रह्माणम्। तद्हं मनसे प्र ब्रंवीमि। मनों गायत्रिये। गायत्री त्रिष्टुभें। त्रिष्टुङ्गगंत्ये। जगंत्यनुष्टुभें। अनुष्टुक्पुङ्क्षी। पुङ्किः प्रजापंतये॥५६॥

प्रजापंतिर्विश्वेंभ्यो देवभ्यः। विश्वे देवा बृह्स्पतंये। बृह्स्पतिर्ब्रह्मणे। ब्रह्म भूर्भवः सुवंः। बृह्स्पतिर्देवानां ब्रह्मा। अहं मनुष्याणाम्। बृहंस्पते युज्ञं गोपाय। इदं तस्मै हुम्यं करोमि। यो वो देवाश्चरंति ब्रह्मचर्यम्। मेधावी दिक्षु मनसा तप्स्वी॥५७॥

अन्तर्दूतश्चरित मानुषीषु। चतुः शिखण्डा युव्तिः सुपेशाः। घृतप्रतीका भुवनस्य मध्ये। मुर्मुज्यमाना महृते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजमानाय कामान्। भूमिर्भूत्वा महिमानं पुपोष। ततो देवी वर्धयते पयार्सि। युज्ञियां युज्ञं वि च यन्ति शं चं। ओषंधीरापं इह शक्करिश्च। यो मां हृदा मनंसा यश्चं वाचा॥५८॥

यो ब्रह्मणा कर्मणा द्वेष्टिं देवाः। यः श्रुतेन् हृदयेनेष्णता चे। तस्यैन्द्र वर्न्नेण शिरंश्छिनिद्धाः ऊर्णामृद् प्रथमानः स्योनम्। देवेभ्यो जुष्ट्र सदंनाय ब्र्हिः। सुवर्गे लोके यर्जमान्र हि धेहि। मां नाकस्य पृष्ठे पंरमे व्योमन्। चतुः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रतीका वयुनानि वस्ते। साऽऽस्तीर्यमाणा मह्ते सौभंगाय॥५९॥

सा में धृक्ष्व यर्जमानाय कामान्। शिवा चं मे शृग्मा चैधि। स्योना चं मे सुषदां चैधि। ऊर्जस्वती च मे पर्यस्वती चैधि। इष्मूर्जं मे पिन्वस्व। ब्रह्म तेजों मे पिन्वस्व। क्ष्रुमोजों मे पिन्वस्व। विश्ं पृष्टिं मे पिन्वस्व। आयुंर्न्नाद्यं मे पिन्वस्व। प्रजां पशून्में पिन्वस्व॥६०॥

अस्मिन् यज्ञ उप भूय इन्नु में। अविक्षोभाय परिधीं देधामि। धर्ता धरुणो धरीयान्। अग्निर्देषा देसि निरितो नुंदाते। विच्छिनिद्यो विधृतीभ्या स्पत्नान्। जातान्भ्रातृंच्यान् ये चं जिन्छ्यमाणाः। विशो यन्नाभ्यां विध्माम्येनान्। अह स्वानां मृत्तमों उसानि देवाः। विशो यन्ने नुदमां ने अरांतिम्। विश्वं पाप्मान् ममितं दुर्मरायुम्॥६१॥

सीदंन्ती देवी सुंकुतस्यं लोके। धृतीं स्थो विधृती

स्वर्धृती। प्राणान्मयि धारयतम्। प्रजां मयि धारयतम्। पृश्नमयि धारयतम्। अयं प्रस्तर उभयंस्य धृती। धृती प्रयाजानांमुतानूंयाजानांम्। स दाधार समिधो विश्वरूपाः। तस्मिन्थ्सुचो अध्या सांदयामि। आ रोह पृथो जुंहु देवयानान्॥६२॥

यत्रर्षयः प्रथम्जा ये पुराणाः। हिरंण्यपक्षाऽजिरा सम्भृंताङ्गा। वहांसि मा सुकृतां यत्रं लोकाः। अवाहं बांध उपभृतां सपत्नान्। जातान्त्रातृंव्यान् ये चं जिन्ष्यमाणाः। दोहें यज्ञ सुद्घांमिव धेनुम्। अहमुत्तंरो भूयासम्। अधेरे मध्सपत्नाः। यो मां वाचा मनसा दुर्मरायः। हृदाऽरातीयादंभिदासंदग्ने॥६३॥

ड्दमंस्य चित्तमधंरं ध्रुवायाः। अहमुत्तंरो भूयासम्। अधंरे मथ्सपत्नाः। ऋषभोऽसि शाक्करः। घृताचीनाः सूनुः। प्रियेण नाम्नां प्रिये सदेसि सीद। स्योनो में सीद सुषदः पृथिव्याम्। प्रथंिय प्रजयां पृश्भिः सुवर्गे लोके। दिवि सीद पृथिव्याम्नतरिक्षे। अहमुत्तंरो भूयासम्॥६४॥

अधेरे मध्मपत्नाः। इयः स्थाली घृतस्यं पूर्णा। अच्छिन्नपयाः शतधार उथ्मः। मारुतेन शर्मणा दैव्येन। यज्ञोऽसि सर्वतः श्रितः। सर्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रंयताम्। शतं में सन्त्वाशिषः। सहस्रं मे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः। प्रजापंतिरसि सर्वतः श्रितः॥६५॥ स्वतो मां भूतं भेविष्यच्छ्रंयताम्। श्वतं में सन्त्वाशिषेः।
सहस्रं मे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः।
इदिमेन्द्रियम्मृतं वीर्यम्। अनेनेन्द्रांय पृशवोऽचिकिथ्सन्।
तेनं देवा अवतोप माम्। इहेष्मूर्जं यशः सह ओर्जः सनेयम्।
श्वतं मियं श्रयताम्। यत्पृंथिवीमचंर्त्तत्प्रविष्टम्॥६६॥

येनासिश्रद्धलमिन्द्रैं प्रजापितिः। इदं तच्छुकं मधुं वाजिनीवत्। येनोपिरेष्टादिधेनोन्महेन्द्रम्। दिध मां धिनोत्। अयं वेदः पृथिवीमन्विविन्दत्। गृहां सतीं गहेने गह्वरेषु। स विन्दतु यर्जमानाय लोकम्। अच्छिदं यृज्ञं भूरिकर्मा करोत्। अयं यृज्ञः समसदद्धविष्मान्। ऋचा साम्ना यर्जुषा देवतांभिः॥६७॥

तेनं लोकान्थ्सूर्यंवतो जयेम। इन्द्रंस्य सुख्यमंमृत्त्वमं-श्याम्। यो नः कनीय इह कामयाते। अस्मिन् युज्ञे यजमानाय मह्यम्। अप तिमेन्द्राग्नी भुवनान्नुदेताम्। अहं प्रजां वीरवंतीं विदेय। अग्ने वाजजित्। वाजं त्वा सरिष्यन्तम्। वाजं जेष्यन्तम्। वाजिनं वाजजितम्॥६८॥

वाज्जित्यायै सं माँजिम। अग्निमंत्रादम्त्राद्यांय। उपंहूतो द्यौः पिता। उप मां द्यौः पिता ह्वंयताम्। अग्निराग्नींधात्। आयुंषे वर्चसे। जीवात्वै पुण्यांय। उपंहूता पृथिवी माता। उप मां माता पृथिवी ह्वंयताम्। अग्निराग्नींधात्॥६९॥ आयुंषे वर्चसे। जीवात्वे पुण्यांय। मनो ज्योतिंर्जुषतामा-ज्यम्। विच्छिन्नं युज्ञ र सिम्मं दंधातु। बृह्स्पतिंस्तनुतािम्मं नंः। विश्वे देवा इह मांदयन्ताम्। यन्ते अग्न आवृश्वािमं। अहं वा क्षिपितश्चरन्। प्रजां च तस्य मूलं च। नीचैर्देवा नि वृश्वत॥७०॥

अग्ने यो नोंऽभिदासंति। समानो यश्च निष्ट्यः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदः। यं चाऽऽहं द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वाङ्स्तानंग्ने सन्दंह। याङ्श्चाहं द्वेष्मि ये च माम्। अग्ने वाजजित्। वाजंं त्वा सस्वा॰सम्॥७१॥

वार्जं जिगिवा रसम्। वाजिनं वाज्जितम्। वाज्जित्यायै सम्माजिमं। अग्निमंत्रादम्त्राद्याय। वेदिंर्ब्र्हिः शृत र ह्विः। इध्मः पंरिधयः सुर्चः। आज्यं यज्ञ ऋचो यजुः। याज्याश्च वषद्वाराः। सं मे सन्नंतयो नमन्ताम्। इध्मस्त्रहंने हुते॥७२॥

दिवः खीलोऽवंततः। पृथिव्या अध्युत्थितः। तेनां सहस्रंकाण्डेन। द्विषन्तर्रं शोचयामिस। द्विषन्मं बहु शोंचतु। ओषंधे मो अहर शुंचम्। यज्ञ नमंस्ते यज्ञ। नमो नमंश्च ते यज्ञ। शिवेनं मे सन्तिष्ठस्व। स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्व॥७३॥

सुभूतेनं मे सन्तिष्ठस्व। ब्रह्मवर्चसेनं मे सन्तिष्ठस्व। यज्ञस्यर्द्धिमनु सन्तिष्ठस्व। उपं ते यज्ञ नर्मः। उपं ते नर्मः। उपं ते नर्मः। त्रिष्फुलीकियमाणानाम्। यो न्युङ्गो अंवृशिष्यंते। रक्षंसां भागुधेयम्। आपुस्तत्प्र वंहतादितः॥७४॥

उलूखंले मुसंले यच शूर्पं। आशिश्लेषं दृषि यत्कपालें। अवप्रुषों विप्रुषः संयंजामि। विश्वे देवा ह्विरिदं जुंषन्ताम्। यज्ञे या विप्रुषः सन्तिं बह्बीः। अग्नौ ताः सर्वाः स्विष्टाः सुहुंता जुहोमि। उद्यन्नद्यमित्र महः। सपत्नांन्मे अनीनशः। दिवैनान् विद्युतां जिह। निम्नोचन्नधंरान्कृधि॥७५॥

उद्यन्नद्य वि नों भज। पिता पुत्रेभ्यो यथाँ। दीर्घायुत्वस्यं हेशिषे। तस्यं नो देहि सूर्य।

॥ हृद्रोगघ्न-मन्त्राः॥

उद्यन्नद्य मित्रमहः। आरोह्नन्नत्तरां दिवम्। हृद्रोगं ममे सूर्य। ह्रिमाणं च नाशय। शुकेषु मे हरिमाणम्। रोपणाकांसु दध्मसि॥७६॥

अथों हारिद्रवेषुं मे। हृरिमाणुं नि दंध्मिस। उदंगाद्यमादित्यः। विश्वेन सहसा सह। द्विषन्तुं ममं रन्थयन्। मो अहं द्विषतो रंधम्।

यो नः शपादशंपतः। यश्चं नः शपंतः शपात्। उषाश्च तस्मैं निमुक्नं। सर्वं पाप समूहताम्॥७७॥

यो नंः सपत्नो यो रणंः। मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। अवसृष्टः परांपत। शूरो ब्रह्मंस॰शितः। गच्छाऽमित्रान्प्र विंश। मैषां कश्चनोच्छिंषः॥७८॥

पतिः प्रजापंतये तपुस्वी वाचा सौभंगाय पृश्नमें पिन्वस्व दुर्मरा्युं देवयानांनग्नेऽन्तरिक्षेऽहमुत्तरे भूयासं प्रजापंतिरसि सुर्वतः श्रितः प्रविष्टं देवतांभिर्वाज्ञजितं पृथिवी ह्वंयतामुग्निराग्नींग्राद्वश्चत ससुवाश्सर्थ हुते स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्वेतः कृंधि दथ्मस्यूहतामुष्टो चं॥————[ह्

सक्षेदं पंश्य। विधंतिरिदं पंश्य। नाकेदं पंश्य। रमितः पिनंष्ठा। ऋतं वर्षिष्ठम्। अमृतायान्याहुः। सूर्यो विरेष्ठो अक्षिभिविभाति। अनु द्यावापृथिवी देवपुत्रे। दीक्षाऽसि तपंसो योनिः। तपोऽसि ब्रह्मणो योनिः॥ ७९॥

ब्रह्मांसि क्ष्रतस्य योनिः। क्ष्रत्रमंस्यृतस्य योनिः। क्ष्रतमंसि भूरा रंभे। श्रद्धां मनंसा। दीक्षां तपंसा। विश्वंस्य भुवंनस्याधिपत्नीम्। सर्वे कामा यजमानस्य सन्तु। वातं प्राणं मनंसाऽन्वा रंभामहे। प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नो मृत्योस्रायतां पात्व १ हंसः॥८०॥

ज्योग्जीवा ज्रामंशीमिह। इन्द्रं शाक्कर गायत्रीं प्रपंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाक्कर त्रिष्टुम्ं प्रपंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाकर् जर्गतीं प्रपंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाकरानुष्टुभ्ं प्रपंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाकर पृक्किं प्रपंद्ये॥८१॥

तान्ते युनज्मि। आऽहं दीक्षामंरुहमृतस्य पत्नीम्। गायत्रेण् छन्दंसा ब्रह्मणा च। ऋतः सत्येऽधायि। सत्यमृतेऽधायि। ऋतं चे मे सत्यं चांभूताम्। ज्योतिरभूवः सुवंरगमम्। सुवर्गं लोकं नाकंस्य पृष्ठम्। ब्र्ध्नस्यं विष्टपंमगमम्। पृथिवी दीक्षा॥८२॥ तयाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। ययाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। अन्तिरिक्षं दीक्षा। तयां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। ययां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। द्यौर्दीक्षा। तयांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः। ययांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः॥८३॥

तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। दिशों दीक्षा। तयां चन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। ययां चन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। आपों दीक्षा। तया वर्रुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया वर्रुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। ओषंधयो दीक्षा॥८४॥

तया सोमो राजां दीक्षयां दीक्ष्याः। यया सोमो राजां दीक्षयां दीक्ष्यां प्राणो दीक्षयां दीक्ष्यां तयां प्राणो दीक्षयां दीक्ष्यामि। पृथिवी त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। अन्तरिक्षं त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। द्यौस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्॥८५॥

दिशंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। आपंस्त्वा दीक्षंमाण्-मनुं दीक्षन्ताम्। ओषंधयस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। वाक्ता दीक्षंमाण्मनुं दीक्षताम्। ऋचंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। सामानि त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। यजूर्षेषि त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। अहंश्च रात्रिंश्च। कृषिश्च वृष्टिंश्च। त्विषिश्चापंचितिश्च॥८६॥ आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क्वं सूनृतां च। तास्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। स्वे दक्षे दक्षंपितृह सींद। देवाना र्रं सुम्नो महृते रणांय। स्वासस्थस्तनुवा संविंशस्व। पितेवैंधि सूनव आ सुशेवंः। शिवो मां शिवमा विंश। सृत्यं मं आत्मा। श्रद्धा मेऽक्षिंतिः॥८७॥

तपों मे प्रतिष्ठा। स्वितृप्रंस्ता मा दिशों दीक्षयन्तु। स्त्यमंस्मि। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोककृञ्जातवेदः। आजुह्वांनः सुप्रतींकः पुरस्तांत्। अग्ने स्वां योनिमा सींद साध्या। अस्मिन्थ्स्थस्थे अध्युत्तंरस्मिन्॥८८॥

विश्वं देवा यजंमानश्च सीदत। एकंमिषे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। द्वे ऊर्जे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। त्रीणि व्रताय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। चत्वारि मायोभवाय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। पश्चं पृशुभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। षड्रायस्पोषांय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। सप्त स्प्तभ्यो होत्राभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। स्प्त स्प्तभ्यो होत्राभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। सखांयः स्प्तपंदा अभूम। सख्यं ते गमेयम्॥८९॥

स्ख्याते मा योषम्। स्ख्यान्मे मा योष्ठाः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्ते पृथिवी पार्दः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्तेऽन्तरिक्षं पार्दः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्ते द्यौः पार्दः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्ते दिशः पार्दः॥९०॥

पुरोरंजास्ते पश्चमः पादंः। सा न इषुमूर्जं धुक्ष्व। तेर्ज

इन्द्रियम्। ब्रह्मवर्चसम्नाद्यम्। वि मिमे त्वा पर्यस्वतीम्। देवानां धेनु सुदुघामनंपस्फुरन्तीम्। इन्द्रः सोमं पिबतु। क्षेमो अस्तु नः। इमान्नंराः कृणुत् वेदिमेत्यं। वस्मिती स् रुद्रवंतीमादित्यवंतीम्॥९१॥

वर्ष्मन्दिवः। नाभां पृथिव्याः। यथाऽयं यजंमानो न रिष्येत्। देवस्यं सिवतुः स्वे। चतुः शिखण्डा युवतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्ये। तस्यारं सुपूर्णाविध् यौ निविष्टौ। तयोदिवानामिधं भागधेयम्। अप जन्यं भ्यं नुंद। अपं चुकाणि वर्तय। गृहर सोमंस्य गच्छतम्। न वा उं वेतन्म्रियसे न रिष्यसि। देवार इदेषि पृथिभिः सुगेभिः। यत्र यन्तिं सुकृतो नापिं दुष्कृतः। तत्रं त्वा देवः संविता दंधात्॥९२॥

ब्रह्मणो योनिर॰हंसः पुङ्किः प्रपेद्ये दीक्षा ययाऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितस्तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयाम्योपंधयो दीक्षा द्यौस्तवा दीक्षमाणमन् दीक्षतामपंचितिश्राक्षिति्रक्तंरस्मिन्गमेयुं दिशः पादं आदित्यवंतीं वर्तय् पश्चं च॥—————[७]

यदस्य पारे रर्जसः। शुक्रं ज्योतिरजायत। तन्नः पर्षदित द्विषंः। अग्ने वैश्वानर् स्वाहाँ। यस्माँद्भीषाऽवांशिष्ठाः। ततों नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीदुषें। यस्माँद्भीषा न्यषंदः। ततों नो अभयं कृधि॥९३॥

प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीढुषें। उदुंस्र तिष्ठ प्रति तिष्ठ मारिषः। मेमं युज्ञं यजमानं च रीरिषः। सुवर्गे लोके यजमान् हे हि धेहि। शन्नं एधि द्विपदे शं चतुंष्पदे। यस्मौद्भीषाऽवेपिष्ठाः पुलायिष्ठाः सुमज्ञौस्थाः। ततो नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमो रुद्रायं मीढुषे॥९४॥

य इदमकंः। तस्मै नमंः। तस्मै स्वाहाँ। न वा उंवेतिन्प्रंयसे। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। यज्ञस्य हि स्थ ऋत्वियौं। इन्द्रांग्री चेतंनस्य च। हुताहुतस्यं तृप्यतम्। अहंतस्य हुतस्यं च। हुतस्य चाहुंतस्य च। अहंतस्य हुतस्यं च। इन्द्रांग्री अस्य सोमंस्य। वीतं पिंबतं जुषेथांम्। मा यजंमानं तमो विदत्। मर्त्विजो मो इमाः प्रजाः। मा यः सोमंमिमं पिबात्। स॰सृष्टमुभयं कृतम्॥९५॥

कृषि मींद्रपेऽहृंतस्य च सप्त चं॥———[८]

अनागसंस्त्वा वयम्। इन्द्रंण प्रेषिता उपं। वायुष्टं अस्त्वश्श्नभूः। मित्रस्तें अस्त्वश्श्नभूः। वर्रुणस्ते अस्त्वश्श्नभूः। अपाङ्क्षया ऋतंस्य गर्भाः। भुवंनस्य गोपाः श्येनां अतिथयः। पर्वतानां ककुभः प्रयुतों नपातारः। वृग्ननेन्द्रई ह्वयत। घोषेणामीवाइश्चातयत॥९६॥

युक्ताः स्थ् वहंत। देवा ग्रावांण् इन्दुरिन्द्र इत्यंवादिषुः। एन्द्रंमचुच्यवुः पर्मस्याः पर्वतः। आऽस्माथ्स्धस्थात्। ओरोर्न्तरिक्षात्। आ सुंभूतमंसुषवुः। ब्रह्मवर्चसं म् आसुंषवुः। सम्रे रक्षाः स्यविषषुः। अपहतं ब्रह्मज्यस्यं। वाक्रं त्वा मनंश्च श्रीणीताम्॥९७॥

प्राणश्चं त्वाऽपानश्चं श्रीणीताम्। चक्षुंश्च त्वा श्रोत्रं च

श्रीणीताम्। दक्षंश्चत्वा बलं च श्रीणीताम्। ओजंश्च त्वा सहंश्च श्रीणीताम्। आयुंश्च त्वाऽज्र् च श्रीणीताम्। आत्मा चं त्वा त्नूश्चं श्रीणीताम्। शृतोऽिस शृतं कृतः। शृतायं त्वा शृतेभ्यंस्त्वा। यमिन्द्रंमाहुर्वरुंणं यमाहुः। यं मित्रमाहुर्यमुं सत्यमाहुः॥९८॥

यो देवानां देवतंमस्तपोजाः। तस्मै त्वा तेभ्यंस्त्वा। मिय त्यदिन्द्रियं महत्। मिय दक्षो मिय ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धमी वि भातु मे। आकूँत्या मनंसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। युज्ञेन पर्यसा सह। तस्य दोहंमशीमहि॥९९॥

तस्यं सुम्नमंशीमिह। तस्यं भृक्षमंशीमिह। वाग्जुंषाणा सोमंस्य तृप्यतु। मित्रो जनान्त्र स मित्र। यस्मान्न जातः परो अन्यो अस्ति। य आंविवेश भुवंनानि विश्वां। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। त्रीणि ज्योती १षि सचते स षोंड्शी। एष ब्रह्मा य ऋत्वियः। इन्द्रो नामं श्रुतो गुणे॥१००॥

प्रते महे विदथे शश्सिष्ट् हरीं। य ऋत्वियः प्रते वन्वे। वनुषों हर्यतं मदम्ं। इन्द्रो नामं घृतं नयः। हरिभिक्षारु सेचेते। श्रुतो गण आ त्वां विशन्तु। हरिवर्पसङ्गिरेः। इन्द्राधिपतेऽधिपतिस्त्वं देवानांमिस। अधिपतिं माम्। आयुष्मन्तं वर्चस्वन्तं मनुष्येषु कुरु॥१०१॥

इन्द्रंश्च सम्राङ्वरुंणश्च राजां। तौ ते भृक्षं चंऋतुरग्रं एतम्।

तयोरन् भक्षं भेक्षयामि। वाग्जुंषाणा सोमंस्य तृप्यतु। प्रजा-पंतिर्विश्वकर्मा। तस्य मनों देवं यज्ञेनं राध्यासम्। अर्थेगा अस्य जंहितः। अवसानंपतेऽवसानं मे विन्द। नमों रुद्रायं वास्तोष्पतंये। आयने विद्रवंणे॥१०२॥

उद्याने यत्परायंणे। आवर्तने विवर्तने। यो गोपायित् त॰ हुंवे। यान्यंपामित्यान्यप्रंतीत्तान्यस्मिं। यमस्यं बिलिना चर्रामि। इहैव सन्तः प्रति तद्यांतयामः। जीवा जीवेभ्यो नि हंराम एनत्। अनुणा अस्मिन्नंनुणाः परंस्मिन्। तृतीयें लोके अनृणाः स्यांम। ये देवयानां उत पितृयाणाः॥१०३॥

सर्वांन्पथो अंनृणा आक्षीयेम। इदमूनु श्रेयों-ऽवसानमा गंन्म। शिवे नो द्यावांपृथिवी उभे इमे। गोम् द्धनंवदर्श्वंवदूर्जंस्वत्। सुवीरां वीरैरनु सश्चरेम। अर्कः प्वित्र रं रंजसो विमानः। पुनातिं देवानां भुवंनानि विश्वां। द्यावांपृथिवी पर्यसा संविदाने। घृतं दुंहाते अमृतं प्रपींने। प्वित्रम्को रंजसो विमानः। पुनातिं देवानां भुवंनानि विश्वां। स्वर्ज्योतिर्यशों महत्। अशीमिहं गाधमुत प्रतिष्ठाम्॥१०४॥ च्वर्ष्य श्रेणीवार स्व्यमाहरंशीमहि ग्रेण कृष्ठ विद्वर्षणे विश्वाणं अर्को रंजसे विमानशीण वा—[९]

उदंस्ताम्फ्सीथ्सिवता मित्रो अंर्यमा। सर्वानित्रांन-वधीद्युगेनं। बृहन्तं मामंकरद्वीरवंन्तम्। रथन्तरे श्रंयस्व स्वाहां पृथिव्याम्। वामदेव्ये श्रंयस्व स्वाहाऽन्तरिक्षे। बृह्ति श्रंयस्व स्वाहां दिवि। बृहता त्वोपंस्तभ्रोमि। आ त्वां ददे यशंसे वीर्याय च। अस्मास्विधिया यूयं देधाथेन्द्रियं पर्यः। यस्तै द्रफ्सो यस्तं उदुर्षः॥१०५॥

दैव्यः केतुर्विश्वं भुवंनमाविवेशं। स नः पाह्यरिष्ठ्ये स्वाहाँ। अनुं मा सर्वो यज्ञोऽयमेतु। विश्वे देवा मुरुतः सामार्कः। आप्रियुश्छन्दा रेसि निविदो यजूरेषि। अस्य पृथिव्ये यद्यज्ञियम्। प्रजापंतेर्वर्तिनमनुं वर्तस्व। अनुंवीरेरनुं राध्याम् गोभिः। अन्वश्वेरनु सर्वेरु पुष्टेः। अनुं प्रजया-ऽन्विन्द्रियेणं॥१०६॥

देवा नों यज्ञमृंजुधा नंयन्तु। प्रतिक्षत्रे प्रतिं तिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्वेषु प्रतिं तिष्ठामि गोषुं। प्रतिं प्रजायां प्रतिं तिष्ठामि भव्यें। विश्वंमन्याऽभिं वावृधे। तद्न्यस्यामधिश्रितम्। दिवे चं विश्वकर्मणे। पृथिव्ये चांकरं नमः। अस्कान्द्योः पृथिवीम्। अस्कांनृषभो युवागाः॥१०७॥

स्कन्नेमा विश्वा भुवंना। स्कन्नो युज्ञः प्र जंनयतु। अस्कानजंनि प्राजंनि। आ स्कन्नाञ्जांयते वृषां। स्कन्नात्प्र जंनिषीमिह। ये देवा येषांमिदं भागधेयं बभूवं। येषां प्रयाजा उतानूंयाजाः। इन्द्रंज्येष्ठेभ्यो वर्रुणराजभ्यः। अग्निहोतृभ्यो देवेभ्यः स्वाहां। उत त्या नो दिवां मृतिः॥१०८॥

अदितिरूत्या गंमत्। सा शन्तांची मयंस्करत्। अप स्निधंः। उत त्या दैव्यां भिषजां। शन्नंस्करतो अश्विनां। यूयातांमुस्मद्रपंः। अपु स्निधंः। शमुग्निरुग्निभिस्करत्।

शन्नंस्तपतु सूर्यः। शं वातों वात्वर्पाः॥१०९॥

अप स्निधंः। तदित्पदं न विचिकेत विद्वान्। यन्मृतः पुनंरप्येतिं जीवान्। त्रिवृद्यद्भुवंनस्य रथवृत्। जीवो गर्भो न मृतः स जीवात्। प्रत्यंस्मै पिपींषते। विश्वांनि विदुषे भर। अर्ङ्गमाय जग्मेवे। अपश्चाद्दघ्वने नरें। इन्दुरिन्दुमवांगात्। इन्दोरिन्द्रोऽपात्। तस्यं त इन्द्विन्द्रंपीतस्य मधुंमतः। उपहूतस्योपंहूतो भक्षयामि॥११०॥

उद्रुप इंन्द्रियेण गा मृतिरंरुपा अंगात्रीणि च॥————[१०]

ब्रह्मं प्रतिष्ठा मनंसो ब्रह्मं वाचः। ब्रह्मं युज्ञाना र हिविषामाज्यंस्य। अतिरिक्तं कर्मणो यचं हीनम्। युज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कुल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्। आश्रांवितम्त्याश्रांवितम्। वर्षद्वृतमृत्यनूँक्तं च युज्ञे। अतिरिक्तं कर्मणो यचं हीनम्। युज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कुल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्॥१११॥

यद्वो देवा अतिपादयांनि। वाचा चित्प्रयंतं देवहेर्डनम्। अरायो अस्मा अभिदुंच्छुनायतें। अन्यत्रास्मन्मंरुतस्तिन्निधेन्तन। तृतं म् आपस्तदुं तायते पुनः। स्वादिष्ठा धीतिरुचथाय शस्यते। अय संमुद्र उत विश्वभेषजः। स्वाहांकृतस्य समुतृण्णुतर्भुवः। उद्वयं तमस्परि। उदुत्यं चित्रम्॥११२॥

इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्ने स त्वन्नों अग्ने।

त्वमंग्ने अयासि प्रजांपते। इमं जीवेभ्यः परिधिं देधामि। मैषान्नुगादपंरो अर्धमेतम्। शतं जीवन्तु शरदः पुरूचीः। तिरो मृत्युं देधतां पर्वतेन। इष्टेभ्यः स्वाहा वषडिनेष्टेभ्यः स्वाहां। भेषुजं दुरिष्ठौ स्वाहा निष्कृत्यै स्वाहां। दौरांध्यै स्वाहा दैवींभ्यस्तनूभ्यः स्वाहां॥११३॥

ऋखे स्वाहा समृंखे स्वाहाँ। यतं इन्द्र भयांमहे। ततों नो अभयं कृषि। मघंवञ्छ्गि तव तन्नं ऊतयेँ। वि द्विषो वि मृथों जिह। स्वस्तिदा विशस्पतिः। वृत्रहा वि मृथों वृशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः। स्वस्तिदा अभयङ्करः। आभिर्गीर्भियंदतों न ऊनम्॥११४॥

आप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं। भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। अनौज्ञातं यदाज्ञांतम्। यज्ञस्यं क्रियते मिथुं। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व हि वेत्थं यथात्थम्। पुरुषसम्मितो यज्ञः। यज्ञः पुरुषसम्मितः। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व हि वेत्थं यथात्थम्। यत्पांकत्रा मनसा दीनदंक्षा न। यज्ञस्यं मन्वते मर्तासः। अग्निष्टद्धोतौ ऋतुविद्विजानन्। यजिष्ठो देवा हि ऋतुशो यजाति॥११५॥ द्वाह्यः स्वहतं पुरुषसम्मितेऽशे तदंस्य कल्पय पर्व व॥——[११]

यद्वेवा देव्हेडंनम्। देवांसश्चकृमा व्यम्। आदिंत्या-स्तस्मांन्मा मुश्चत। ऋतस्यर्तेन् मामुत। देवां जीवनकाम्या यत्। वाचाऽनृतमूदिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु। दुरिता यानिं चकुम। कुरोतु मामंनेनसम्॥११६॥

ऋतेनं द्यावापृथिवी। ऋतेन् त्वश् संरस्वति। ऋतान्मां मुञ्चताश्हंसः। यद्नयकृतमारिम। सृजात्शृश्सादुत वां जामिशृश्सात्। ज्यायंसः शश्सांदुत वा कनीयसः। अनौज्ञातं देवकृतं यदेनंः। तस्मात्त्वम्स्माञ्जातवेदो मुमुग्धि। यद्वाचा यन्मनंसा। बाहुभ्यांमूरुभ्यांमष्ठीवद्धांम्॥११७॥

शिश्नैर्यदर्नृतं चकुमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनेसः। यद्धस्ताभ्यां चकर् किल्बिषाणि। अक्षाणां वृग्नुम्पुजिन्नेमानः। दूरेप्श्या चे राष्ट्रभृचं। तान्यंपस्रसावनुदत्तामृणानि। अदींव्यन्नृणं यद्हं चकारं। यद्वादांस्यन्थ्सञ्जगरा जनेभ्यः। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यन्मयिं माता गर्भे स्ति॥११८॥

एनंश्चकार् यत्पता। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदां पिपेषं मातरं पितरम्। पुत्रः प्रमुंदितो धयन्। अहि श्रितौ पितरौ मया तत्। तदंग्ने अनृणो भंवामि। यदन्तिरक्षं पृथिवीमुत द्याम्। यन्मातरं पितरं वा जिहिश्सिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदाशसां निशसा यत्पंराशसां॥११९॥

यदेनेश्चकृमा नूर्तनं यत्पुराणम्। अग्निर्मा तस्मादेनेसः। अति कामामि दुरितं यदेनेः। जहांमि रिप्रं पेर्मे स्थस्थैं। यत्र यन्ति सुकृतो नापि दुष्कृतेः। तमा रोहामि सुकृतां नु लोकम्। त्रिते देवा अमृजतैतदेनेः। त्रित एतन्मेनुष्येषु मामृजे। ततो मा यदि किश्चिदानुशे। अग्निर्मा तस्मादेनसः॥१२०॥

गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु। दुिता यानि चकृम। करोतु मामनेनसम्। दिवि जाता अफ्सु जाताः। या जाता ओषंधीभ्यः। अथो या अंग्रिजा आपंः। ता नंः शुन्धन्तु शुन्धंनीः। यदापो नक्तं दुितं चराम। यद्घा दिवा नूतंनं यत्पुराणम्। हिरंण्यवर्णास्तत् उत्पुंनीत नः। इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्रे स त्वन्नों अग्रे। त्वमंग्रे अयासिं॥१२१॥

अर्नेनसंमध्येवज्ञारं स्ति पंराशसांऽऽन्शेंऽग्निर्मा तस्मादेनंसः पुनीत नुस्नीणि च (यहँवा देवां ऋतेनं सजातशार्यसाद्धाचा यद्धस्तां-श्यामदींच्यं यन्मियं माता यदां पिपेष यदन्तिरक्षं यदाशसाऽतिं कामामि त्रिते देवा दिवि जाता अपस् जाता यदापं हुमं में वरुण् तत्त्वां यामि त्वन्नों अग्ने स त्वन्नों अग्ने त्वमंग्ने अयासिं।)॥————[१२]

यत्ते ग्राव्णां चिच्छिद्ः सोम राजन्। प्रियाण्यङ्गांनि स्विधिता परूरंषि। तथ्सन्ध्यस्वाज्येनोत वंधियस्व। अनागसो अधिमथ्सङ्क्षयेम। यत्ते ग्रावां बाहुच्युंतो अचुंच्यवः। नरो यत्ते दुदुहुर्दक्षिणेन। तत्त् आप्यांयतां तत्ते। निष्ट्यांयतां देव सोम। यत्ते त्वचं बिभिदुर्यच् योनिम्। यदास्थानात्प्रच्युंतो वेनंसि त्मनां॥१२२॥

त्वया तथ्सोम गुप्तमंस्तु नः। सा नः सन्धासंत्पर्मे व्योमन्। अहाच्छरीरं पर्यसा समेत्यं। अन्यौन्यो भवति वर्णो अस्य। तस्मिन्वयमुपंहृतास्तवं स्मः। आ नो भज् सदंसि विश्वरूपे। नृचक्षाः सोमं उत शुश्रुगंस्तु। मा नो वि हांसीदिरं आवृणानः। अनांगास्तुनुवो वावृधानः। आ नों

रूपं वंहतु जायंमानः॥१२३॥

उपं क्षरन्ति जुह्वां घृतेनं। प्रियाण्यङ्गानि तवं वर्धयंन्तीः। तस्मैं ते सोम् नम् इद्वषंद्व। उपं मा राजन्थ्सुकृते ह्वंयस्व। सं प्राणापानाभ्या सम् चक्षुंषा त्वम्। सः श्रोत्रेण गच्छस्व सोम राजन्। यत्त् आस्थित शम् तत्तं अस्तु। जानीतान्नः सङ्गनेन पथीनाम्। एतं जानीतात्पर्मे व्योमन्। वृकाः सधस्था विद रूपमंस्य॥१२४॥

यिद्दिशक्षे मनसा यर्च वाचा। यद्वाँ प्राणैश्वक्षंषा यच् श्रोत्रेण। यद्रेतसा मिथुनेनाप्यात्मनाँ। अद्भो लोका देधिरे तेजं इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोचंनीः। आपो विमोक्रीमिये तेजं इन्द्रियम्। यद्दचा साम्ना यर्जुषा। पृशूनां चर्मन् हिवषां दिदीक्षे। यच्छन्दों भिरोषं धी भिर्वनस्पतौँ। अद्भो लोका दंधिरे तेजं इन्द्रियम्॥१२६॥

शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीमीय तेर्ज इन्द्रियम्। येन् ब्रह्म येनं क्षुत्रम्। येनेंन्द्राग्नी प्रजा-पंतिः सोमो वरुणो येन् राजां। विश्वे देवा ऋषयो येनं प्राणाः। अञ्चो लोका दंधिरे तेर्ज इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीमीय तेर्ज इन्द्रियम्। अपा पुष्पंमस्योषंधीना रूर्सः। सोमस्य प्रियं धामं॥१२७॥

अग्नेः प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषंधीना १ रसंः। सोमस्य प्रियं धामं। इन्द्रंस्य प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषंधीना १ रसंः। सोमस्य प्रियं धामं। विश्वेषां देवानां प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। वय १ सोम व्रते तवं। मनस्तनूषु पिप्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमहि॥१२८॥

देवेभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। सोम्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। कृव्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। देवांस इह मादयध्वम्। सोम्यांस इह मादयध्वम्। कव्यांस इह मादयध्वम्। अनंन्तरिताः पितरः सोम्याः सोमपीथात्। अपैतु मृत्युर्मृतं न आगन्। वैवस्वतो नो अभयं कृणोतु। पणं वनस्पतेरिव॥१२९॥

अभि नंः शीयता र र्यिः। सर्चतां नः शचीपितिः। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थाम्। यस्ते स्व इतरो देवयानात्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नंः प्रजा रीरिषो मोत वीरान्। इदमूनु श्रेयोवसानमार्गन्म। यद्गोजिद्धंनुजिदंश्वजिद्यत्। 418 सप्तमः प्रश्नः

पूर्णं वन्स्पतेरिव। अभि नेः शीयता र्योः। सर्चतां नः शचीपतिः॥१३०॥

वनुस्पतांबुद्धो लोका देधिरे तेर्ज इन्द्रियं धामांशीमहीवाभिनः शीयता रियरेकं च॥______[१४]

सर्वान् यद्विष्यंष्णेन् वि वै याः पुरस्ताद्वेवां देवेषु परिस्तृणीत् सक्षेदं यदस्य प्रारेऽनागम् उदंस्ताम्प्रसीद्वह्मं प्रतिष्ठा यदेवा यत्ते ग्रान्णा् यदिदीक्षे चतुर्दश्व॥१४॥ सर्वान्भूतिमेव यामेवापस्वाहृति व्रतानां पर्णवल्कः सोम्यानांमस्मिन् युज्ञेऽग्रे यो नो ज्योग्जीवाः पुरोरंजाः प्रतेमहे ब्रह्मं प्रतिष्ठा गार्हपत्यस्त्रिश्चादंत्तरशतम्॥१३०॥ सर्वाञ्क्षचीपतिः॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

साङ्ग्रहण्येष्ट्यां यजते। इमाञ्चनता सङ्गृह्णानीति। द्वादेशारत्नी रशना भवति। द्वादेश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरमेवावं रुन्धे। मौञ्जी भवति। ऊर्ग्वे मुञ्जाः। ऊर्ज-मेवावं रुन्धे। चित्रा नक्षेत्रं भवति। चित्रं वा एतत्कर्म॥१॥

यदंश्वमेधः समृद्धौ। पुण्यंनाम देवयजंनम्ध्यवंस्यति। पुण्यांमेव तेनं कीर्तिम्भि जंयति। अपंदातीनृत्विजंः समावंहन्त्या सुंब्रह्मण्यायाः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ठौ। केश्रश्मश्रु वंपते। नुखानि नि कृन्तते। द्तो धांवते। स्नातिं। अहंतं वासः परिधत्ते। पाप्मनोऽपंहत्यै। वाचं यत्वोपं वसति। सुवर्गस्यं लोकस्य गुप्त्यै। रात्रिं जाग्रयंन्त आसते। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ठौ॥२॥

चतुंष्टय्य आपों भवन्ति। चतुंः शफो वा अश्वंः प्राजापृत्यः समृंद्धौ। ता दिग्भ्यः समाभृंता भवन्ति। दिक्षु वा आपंः। अत्रं वा आपंः। अत्रो वा अत्रं जायते। यदेवाद्योऽत्रं जायते। तदवं रुन्थे। तासुं ब्रह्मौद्नं पंचति। रेतं पुव तद्दंधाति॥३॥

चतुः शरावो भवति। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति। उभयतोरुकौ भंवतः। उभयतं एवास्मिन्नुचं दधाति। उद्धरित शृतत्वायं। सूर्पिष्वान्भवति मेध्यत्वायं। चृत्वारं आर्षेयाः प्राश्जंन्ति। दिशामेव ज्योतिषि जुहोति। चृत्वारि हिरंण्यानि ददाति। दिशामेव ज्योतीङ्ष्यवं रुन्धे॥४॥

यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तस्मिन्नश्नान्युंनत्ति। प्रजापंतिर्वा ओंद्नः। रेत् आज्यम्। यदाज्यं रश्नान्युनत्ति। प्रजापंतिमेव रेतंसा समर्थयति। दुर्भमयी रश्ना भवति। बहु वा एष कुंचरों मेध्यमुपंगच्छति। यदश्वंः। पवित्रं वै दर्भाः॥५॥

यहंर्भ्मयीं रश्ना भवंति। पुनात्येवैनम्ं। पूतमेंनं मेध्यमा लंभते। अश्वंस्य वा आलंब्यस्य मिह्मोदंक्रामत्। स महर्त्विजः प्राविंशत्। तन्महर्त्विजां महर्त्विक्तम्। यन्महर्त्विजः प्राश्वनितं। मिह्मानंमेवास्मिन्तदंधित। अश्वंस्य वा आलंब्यस्य रेत् उदंक्रामत्। तथ्सुवर्ण्ष् हिरंण्यमभवत्। यथ्सुवर्ण्ष् हिरंण्यं ददांति। रेतं एव तद्दंधाति। ओद्ने दंदाति। रेतो वा ओद्नः। रेतो हिरंण्यम्। रेतंसैवास्मिन्नेतो दधाति॥६॥

यो वै ब्रह्मणे देवेभ्यः प्रजापंतयेऽप्रंतिप्रोच्याश्वं मेध्यं बृध्नातिं। आ देवताभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यः प्रतिप्रोच्यं। न देवताभ्य आवृश्च्यते। वसीयान्भवति। यदाहं। ब्रह्मन्नश्वं मेध्यं भन्थस्यामि देवेभ्यः प्रजापंतये तेनं राध्यासमितिं। ब्रह्म वै ब्रह्मा। ब्रह्मण एव देवेभ्यः प्रजापंतये प्रतिप्रोच्याश्वं मेध्यं ब्रध्नाति॥७॥ न देवतांभ्य आ वृंश्च्यते। वसीयान्भवति। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इति रश्नामादेते प्रसूत्ये। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्याह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह यत्ये। व्यृंद्धं वा पृतद्यज्ञस्यं। यदंयजुष्कंण क्रियतें। इमामंगृभ्णत्रश्नामृतस्ये-त्यिं वदित् यजुष्कृत्ये। यज्ञस्य समृंद्धे॥८॥

तदांहुः। द्वादंशारती रश्ना कंर्त्व्या(३) त्रयोदशार्त्नी(३)-रितिं। ऋष्भो वा एष ऋंतूनाम्। यथ्संवथ्सरः। तस्यं त्रयोदशो मासों विष्टपम्। ऋष्भ एष यज्ञानाम्। यदेश्वमेधः। यथा वा ऋष्भस्य विष्टपम्। एवमेतस्यं विष्टपम्। त्रयोदशमंरति १ रश्नायांमुपा दंधाति॥९॥

यथंर्षभस्यं विष्टपर्ं सङ्स्करोतिं। ताहगेव तत्। पूर्व आयुंषि विदथेषु कव्येत्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। तयां देवाः सुतमा बंभूवुरित्यांह। भूतिंमेवोपावंति। ऋतस्य सामन्थ्यरमारपन्तीत्यांह। सृत्यं वा ऋतम्। स्त्येनैवनंमृतेनारंभते। अभिधा असीत्यांह॥१०॥

तस्मांदश्वमेधयाजी सर्वाणि भूतान्यभि भंवति। भुवंनम्सीत्यांह। भूमानंमेवोपैति। यन्ताऽसीत्यांह। यन्तारंमेवैनं करोति। धूर्ताऽसीत्यांह। धूर्तारंमेवैनं करोति। सौंऽग्निं वैश्वान्रमित्यांह। अग्नावेवैनं वश्वान्रे जुंहोति। सप्रथसमित्यांह॥११॥ प्रजयैवेनं पृश्भिः प्रथयति। स्वाहांकृत् इत्यांह। होमं एवास्येषः। पृथिव्यामित्यांह। अस्यामेवेनं प्रतिष्ठापयति। यन्ता राड्यन्ताऽसि यमंनो धर्ताऽसि ध्रुण् इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। कृष्ये त्वा क्षेमांय त्वा रय्ये त्वा पोषांय त्वेत्यांह। आमेवेतामा शांस्ते। स्वगा त्वां देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं पृवेन ई स्वगा करोति। स्वाहां त्वा प्रजापंतय इत्यांह। प्राजापत्यो वा अश्वः। यस्यां पृव देवतांया आलुभ्यतें। तयैवेन इ समर्ध्यति॥१२॥

यः पितुरंनुजायाः पुत्रः। स पुरस्तांन्नयति। यो मातुरंनुजायाः पुत्रः। स पृश्चान्नयति। विष्वंश्चमेवास्मांत्पाप्मानं विवृंहतः। यो अर्वन्तं जिघारंसित् तम्भ्यंमीति वर्रुण इति श्वानं चतुरक्षं प्रसौति। परो मर्तः परः श्वेति शुनंश्चतुरक्षस्य प्रहंन्ति। श्वेव वै पाप्मा भ्रातृंव्यः। पाप्मानंमेवास्य भ्रातृंव्यः हन्ति। सैधकं मुसंलं भवति॥१३॥

कर्मकर्मेवास्में साधयति। पौड्श्रक्षेयो हंन्ति। पुड्श्रक्वां वे देवाः शुचं न्यंदधः। शुचैवास्य शुचर्ं हन्ति। पाप्मा वा एतमींपस्तीत्यांहः। योंऽश्वमेधेन् यजंत इति। अश्वंस्याधस्पदमुपांस्यति। वृज्जी वा अश्वंः प्राजापृत्यः। वञ्जेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्यमवंक्रामति। दक्षिणाऽपं प्रावयति॥१४॥ पाप्मानंमेवास्माच्छमंलमपं प्रावयति। ऐषीक उंदूहो भंवति। आयुर्वा इषीकाः। आयुरेवास्मिन्दधित। अमृतं वा इषीकाः। अमृतंमेवास्मिन्दधित। वेतस्शाखोपसम्बंद्धा भवति। अपसुर्योनिर्वा अश्वंः। अपसुजो वेतसः। स्वादेवेनं योनेर्निर्मिमीते। पुरस्तांत्प्रत्यश्चंमभ्युदूंहित। पुरस्तांदेवास्मिन्प्रतीच्यमृतं दधाति। अहं च त्वं चं वृत्रहिन्नितं ब्रह्मा यजंमानस्य हस्तं गृह्णाति। ब्रह्मक्षत्रे एव सन्दंधाति। अभिक्रत्वेन्द्र भूरध्जमन्नित्यंध्वर्युर्यजंमानं वाचयत्यभिजित्यै॥१५॥

चत्वारं ऋत्विजः समृंक्षन्ति। आभ्य एवैनं चत्सृभ्यों दिग्भ्योऽभि समीरयन्ति। श्तेनं राजपुत्रैः सहाध्वर्यः। पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्टन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वेन् मेध्येनेष्ट्वा। अयश् राजां वृत्रं वध्यादितिं। राज्यं वा अध्वर्यः। क्षूत्रश् राजपुत्रः। राज्येनैवास्मिन्क्षत्रं दंधाति। श्तेनांराजिभेरुग्रैः सह ब्रह्मा॥१६॥

दक्षिणत उद्द्विष्ठन्त्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्यंनेष्ट्वा। अय॰ राजांऽप्रतिधृष्योंऽस्त्वितं। बलं वै ब्रह्मा। बलंमराजोग्रः। बलंनेवास्मिन्बलं दधाति। श्तेनं सूतग्रामणिभिः सह होतां। पश्चात्प्राङ्विष्ठन्त्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्यंनेष्ट्वा। अय॰ राजा-ऽस्यै विशः॥१७॥

बहुग्वे बंहुश्वायें बहुजाविकायें। बहुव्रीहियवायें बहुमाष-तिलायें। बहुहिरण्यायें बहुह्स्तिकाये। बहुदासपूरुषायें रियमत्ये पृष्टिमत्ये। बहुरायस्पोषाये राजास्त्विति। भूमा वे होतां। भूमा सूतग्रामण्यः। भूम्नेवास्मिन्भूमानं दधाति। श्रतेनं क्षत्तसङ्ग्रहीतृभिः सहोद्गाता। उत्तर्तो दंक्षिणा तिष्ठन्त्रोक्षंति॥१८॥

अनेनाश्वेन मेध्येनेष्ठा। अय राजा सर्वमायुरेत्विति। आयुर्वा उद्गाता। आयुं क्षत्तसङ्ग्रहीतारंः। आयुंषैवास्मिन्नायुंदि-धाति। श्तरशंतं भवन्ति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। चतुः श्ता भवन्ति। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति॥१९॥

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यन्निक्तमनांलब्धमृथ्मृजन्ति। यथ्स्तोक्यां अन्वाहं। सर्वृहृतंमेवेनं करोत्यस्कंन्दाय। अस्कंन्न्र्र् हि तत्। यद्धृतस्य स्कन्दंति। सहस्रमन्वांह। सहस्रंसिम्मतः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै॥२०॥

यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवं रुन्धीत। अपेरिमिता अन्वांह। अपेरिमितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्ये। स्तोक्यां जुहोति। या एव वर्ष्या आपेः। ता अवे रुन्धे। अस्यां जुंहोति। इयं वा अग्निवैश्वानरः॥२१॥ अस्यामेवेनाः प्रतिष्ठापयति। उवाचं ह प्रजापितः। स्तोक्यांसु वा अहमंश्वमेध सङ्स्थांपयामि। तेन ततः सङ्स्थितेन चरामीति। अग्नये स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवैनं जुहोति। सोमाय स्वाहेत्यांह। सोमायैवेनं जुहोति। स्वित्रे स्वाहेत्यांह। स्वित्र एवैनं जुहोति॥२२॥

सरंस्वत्ये स्वाहेत्यांह। सरंस्वत्या एवेनं जुहोति। पूष्णे स्वाहेत्यांह। पूष्ण एवेनं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहेत्यांह। बृह्स्पतंय एवेनं जुहोति। अपां मोदांय स्वाहेत्यांह। अन्ध एवेनं जुहोति। वायवे स्वाहेत्यांह। वायवं एवेनं जुहोति॥२३॥

मित्राय स्वाहेत्यांह। मित्रायैवेनं जुहोति। वर्रणाय स्वाहेत्यांह। वर्रणायैवेनं जुहोति। एताभ्यं एवेनं देवतांभ्यो जुहोति। दशंदश सम्पादं जुहोति। दशंक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवात्राद्यमवं रुन्धे। प्र वा एषों- उस्माल्लोकाच्यंवते। यः परांचीराहुंतीर्जुहोतिं। पुनंः पुनरभ्यावर्तं जुहोति। अस्मित्रेव लोके प्रति तिष्ठति। एता ह वाव सोंऽश्वमेधस्य सङ्स्थितिमुवाचास्कंन्दाय। अस्कंत्र ह ति तत्। यद्यज्ञस्य सङ्स्थितस्य स्कन्दंति॥२४॥ अभिजिते वैश्वान् एवेनं जहोति वायवं एवेनं जहोति व्यवते पर वं॥———[६]

प्रजापंतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामीति पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्टन्प्रोक्षंति। प्रजापंतिर्वे देवानांमन्नादो वीर्यांवान्। अन्नाद्यंमेवास्मिन्वीर्यं दधाति। तस्मादर्श्वः पशूनामंत्रादो वीर्यावत्तमः। इन्द्राग्निभ्यां त्वेतिं दक्षिणतः। इन्द्राग्नी वै देवानामोजिष्ठौ बिलिष्ठौ। ओर्ज एवास्मिन्बलं दधाति। तस्मादर्श्वः पशूनामोजिष्ठो बिलिष्ठः। वायवे त्वेतिं पृश्चात्। वायवे देवानांमाशः सारसारितंमः॥२५॥

ज्वमेवास्मिन्दधाति। तस्मादर्श्वः पशूनामाशः सारसारितंमः। विश्वेभ्यस्त्वा देवभ्य इत्यंत्तर्तः। विश्वे व देवा देवानां यशस्वितंमाः। यशं एवास्मिन्दधाति। तस्मादर्श्वः पशूनां यशस्वितंमः। देवभ्यस्त्वेत्यधस्तांत्। देवा व देवानामपंचिततमाः। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। तस्मादर्श्वः पशूनामपंचिततमः॥२६॥

सर्वेभ्यस्त्वा देवेभ्य इत्युपिरेष्टात्। सर्वे वे देवास्त्विषंमन्तो हर्स्वनंः। त्विषंमेवास्मिन् हरो दधाति। तस्मादश्वः पशूनां त्विषंमान् हर्स्वितंमः। दिवे त्वाऽन्तिरक्षाय त्वा पृथिव्ये त्वेत्यांह। पृभ्य पृवैनं लोकेभ्यः प्रोक्षंति। सते त्वाऽसंते त्वाऽन्यस्त्वौषंधीभ्यस्त्वा विश्वंभ्यस्त्वा भूतेभ्य इत्यांह। तस्मादश्वमेधयाजिन् सर्वाणि भूतान्युपंजीवन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यत्प्रांजापृत्योऽश्वंः। अथ कस्मादेनम्न्याभ्यों देवताभ्योऽपि प्रोक्ष्तिति। अश्वे वे सर्वा देवतां अन्वायंत्ताः। तं यद्विश्वंभ्यस्त्वा भूतेभ्य इतिं

प्रोक्षति। देवतां एवास्मिन्नन्वा यांतयति। तस्मादश्वे सर्वा देवतां अन्वायंत्ताः॥२७॥

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यत्प्रोक्षित्मनांलब्धमृथ्मृजन्ति। यदेश्वचिर्तानिं जुहोतिं। सर्वृहुतंमेवेनं करोत्यस्केन्दाय। अस्केन्न् हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दंति। ईङ्काराय स्वाहेङ्कृताय स्वाहेत्यांह। एतानि वा अंश्वचिर्तानिं। चरितैरेवैन् समर्धयति॥२८॥

तदांहुः। अनांहुतयो वा अश्वचिर्तानि। नैता होत्व्यां इतिं। अथो खल्वांहुः। होत्व्यां पृव। अत्र वावैवं विद्वानश्वमेधः सङ्स्थांपयति। यदश्वचिर्तानिं जुहोतिं। तस्मांद्धोत्व्यां इतिं। बृहिर्धा वा एनमेतदायतंनाद्दधाति। भ्रातृंव्यमस्मे जनयति॥२९॥

यस्यांनायत्नें ऽन्यत्राग्नेराहंतीर्जुहोतिं। सावित्रिया इष्ट्याः पुरस्तां थ्यिक्ष्टकृतंः। आहुवनीयें ऽश्वचिर्तानिं जुहोति। आयतंन एवास्याऽऽहंतीर्जुहोति। नास्मै भ्रातृं व्यं जनयति। तदांहुः। यज्ञमुखेयंज्ञमुखे होत्व्याः। यज्ञस्य क्रुप्त्यें। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्या इतिं। अथो खल्वांहुः॥३०॥

यद्यंज्ञमुखेयंज्ञमुखे जुहुयात्। पृशुभिर्यजंमानं व्यर्धयेत्। अवं सुवर्गाल्लोकात्पंद्येत। पापीयान्थ्स्यादिति। सुकृदेव होत्व्याः। न यजंमानं पृशुभिर्व्यर्धयति। अभि सुवर्गं लोकं जंयित। न पापीयान्भवति। अष्टाचंत्वारिश्शतमश्वरूपाणि जुहोति। अष्टाचंत्वारिश्शदक्षरा जगंती। जाग्तोऽश्वंः प्राजापृत्यः समृद्धै। एक्मितिरिक्तं जुहोति। तस्मादेकंः प्रजास्वर्धुंकः॥३१॥

विभूर्मात्रा प्रभूः पित्रेत्यांह। इयं वै माता। असौ पिता। अभ्यामेवेनं परिददाति। अश्वीऽिस हयोऽसीत्यांह। शास्त्येवेनमेतत्। तस्मांच्छिष्टाः प्रजा जांयन्ते। अत्यो-ऽसीत्यांह। तस्मादश्वः सर्वान्यशूनत्येति। तस्मादश्वः सर्वेषां पश्नाः श्रेष्ठ्यं गच्छति॥३२॥

प्र यशः श्रेष्ठ्यंमाप्नोति। य एवं वेदं। नरोऽस्यर्वाऽसि सप्तिरिस वाज्यंसीत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। ययुर्नामासीत्यांह। एतद्वा अश्वंस्य प्रियं नांमधेयम्। प्रियेणैवैनं नामधेयंनाभि वंदति। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्ध्वयंते। मित्रमेव भंवतः॥३३॥

आदित्यानां पत्वाऽन्विहीत्यांह। आदित्यानेवैनं गमयति। अग्नये स्वाहा स्वाहेंन्द्राग्निभ्यामितिं पूर्वहोमां जुंहोति। पूर्व एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित। भूरंसि भुवे त्वा भव्याय त्वा भविष्यते त्वेत्युथ्मृंजिति सर्वत्वायं। देवां आशापाला एतं देवभ्योऽश्वं मेधांय प्रोक्षितं गोपायतेत्यांह। शृतं वै तत्प्यां राजपुत्रा देवा आंशापालाः। तेभ्यं एवैनं परिं ददाति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः पर्गं परावतं गन्तौः। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमितिः स्वाहेतिं चतृषु पृथ्सु जुहोति॥३४॥

पृता वा अश्वंस्य बन्धंनम्। ताभिरेवैनं बध्नाति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनमा गंच्छति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनं न जहाति। राष्ट्रं वा अश्वमेधः। राष्ट्रे खलु वा एते व्यायंच्छन्ते। येऽश्वं मेध्य रक्षंन्ति। तेषां य उद्दं गच्छंन्ति। राष्ट्रादेव ते राष्ट्रं गंच्छन्ति। अथ य उद्दं न गच्छंन्ति॥३५॥

राष्ट्रादेव ते व्यविच्छिद्यन्ते। परा वा एष सिंच्यते। योऽबुलौऽश्वमेधेन यजेते। यदमित्रा अश्वं विन्देरन्। हुन्येतौस्य यज्ञः। चृतुः शृता रंक्षन्ति। यज्ञस्याघाताय। अथान्यमानीय प्रोक्षेयुः। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः॥३६॥ गुच्छति भुकुत पृथ्य जेहोति न गच्छति नवं च॥——[९]

प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं यजेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। तस्यं तेपानस्यं। सप्तात्मनों देवता उदंक्रामन्। सा दीक्षाऽभंवत्। स एतानिं वैश्वदेवान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स दीक्षामवांरुन्थ। यद्वैश्वदेवानिं जुहोतिं। दीक्षामेव तैर्यजंमानोऽवं रुन्थे॥३७॥

स्प्त जुंहोति। स्प्त हि ता देवतां उदक्रांमन्। अन्वहं जुंहोति। अन्वहम्ब दीक्षामवं रुन्धे। त्रीणिं वैश्वदेवानिं जुहोति। चुत्वायौद्धहुणानिं। स्प्त सम्पंद्यन्ते। स्प्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणेरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्धे॥३८॥

एकंविश्शतिं वैश्वदेवानिं जुहोति। एकंविश्शतिर्वे देवलोकाः। द्वादेश् मासाः पश्चर्तवः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकविश्शः। एष सुवर्गो लोकः। तद्दैव्यं क्षूत्रम्। सा श्रीः। तद्वध्नस्यं विष्टपम्। तथ्स्वाराज्यमुच्यते॥३९॥

त्रिष्शतंमौद्रह्णानि जुहोति। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। त्रेधा विभज्यं देवतां जुहोति। त्र्यांवृतो वै देवाः। त्र्यांवृत इमे लोकाः। एषां लोकानामास्ये। एषां लोकानां क्रुस्ये। अप वा एतस्मात्प्राणाः क्रांमन्ति॥४०॥

यो दीक्षामंतिरेचयंति। सप्ताहं प्रचंरन्ति। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणेरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्थे। पूर्णाहुतिमंत्तमां जुंहोति। सर्वं वै पूर्णाहुतिः। सर्वमेवाप्नोति। अथो इयं वै पूर्णाहुतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति॥४१॥

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। त॰ सृष्टं न किश्चनोदंयच्छत्। तं वैश्वदेवान्येवोदंयच्छन्। यद्वैश्वदेवानिं जुहोतिं। यज्ञस्योद्यंत्यै। स्वाहाऽऽधिमाधीताय स्वाहाँ। स्वाहा-ऽधीतं मनंसे स्वाहाँ। स्वाहा मनंः प्रजापंतये स्वाहाँ। काय स्वाहा कस्मै स्वाहां कत्मस्मै स्वाहेतिं प्राजापृत्ये मुख्ये

भवतः। प्रजापंतिमुखाभिरेवैनं देवतांभिरुद्यंच्छते॥४२॥

अदित्यै स्वाहाऽदित्यै मह्यै स्वाहाऽदित्यै सुमृडीकायै स्वाहेत्यांह। इयं वा अदिंतिः। अस्या एवैनं प्रतिष्ठायोद्यंच्छते। सरस्वत्ये स्वाहा सरस्वत्ये बृहत्ये स्वाहा सरस्वत्ये पावकाये स्वाहेत्यांह। वाग्वै सर्रस्वती। वाचैवैनमुद्यंच्छते। पूष्णे स्वाहां पूष्णे प्रपृथ्यांय स्वाहां पूष्णे नुरन्धिषाय स्वाहेत्यांह। पशवो वै पूषा। पशुभिरेवैनमुद्यंच्छते। त्वष्ट्रे स्वाहा त्वष्ट्रे तुरीपांय स्वाहा त्वष्ट्रं पुरुरूपांय स्वाहेत्यांह। त्वष्टा वै पंशूनां मिथुनाना ५ रूपकृत्। रूपमेव पशुषुं दधाति। अथो रूपैरेवैनमुद्यंच्छते। विष्णंवे स्वाहा विष्णंवे निखुर्यपाय स्वाहा विष्णंवे निभूयपाय स्वाहेत्यांह। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञायैवैनुमुद्यंच्छते। पूर्णाहुतिमुंत्तमां जुंहोति। प्रत्युत्तं ब्यौ सयत्वायं॥४३॥ -[88] युच्छुते पुरुरूपाय स्वाहेत्यांहाष्टौ चं॥

सावित्रमृष्टाकंपालं प्रातिर्निवंपति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रं प्रांतः सवनम्। प्रातः सवनादेवेनं गायित्रयाश्छन्दसो-ऽिं निर्मिमीते। अथौ प्रातः सवनमेव तेनौंऽऽप्नोति। गायत्रीं छन्दंः। सवित्रे प्रसवित्र एकादशकपालं मध्यन्दिने। एकादशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रेष्टुंभं मार्ध्यं दिन् सवनम्। मार्ध्यं दिनादेवेन् सवनात्रिष्टुभृश्छन्दसोऽिं निर्मिमीते॥४४॥ अथो माध्यं दिनमेव सर्वनं तेनां ऽऽप्नोति। त्रिष्ठुमं छन्दं। स्वित्र आंसवित्रे द्वादंशकपालमपराह्ने। द्वादंशाक्षरा जगंती। जागंतं तृतीयसवनम्। तृतीयसवनादेवेनं जगंत्याश्छन्दसोऽधि निर्मिमीते। अथो तृतीयसवनमेव तेनां ऽऽप्नोति। जगंतीं छन्दं। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुक्तः परं परावतं गन्तोः। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमंतिः स्वाहेति चतंस्र आहुंतीर्जुहोति॥४५॥

चतंस्रो दिशः। दिग्भिरेवैनं परिगृह्णाति। आश्वंत्थो वृजो भंवति। प्रजापंतिर्देवेभ्यो निलायत। अश्वं रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवथ्सरमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वंत्थो वृजो भवंति। स्व पृवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति॥४६॥ वृष्टमुख्यन्त्रमेऽपि निर्मिति प्रहोषि वर्ष वा——[१२]

आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रंह्मवर्च्सी जांयतामित्यांह। ब्राह्मण एव ब्रंह्मवर्च्सं दंधाति। तस्मौत्पुरा ब्राह्मणो ब्रंह्मवर्च्स्यंजायत। आऽस्मित्राष्ट्रे रांजन्यं इष्व्यः शूरों महार्थो जांयतामित्यांह। राजन्यं एव शौर्यं मंहिमानं दधाति। तस्मौत्पुरा रांजन्यं इष्व्यः शूरों महार्थोऽजायत। दोग्ध्रीं धेनुरित्यांह। धेन्वामेव पयो दधाति। तस्मौत्पुरा दोग्ध्रीं धेनुरंजायत। वोढांऽनङ्गानित्यांह॥४७॥

अनुडुह्येव वीर्यं दधाति। तस्मौत्पुरा वोढांऽनुङ्वानंजायत। आशुः सिप्तिरित्यांह। अश्वं एव जवं दंधाति। तस्मौत्पुरा- ऽऽशुरश्वोऽजायत। पुरंन्धिर्योषेत्यांह। योषित्येव रूपं दंधाति। तस्माथ्स्री युवतिः प्रिया भावुंका। जिष्णू रंथेष्ठा इत्यांह। आ हु वै तत्रं जिष्णू रंथेष्ठा जांयते॥४८॥

यत्रैतनं यज्ञेन यजंन्ते। स्भेयो युवेत्यांह। यो वै पूँववयसी। स स्भेयो युवाँ। तस्माद्युवा पुर्मान्त्रियो भावुंकः। आऽस्य यजंमानस्य वीरो जांयतामित्यांह। आ ह वै तत्र यजंमानस्य वीरो जांयतामित्यांह। आ ह वै तत्र यजंमानस्य वीरो जांयते। यत्रैतनं यज्ञेन यजंन्ते। निकामेनिंकामे नः पूर्जन्यों वर्षित्वत्यांह। निकामेनिंकामे ह वै तत्रं पूर्जन्यों वर्षित। यत्रैतनं यज्ञेन यजंन्ते। फुलिन्यों न ओषंधयः पच्यन्तामित्यांह। फुलिन्यों ह वै तत्रौषंधयः पच्यन्ते। यत्रैतनं यज्ञेन यजंन्ते। योगक्षेमो नंः कल्पतामित्यांह। कल्पते ह वै तत्री प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतनं यज्ञेन यजंन्ते॥४९॥
अनुक्वित्यांह ज्ञावे वर्षित स्व वे॥

[१३]

प्रजापंतिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिशत्। स आत्मन्नंश्वमेधमंधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यदेश्वमेधः। अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं एतानंन्नहोमान्प्रायंच्छत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स देवानंप्रीणात्। यदंन्नहोमां जुहोतिं॥५०॥

देवानेव तैर्यजंमानः प्रीणाति। आज्येंन जुहोति। अग्नेर्वा एतद्रूपम्। यदाज्यम्। यदाज्येन जुहोतिं। अग्निमेव तत्प्रीणाति। मधुंना जुहोति। महत्यै वा एतद्देवतांयै रूपम्। यन्मधुं। यन्मधुंना जुहोति॥५१॥ मृह्तीमेव तद्देवतां प्रीणाति। तृण्डुलैर्जुहोति। वसूनां वा एतद्रूपम्। यत्तंण्डुलाः। यत्तंण्डुलैर्जुहोतिं। वसूनेव तत्प्रीणाति। पृथुंकैर्जुहोति। रुद्राणां वा एतद्रूपम्। यत्पृथुंकाः। यत्पृथुंकैर्जुहोतिं॥५२॥

रुद्रानेव तत्प्रीणाति। लाजैर्जुहोति। आदित्यानां वा एतद्रूपम्। यल्लाजाः। यल्लाजैर्जुहोतिं। आदित्यानेव तत्प्रीणाति। क्रम्बैर्जुहोति। विश्वेषां वा एतद्देवानार्थं रूपम्। यत्क्रम्बाः। यत्क्रम्बैर्जुहोति॥५३॥

विश्वांनेव तद्देवान्प्रींणाति। धानाभिंर्जुहोति। नक्षंत्राणां वा एतद्रूपम्। यद्धानाः। यद्धानाभिंर्जुहोतिं। नक्षंत्राण्येव तत्प्रींणाति। सक्तंभिर्जुहोति। प्रजापंतेर्वा एतद्रूपम्। यथ्सक्तंवः। यथ्सक्तंभिर्जुहोतिं॥५४॥

प्रजांपितमेव तत्प्रींणाति। मृसूस्यैंर्जुहोति। सर्वांसां वा एतद्देवतांना रूपम्। यन्मसूस्यांनि। यन्मसूस्यैंर्जुहोति। सर्वा एव तद्देवताः प्रीणाति। प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोति। प्रियङ्गा ह व नामेते। एतेर्वे देवा अश्वस्याङ्गांनि समंदधः। यत्प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोति। अश्वंस्यैवाङ्गांनि सन्दंधाति। दशान्नांनि जुहोति। दशांक्षरा विराद्द। विराद्दथ्सस्यान्नाद्यस्यावंरुद्धै॥५५॥

जुहोति मर्पुना जुहोति पृथुंकैर्जुहोति क्रम्बैंजुंहोति क्रम्बैंजुंहोति प्रयङ्गतण्डुलैर्जुहोति प्रयङ्गतण्डुलैर्जुहोति च्त्वारि च (अन्नहोमानाऽऽज्येनाग्नेर्मध्नेना तण्डुलैः पृथुंकैर्ल्जुहोति क्रम्बैंजुंनािमः सक्तिभर्मसूस्यैः प्रियङ्गतण्डुलैर्ज्ञान्नांनि द्वादंश।)॥—————— [१४]

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। त॰ सृष्ट॰ रक्षा इंस्यजिघा॰सन्। स एतान्प्रजापंतिर्नक्त॰ होमानंपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स यज्ञाद्रक्षा इंस्यपंहन्। यन्नक्त॰ होमां जुहोति। यज्ञादेव तैर्यजंमानो रक्षा इंस्यपंहिन्त। आज्येन जुहोति। वज्रो वा आज्यम्। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षा इंस्यपंहिन्त॥ ५६॥

आज्यंस्य प्रतिपदं करोति। प्राणो वा आज्यम्। मुख्त एवास्यं प्राणं दंधाति। अन्नहोमाञ्जहोति। शरीरवदेवावं रुन्थे। व्यत्यासं जुहोति। उभयस्यावंरुद्धै। नक्तं जुहोति। रक्षंसामपहत्यै। आज्यंनान्ततो जुहोति॥५७॥

प्राणो वा आज्यम्। उभयतं प्रवास्यं प्राणं दंधाति। पुरस्तां चोपरिष्टा च। एकंस्मै स्वाहेत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। द्वाभ्या इं स्वाहेत्यांह। अमुष्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। उभयोरेव लोकयोः प्रतिं तिष्ठति। अस्मि इश्चामुष्मि ईश्च। श्वाय स्वाहेत्यांह। श्वायुर्वे पुरुषः श्वावीं यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्धे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्धे। सर्वस्मै स्वाहेत्यांह। अपरिमितमेवावं रुन्धे॥५८॥

पुव युज्ञाद्रक्षा्र्रुस्यपंहन्त्यन्तुतो जुंहोति शृताय स्वाहेत्यांह सप्त चं॥————[$\c y$]

प्रजापंतिं वा एष ईंप्सतीत्यांहुः। योंऽश्वमे्धेन यजंत इतिं। अथो आहुः। सर्वाणि भूतानीतिं। एकंस्मै स्वाहेत्यांह। प्रजापंतिर्वा एकंः। तमेवाऽऽप्रोति। एकंस्मै स्वाहा द्वाभ्याः स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। अभिपूर्वमेव सुंवर्गं लोकमेति। एकोत्तरं जुंहोति॥५९॥

पुक्वदेव सुंवर्गं लोकमेति। सन्तंतं जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। श्वाय स्वाहेत्यांह। श्वायुर्वे पुरुषः श्वावीर्यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्थे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्थे। अयुताय स्वाहां नियुताय स्वाहां प्रयुताय स्वाहेत्यांह॥६०॥

त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकानवं रुन्धे। अर्बुदाय स्वाहेत्याह। वाग्वा अर्बुदम्। वाचमेवावं रुन्धे। न्यंर्बुदाय स्वाहेत्यांह। यो वै वाचो भूमा। तन्न्यंर्बुदम्। वाच एव भूमानमवं रुन्धे। समुद्राय स्वाहेत्यांह॥६१॥

स्मुद्रमेवाऽऽप्नोति। मध्याय स्वाहेत्यांह। मध्यंमेवाऽऽप्नोति। अन्ताय स्वाहेत्यांह। अन्तमेवाऽऽप्नोति। प्रार्धाय स्वाहेत्यांह। प्रार्धमेवाऽऽप्नोति। उषसे स्वाहा व्युष्ट्ये स्वाहेत्यांह। प्रार्थमेवाऽऽप्नोति। उषसे स्वाहा व्युष्ट्ये स्वाहेत्यांह। रात्रिर्वा उषाः। अहुर्व्युष्टिः। अहोरात्रे एवावं रुन्थे। अथो अहोरात्रयोरेव प्रति तिष्ठति। ता यदुभयीर्दिवां वा नक्तं वा जुहुयात्। अहोरात्रे मोहयेत्। उषसे स्वाहा व्युष्ट्ये स्वाहोदेष्यते स्वाहोद्यते स्वाहेत्यनुंदिते जुहोति। उदिताय स्वाहां सुवर्गाय स्वाहां लोकाय स्वाहेत्युदिते जुहोति। अहोरात्रयोरव्यंतिमोहाय॥६२॥

पुकोत्तरं जीहोति प्रयुताय स्वाहेत्याह समुद्राय स्वाहेत्याहाहुर्व्युष्टिः सप्त ची॥————[१६]

विभूमीत्रा प्रभूः पित्रेत्यंश्वनामानि जुहोति। उभयोंरेवैनं लोकयोंर्नाम्धेयं गमयति। आयंनाय स्वाहा प्रायंणाय स्वाहेत्यंद्वावाञ्जंहोति। सर्वमेवैन्मस्कंत्रः सुवर्गं लोकं गंमयति। अग्रये स्वाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वहोमाञ्जंहोति। पूर्व पुव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमिति कामिता पृथिव्ये स्वाहा- उन्तिरक्षाय स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अग्रये स्वाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वदीक्षा जुंहोति। पूर्व पुव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमिति जुंहोति। पूर्व पुव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमिति कामिति॥६३॥

पृथिव्यै स्वाहाऽन्तिरिक्षाय स्वाहेत्येकिवि श्रीनीं दीक्षां जुंहोति। एकिविश्रातिर्वे देवलोकाः। द्वादेश मासाः पश्चर्तवः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकिविश्राः। एष सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्प्रिये। भुवो देवानां कर्मणेत्यृंतुदीक्षा जुंहोति। ऋतूनेवास्मै कल्पयति। अग्नये स्वाहां वायवे स्वाहेतिं जुहोत्यनंन्तिरत्यै॥६४॥

अर्वाङ्यज्ञः सङ्ग्रांमृत्वित्याप्तींर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याप्त्रैं। भूतं भव्यं भिवष्यदिति पर्याप्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य पर्याप्त्ये। आ में गृहा भवन्त्वत्याभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याभूत्ये। अग्निना तपोऽन्वंभवदित्यंनुभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंभूत्ये। स्वाहाऽऽधिमाधीताय स्वाहेति समंस्तानि वैश्वदेवानिं जुहोति। समंस्तमेव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित॥६५॥

दुद्धः स्वाह्य हर्नूभ्याः स्वाहेत्यंङ्गहोमाञ्जहोति। अङ्गंअङ्गे वै पुरुषस्य पाप्मोपंश्लिष्टः। अङ्गांदङ्गादेवैनं पाप्मनस्तेनं मुञ्जति। अञ्चेताय स्वाहां कृष्णाय स्वाहां श्वेताय स्वाहेत्यंश्वरूपाणि जुहोति। रूपेरेवैन् सम्पर्धयति। ओषंधीभ्यः स्वाह्य मूलेभ्यः स्वाहेत्यंषिधहोमाञ्जहोति। द्वय्यो वा ओषंधयः। पुष्पेभ्योऽन्याः फलं गृह्णन्ति। मूलेभ्योऽन्याः। ता एवोभयीरवं रुन्धे॥६६॥

वनस्पतिंभ्यः स्वाहेतिं वनस्पतिहोमाञ्जंहोति। आर्ण्यस्या-त्राद्यस्यावंरुद्धौ। मेषस्त्वां पचतैरंवृत्वित्यपाँच्यानि जुहोति। प्राणा वै देवा अपाँच्याः। प्राणानेवावं रुन्धे। कूप्याँभ्यः स्वाहाऽद्धः स्वाहेत्यपा होमाँ ञ्जहोति। अपसु वा आपः। अत्रं वा आपः। अद्भो वा अत्रं जायते। यदेवाद्धोऽत्रं जायते। तदवं रुन्धे॥६७॥

पूर्ववीक्षा जुहोति पूर्व एव द्विपन्तुं आतृंब्यमितिं कामृत्यनंन्तरित्यै कामित रूप्ये जायंत एकं च॥——[१७]

अम्भार्शसे जुहोति। अयं वै लोकोऽम्भार्शसे। तस्य वस्वोऽधिपतयः। अग्निज्योतिः। यदम्भार्शसे जुहोति। इममेव लोकमवं रुन्थे। वसूनार्श्व सायुंज्यं गच्छति। अग्निं ज्योतिरवं रुन्थे। नभार्शसे जुहोति। अन्तरिक्षं वै नभार्शसे॥६८॥

तस्यं रुद्रा अधिपतयः। वायुज्यीतिः। यन्नभार्शस

जुहोति। अन्तरिक्षमेवावं रुन्धे। रुद्राणा् सार्युज्यं गच्छति। वायुं ज्योतिरवं रुन्धे। महार्श्स जुहोति। असौ वै लोको महार्श्सा। तस्यांदित्या अधिपतयः। सूर्यो ज्योतिः॥६९॥

यन्महा रेसि जुहोति। अमुमेव लोकमवं रुन्थे। आदित्याना र सायुंज्यं गच्छति। सूर्यं ज्योतिरवं रुन्थे। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायेति यूव्यानि जुहोति। अन्नाद्यस्यावरुद्धे। मृयोभूर्वातो अभि वांतूस्रा इति गृव्यानि जुहोति। पुशूनामवरुद्धे। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहेति सन्तिहोमाञ्जहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तत्यै॥७०॥

सिताय स्वाहाऽसिंताय स्वाहेति प्रमुंक्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रमुंक्त्ये। पृथिव्ये स्वाहाऽन्तरिक्षाय स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। दत्वते स्वाहांऽदन्तकांय स्वाहेतिं शरीरहोमाञ्जंहोति। पितृलोकमेव तैर्यर्जमानोऽवं रुन्थे। कस्त्वां युनक्ति स त्वां युनक्तितिं परि्धीन् युनक्ति। इमे वे लोकाः पंरि्धयः। इमानेवास्में लोकान् युनक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ठ्ये॥७१॥

यः प्रांणतो य आंत्मदा इति मिहुमानौ जुहोति। सुवर्गो वै लोको महंः। सुवर्गमेव ताभ्यां लोकं यर्जमानोऽवं रुन्थे। आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जांयतामिति समस्तानि ब्रह्मवर्चसानि जुहोति। ब्रह्मवर्चसमेव तैर्यजमानोऽवं रुन्थे। जिन्ने बीजमिति जुहोत्यनंन्तरित्यै। अग्नये समनमत्पृथिव्यै

समनम्दिति सन्नतिहोमाञ्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्नत्यै। भूताय स्वाहां भविष्यते स्वाहेतिं भूताभव्यौ होमौ जुहोति। अयं वै लोको भूतम्॥७२॥

असौ भंविष्यत्। अनयोरेव लोकयोः प्रतिं तिष्ठति। सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धै। यदक्रेन्दः प्रथमं जायंमान् इत्यंश्वस्तोमीयं जुहोति। सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्य जित्यै। सर्वमेव तेनाँऽऽप्रोति। सर्वं जयति। योँऽश्वमेधेन् यजंते॥७३॥

य उं चैनमेवं वेदं। युज्ञ रक्षा ईस्यजिघा रसन्। स एतान्प्रजापंतिर्नक्त रहोमानंप श्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स युज्ञाद्रक्षा इस्यपंहन्। यन्नक रहोमा अहोति। युज्ञादेव तैर्यजमानो रक्षा इस्यपंहन्ति। उषसे स्वाहा व्युष्टो स्वाहेत्यंन्त्रतो जुंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्री॥७४॥ व नमरिष् पूर्व ज्योतः समंष्ट्री समंष्ट्री प्रवित्ते वा [१८]

पुक्यूपो वैकाद्शिनीं वा। अन्येषां यज्ञानां यूपो भवन्ति। पुक्विश्शिन्यंश्वमेधस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। बैल्वो वां खादिरो वां पालाशो वां। अन्येषां यज्ञकतूनां यूपो भवन्ति। राज्ञंदाल एकंविश्शत्यरिक्षिमेधस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्य समेध्ये। नान्येषां पशूनां तेजन्या अवद्यन्ति। अवंद्यन्त्यश्वंस्य॥७५॥

पाप्मा वै तेंजुनी। पाप्मनोऽपंहत्यै। प्रुक्षशाखायांमुन्येषां

पश्नामंवद्यन्ति। वेत्स्शाखायामश्वस्य। अपसुयोनिर्वा अश्वः। अपसुजो वेत्सः। स्व एवास्य योनाववं द्यति। यूपेषु ग्राम्यान्पश्नियुञ्जन्ति। आरोकेष्वारण्यान्धारयन्ति। पश्नां व्यावृत्त्यै। आ ग्राम्यान्पश्लँभंन्ते। प्रार्ण्यान्ध्यंजन्ति। पाप्मनोऽपंहत्यै॥७६॥

अर्थस्य व्यावृत्त्ये त्रीणि च॥———[१९]

राज्ञंदालमग्निष्ठं मिनोति। भ्रूणहृत्याया अपंहत्यै। पौतुंद्रवावृभितों भवतः। पुण्यंस्य गुन्थस्यावंरुद्धौ। भ्रूणहृत्या-मेवास्मांदपहत्यं। पुण्यंन गुन्थेनोंभ्यतः परिं गृह्णाति। षड्वैल्वा भंवन्ति। ब्रह्मवर्चसस्यावंरुद्धौ। षद्धांदिराः। तेजसोऽवंरुद्धौ॥७७॥

षद्वांलाशाः। सोमपीयस्यावंरुद्धै। एकंविश्शितः सम्पंद्यन्ते। एकंविश्शितिवै देवलोकाः। द्वादंश् मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकंविश्शः। एष सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्ये। शृतं पृशवों भवन्ति॥७८॥

शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। सर्वं वा अश्वमेध्याप्नोति। अपंरिमिता भवन्ति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धे। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मांध्मत्यात्। दक्षिणतोंऽन्येषां पशूनामंवद्यन्ति। उत्तर्तोऽश्वस्येति। वारुणो वा अश्वंः॥७९॥

पुषा वै वर्रुणस्य दिक्। स्वायांमेवास्यं दिश्यवंद्यति।

यदितंरेषां पशूनामंवद्यतिं। शृतदेवत्यंं तेनावं रुन्थे। चितेंंऽग्नाविधं वैत्से कटेऽश्वंं चिनोति। अपसुयोनिर्वा अश्वंः। अपसुजो वेत्सः। स्व एवेनं योनौ प्रतिष्ठापयति। पुरस्तांत्प्रत्यश्चं तूपरं चिनोति। पृश्चात्प्राचीनंं गोमृगम्॥८०॥

प्राणापानावेवास्मिन्थ्सम्यश्ची दधाति। अर्श्व तूपरं गोमृगिमिति सर्वृहृतं एताञ्चहोति। एषां लोकानामिभिजित्यै। आत्मनाऽभि जुंहोति। सात्मानमेवेन् सत्नुं करोति। सात्मानमेवेन् सत्नुं करोति। सात्माऽमुष्मिं ह्लोके भवति। य एवं वेदं। अथो वसोरेव धारां तेनावं रुन्थे। इलुवर्दाय स्वाहां बिलवर्दाय स्वाहेत्यांह। संवथ्सरो वा इलुवर्दः। परिवथ्सरो बंलिवर्दः। संवथ्सरा-देव परिवथ्सरादायुरवं रुन्थे। आयुरेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वमेधयाजी जरसां विस्नसामुं लोकमेति॥८१॥ विस्नोऽवंब्बो भवन्त्यश्च गोमृगिमिलुवर्दं खलारे वा विस्नसामुं लोकमेति॥८१॥

पुक्वि शौं ऽग्निर्भवित। पुक्वि श्वाः स्तोमंः। एकं-विश्वातिर्यूपाः। यथा वा अश्वां वर्षमा वा वृषांणः सङ्स्फुरेरन्। पुवमेव तथ्स्तोमाः सङ्स्फुरेन्ते। यदेकिवि श्वाः। ते यथ्मं मुच्छेरन्। हुन्येतां स्य युज्ञः। द्वाद्वश पुवाग्निः स्यादित्यां हुः। द्वाद्वशः स्तोमंः॥८२॥

एकांदश् यूपाः। यद्वांदशौंऽग्निर्भवंति। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। यद्दश् यूपा भवंन्ति। दशाँक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। य एंकाद्शः। स्तनं एवास्यै सः॥८३॥

दुह पुवैनां तेनं। तदांहुः। यद्वांदशौंऽग्निः स्याँद्वाद्शः स्तोम् एकांदश् यूपौः। यथा स्थूरिणा यायात्। तादक्तत्। पुक्विर्श पुवाग्निः स्यादित्यांहुः। पुक्विर्शः स्तोमंः। एकविर्शतिर्यूपौः। यथा प्रष्टिंभिर्याति। तादगेव तत्॥८४॥

यो वा अश्वमेधे तिस्रः क्कुभो वेदे। क्कुद्ध राज्ञाँ भवति। एक्वि॰शाँऽग्निर्भवति। एक्वि॰शांतर्यूपाँः। एता वा अश्वमेधे तिस्रः क्कुभः। य एवं वेदे। क्कुद्ध राज्ञाँ भवति। यो वा अश्वमेधे त्रीणि शीर्षाणि वेदे। शिरों ह राज्ञाँ भवति। एक्वि॰शाँऽग्निर्भवति। एक्वि॰शाँऽग्निर्भवति। एक्वि॰शाः स्तोमः। एक्वि॰शांत्र्यूपाँः। एतानि वा अश्वमेधे त्रीणि शीर्षाणि। य एवं वेदे। शिरों ह राज्ञाँ भवति॥८५॥ ब्राव्याः स्तोमः स प्रव विल्क्ष्ये ह राज्ञां भवति॥८५॥ ब्राव्याः स्तोमः स प्रव विल्क्ष्ये ह राज्ञां भवति॥८५॥

देवा वा अंश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यदंश्वमेधेऽश्वेन मेध्येनोदंश्चो बहिष्पवमानः सर्पन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञात्यै। न वै मंनुष्यः सुवर्गं लोकमञ्जसा वेद। अश्वो वै सुवर्गं लोकमञ्जसा वेद। यदुंद्रातोद्रायेत्। यथा क्षेत्रज्ञोऽन्येनं पृथा प्रतिपादयेत्। तादक्तत्॥८६॥ उद्गातारंमप्रध्यं। अश्वंमुद्गीथायं वृणीते। यथां क्षेत्रज्ञो-ऽञ्जंसा नयंति। एवमेवैन्मर्श्वः सुवृगं लोकमञ्जंसा नयति। पुच्छंम्न्वा रंभन्ते। सुवृगंस्यं लोकस्य सम्ध्ये। हिं करोति। सामैवाकः। हिं करोति। उद्गीथ एवास्य सः॥८७॥

वर्डबा उपं रुन्धन्ति। मिथुन्त्वाय् प्रजाँत्यै। अथो यथोपगातारं उपगायंन्ति। ताहगेव तत्। उदंगासीदश्वो मध्य इत्याह। प्राजापत्यो वा अश्वः। प्रजापंतिरुद्गीथः। उद्गीथमेवावं रुन्धे। अथों ऋख्सामयोरेव प्रतिं तिष्ठति। हिरंण्येनोपाकंरोति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेव मुंखतो दंधाति। यजंमाने च प्रजासुं च। अथो हिरंण्यज्योतिरेव यजंमानः सुवर्गं लोकमेति॥८८॥

तथ्स उपाकंरोति चुत्वारिं च॥_____[२२]

पुरुषो वै यज्ञः। यज्ञः प्रजापंतिः। यदश्वं पृश्नियुञ्जन्ति। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। अश्वं तूपरं गोमृगम्। तानंग्रिष्ठ आर्लभते। सेनामुखमेव तथ्सङ्श्यंति। तस्माद्राजमुखं भीष्मं भावुंकम्। आग्नेयं कृष्णग्रींवं पुरस्तां हुलाटें। पूर्वाग्निमेव तं कुरुते॥८९॥

तस्मौत्पूर्वाग्निं पुरस्तौथ्स्थापयन्ति। पौष्णम्नवश्चम्। अत्रं वै पूषा। तस्मौत्पूर्वाग्नावांहार्यमा हंरन्ति। ऐन्द्रापौष्णमुपरिष्टात्। ऐन्द्रो वै रांजन्योऽत्रं पूषा। अन्नाद्यंनैवैनंमुभ्यतः परि गृह्णाति। तस्मौद्राजन्यौऽन्नादो भावुंकः। आग्नेयौ कृष्णग्रींवौ बाहुवोः।

बाहुवोरेव वीर्यं धत्ते॥९०॥

तस्मौद्राज्ञन्यों बाहुब्लीभावुंकः। त्वाष्ट्रौ लोमशस्वथौ स्वथ्योः। स्वथ्योरेव वीर्यं धत्ते। तस्मौद्राज्ञन्यं ऊरुब्लीभावुंकः। शितिपृष्ठौ बांर्हस्पृत्यौ पृष्ठे। ब्रह्मवर्चसमेवोपरिष्टाद्धत्ते। अथों क्वचें एवेते अभितः पर्यूहते। तस्मौद्राज्ञन्यः सन्नद्धो वीर्यं करोति। धान्ने पृषोद्दरम्धस्तौत्। प्रतिष्ठामेवेतां कुंरुते। अथों इयं वे धाता। अस्यामेव प्रति तिष्ठति। सौर्यं बलक्षं पुच्छैं। उथ्सेधमेव तं कुंरुते। तस्मौद्धभेधं भये प्रजा अभिस्श्रियन्ति॥९१॥

साङ्ग्रहण्या चतुष्टय्यो यो वै यः पितुश्चरवारो यथां निक्तं प्रजापंतये त्वा यथा प्रोक्षितं विभूरांह प्रजापंतिरकामयताश्वमे्धेनं प्रजापंतिर्न किञ्चन सावित्रमा ब्रह्मन्युजापंतिद्वैवेभ्यः प्रजापंती रक्षारंसि प्रजापंतिमीपसित विभूरंश्वनामान्यम्भाईस्येकयूणे रार्ज्ञ्वतालमेकविश्शो देवाः पुरुषस्रयोविश्शतिः॥२३॥

माङ्गहुण्या तस्मांदश्वमेधयाजी यत्परिंमिता यद्यंज्ञमुखे यो दीक्षां देवानेव त्रयं हुमे सितायं प्राणापानावेवास्मिन्तस्माँद्राजन्यं एकंनवतिः॥९१॥

साङ्ग्रहुण्या सङ्श्रंयन्ति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ नवमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। सौंऽस्माथ्सृष्टोऽपाँकामत्। तमंष्टाद्शिभिरनु प्रायुंङ्कः। तमाँप्रोत्। तमास्वाऽष्टांद्शिभिरवां-रुन्थ। यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तें। यज्ञमेव तैरास्वा यजंमानो-ऽवं रुन्थे। संवथ्सरस्य वा एषा प्रतिमा। यदंष्टाद्शिनंः। द्वादंशु मासाः पञ्चर्तवंः॥१॥

संवथ्सरौंऽष्टाद्शः। यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तैं। संवथ्सरमेव तैराह्वा यजंमानोऽवं रुन्थे। अग्निष्ठेंऽन्यान्पशूनुंपाकरोतिं। इतरेषु यूपेष्वष्टाद्शिनोऽजांमित्वाय। नवंनवालभ्यन्ते सवीर्यत्वायं। यदांरुण्यैः सर्इस्थापयेंत्। व्यवंस्येतां पितापुत्रौ। व्यध्वांनः क्रामेयुः। विदूरं ग्रामंयोर्ग्रामान्तौ स्यांताम्॥२॥

ऋक्षीकाः पुरुषव्याघाः पंरिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरंण्येष्वाजायरन्। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदांर्ण्याः। यदांर्ण्येः सर्इस्थापयेत्। क्षिप्रे यजमानमरंण्यं मृत १ हरियुः। अरंण्यायतना ह्यांर्ण्याः पृशव इति। यत्पशून्नालभेत। अनंवरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। यत्पर्यग्निकृतानुथ्सृजेत्॥३॥

यज्ञवेशसं कुर्यात्। यत्पशूनालभंते। तेनैव पशूनवं रुन्थे। यत्पर्यग्निकृतानुथ्सृजत्ययंज्ञवेशसाय। अवंरुद्धा अस्य पृशवो भवंन्ति। न यंज्ञवेशसं भवति। न यजंमानुमरंण्यं मृतः हंरन्ति। ग्राम्यैः सङ् स्थापयित। एते वै पृशवः क्षेमो नामं। सं पितापुत्राववंस्यतः। समध्यांनः क्रामन्ति। सम्नन्तिकं ग्रामयोग्रीमान्तौ भवतः। नक्षीकाः पुरुषव्याघ्राः परिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरंण्येष्वाजांयन्ते॥४॥

ऋतवंः स्यातामुथ्मुजेथ्स्यंतुर्स्तीणं च॥———[१]

प्रजापंतिरकामयतोभौ लोकाववं रुन्धीयेतिं। स एता-नुभयाँन्पशूनंपश्यत्। ग्राम्याङ्श्चांरुण्याङ्श्चं। तानालंभतः। तैर्वे स उभौ लोकाववांरुन्धः। ग्राम्येरेव पशुभिरिमं लोकमवांरुन्धः। आरुण्येर्मुम्। यद् ग्राम्यान्पशूनालभते। इममेव तैर्लोकमवं रुन्धे। यदांरण्यान्॥५॥

अमुं तैः। अनंवरुद्धो वा एतस्यं संवथ्सर इत्यांहुः। य इतर्इतश्चातुर्मास्यानि संवथ्सरं प्रयुङ्क इति। एतावान् वै संवथ्सरः। यचातुर्मास्यानि। यदेते चातुर्मास्याः पृशवं आल्भ्यन्ते। प्रत्यक्षंमेव तैः संवथ्सरं यजमानोऽवं रुन्धे। वि वा एष प्रजयां पृशुभिर्ऋध्यते। यः संवथ्सरं प्रयुङ्के। संवथ्सरः सुवर्गो लोकः॥६॥

सुवर्गं तु लोकं नापंराध्नोति। प्रजा वै प्शवं एकाद्शिनीं। यदेत ऐकादिशनाः पृशवं आल्भ्यन्तें। साक्षादेव प्रजां पृश्न् यजमानोऽवं रुन्धे। प्रजापंतिर्विराजममृजत। सा सृष्टाऽश्वंमेधं प्राविंशत्। तान्दृशिभिरनु प्रायंङ्कः। तामाप्रोत्। तामाप्रवा दृशिभिरवांरुन्ध। यद्दृशिनं आल्भ्यन्ते॥७॥

विराजंमेव तैराह्वा यजंमानोऽवं रुन्थे। एकांदश द्शत् आलंभ्यन्ते। एकांदशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रेष्टुंभाः पृशवंः। पृश्नेवावं रुन्थे। वैश्वदेवो वा अश्वंः। नानादेवत्याः पृशवं भवन्ति। अश्वंस्य सर्वत्वायं। नानांरूपा भवन्ति। तस्मान्नानांरूपाः पृशवंः। बहुरूपा भवन्ति। तस्मांद्वहरूपाः पृशवंः समृंद्धौ॥८॥ आप्र्यांश्वेको द्श्येन आकृत्यन्ते नानांरूपाः पृशवं हे वं॥———[२]

अस्मै वै लोकायं ग्राम्याः पृशव आर्लभ्यन्ते। अमुष्मां आर्ण्याः। यद्ग्राम्यान्पशूनालभते। इममेव तैर्लोकमवं रुन्थे। यदार्ण्यान्। अमुं तैः। उभयान्पशूनालंभते। गाम्या ॥ श्वांरण्या ॥ अयो लीक्योरवं रुद्धै। उभयोन्पशूना-लंभते॥ ९॥

ग्राम्या इश्वांरण्या इश्वं। उभयंस्यान्ना द्यस्यावं रुद्धे। उभयांन्यशूनालंभते। ग्राम्या इश्वांरण्या इश्वं। उभयंषां पशूनामवं रुद्धे। त्रयंस्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामार्स्यं। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। कस्मां ध्यत्यात्॥१०॥

अस्मिँ होके बहवः कामा इति। यथ्सेमानीभ्यों देवताँभ्योऽन्येँऽन्ये पृशवं आलुभ्यन्तेँ। अस्मिन्नेव तह्नोके कामाँन्द्रधाति। तस्माद्रस्मिँ ह्लोके बहवः कामाँः। त्रयाणां त्रयाणाः सह वपा जुहोति। त्र्यावृतो व देवाः। त्र्यावृत इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यै। एषां लोकानां क्रस्यै। पर्याग्नेकृतानारण्यानुथ्सृंजन्त्यहि ईसायै॥११॥

[३]

युअन्तिं ब्रथ्नमित्यांह। असौ वा आंदित्यो ब्रथ्नः। आदित्यमेवास्मै युनक्ति। अरुषमित्यांह। अग्निर्वा अरुषः। अग्निमेवास्मै युनक्ति। चर्रन्तमित्यांह। वायुर्वे चरन्ं। वायुमेवास्मै युनक्ति। परितस्थुष इत्यांह॥१२॥

ड्मे वै लोकाः परितस्थुषः। इमानेवास्मै लोकान् युनिक्ति। रोचेन्ते रोचना दिवीत्यांह। नक्षंत्राणि वै रोचना दिवि। नक्षंत्राण्येवास्मै रोचयित। युअन्त्यंस्य काम्येत्यांह। कामानेवास्मै युनिक्ति। हरी विपंक्षसेत्यांह। इमे वै हरी विपंक्षसा। इमे एवास्मै युनिक्ति॥१३॥

शोणां धृष्णू नृवाह्सेत्यांह। अहोरात्रे वै नृवाहंसा। अहोरात्रे एवास्में युनिक्त। एता एवास्में देवतां युनिक्त। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्ये। केतुं कृण्वन्नंकेतव इति ध्वजं प्रतिमुश्चति। यशं एवैन् र राज्ञां गमयति। जीमूतंस्येव भवति प्रतींकमित्यांह। यथायजुरेवैतत्। ये ते पन्थांनः सवितः पूर्व्यास् इत्यंध्वर्युर्यजमानं वाचयत्यभिजिंत्ये॥१४॥

परा वा एतस्यं युज्ञ एंति। यस्यं पृशुरुपाकृतोऽन्यत्र वद्या एतिं। एतङ्स्तांतरेतेनं पृथा पुनुरश्वमावंतियासि न् इत्यांह। वायुर्वे स्तोतां। वायुमेवास्यं प्रस्तांद्वधात्यावृत्त्ये। यथा व ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यदंस्योपाकृतस्य लोमांनि शीयंन्ते। यद्वालेषु काचानावयंन्ति। लोमांन्येवास्य तथ्सम्भरन्ति॥१५॥ भूर्भुवः सुवृरितिं प्राजापृत्याभिरावयन्ति। प्राजापृत्यो वा अश्वः। स्वयैवेनं देवतया समर्धयन्ति। भूरिति महिषी। भुव इति वावाता। सुवृरितिं परिवृक्ती। एषां लोकानांम्भिजिंत्यै। हिर्ण्ययाः काचा भवन्ति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। राष्ट्रमंश्वमेधः॥१६॥

ज्योतिंश्चैवास्मै राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। सहस्रं भवन्ति। सहस्रंसिम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। अप वा एतस्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीः ऋामिन्ति। यौंऽश्वमेधेन यजंते। वसंवस्त्वाऽअन्तु गायत्रेण छन्दसेति महिष्यभ्यंनक्ति। तेजो वा आज्यम्। तेजो गायत्री। तेजंसैवास्मै तेजोऽवं रुन्धे॥१७॥

रुद्रास्त्वां अन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्द्सेतिं वावातां। तेजो वा आज्यम्। इन्द्रियं त्रिष्टुप्। तेजंसैवास्मां इन्द्रियमवं रुन्थे। आदित्यास्त्वां ऽअन्तु जागंतेन् छन्द्सेतिं परिवृक्ती। तेजो वा आज्यम्। पृशवो जगंती। तेजंसैवास्में पृशूनवं रुन्थे। पत्नयो ऽभ्यं अन्ति। श्रिया वा पृतद्रूपम्॥१८॥

यत्पत्नयः। श्रियंमेवास्मिन्तद्देधित। नास्मात्तेजं इन्द्रियं प्रावः श्रीरपं कामन्ति। लाजी(३)ञ्छाची(३)न् यशोममाँ(४) इत्यतिरिक्तमन्नमश्वायोपाहंरन्ति। प्रजामेवान्नादीं कुर्वते। पृतद्देवा अन्नमत्तैतदन्नमिद्ध प्रजापत् इत्याह। प्रजायांमेवान्नाद्यं दधते। यदि नावजिघ्रेत्। अग्निः पृशुरांसीदित्यवंघ्रापयेत्। अवं

हैव जिंघ्रति। आक्रान्ं वाजी क्रमैरत्यंक्रमीद्वाजी द्यौस्तें पृष्ठं पृथिवी स्थस्थमित्यश्वमनुंमन्नयते। पृषां लोकानांम्भिजिंत्यै। समिद्धो अञ्जन्कृदंरं मतीनामित्यश्वंस्याप्रियों भवन्ति सरूपत्वायं॥१९॥

परिंतुस्थुष् इत्यांहेमे एवास्मै युनक्त्य्यभिजित्यै भरन्त्यश्वमेधो रून्धे रूपश्चिप्रति त्रीणि च॥______[४]

तेजंसा वा एष ब्रंह्मवर्चसेन व्यृंद्धते। योंऽश्वमेधेन यजंते। होतां च ब्रह्मा चं ब्रह्मोद्यं वदतः। तेजंसा चैवैनं ब्रह्मवर्चसेनं च समर्धयतः। दक्षिणतो ब्रह्मा भंवति। दक्षिणत आंयतनो वे ब्रह्मा। बार्ह्स्पत्यो वे ब्रह्मा। ब्रह्मवर्चसमेवास्यं दक्षिणतो दंधाति। तस्माद्दक्षिणोऽधौं ब्रह्मवर्चसितंरः। उत्तर्तो होतां भवति॥२०॥

उत्तर्त आंयतनो वै होताँ। आग्नेयो वै होताँ। तेजो वा अग्निः। तेजं एवास्योंत्तरतो दंधाति। तस्मादुत्तरो- ऽर्धस्तेजस्वितंरः। यूपंमभितों वदतः। यजमानदेवत्यों वै यूपंः। यजमानमेव तेजंसा च ब्रह्मवर्चसेनं च समर्धयतः। किङ् स्विदासीत्पूर्विचित्तिरित्यांह। द्यौर्वे वृष्टिः पूर्विचित्तिः॥२१॥

दिवंमेव वृष्टिमवं रुन्धे। किः स्विंदासीद्वृहद्वय् इत्याह। अश्वो वै बृहद्वयः। अश्वमेवावं रुन्धे। किः स्विंदासीत्पिशङ्गिलेत्यांह। रात्रिवैं पिंशङ्गिला। रात्रिमेवावं रुन्धे। किः स्विदासीत्पिलिप्पिलेत्यांह। श्रीवैं पिंलिप्पिला। अन्नाद्यंमेवावं रुन्धे॥२२॥ कः स्विदेकाकी चंरतीत्यांह। असौ वा आंदित्य एंकाकी चंरति। तेजं एवावं रुन्धे। क उंस्विज्ञायते पुन्रित्यांह। चन्द्रमा वै जांयते पुनः। आयुरेवावं रुन्धे। किङ् स्विद्धिमस्यं भेषजमित्यांह। अग्निर्वे हिमस्यं भेषजम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। किङ् स्विदावपंनं महदित्यांह॥२३॥

अयं वै लोक आवर्पनं महत्। अस्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठति। पृच्छामिं त्वा पर्मन्तं पृथिव्या इत्याह। वेदिवें परो-ऽन्तः पृथिव्याः। वेदिमेवावं रुन्थे। पृच्छामिं त्वा भुवंनस्य नाभिमित्याह। यज्ञो वै भुवंनस्य नाभिः। यज्ञमेवावं रुन्थे। पृच्छामिं त्वा वृष्णो अश्वंस्य रेत इत्याह। सोमो वै वृष्णो अश्वंस्य रेतः। सोमपीथमेवावं रुन्थे। पृच्छामिं वाचः पर्मं व्योमेत्याह। ब्रह्म वै वाचः पर्मं व्योम। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे॥२४॥

होतां भवित वै वृष्टिंः पूर्विचित्तरुत्राद्यमेवावं रुन्धे मृहदित्यांहु सोमो वै वृष्णो अश्वस्य रेतंश्चत्वारि च॥ldot

अप् वा एतस्मौत्राणाः क्रांमन्ति। यौंऽश्वमेधेन् यजंते। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहेतिं संज्ञ्प्यमान् आहुंतीर्जुहोति। प्राणानेवास्मिन्दधाति। नास्मौत्राणा अपंक्रामन्ति। अवंन्तीः स्थावंन्तीस्त्वाऽवन्तु। प्रियं त्वाँ प्रियाणांम्। वर्षिष्ठमाप्यांनाम्। निधीनां त्वां निधिपति र् हवामहे वसो ममेत्यांह। अपैवास्मै तद्भुंवते॥२५॥

अथो धुवन्त्येवैनम्। अथो न्येवास्मै हुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। पुभ्य पुवैनं लोकेभ्यो धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं धुवते। अपु वा एतेभ्यंः प्राणाः क्रांमन्ति॥२६॥

ये यज्ञे धुवंनं तुन्वतें। नुवकृत्वः परियन्ति। नव् वै पुरुषे प्राणाः। प्राणानेवाऽऽत्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपेक्रामन्ति। अम्बे अम्बाल्यम्बिक इति पत्नीमुदानंयति। अह्वंतैवैनाम्। सुभगे काम्पीलवासिनीत्याह। तपं एवैनामुपंनयति। सुवर्गे लोके सम्प्रोण्वांथामित्यांह॥२७॥

सुवर्गमेवेनां लोकं गंमयति। आऽहमंजानि गर्भधमा त्वमंजाऽसि गर्भधमित्यांह। प्रजा वै प्रशवो गर्भः। प्रजामेव प्रशूनात्मन्धंत्ते। देवा वा अश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यथ्सूचीभिरसिप्थान्कल्पयंन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञात्ये। गायुत्री त्रिष्टुङ्गगुतीत्यांह॥२८॥

यथायजुरेवैतत्। त्रय्यः सूच्यों भवन्ति। अयस्मय्यों रज्तता हिर्रण्यः। अस्य वै लोकस्य रूपमयस्मय्यः। अन्तरिक्षस्य रज्ताः। दिवो हिर्रण्यः। दिशो वा अयस्मय्यः। अवान्तरिद्दशा रज्ताः। ऊर्ध्वा हिर्रण्यः। दिशे पृवास्मै कल्पयति। कस्त्वौ छाति कस्त्वा विशास्तीत्याहाहि समय॥२९॥

ह्रुवृते कामुन्त्यूर्ण्याधामित्यांह जगुतीत्यांह कल्पयृत्येकं च॥———[६]

अप वा पुतस्माच्छ्री राष्ट्रं ऋांमति। योंऽश्वमेधेन् यजंते। ऊर्ध्वामेनामुच्छ्रंयतादित्यांह। श्रीर्वे राष्ट्रमंश्वमेधः। श्रियंमेवास्मै राष्ट्रमूर्ध्वमुच्छ्रंयति। वेणुभारङ्गिराविवेत्यांह। राष्ट्रं वै भारः। राष्ट्रमेवास्मै पर्यूहति। अथास्या मध्यंमेधतामित्यांह। श्रीवै राष्ट्रस्य मध्यम्॥३०॥

श्रियंमेवावं रुन्थे। शीते वातें पुनन्निवेत्यांह। क्षेमो वै राष्ट्रस्यं शीतो वातः। क्षेमंमेवावं रुन्थे। यद्धंरिणी यवमत्तीत्यांह। विड्वे हंरिणी। राष्ट्रं यवः। विशं चैवास्मैं राष्ट्रं चं स्मीचीं दधाति। न पुष्टं पृशु मन्यत् इत्यांह। तस्माद्राजां पृश्चित्र पृष्यंति॥३१॥

शूद्रा यदर्यजारा न पोषांय धनायतीत्यांह। तस्माँद्वेशीपुत्रं नाभिषिश्चन्ते। इयं यका शंकुन्तिकेत्यांह। विश्वे शंकुन्तिका। राष्ट्रमंश्वमेधः। विश्वं चैवास्मैं राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आहलुमिति सर्पतीत्याह। तस्माँद्राष्ट्राय विश्वंः सर्पन्ति। आहंतं गुभे पस इत्यांह। विश्वे गर्भः॥३२॥

राष्ट्रं पर्सः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्माँद्राष्ट्रं विशं घातुंकम्। माता चं ते पिता चं त इत्याह। इयं वै माता। असौ पिता। आभ्यामेवैनं परिंददाति। अग्रं वृक्षस्यं रोहत् इत्याह। श्रीवै वृक्षस्याग्रम्। श्रियंमेवावं रुन्धे॥३३॥

प्रसुंलामीतिं ते पिता गुभे मुष्टिमंतश्सयदित्यांह। विश्वे गर्भः। राष्ट्रं मुष्टिः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्माँद्राष्ट्रं विश्ं घातुंकम्। अप वा पुतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति। ये युज्ञेऽपूंतुं वदंन्ति। द्धिकाळणों अकारिष्मितिं सुरिभमतीमृचं वदन्ति। प्राणा वै सुरिभयः। प्राणानेवाऽऽत्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपंक्रामिता आपो हि ष्ठा मंयोभुव इत्यद्भिर्मार्जयन्ते। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांभिरेवाऽऽत्मानं पवयन्ते॥३४॥ प्रष्ट्रम् मध्यं प्रथाति गर्मा कर्य दक्षते चुलारि वा

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा प्रेणाऽनु प्राविंशत्। ताभ्यः पुनः सम्भवितुं नाशंक्रोत्। सौंऽब्रवीत्। ऋध्रवदिथ्सः। यो मेतः पुनः सम्भर्दिति। तं देवा अश्वमेधेनैव सम्भरन्। ततो वै त आध्रुंवन्। यौंऽश्वमेधेन् यजंते। प्रजापंतिमेव सम्भरत्यृध्नोति। पुरुषमालंभते॥३५॥

वैराजो वै पुरुषः। विराजमिवार्लभते। अथो अन्नं वै विराट्। अन्नमेवार्व रुन्थे। अश्वमार्लभते। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापंतिमेवार्लभते। अथो श्रीर्वा एकशफम्। श्रियंमेवार्व रुन्थे। गामार्लभते॥३६॥

युज्ञो वै गौः। युज्ञमेवार्लभते। अथो अन्नं वै गौः। अन्नंमेवार्वं रुन्थे। अजावी आर्लभते भूम्ने। अथो पृष्टिर्वे भूमा। पृष्टिमेवार्वं रुन्थे। पर्यमिकृतं पुरुषं चार्ण्या इश्लोध्सृंजन्त्यिहि सायै। उभौ वा एतौ पृश् आर्लभ्येते। यश्लांवमो यश्लं पर्मः। तें उस्योभयें युज्ञे बुद्धाः। अभीष्टां अभिप्रीताः। अभिजिता अभिह्तंता भवन्ति। नैनं दृङ्क्वार्वः पृश्वों युज्ञे बुद्धाः। अभीष्टां अभिप्रीताः। अभिजिता अभिह्तंता हि स्मन्ति। यों ऽश्वमेधेन

यजते। य उं चैनमेवं वेदं॥३७॥

लुभुते गामालंभते पर्मौंऽष्टौ चं॥**____**[८]

प्रथमेन वा एष स्तोमेन राध्वा। चतुष्टोमेनं कृतेनायांनामृत्तरेहन्। एक्विश्शे प्रतिष्ठायां प्रति तिष्ठति। एक्विश्शात्प्रतिष्ठायां ऋतूनन्वारोहित। ऋतवो वै पृष्ठानि। ऋतवेः संवथ्सरः। ऋतुष्वेव संवथ्सरे प्रतिष्ठायं। देवतां अभ्यारोहित। शक्षरयः पृष्ठं भेवन्त्यन्यदेन्यच्छन्देः। अन्येऽन्ये वा एते पृशव आलंभ्यन्ते॥३८॥

उतेवं ग्राम्याः। उतेवांरण्याः। अहंरेव रूपेण समर्धयति। अथो अह्नं एवैष बुलिर्ह्हियते। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदंजावयंश्चारण्याश्चं। एते वै सर्वे पृशवंः। यद्गव्या इतिं। गुव्यान्पृशूनुंत्तमेऽहुं नालभते॥३९॥

तेनैवोभयाँन्पृशूनवं रुन्थे। प्राजापृत्या भंवन्ति। अनंभि-जितस्याभिजिंत्ये। सौरीर्नवं श्वेता वृशा अनूबन्ध्यां भवन्ति। अन्तृत एव ब्रह्मवर्चसमवं रुन्थे। सोमाय स्वराज्ञेंऽनोवाहावंनुङ्घाहावितिं द्वन्द्वनः पृशूनालंभते। अहोरात्राणांमभिजिंत्ये। पृशुभिर्वा एष व्यृध्यते। यौऽश्वमेधेन् यजंते। छुगुलं कुल्मापं किकिदीविं विंदीगयमितिं त्वाष्ट्रान्पृशूना लंभते। पृशुभिरेवाऽऽत्मानु समर्धयित। ऋतुभिर्वा एष व्यृध्यते। यौऽश्वमेधेन् यजंते। पिशङ्गास्त्रयों वासन्ता इत्यृतुपृशूनालंभते। ऋतुभिरेवाऽऽत्मानु ह समर्धयति। आ वा एष पृशुभ्यो वृश्च्यते। योऽश्वमेधेन् यजंते। पर्यग्निकृता उथ्मृजन्त्यनावृत्यस्काय॥४०॥

७भुन् लुभुन् लाष्ट्रान्यम्।

[९]

प्रजापंतिरकामयत महानंत्रादः स्यामिति। स एतावंश्वमेधे मंहिमानांवपश्यत्। तावंगृह्णीत। ततो वै स महानंत्रादो- ऽभवत्। यः कामयेत महानंत्रादः स्यामिति। स एतावंश्वमेधे मंहिमानौं गृह्णीत। महानेवात्रादो भंवति। यजमानदेवत्यां वै वपा। राजां महिमा। यद्धपां मंहिम्रोभ्यतः परियजंति। यजमानमेव राज्येनोभ्यतः परिगृह्णाति। पुरस्तांथ्स्वाहाकारा वा अन्ये देवाः। उपरिष्टाथ्स्वाहाकारा अन्ये। ते वा एतेऽश्वं एव मेध्यं उभयेऽवंरुध्यन्ते। यद्धपां मंहिम्रोभ्यतः परियजंति। तानेवोभयांन्त्रीणाति॥४१॥

वैश्वदेवो वा अर्थः। तं यत्प्रांजापृत्यं कुर्यात्। या देवता अपिभागाः। ता भागधेयेन व्यर्धयेत्। देवताभ्यः समदं दध्यात्। स्तेगान्दङ्ष्ट्राभ्यां मृण्डूकां जम्भ्येभिरिति। आज्यंमवदानं कृत्वा प्रंतिसङ्ख्यायमाहुंतीर्ज्ञहोति। या एव देवता अपिभागाः। ता भागधेयेन समर्धयति। न देवताभ्यः समदं दधाति॥४२॥

चतुंर्दशैतानंनुवाकाञ्जंहोत्यनंन्तरित्यै। प्रयासाय स्वाहेतिं पश्चदशम्। पश्चंदश् वा अर्धमासस्य रात्रयः। अर्धमासुशः संवथ्सर आप्यते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। तेंऽब्रुवन्नग्नयंः स्वष्टकृतः। अश्वंस्य मेध्यंस्य वयमुंद्धारमुद्धंरामहै। अथैतान्भि भंवामेति। ते लोहित्मुदंहरन्त। ततों देवा अभवन्॥४३॥

पराऽसुंराः। यथ्स्विष्टकृद्धो लोहितं जुहोति भ्रातृंव्याऽभिभूत्यै। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। गोमृग्कुण्ठेनं प्रथमामाहुंतिं जुहोति। पृशवो वै गोमृगः। रुद्रोंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव पृशून्नर्त्रदेधाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः पृशून्भिमंन्यते॥४४॥

अश्वश्रफेनं द्वितीयामाहुंतिं जुहोति। पृशवो वा एकंशफम्। रुद्रोंडिग्नः स्विष्ट्कृत्। रुद्रादेव पृश्नन्तर्दधाति। अथो यत्रैषा-ऽऽहुंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः पृश्ननिभमंन्यते। अयस्मयेन कमण्डलुंना तृतीयांम्। आहुंतिं जुहोत्यायास्यों वे प्रजाः। रुद्रोंडिग्नः स्विष्ट्कृत्। रुद्रादेव प्रजा अन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः प्रजा अभिमंन्यते॥४५॥ व्याल्यन्वस्त्र प्रजा अन्तर्दधाति हे वे ॥————[११]

अश्वंस्य वा आलंब्यस्य मेध् उदंक्रामत्। तदंश्वस्तोमीयं-मभवत्। यदंश्वस्तोमीयं जुहोतिं। समेधमेवैनमालंभते। आज्यंन जुहोति। मेधो वा आज्यम्। मेधौंऽश्वस्तोमीयम्। मेधेनैवास्मिन्मेधं दधाति। षद्गिरंशतं जुहोति। षद्गिरंशदक्षरा बृहती॥४६॥ बार्हताः पृशवंः। सा पंशूनां मात्रां। पृशूनेव मात्रंया समर्थयति। तायद्भ्यंसीर्वा कनींयसीर्वा जुहुयात्। पृशून्मात्रंया व्यर्धयेत्। षद्भिर्शतं जुहोति। षद्भिर्श्यदक्षरा बृह्ती। बार्हताः पृशवंः। सा पंशूनां मात्रां। पृशूनेव मात्रंया समर्थयति॥४७॥

अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। द्विपाद्वे पुरुषो द्विप्रतिष्ठः। तदेनं प्रतिष्ठया समर्धयति। तदांहः। अश्वस्तोमीयं पूर्व होत्व्याँ(३)न्द्विपदा(३) इति। अश्वो वा अश्वस्तोमीयम्। पुरुषो द्विपदाः। अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। तस्माद्विपाच तुष्पादमित्तः। अथौ द्विपद्वेव चतुष्पदः प्रतिष्ठापयति। द्विपदां हुत्वा। नान्यामुत्तंरामाहंतिं जुहुयात्। यदन्यामुत्तंरामाहंतिं जुहुयात्। यदन्यामुत्तंरामाहंतिं जुहुयात्। प्रप्रतिष्ठायां श्वयं वा द्विपदां अन्ततो जुंहोति प्रतिष्ठित्ये॥४८॥

प्रजापंतिरश्वम्धमंसृजत। सौंऽस्माथ्सृष्टोऽपांत्रामत्। तं यंज्ञकृतुभिरन्वैंच्छत्। तं यंज्ञकृतुभिर्नान्वंविन्दत्। तमिष्टिंभिरन्वैंच्छत्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तदिष्टींनामिष्टि-त्वम्। यथ्संवथ्स्रमिष्टिंभिर्यजंते। अश्वंमेव तदन्विंच्छति। सावित्रियों भवन्ति॥४९॥

ड्यं वै संविता। यो वा अस्यान्नश्यंति यो निलयंते। अस्यां वाव तं विन्दन्ति। न वा ड्रमां कश्चनेत्यांहुः। तिर्यङ्गोर्ध्वोत्येतुमर्ह्तीतिं। यथ्सांवित्रियो भवंन्ति। स्वितृ-प्रंसूत एवैनंमिच्छति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परां परावतं गन्तोः। यथ्सायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्य यत्यै धृत्यै॥५०॥

यत्प्रातिरिष्टिभिर्यजंते। अश्वमेव तदिन्वंच्छति। यथ्मायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्यैव यत्यै धृत्यैं। तस्मांथ्सायं प्रजाः क्षेम्यां भवन्ति। यत्प्रातिरिष्टिभिर्यजंते। अश्वंमेव तदिन्वंच्छति। तस्माद्दिवां नष्टेष एति। यत्प्रातिरिष्टिभिर्यजंते सायं धृतींर्जुहोतिं। अहोरात्राभ्यांमेवैनमन्वंच्छति। अथों अहोरात्राभ्यांमेवास्मै योगक्षेमं कंल्पयति॥५१॥

अप वा एतस्माच्छी राष्ट्रं ऋांमित। योंऽश्वमेधेन यजंते। ब्राह्मणो वींणागाथिनौं गायतः। श्रिया वा एतद्रूपम्। यद्वीणां। श्रियमेवास्मिन्तद्धंत्तः। यदा खलु वै पुरुषः श्रियंमश्जुते। वीणांऽस्मै वाद्यते। तदांहुः। यदुभौ ब्राह्मणो गायेंताम्॥५२॥

प्रभःशंकास्माच्छीः स्यात्। न वै ब्राँह्मणे श्री रंमत् इति। ब्राह्मणौऽन्यो गायैत्। राजन्यौऽन्यः। ब्रह्म वै ब्राँह्मणः। क्षत्र राजन्यः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेणं चोभ्यतः श्रीः परिगृहीता भवति। तदांहुः। यदुभौ दिवा गायेताम्। अपौस्माद्राष्ट्रं क्रांमेत्॥५३॥

न वै ब्राँह्मणे राष्ट्र रंमत् इतिं। यदा खलु वै राजां कामयंते। अर्थ ब्राह्मणं जिनाति। दिवाँ ब्राह्मणो गांयेत्। नक्त र राजन्यः। ब्रह्मणो वै रूपमहंः। क्षत्रस्य रात्रिः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेणं चोभ्यतो राष्ट्रं परिगृहीतं भवति। इत्यंददा इत्यंयजथा इत्यंपच इतिं ब्राह्मणो गायेत्। इष्टापूर्तं वै ब्रौह्मणस्यं॥५४॥

इष्टापूर्तेनैवेन् स समर्धयित। इत्यंजिना इत्यंयुध्यथा इत्यम् संङ्गाममंहिन्निति राज्न्यः। युद्धं वे राज्न्यंस्य। युद्धेनैवेन् स समर्धयित। अक्रुप्ता वा एतस्यत्व इत्याहः। यौऽश्वमेधेन् यजंत इति। तिस्रौऽन्यो गायंति तिस्रौऽन्यः। षट्ध्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवेः। ऋतूनेवास्मै कल्पयतः। ताभ्या स् सङ्स्थायाम्। अनोयुक्ते चं शते चं ददाति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुष्येवेन्द्रिये प्रति तिष्ठति॥५५॥ ग्रायंताङ्काम्ह्राष्ट्राण्यं कल्पयत्ववारं वा [१४]

सर्वेषु वा एषु लोकेष् मृत्यवोऽन्वार्यताः। तेभ्यो यदाहुंतीर्न जुंहुयात्। लोकेलोक एनं मृत्युर्विन्देत्। मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। लोकाल्लोकादेव मृत्युमवयजते। नैनं लोकेलोके मृत्युर्विन्दित। यदमुष्मे स्वाहाऽमुष्मे स्वाहेति जुह्बंथ्सश्वक्षीत। बहुं मृत्युम्मित्रं कुर्वीत। मृत्यवे स्वाहेत्येकंस्मा एवकां जुहुयात्। एको वा अमुष्मिंलोके मृत्युः॥५६॥

अ्शनया मृत्युरेव। तमेवामुष्मिं श्लोके ऽवंयजते। भ्रूणहृत्यायै

स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोति। भ्रूणहृत्यामेवावं यजते। तदांहुः। यद्भूणहृत्या पात्र्याऽथं। कस्माँद्यज्ञेऽपिं क्रियत् इतिं। अमृत्युर्वा अन्यो भ्रूणहृत्याया इत्यांहुः। भ्रूणहृत्या वाव मृत्युरितिं। यद्भूणहृत्याये स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोतिं॥५७॥

मृत्युमेवाऽऽहुंत्या तर्पयित्वा पंरिपाणं कृत्वा। भ्रूण्घ्रे भेषुजं करोति। एता हु वै मृण्डिभ औदन्यवः। भ्रूण्हृत्याये प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार। यो हास्यापिं प्रजायां ब्राह्मण हिन्ते। सर्वस्मे तस्मे भेषुजं करोति। जुम्बकाय स्वाहेत्यंवभृथ उत्तमामाहुंतिं जुहोति। वर्रुणो वै जुम्बकः। अन्तत एव वर्रुणमवंयजते। खुलुतेर्विक्किधस्यं शुक्कस्यं पिङ्गाक्षस्यं मूर्धं जुहोति। एतद्वे वर्रुणस्य रूपम्। रूपेणेव वर्रुणमवंयजते॥५८॥

लोके मृत्युर्जुहोति मूर्धं जुंहोति हे चं॥———[१५]

वारुणो वा अर्थः। तं देवतया व्यर्धयति। यत्प्रांजापृत्यं करोति। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायत्याह। वारुणो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवत्या समर्धयति। नमोऽश्वाय नमः प्रजापंतय इत्याह। प्राजापत्यो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवत्या समर्धयति। नमोऽधिपतय इत्याह॥५९॥

धर्मो वा अधिपतिः। धर्ममेवावं रुन्धे। अधिपतिरुस्यधिपतिं

मा कुर्विधिपतिर्हं प्रजानों भूयासमित्यांह। अधिपतिमेवैन रे समानानों करोति। मां धेहि मियं धेहीत्यांह। आशिषं-मेवैतामा शांस्ते। उपाकृताय स्वाहेत्युपाकृते जुहोति। आलंब्याय स्वाहेति नियुंक्ते जुहोति। हुताय स्वाहेतिं हुते जुंहोति। पृषां लोकानांम्भिजिंत्यै॥६०॥

प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यंश्च्यवते। योंऽश्वमेधेन यजंते। आग्नेयमैंन्द्राग्नमांश्विनम्। तान्प्रशूनालंभते प्रतिष्ठित्यै। यदांग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतां एवावं रुन्थे। ब्रह्म वा अग्निः। क्षुत्रमिन्द्रः। यदैन्द्राग्नो भवंति॥६१॥

ब्रह्मक्षत्रे एवावं रुन्धे। यदाँश्विनो भवंति। आशिषामवंरुद्धे। त्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वंव लोकेषु प्रति तिष्ठति। अग्नयेऽ रहोमुचेऽष्टाकंपाल इति दर्शहविष्मिष्टिं निर्वपति। दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। अग्नेर्मन्वे प्रथमस्य प्रचेतस् इतिं याज्यानुवाक्यां भवन्ति सर्वत्वायं॥६२॥

अधिपतय इत्यांह्[भिंजित्या ऐन्द्राम्रो भवंति रुन्ध् एकं च॥———[१६]

यद्यश्वंमुप्तपंद्विन्देत्। आग्नेयमृष्टाकंपालं निर्वपेत्। सौम्यं चरुम्। सावित्रमृष्टाकंपालम्। यदाँग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतांभिरेवैनं भिषज्यति। यथ्सौम्यो भवंति। सोमो वा ओषंधीना् राजाः। याभ्यं पुवैनं विन्दति॥६३॥ ताभिरेवैनं भिषज्यति। यथ्सांवित्रो भवंति। स्वितृप्रंसूत एवैनं भिषज्यति। एताभिरेवैनं देवतांभिर्भिषज्यति। अगदो हैव भवति। पौष्णां चरुं निर्विपेत्। यदि श्लोणः स्यात्। पूषा वै श्लौण्यंस्य भिषक्। स एवैनं भिषज्यति। अश्लोणो हैव भवति॥६४॥

रौद्रं चुरुं निर्विपेत्। यदिं महुती देवतांऽभिमन्येत। एत्द्देवत्यो वा अश्वः। स्वयैवैनं देवतंया भिषज्यति। अगदो हैव भेवति। वैश्वानुरं द्वादंशकपालं निर्विपेन्मृगाखरे यदि नाऽऽगच्छैत्। इयं वा अग्निवैश्वानुरः। इयमेवैनंमुर्चिभ्यां परिरोधमानंयति। आहैव सुत्यमहंर्गच्छति। यद्यंधीयात्॥६५॥

अग्नयेऽ रहोमुचेऽष्टाकंपालः। सौर्यं पर्यः। वायव्यं आज्यंभागः। यजंमानो वा अश्वः। अरहंसा वा एष गृंहीतः। यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षितोऽध्येति। यद रहोमुचे निर्वपंति। अरहंस एव तेनं मुच्यते। यजंमानो वा अश्वः। रतंसा वा एष व्यृध्यते॥६६॥

यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षिंतोऽध्येतिं। सौर्य रेतः। यथ्मौर्यं पयो भवंति। रेतंसैवैन् ससमंध्यति। यजंमानो वा अश्वः। गर्भैवा एष व्यृध्यते। यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षिंतोऽध्येतिं। वायव्यां गर्भाः। यद्वांयव्यं आज्यंभागो भवंति। गर्भेरेवैन् ससमंध्यति। अथो यस्यैषाऽश्वंमेधे प्रायंश्चित्तः क्रियतें।

इष्ट्वा वसीयान्भवति॥६७॥

विन्दत्यश्चोंणो हैव भंवत्यधीयादंध्यते गर्भेरेवेन् स समर्धयति द्वे चं॥______[१७]

तदांहुः। द्वादंश ब्रह्मौद्नान्थ्स एथंते निर्वपेत्। द्वादशिमेर्वेष्टिमिर्यजेति। यदिष्टिमिर्यजेत। उपनामुंक एनं यज्ञः स्यात्। पापीया इस्तु स्यात्। आप्तानि वा एतस्य छन्दा स्मि। य ईजानः। तानि क एतावंदाशु पुनः प्रयुं अतिति। सर्वा वै स इस्थिते यज्ञे वागां प्यते॥६८॥

साप्ता भंवति यातयाँम्नी। क्रूरीकृतेव हि भवत्यरुष्कृता। सा न पुनः प्रयुज्येत्यांहुः। द्वादंशैव ब्रह्मौद्नान्थ्सङ्स्थिते निर्वपेत्। प्रजापंतिर्वा ओद्नः। यज्ञः प्रजापंतिः। उपनामुंक एनं यज्ञो भंवति। न पापीयान्भवति। द्वादंश भवन्ति। द्वादंशमासाः संवथ्सरः। संवथ्सर एव प्रति तिष्ठति॥६९॥ आप्रते संवथ्सर एवं प्रति तिष्ठति॥६९॥

पुष वै विभूर्नामं युज्ञः। सर्वर् हु वै तत्रं विभु भंवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यजन्ते। एष वै प्रभूर्नामं युज्ञः। सर्वर् हु वै तत्रं प्रभु भंवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यजन्ते। एष वा ऊर्जस्वान्नामं युज्ञः। सर्वर् हु वै तत्रोर्जस्वद्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यजन्ते। एष वै पर्यस्वान्नामं यज्ञः॥७०॥

सर्वर् हु वै तत्र पर्यस्वद्भवति। यत्रैतेन युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै विधृतो नाम युज्ञः। सर्वर् हु वै तत्र विधृतं भवति। यत्रैतेन युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै व्यावृत्तो नाम युज्ञः। सर्वर् हु वै तत्र व्यावृत्तं भवति। यत्रैतेनं यज्ञेन यर्जन्ते। एष वै प्रतिष्ठितो नामं युज्ञः। सर्वर्ं ह वै तत्र प्रतिष्ठितं भवति॥७१॥

यत्रैतनं यज्ञेन यजंन्ते। एष वै तेंजस्वी नामं यज्ञः। सर्वरं हु वै तत्रं तेजस्वि भंवति। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। एष वै ब्रह्मवर्च्सी नामं यज्ञः। आ हु वै तत्रं ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्सी जांयते। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। एष वा अंतिव्याधी नामं यज्ञः। आ हु वै तत्रं राजन्योंऽतिव्याधी जांयते। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। एष वै दीर्घो नामं यज्ञः। दीर्घायुंषो हु वै तत्रं मनुष्यां भवन्ति। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। एष वै क्रुप्तो नामं यज्ञः। कल्पंते हु वै तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं यज्ञेन यज्ञंन्ते॥७२॥

तार्प्येणाश्वर् संज्ञंपयन्ति। यज्ञो वै तार्प्यम्। यज्ञेनैवैन्र् समर्थयन्ति। यामेन् साम्नां प्रस्तोताऽनूपंतिष्ठते। यमुलोकमेवैनं गमयति। तार्प्ये चं कृत्यधीवासे चाश्वर् संज्ञंपयन्ति। एतद्वै पंशूनार रूपम्। रूपेणैव पृशूनवं रुन्थे। हिर्ण्यकृशिपु भंवति। तेज्सोऽवंरुख्ये॥७३॥

रुक्मो भेवति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै। अश्वीं भवति। प्रजापंतेरात्यैं। अस्य वै लोकस्यं रूपं तार्प्यम्। अन्तरिक्षस्य कृत्यधीवासः। दिवो हिरण्यकशिपु। आदित्यस्यं रुक्मः। प्रजापंतेरश्वः। इममेव लोकं तार्प्यणाऽऽप्नोति॥७४॥ अन्तरिक्षं कृत्यधीवासेनं। दिवर्ं हिरण्यकशिपुनां। आदित्यर रुक्नेणं। अश्वेंनैव मेध्येंन प्रजापंतेः सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। एतासांमेव देवतानार् सायुंज्यम्। सार्षितार्ं समानलोकतांमाप्नोति। योंऽश्वमेधेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥७५॥

अवंरुध्या आप्रोत्यष्टौ चं॥____

_[२०]

आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकैंऽस्पर्धन्त। तेऽङ्गिरस आदित्येभ्यः। अमुमादित्यमश्वई श्वेतं भूतं दक्षिणामनयन्। तैंऽब्रुवन्। यन्नो नैष्ट। स वर्यो भूदितिं। तस्मादश्व<u>क्ष्</u> सवर्येत्याह्वंयन्ति। तस्माद्यन्ने वरो दीयते। यत्प्रजापंतिरा-लब्धोऽश्वोऽभवत्। तस्मादश्वो नामं॥७६॥

यच्छ्वयदरुरासीत्। तस्मादर्वा नामं। यथ्सद्यो वाजाँन्थ्समजंयत्। तस्माद्वाजी नामं। यदस्रेराणां लोकानादंत्त। तस्मादादित्यो नामं। अग्निर्वा अंश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योऽग्नेर्योनिरायतंनम्। यदंश्वमेधेऽग्नो चित्यं उत्तरवेदिम्रंपवपंति। योनिमन्तमेवैनंमायतंनवन्तं करोति॥७७॥

योनिमानायतंनवान्भवति। य एवं वेदं। प्राणापानौ वा एतौ देवानाँम्। यदंकिश्वमेधौ। प्राणापानावेवावं रुन्धे। ओजो बलं वा एतौ देवानाँम्। यदंकिश्वमेधौ। ओजो बलंमेवावं रुन्धे। अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योऽग्नेयोनिरायतंनम्। यदंश्वमेधैंऽग्नौ चित्यं उत्तरवेदिं चिनोति। तार्वकिश्वमेधौ। अर्काश्वमेधावेवार्व रुन्धे। अथौ अर्काश्वमेधयोरेव प्रति तिष्ठति॥७८॥

नामं करोति सूर्योऽग्नेयॉनिंगुयतंनश्रृत्वारि च॥_____[२१]

प्रजापंतिं वै देवाः पितरम्। पृशुं भूतं मेधायाऽऽऽलंभन्त। तमालभ्योपांवसन्। प्रातर्यष्टांस्मह् इति। एकं वा पृतद्देवानामहंः। यथ्संवथ्सरः। तस्मादश्वः पुरस्तांथ्संवथ्सर आलंभ्यते। यत्प्रजापंतिरालुब्धोऽश्वोऽभंवत्। तस्मादश्वः। यथ्सद्यो मेधोऽभंवत्॥७९॥

तस्मांदश्वमेधः। वेदुकोऽश्वंमाशुं भंवति। य एवं वेदं। यद्वै तत्प्रजापंतिरालुब्योऽश्वोऽभंवत्। तस्मादश्वः प्रजापंतेः पशूनामनुंरूपतमः। आऽस्यं पुत्रः प्रतिंरूपो जायते। य एवं वेदं। सर्वाणि भूतानि सम्भृत्याऽऽलंभते। समेनं देवास्तेजंसे ब्रह्मवर्च्सायं भरन्ति। यौऽश्वमेधेन यजंते॥८०॥

य उं चैनमेवं वेदं। एतद्वै तद्देवा एतान्देवतांम्। पृशुं भूतं मेधायाऽऽऽलंभन्त। यज्ञमेव। यज्ञेनं यज्ञमंयजन्त देवाः। कामप्रं यज्ञमंकुर्वत। तेऽमृतृत्वमंकामयन्त। तेऽमृतृत्वमंगच्छन्। योऽश्वमेधेन यज्ञंते। देवानांमेवायंनेनैति॥८१॥

प्राजापत्येनैव यज्ञेनं यजते काम्प्रेणं। अपुनर्मारमेव गंच्छति। एतस्य वै रूपेणं पुरस्तांत्प्राजापत्यमृष्मं तूप्रं बंहुरूपमालंभते। सर्वेभ्यः कामेंभ्यः। सर्वस्याऽऽध्यें। सर्वस्य जित्यें। सर्वमेव तेनांऽऽप्रोति। सर्वं जयति। योंऽश्वमे्धेन

यजेते। य उं चैनमेवं वेदं॥८२॥

मेधोऽभंबुद्यर्जंत एति वेदं॥——[२२]

यो वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य लोमंनी वेदं। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। अहोरात्रे वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य लोमंनी। यथ्मायं प्रांतर्जुहोतिं। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अर्श्वस्य मेध्यंस्य लोमं लोमं जुह्वति। यो वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य पदे वेदं। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य पदेपंदे जुहोति। दुर्शपूर्णमासौ वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य पदे॥८३॥

यद्दंशपूर्णमासौ यजंते। अश्वंस्येव मेध्यंस्य प्देपंदे जुहोति। एतदंनुकृति ह स्मृ वै पुरा। अश्वंस्य मेध्यंस्य प्देपंदे जुह्वति। यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य विवर्तनं वेदं। अश्वंस्येव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। असौ वा आंदित्योऽश्वंः। स आंहवनीयमागंच्छति। तद्विवर्तते। यदंग्निहोत्रं जुहोति। अश्वंस्येव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। एतदंनुकृति ह स्मृ वै पुरा। अश्वस्य मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। एतदंनुकृति ह स्मृ वै पुरा। अश्वस्य मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। जुह्वति॥८४॥

पदे अग्निहोत्रं जुहोति त्रीणिं च॥————[२३]

प्रजापंतिरश्वमेधं जुंह्वति॥

प्रजापंतिस्तर्मष्टादशिभिः प्रजापंतिरकामयतोभावस्मै युञ्जन्ति तेज्नसाऽपंप्राणा अपुश्रीकृष्वौ प्रजापंतिः प्रेणाऽनुं प्रथमेनं प्रजापंतिरकामयत मुहान्वैश्वदेवो वा अश्वोऽश्वेस्य प्रजापंतिस्तं यंज्ञञ्जतिभूरपृश्रीवौह्मणो सर्वेषु वाकृणो यद्यश्वन्तदांहुरेष वे विभूस्ताप्येणांदित्याः प्रजापंतिं पितर् यो वा अश्वेस्य मेध्यंस्य लोमंनी त्रयोविश्शितः॥२३॥ प्रजापंतिर्स्मिक्षोक उत्तर्तः श्रियंमेव प्रजापंतिरकामयत मुहान्यत्यातः प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यः सर्वर् ह वै तत्र पर्यः स्वद्य उं चैनमेवं वेदं चत्वार्यशीतिः॥८४॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥तैत्तिरीय आरण्यकम्॥

॥प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः॥

ॐ भृद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गें स्तुष्टुवा र संस्तृनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृद्रं कर्णंभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैंस्तुष्टुवा र संस्तृनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। आपंमापामुपः सर्वाः। अस्मादस्मादितोऽमुतः॥१॥

अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्क्ररिखंया। वाय्वश्वां रिश्मिपतंयः। मरींच्यात्मानो अद्रुंहः। देवीर्भुवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। महुसो महसः स्वः। देवीः पंर्जन्युसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत॥२॥

अपाश्चंिष्णम्पा रक्षः। अपाश्चंिष्णम्पा रघमं। अपाँघामपं चावर्तिम्। अपदेवीरितो हित। वर्ज्नं देवीरजीता ॥ भवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप् ओषंधयः। सुमृडीका

सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥३॥

[8]

स्मृतिः प्रत्यक्षंमैतिह्यम्। अनुंमानश्चतुष्ट्यम्। एतैरादिंत्य-मण्डलम्। सर्वेरेव विधास्यते। सूर्यो मरीचिमादंत्ते। सर्वस्माद्भवंनाद्धि। तस्याः पाकविंशेषेण। स्मृतं काल-विशेषंणम्। नदीव प्रभवात्काचित्। अक्षय्याध्स्यन्दते यथा॥४॥

तां नद्योऽभि संमायन्ति। सो्रः सतीं न निवंति। एवं नानासंमुत्थानाः। कालाः संवथ्सरः श्रिताः। अणुशश्च महश्वश्च। सर्वे समव्यत्रितम्। सतैः सर्वेः संमाविष्टः। ऊरुः संत्र निवर्तते। अधिसंवथ्सरं विद्यात्। तदेवं लक्षणे॥५॥

अणुभिश्च महिद्धिश्च। समार्रूढः प्रदृश्यंते। संवथ्सरः प्रत्यक्षेण। नाधिसंत्वः प्रदृश्यंते। पटरों विक्लिधः पिङ्गः। पृतद्वंरुणलक्षंणम्। यत्रैतंदुपृदृश्यंते। सहस्रं तत्र नीयंते। एकः हि शिरो नाना मुखे। कृथ्स्नं तंदृतुलक्षंणम्॥६॥

उभयतः सप्तेन्द्रियाणि। जिल्पितं त्वेव दिह्यंते। शुक्लकृष्णे संवंध्सर्स्य। दक्षिणवामयोः पार्श्वयोः। तस्यैषा भवंति। शुक्रं ते अन्यद्यंजतं ते अन्यत्। विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा ते पूषिन्निह रातिरस्त्विते। नात्र भुवंनम्। न पूषा। न पृशवंः। नाऽऽदित्यः संवध्सर एव प्रत्यक्षेण प्रियतंमं विद्यात्। एतद्वै संवध्सरस्य प्रियतंम श

रूपम्। योऽस्य महानर्थ उत्पथ्स्यमानो भ्वति। इदं पुण्यं कुरुष्वेति। तमाहरंणं दुद्यात्॥७॥

[२]

साकुआना र स्प्तर्थमाहुरेक जम्। षडुं द्यमा ऋषेयो देवजा इति। तेषां मिष्टानि विहिंतानि धामुशः। स्थात्रे रेजन्ते विकृतानि रूपशः। को नुं मर्या अमिंथितः। सखा सखां यमब्रवीत्। जहां को अस्मदीं षते। यस्तित्या जं सिखे विद्र सखां यम्। न तस्यं वाच्यपि भागो अस्ति। यदी रे शृणोत्यलक रे शृणोति॥८॥

न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामितिं। ऋतुर्ऋतुना नुद्यमानः। विनेनादाभिधांवः। षष्टिश्च त्रिश्शंका वृत्गाः। शुक्लकृष्णौ च षाष्टिंकौ। साराग्वस्नेर्ज्ररदेक्षः। वस्नतो वसुंभिः सह। संवथ्सरस्यं सिवतुः। प्रैषकृत्प्रंथमः स्मृतः। अमूनादयंतेत्यन्यान्॥९॥

अमू इश्वं परिरक्षंतः। एता वाचः प्रंयुज्यन्ते। यत्रैतंदुपृदृश्यंते। एतदेव विंजानीयात्। प्रमाणं कालपर्यये। विशेषणं तुं वक्ष्यामः। ऋतूनां तित्रबोधंत। शुक्लवासां रुद्रगणः। ग्रीष्मेणांऽऽवर्तते संह। निजहंन् पृथिंवी स् सर्वाम्॥१०॥

ज्योतिषाँ ऽप्रतिख्येनं सः। विश्वरूपाणि वासा १सि। आदित्यानां निबोर्धत। संवथ्सरीणं कर्मफलम्। वर्षाभिर्दंदता सह। अदुःखों दुःखचंक्षुरिव। तद्मांऽऽपीत इव दश्यंते। शीतेनां व्यथंयित्रव। रुरुदंक्ष इव दश्यंते। ह्रादयतें ज्वलंतश्चेव। शाम्यतंश्चास्य चक्षुंषी। या वै प्रजा भ्रं इश्यन्ते। संवथ्सरात्ता भ्रं इश्यन्ते। याः प्रतितिष्ठन्ति। संवथ्सरे ताः प्रतितिष्ठन्ति। वर्षाभ्यं इत्यर्थः॥११॥

[३]

अक्षिंदुःखोत्थितस्यैव। विप्रसंत्रे क्नीनिके। आङ्के चार्द्गणं नास्ति। ऋभूणां तित्रबोधंत। कुनकाभानिं वासार्सा। अहतांनि निबोधंत। अन्नमश्रीतं मृज्मीत। अहं वो जीवनप्रदः। एता वाचः प्रयुज्यन्ते। शुरद्यंत्रोपदृश्यंते॥१२॥

अभिधून्वन्तोऽभिघ्नंन्त इव। वातवंन्तो मुरुद्गंणाः। अमुतो जेतुमिषुमुंखिम्व। सन्नद्धाः सह दंदशे ह। अपध्वस्तैर्वस्तिवंणीर्व। विशिखासंः कप्रदिनः। अनुद्धस्य योथ्स्यंमान्स्य। नुद्धस्यंव लोहिंनी। हेमतश्चक्षंषी विद्यात्। अक्ष्णयोः क्षिपणोरिंव॥१३॥

दुर्भिक्षं देवंलोकेषु। मनूनांमुद्कं गृहे। एता वाचः प्रंवद्न्तीः। वैद्युतों यान्ति शैशिंरीः। ता अग्निः पवंमना अन्वैक्षत। इह जीविकामपंरिपश्यन्। तस्यैषा भवंति। इहेहंवः स्वतपसः। मरुतः सूर्यत्वचः। शर्म सप्रथा आवृणे॥१४॥

[૪]

अतिताम्राणि वासा १सि। अष्टिवंजिशतिष्ट्रं च। विश्वे देवा

विप्रंहर्न्ति। अग्निजिंह्वा असश्चंत। नैव देवों न मृर्त्यः। न राजा वंरुणो विभुः। नाग्निर्नेन्द्रो न पंवमानः। मातृक्षंचन् विद्यंते। दिव्यस्यैका धनुंरार्बिः। पृथिव्यामपंरा श्रिता॥१५॥

तस्येन्द्रो विम्निरूपेण। धनुज्यांमिछिनथ्स्वंयम्। तिदंन्द्र्धनुं-रित्युज्यम्। अभवंणेषु चक्षंते। एतदेव शंयोबार्हंस्पत्यस्य। एतद्रुंद्रस्य धनुः। रुद्रस्यं त्वेव धनुंरार्तिः। शिर् उत्पिपेष। स प्रवग्यांऽभवत्। तस्माद्यः सप्रवग्येणं युज्ञेन यजंते। रुद्रस्य स शिरः प्रतिदधाति। नैन र् रुद्र आरुको भवति। य एवं वेदं॥१६॥

-[५]

अत्यूर्ध्वाक्षोऽतिरश्चात्। शिशिंरः प्रदृश्यंते। नैव रूपं नं वासार्साः। न चक्षुः प्रतिदृश्यंते। अन्योन्यं तु नं हि इस्रातः। सृतस्तंद्देवलक्षणम्। लोहितोऽक्ष्णि शारशीर्ष्णिः। सूर्यस्योदयुनं प्रति। त्वं करोषिं न्यञ्जलिकाम्। त्वं करोषि निजानुंकाम्॥१७॥

निजानुका में न्यञ्जलिका। अमी वाचमुपासंतामिति। तस्मै सर्व ऋतवों नम्न्ते। मर्यादाकरत्वात्प्रंपुरोधाम्। ब्राह्मणं आप्नोति। य एवं वेद। स खलु संवथ्सर एतैः सेनानीभिः सह। इन्द्राय सर्वान्कामानिभेवहति। स द्रफ्सः। तस्यैषा भवंति॥१८॥

अवंद्रफ्सो अर्श्शुमतींमतिष्ठत्। इयानः कृष्णो द्शिभः सहस्रैः। आवर्तिमन्द्रः शच्या धर्मन्तम्। उपस्रुहि तं नृमणामर्थद्रामिति। एतयैवेन्द्रः सलावृंक्या सह। असुरान् परिवृश्चति। पृथिव्यु॰शुमंती। ताम्नववंस्थितः संवथ्सरो दिवं चं। नैवं विदुषाऽऽचार्यान्तेवासिनौ। अन्योन्यस्मैं द्रुह्याताम्। यो द्रुह्यति। भ्रश्यते स्वर्गाल्लोकात्। इत्यृतुमंण्डलानि। सूर्यमण्डलान्याख्यायिकाः। अत ऊर्ध्व॰ संनिर्वचनाः॥१९॥———[६]

आरोगो भ्राजः पटरंः पत्ङ्गः। स्वर्णरो ज्योतिषीमान् विभासः। ते अस्मै सर्वे दिवमांतपन्ति। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। कश्यंपोऽष्ट्रमः। स महामेरुं नं जहाति। तस्यैषा भवंति। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंतपुष्कुलं चित्रभानु। यस्मिन्थ्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्॥२०॥

तस्मिन् राजानमधिविश्रयेमिमृति। ते अस्मै सर्वे कश्यपाद्योतिर्लभुन्ते। तान्थ्सोमः कश्यपादिधिनिर्धमित। भ्रस्ताकर्मकृदिवैवम्। प्राणो जीवानीन्द्रियंजीवानि। सप्त शीर्षण्याः प्राणाः। सूर्या इंत्याचार्याः। अपश्यमहमेतान्थ्सप्त सूर्यानिति। पश्चकर्णो वाथ्स्यायनः। सप्तकर्णश्च प्राक्षिः॥२१॥

आनुश्रविक एव नौ कश्यंप इति। उभौ वेद्यिते। न हि शेकुमिव महामेरं गुन्तुम्। अपश्यमहमेथ्सूर्यमण्डलं परिवर्तमानम्। गार्ग्यः प्राणत्रातः। गच्छन्त महामेरुम्। एकं चाजहतम्। भ्राजपटरपतंङ्गा निहने। तिष्ठन्नांतपन्ति। तस्मादिह तिष्ठितपाः॥२२॥ अमुत्रेतरे। तस्मांदिहातिष्रितपाः। तेषांमेषा भवंति। सप्त सूर्या दिवमनुप्रविष्टाः। तान्-वेतिं पृथिभिदंक्षिणावान्ं। ते अस्मै सर्वे घृतमांतप्नि। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। सप्तर्त्विजः सूर्या इंत्याचार्याः। तेषांमेषा भवंति। सप्त दिशो नानांसूर्याः॥२३॥

स्प्त होतांर ऋत्विजंः। देवा आदित्यां ये स्प्ता तेभिः सोमाभी रक्षंण इति। तदंण्याम्नायः। दिग्भाज ऋतूँन् करोति। एतंयैवावृता सहस्रसूर्यताया इति वैशम्पायनः। तस्यैषा भवंति। यद्यावं इन्द्र ते श्तर श्तं भूमीः। उतस्युः। नत्वां विज्ञन्थ्सहस्रू सूर्याः॥२४॥

अनु न जातमष्ट रोदंसी इति। नानालिङ्गत्वादतूनां नानांसूर्यत्वम्। अष्टौ तु व्यवसिता इति। सूर्यमण्डलान्यष्टांत ऊर्ध्वम्। तेषांमेषा भवंति। चित्रं देवानामुदंगादनींकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुंषश्चेति॥२५॥

[6]

क्वेदमभ्रं निविशते। क्वायरं संवथ्सरो मिथः। क्वाहः क्वेयं देव रात्री। क्व मासा ऋतवः श्रिताः। अर्धमासां मुहूर्ताः। निमेषास्त्रंटिभिः सह। क्वेमा आपो निविश्वन्ते। यदीतों यान्ति सम्प्रंति। काला अफ्सु निविश्वन्ते। आपः सूर्ये सुमाहिताः॥२६॥ अभ्राण्यपः प्रंपद्यन्ते। विद्युथ्सूर्यं स्माहिता। अनवर्णे इंमे भूमी। इयं चांऽसौ च रोदंसी। किङ्स्विदत्रान्तंरा भूतम्। येनेमे विधृते उभे। विष्णुनां विधृते भूमी। इति वंध्सस्य वेदंना। इरावती धेनुमती हि भूतम्। सूयवसिनी मनुषे दशस्यै॥२७॥

व्यष्टभ्राद्रोदंसी विष्णंवेते। दाधर्थं पृथिवीम्भितां म्यूखैंः। किं तिद्वष्णोर्वलमाहुः। का दीप्तिः किं प्रायंणम्। एकों यद्धारंयद्देवः। रेजतीं रोद्सी उंभे। वाताद्विष्णोर्वलमाहुः। अक्षराँदीप्तिरुच्यंते। त्रिपदाद्धारंयद्देवः। यद्विष्णोरेक-मृत्तंमम्॥२८॥

अग्नयो वायंवश्चैव। एतदंस्य प्रायंणम्। पृच्छामि त्वा पंरं मृत्युम्। अवमं मध्यमश्चंतुम्। लोकं च पुण्यंपापानाम्। एतत्पृच्छामि सम्प्रंति। अमुमांहुः पंरं मृत्युम्। प्वमानं तु मध्यंमम्। अग्निरेवावंमो मृत्युः। चन्द्रमाश्चतुरुच्यंते॥२९॥

अनाभोगाः पेरं मृत्युम्। पापाः संयन्ति सर्वदा। आभोगास्त्वेवं संयन्ति। यत्र पुण्यकृतो जनाः। ततो मध्यममायन्ति। चतुमंग्निं च सम्प्रति। पृच्छामि त्वां पापकृतः। यत्र यातयते यमः। त्वं नस्तद्वह्मंन् प्रब्रूहि। यदि वैतथाऽसतो गृहान्॥३०॥

कुश्यपांदुदिताः सूर्याः। पापान्निर्घन्ति सर्वदा।

रोदस्योन्तर्देशेषु। तत्र न्यस्यन्ते वास्वैः। तेऽशरीराः प्रंपद्यन्ते। यथाऽपुंण्यस्य कर्मणः। अपाँण्यपादंकेशासः। तत्र तेऽयोनिजा जनाः। मृत्वा पुनर्मृत्युमांपद्यन्ते। अद्यमानाः स्वकर्मभिः॥३१॥

आशातिकाः क्रिमंय इव। ततः पूयन्ते वास्रवैः। अपैतं मृत्युं जंयित। य एवं वेदं। स खल्वैवं विद्वाह्मणः। दीर्घश्रृंत्तमो भवंति। कश्यंपस्यातिंथिः सिद्धगंमनः सिद्धागंमनः। तस्यैषा भवंति। आयस्मिन्थ्सप्त वास्रवाः। रोहंन्ति पूर्व्या रुहंः॥३२॥

ऋषिंर्ह दीर्घश्रुत्तंमः। इन्द्रस्य घर्मो अतिथिरित। कश्यपः पश्यंको भ्वति। यथ्सर्वं परिपश्यतीति सौक्ष्म्यात्। अथाग्नेरष्टपुंरुषस्य। तस्यैषा भवंति। अग्ने नयं सुपथां राये अस्मान्। विश्वानि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मञ्जंहराणमेनः। भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेमेति॥३३॥

[८]

अग्निश्च जातंवेदाश्च। सहोजा अंजिराप्रभुः। वैश्वानरो नंर्यापाश्च। पुङ्किरांधाश्च सप्तंमः। विसर्पेवाऽष्टंमोऽग्नीनाम्। एतेऽष्टौ वसवः, क्षिंता इति। यथर्त्ववाग्नेरर्चिर्वर्णविशेषाः। नीलार्चिश्च पीतकांर्चिश्चेति। अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैका-दशंस्रीकस्य। प्रभ्राजमाना व्यंवदाताः॥३४॥

याश्च वासुंकिवैद्युताः। रजताः पर्रुषाः श्यामाः। कपिला

अंतिलोहिताः। ऊर्ध्वा अवपंतन्ताश्च। वैद्युत इंत्येकादश। नैनं वैद्युतों हिन्स्ति। य एवं वेद। स होवाच व्यासः पाराश्चर्यः। विद्युद्वधमेवाहं मृत्युमैंच्छिमिति। न त्वकांम १ हन्ति॥३५॥

य एवं वेद। अथ गंन्धर्वगणाः। स्वानुभ्राट्। अङ्घारिकम्भारिः। हस्तः सुहंस्तः। कृशांनुर्विश्वावंसुः। मूर्धन्वान्थ्सूर्यवर्चाः। कृतिरित्येकादश गंन्धर्वगणाः। देवाश्च महादेवाः। रश्मयश्च देवां गर्गिरः॥३६॥

नैनं गरों हिन्स्ति। य एंवं वेद। गौरी मिंमाय सिल्लानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा परमे व्योमन्निति। वाचों विशेषणम्। अथ निगदंव्याख्याताः। ताननुर्क्रमिष्यामः। व्राहवंः स्वतपसः॥३७॥

विद्युन्मंहसो धूपंयः। श्वापयो गृहमेधांश्चेत्येते। ये चेमेऽशिंमिविद्विषः। पर्जन्याः सप्त पृथिवीमभिवंर्षन्ति। वृष्टिंभिरिति। एतयैव विभक्तिविंपरीताः। सप्तिभ्वां तैरुदीरिताः। अमूँ लोकानभिवंर्षन्ति। तेषांमेषा भवंति। समानमेतदुदंकम्॥३८॥

उचैत्यंवचाहंभिः। भूमिं पूर्जन्या जिन्वंन्ति। दिवं जिन्वन्त्यग्रय इति। यदक्षेरं भूतकृतम्। विश्वं देवा उपासंते। महर्षिमस्य गोप्तारम्। जमदंग्निमकुर्वत। जमदंग्निराप्यांयते। छन्दोभिश्चतुरुत्तरेः। राज्ञः सोमंस्य तृप्तासंः॥३९॥ ब्रह्मणा वीर्यावता। शिवा नेः प्रदिशो दिशेः। तच्छुं योरावृणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदे। शं चतुंष्पदे। सोमपा (३) असोमपा (३) इति निगदंव्याख्याताः॥४०॥

सहस्रवृदियं भूमिः। पुरं व्योम सहस्रवृत्। अश्विनां भुज्यूनास्त्या। विश्वस्यं जगतस्पंती। जाया भूमिः पंतिर्व्योम। मिथुनंन्ता अतुर्यथुः। पुत्रो बृहस्पंती रुद्रः। सुरमां इतिं स्त्रीपुमम्। शुक्रं वामन्यद्यंजुतं वामन्यत्।

विषुंरूपे अहंनी द्यौरिव स्थः॥४१॥

विश्वा हि माया अवंथः स्वधावन्तौ। भुद्रा वां पूषणाविह रातिरंस्तु। वासाँत्यौ चित्रौ जगंतो निधानौँ। द्यावांभूमी च्रथः स् सखांयौ। ताविश्वनां रासभाश्वा हवं मे। शुभस्पती आगतर् सूर्ययां सह। त्युग्रोह भुज्युमंश्विनोदमेघे। रियं न कश्चिन्ममृवां (२) अवांहाः। तमूहथुनौंभिराँत्मन्वतींभिः। अन्तरिक्षप्रिद्भिरपोदकाभिः॥४२॥

तिस्रः, क्षपस्त्रिरहांतिव्रजिद्धिः। नासंत्या भुज्युमूंहथुः पत्ङ्गेः। समुद्रस्य धन्वंन्नार्द्रस्यं पारे। त्रिभीरथैः श्तपिद्धिः षडिश्वेः। स्वितारं वितन्वन्तम्। अनुंबध्नाति शाम्बरः। आपपूर्षम्बरश्चेव। स्वितारेपसोऽभवत्। त्यः सुतृप्तं विंदित्वैव। बहुसोंम गिरं वंशी॥४३॥

अन्वेति तुग्रो वंक्रियान्तम्। आयसूयान्थ्सोमंतृपसुषु। स सङ्ग्रामस्तमों द्योऽत्योतः। वाचो गाः पिंपाति तत्। स तद्गोभिः स्तवां ऽत्येत्यन्ये। रक्षसांनन्विताश्चं ये। अन्वेति परिवृत्याऽस्तः। पुवमेतौ स्थों अश्विना। ते पुते द्युंः पृथिव्योः। अहंरहर्गर्भं दधाथे॥४४॥

तयोंरेतौ वृथ्सावंहोरात्रे। पृथिव्या अहंः। दिवो रात्रिः। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोंरेतौ वृथ्सौ। अग्निश्चांऽऽदित्यश्चं। रात्रेर्वृथ्सः। श्वेत आंदित्यः। अह्रोऽग्निः॥४५॥

ताम्रो अंरुणः। ता अविसृष्टौ। दम्पंती पुव भंवतः। तयोरेतौ वृथ्सौ। वृत्रश्चं वैद्युतश्चं। अग्नेर्वृत्रः। वैद्युतं आदित्यस्यं। ता अविसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोरेतौ वथ्सौ॥४६॥

उष्मा चं नीहारश्चं। वृत्रस्योष्मा। वैद्युतस्यं नीहारः। तौ तावेव प्रतिपद्येते। सेय र रात्रीं गुर्भिणीं पुत्रेण संवंसित। तस्या वा एतदुल्बणम्। यद्रात्रौं र्ष्मयः। यथा गोर्गिभिण्यां उल्बणम्। एवमेतस्यां उल्बणम्। प्रजियष्णुः प्रजया च पशुभिश्च भ्वति। य एवं वेद। एतमुद्यन्तमिपयंन्तं चेति। आदित्यः पुण्यंस्य वथ्सः। अथ पवित्राङ्गिरसः॥४७॥

[१०]

प्वित्रंवन्तः परिवाज्मासंते। पितेषां प्रत्नो अभिरंक्षति

व्रतम्। मृहः संमुद्रं वर्रणस्तिरोदेधे। धीरां इच्छेकुर्धरुणेष्वारभम्। प्वित्रं ते वितंतं ब्रह्मणस्पतें। प्रभुगित्रांणि पर्येषिविश्वतंः। अतंप्ततनूर्न तदामो अंश्रुते। शृतास् इद्वहंन्तस्तथ्समांशत। ब्रह्मा देवानांम्। असंतः सद्ये ततंक्षुः॥४८॥

ऋषंयः स्प्तात्रिश्च यत्। सर्वेऽत्रयो अंगस्त्यश्च। नक्षंत्रैः शङ्कृंतोऽवसन्। अथं सवितुः श्यावाश्वस्याऽवर्तिकामस्य। अमी य ऋक्षा निहिंतास उचा। नक्तं दर्दश्चे कुहंचिद्दिवेयुः। अदंब्यानि वर्रुणस्य व्रतानि। विचाकशंचन्द्रमा नक्षंत्रमेति। तथ्संवितुवरिंण्यम्। भर्गो देवस्यं धीमहि॥४९॥

धियो यो नंः प्रचोदयाँत्। तथ्संवितुर्वृणीमहे। वयं देवस्य भोजंनम्। श्रेष्ठ सर्वधातंमम्। तुरं भगंस्य धीमहि। अपांगूहत सविता तृभीन्। सर्वांन्दिवो अन्धंसः। नक्तं तान्यंभवन्दृशे। अस्थ्यस्थ्रा सम्भंविष्यामः। नाम् नामैव नाम में॥५०॥

नपुश्संकं पुमाङ्क्यंस्मि। स्थावंरोऽस्म्यथ् जङ्गंमः। यजेऽयिक्षे यष्टाहे चं। मयां भूतान्यंयक्षत। पृशवों ममं भूतानि। अनूबन्ध्योऽस्म्यंहं विभुः। स्त्रियंः स्तीः। ता उंमे पुश्स आंहुः। पश्यंदक्षण्वान्नविचेतद्न्यः। कृविर्यः पुत्रः स इमा चिकेत॥५१॥

यस्ता विजानाथ्संवितुः पितासंत्। अन्धो मणिमंविन्दत्।

तमनङ्गुलिरावंयत्। अग्रीवः प्रत्यंमुश्चत्। तमजिह्वा असश्चंत। ऊर्ध्वमूलमंवाक्छाखम्। वृक्षं यो वेद सम्प्रंति। न स जातु जनः श्रद्धध्यात्। मृत्युर्मा मार्यादितिः। हसितः रुदितं गीतम्॥५२॥

वीर्णापणवलासितम्। मृतं जीवं चं यत्किश्चित्। अङ्गानिं स्नेव विद्धिं तत्। अतृष्यु इस्तृष्यंध्यायत्। अस्माञ्जाता में मिथू चरत्रं। पुत्रो निर्ऋत्यां वैदेहः। अचेतां यश्च चेतनः। स् तं मणिमंविन्दत्। सोऽनङ्गुलिरावंयत्। सोऽग्रीवः प्रत्यंमुश्चत्॥५३॥

सोऽजिह्वो असश्चंता नैतमृषिं विदित्वा नगरं प्रविशेत्। यदि प्रविशेत्। मिथौ चरित्वा प्रविशेत्। तथ्सम्भवंस्य व्रतम्। आतमग्ने रथं तिष्ठ। एकाँश्वमेक्योजनम्। एकचक्रमेक्धुरम्। वातध्रांजिगृतिं विभो। न रिष्यतिं न व्यथते॥५४॥

नास्याक्षो यातु सर्ज्ञति। यच्छ्वेतांन् रोहिंता इश्चाग्नेः। र्थे युंकाऽधितिष्ठंति। एकया च दशिश्चं स्वभूते। द्वाभ्यामिष्टये विश्रेशत्या च। तिसृभिश्च वहसे त्रिश्रेशता च। नियुद्धिर्वायविह तां विमुश्च॥५५॥

[११]

आतंनुष्व प्रतंनुष्व। उद्धमाऽऽधंम् सन्धंम। आदित्ये चन्द्रंवर्णानाम्। गर्भमाधेहि यः पुमान्। इतः सिक्तः सूर्यगतम्। चन्द्रमंसे रसं कृधि। वारादं जनयाग्रेऽग्निम्। य एको रुद्र उच्यंते। असङ्ख्याताः संहस्राणि। स्मर्यते न च दृश्यंते॥५६॥

पुवमेतं निंबोधत। आ मन्द्रैरिंन्द्र हरिंभिः। याहि मयूररोमिभः। मा त्वा केचिन्नियेमुरिंन्न पाशिनः। द्धन्वेव ता इंहि। मा मन्द्रैरिंन्द्र हरिंभिः। यामि मयूररोमिभः। मा मा केचिन्नियेमुरिंन्न पाशिनः। नि्धन्वेव तां (२) इंमि। अणुभिश्च महद्भिश्च॥५७॥

निघृष्वैरस्मायुंतैः। कालैर्हरित्वंमापृत्तेः। इन्द्राऽऽयांहि सहस्रयुक्। अग्निर्विभ्राष्टिंवसनः। वायुः श्वेतंसिकद्रुकः। संवथ्सरो विषूवर्णैः। नित्यास्तेऽनुचंरास्त्व। सुब्रह्मण्योश सुब्रह्मण्योश सुंब्रह्मण्योम्। इन्द्राऽऽगच्छ हरिव आगच्छ मेधातिथेः। मेष वृषणश्वंस्य मेने॥५८॥

गौरावस्कन्दिन्नहल्यांये जार। कौशिकब्राह्मण गौतमंब्रुवाण। अरुणाश्वां इहागंताः। वसंवः पृथिविक्षितंः। अष्टौदिग्वासंसोऽग्नयंः। अग्निश्च जातवेदांश्चेत्येते। ताम्राश्वांस्ताम्ररथाः। ताम्रवर्णांस्तथाऽसिताः। दण्डहस्ताः खाद्ग्दतः। इतो रुद्राः पराङ्गताः॥५९॥

उक्त इस्थानं प्रमाणं च पुर् इत। बृह्स्पतिश्च सिवता च। विश्वरूपैरिहाऽऽगंताम्। रथेनोदकवर्त्मना। अपसुषां इति तद्वंयोः। उक्तो वेषों वासार्धिस च। कालावयवानामितः प्रतीच्या। वासात्यां इत्यश्विनोः। कोऽन्तरिक्षे शब्दं करोतीति। वासिष्टो रौहिणो मीमा रसां चुके। तस्यैषा भवंति। वाश्रेवं विद्युदितिं। ब्रह्मण उदरणमिस। ब्रह्मण उदीरणमिस। ब्रह्मण आस्तरंणमिस। ब्रह्मण उपस्तरंणमिस॥६०॥

-[१२]

[अपंक्रामत गर्भिण्यंः]

अष्टयोनीम्ष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्रीम्मां महींम्। अहं वेद् न मे मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयोन्यृष्टपुंत्रम्। अष्टपंदिदम्नतिरक्षम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयोनीम्ष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्रीम्मूं दिवम्॥६१॥

अहं वेद न में मृत्युः। न चामृंत्युर्घाऽऽहंरत्। सुत्रामाणं महीमू षु। अदितिर्द्यौरदितिर्न्तिरेक्षम्। अदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वं देवा अदितिः पश्चजनाः। अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्। अष्टो पुत्रासो अदितेः। ये जातास्तुन्वः पिरं। देवां (२) उपप्रैथ्सप्तिभेः॥६२॥

पुरा मार्ताण्डमास्यंत्। सप्तिनिः पुत्रेरिदंतिः। उपप्रैत्पूर्वं युगम्। प्रजाये मृत्यवे तंत्। पुरा मार्ताण्डमाभरदिति। ताननुक्रमिष्यामः। मित्रश्च वरुणश्च। धाता चार्यमा च। अश्रश्च भगश्च। इन्द्रश्च विवस्वाईश्चेत्येते। हिर्ण्यगर्भी हुर्सः शुंचिषत्। ब्रह्मंजज्ञानं तिदत्पदिमिति। गर्भः प्रांजापत्यः। अथ पुरुषः सप्त पुरुषः॥६३॥

[यथास्थानं गीर्भण्यः]

[१३]

योऽसौ तपत्रुदेति। स सर्वेषां भूतानाँ प्राणानादायोदेति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायोदंगाः। असौ यौऽस्तमेति। स सर्वेषां भूतानाँ प्राणानादायास्तमेति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायास्तंङ्गाः। असौ य आपूर्यति। स सर्वेषां भूतानाँ प्राणैरापूर्यति॥६४॥

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरापूरिष्ठाः। असौ योऽपक्षीयंति। स सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंक्षीयति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंक्षेष्ठाः। अमूनि नक्षेत्राणि। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोथ्मृंपत॥६५॥

ड्रमे मासाँश्चार्धमासाश्चं। सर्वेषां भूतानाँ प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपिन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममे प्राणैरपंप्रसृपत् मोथ्संपत। इम ऋतवंः। सर्वेषां भूतानाँ प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपिन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोथ्संपत। अय संवथ्सरः। सर्वेषां भूतानाँ प्राणैरपंप्रसर्पति चोथ्संपित च॥६६॥ मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृप् मोथ्मृंप। इदमहंः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पति चोथ्मंपित च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृप् मोथ्मृंप। इय॰ रात्रिः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पति चोथ्मंपित च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृप् मोथ्मृंप। ॐ भूर्भुवः स्वंः। एतद्वो मिथुनं मा नो मिथुन॰ रीढ्वम्॥६७॥

[88]

अथाऽऽदित्यस्याष्टपुंरुष्स्य। वसूनामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रुद्राणामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। आदित्यानामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। सताः सत्यानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अभिधून्वतांमभिष्नताम्। वातवंतां मुरुताम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। ऋभूणामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। विश्वेषां देवानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। संवथ्सरंस्य स्वितः। आदित्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। संवथ्सरंस्य स्वितः। आदित्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भवः स्वः। रश्मयो वो मिथुनं मा नो मिथुनः रीद्वम्॥६८॥

-[१५]

आरोगस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। भ्राजस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पटरस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पतङ्गस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। स्वर्णरस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ज्योतिषीमतस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। विभासस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। कश्यपस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। आपो वो मिथुनं मा नो मिथुनं रीढ्वम्॥६९॥———[१६]

अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैकादशंस्रीकृस्य। प्रभ्राजमानानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। व्यवदातानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। वासुिकवैद्युतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रजतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। श्यामानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। किपलानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अतिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अतिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अध्यानाः रुद्राणाः

अवपतन्तानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। वैद्युतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। प्रभ्राजमानीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। व्यवदातीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। वासुकिवेद्युतीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। रजतानाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। श्यामानाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। कपिलानाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। अतिलोहितीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। अतिलोहितीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। अधिलोहितीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। अधिलोहितीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा अथाग्नेरष्टपुंरुष्स्य। अग्नेः पूर्विदश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। जातवेदस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। सहोजसो दक्षिणदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। अजिराप्रभव उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। वैश्वानरस्यापरदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। नर्यापस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पङ्किराधस उदग्दिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। विसर्पिण उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। दिशो वो मिथुनं मा नो मिथुन रोह्वम्॥७२॥

[86]

दक्षिणपूर्वस्यां दिशि विसंपीं नुरकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। दक्षिणापरस्यां दिश्यविसंपीं नुरकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरपूर्वस्यां दिशि विषादी नुरकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरापरस्यां दिश्यविषादी नुरकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। आ यस्मिन्थ्सप्त वासवा इन्द्रियाणि शतक्रतंवित्येते॥७३॥

-[१९]

इन्द्रघोषा वो वसुंभिः पुरस्तादुपंदधताम्। मनीजवसो वः पितृभिदिक्षणत उपंदधताम्। प्रचेता वो रुद्रैः पृश्चादुपंदधताम्। विश्वकर्मा व आदित्यैरुत्तरुत उपंदधताम्। त्वष्टां वो रूपैरुपरिष्टादुपंदधताम्। संज्ञानं वः पंश्चादिति। आदित्यः सर्वोऽग्निः पृथिव्याम्। वायुर्न्तरिक्षे। सूर्यो दिवि। चन्द्रमां दिक्षु। नक्षंत्राणि स्वलोके। एवा ह्यंव। एवा ह्यंग्ने। एवा हि वांयो। एवा हींन्द्र। एवा हि पूंषन्। एवा हि देवाः॥७४॥

[२०]

आपंमापाम्पः सर्वाः। अस्माद्स्मादितोऽम्तः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्करिर्द्धया। वाय्वश्वां रश्मिपतंयः। मरींच्यात्मानो अद्रुहः। देवीर्भुवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। महसो महसः स्वः॥७५॥

देवीः पंजन्यसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। अपाश्चंिष्णम्पा रक्षः। अपाश्चंिष्णम्पा रघम्। अपाष्ट्रामपंचावर्तिम्। अपंदेवीरितो हित। वर्ज्ञं देवीरजीता ॥ भवंनं देवसूर्वरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत॥ ७६॥

भृद्रं कर्णंभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैं स्तुष्टुवा र संस्तृनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। केतवो अर्रुणासश्च। ऋष्यो वात्रंरश्नाः। प्रतिष्ठा श्वतधां हि। सुमाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु।

दिव्या आप् ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥७७॥

[२१]

योऽपां पुष्पं वेदं। पुष्पंवान् प्रजावांन् पशुमान् भंवति। चन्द्रमा वा अपां पुष्पम्। पुष्पंवान् प्रजावांन् पशुमान् भंवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। अग्निर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योऽग्नेरायतंनं वेदं॥७८॥

आयतंनवान् भवति। आपो वा अग्नेरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। वायुर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो वायोरायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति॥७९॥

आपो वै वायोरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। असौ वै तपंत्रपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योऽमुष्य तपंत आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वा अमुष्य तपंत आयतंनम्॥८०॥

आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। चन्द्रमा वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यश्चन्द्रमंस आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै चन्द्रमंस आयतंनम्। आयतंनवान् भवति॥८१॥ य एवं वेदे। योऽपामायतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। नक्षेत्राणि वा अपामायतेनम्। आयतेनवान् भवति। यो नक्षेत्राणामायतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। आपो वै नक्षेत्राणामायतेनम्। आयतेनवान् भवति। य एवं वेदे॥८२॥

योऽपामायतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। पूर्जन्यो वा अपामायतेनम्। आयतेनवान् भवति। यः पूर्जन्यंस्याऽऽयतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। आपो वै पूर्जन्यंस्याऽऽयतेनम्। आयतेनवान् भवति। य पृवं वेदे। योऽपामायतेनं वेदे॥८३॥

आयतंनवान् भवति। संवथ्सरो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः संवथ्सरस्याऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै संवथ्सरस्याऽऽयतंनम्। आयतंनवान् भवति। य पृवं वेदं। योंऽपसु नावं प्रतिष्ठितां वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥८४॥

ड्रमे वै लोका अपसु प्रतिष्ठिताः। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। अपार रस्मुदंयरसन्। सूर्ये शुक्रर स्मार्भृतम्। अपार रसंस्य यो रसंः। तं वो गृह्णाम्युत्तममितिं। इमे वै लोका अपार रसंः। तेऽमुष्मिन्नादित्ये स्मार्भृताः। जानुद्ग्नीमृत्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरियत्वा गुल्फद्ग्नम्॥८५॥

पुष्करपर्णैः पुष्करदण्डैः पुष्करैश्चं सङ्स्तीर्य। तस्मिन्वि-हायसे। अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मौत्प्रणीतेऽयमुग्निश्चीयतें। साप्रणीतेऽयमुफ्सु ह्ययंं चीयतें। असौ भुवंनेऽप्यनांहिताग्निरेताः। तम्भितं एता अबीष्टंका उपंदधाति। अग्निहोत्रे दंर्शपूर्णमासयोः। पृशुबन्धे चातुर्मास्येषुं॥८६॥

अथो आहुः। सर्वेषु यज्ञऋतुष्विति। एतद्धं स्मृ वा आहुः शण्डिलाः। कमृग्निं चिनुते। सृत्रियमृग्निं चिन्वानः। संवथ्सरं प्रत्यक्षेण। कमृग्निं चिनुते। सावित्रमृग्निं चिन्वानः। अमुमादित्यं प्रत्यक्षेण। कमृग्निं चिनुते॥८७॥

नाचिकेतम्भिं चिन्वानः। प्राणान्प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिन्ते। चातुर्होत्रियम्भिं चिन्वानः। ब्रह्मं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिन्ते। वैश्वसृजम्भिं चिन्वानः। शरीरं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिन्ते। उपानुवाक्यमाशुम्भिं चिन्वानः॥८८॥

ड्मॉं ह्यों कान्य्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिन्ते। ड्ममां रूणकेतुकम् ग्निं चिन्वान इति। य प्वासौ। ड्तश्चाऽम् तंश्चाऽव्यतीपाती। तिमितिं। यौं उग्नेर्मिथूया वेदं। मिथुन्वान्नेवति। आपो वा अग्नेर्मिथूयाः। मिथुन्वान्नेवति। य पृवं वेदं॥८९॥—————[२२]

आपो वा इदमांसन्थ्सिल्लम्व। स प्रजापंतिरेकः पुष्करपूर्णे समंभवत्। तस्यान्तुर्मनंसि कामः समंवर्तत। इदः सृजेयमिति। तस्माद्यत्पुरुषो मनंसाऽभिगच्छंति। तद्वाचा वंदति। तत्कर्मणा करोति। तदेषाऽभ्यनूक्ता। कामस्तदग्रे समंवर्तताधि। मनंसो रेतः प्रथमं यदासीत्॥९०॥ स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषेति। उपैनन्तदुपंनमित। यत्कांमो भवंति। य एवं वेदं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तृत्वा। शरीरमधूनुत। तस्य यन्मा १ समासीत्। ततोऽरुणाः केतवो वातंरश्ना ऋषंय उदंतिष्ठन्॥९१॥

ये नखाः। ते वैखान्साः। ये वालाः। ते वालखिल्याः। यो रसः। सोऽपाम्। अन्तर्तः कूर्मं भूतः सर्पन्तम्। तमंब्रवीत्। मम् वैत्वङ्गार्सा। समंभूत्॥९२॥

नेत्यंब्रवीत्। पूर्वमेवाहिम्हास्मितिं। तत्पुरुंषस्य पुरुष्त्वम्। स सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। भूत्वोदंतिष्ठत्। तमंब्रवीत्। त्वं वै पूर्वर्रं समंभूः। त्विमदं पूर्वः कुरुष्वेतिं। स इत आदायाऽऽपः॥९३॥

अञ्चलिनां पुरस्तांदुपादंधात्। एवाह्येवेतिं। ततं आदित्य उदंतिष्ठत्। सा प्राची दिक्। अथांरुणः केतुदंक्षिणत उपादंधात्। एवाह्यम् इतिं। ततो वा अग्निरुदंतिष्ठत्। सा दक्षिणा दिक्। अथांरुणः केतुः पृश्चादुपादंधात्। एवा हि वायो इतिं॥९४॥

ततों वायुरुदंतिष्ठत्। सा प्रतीची दिक्। अथांरुणः केतुरुत्तर्त उपादंधात्। एवाहीन्द्रेति। ततो वा इन्द्र उदंतिष्ठत्। सोदींची दिक्। अथांरुणः केतुर्मध्यं उपादंधात्। एवा हि पूष्त्रिति। ततो वै पूषोदंतिष्ठत्। सेयं दिक्॥९५॥

अथांकृणः केतुकृपरिष्टादुपादंधात्। एवा हि देवा इति। ततो देवमनुष्याः पितरंः। गृन्धुर्वापस्रस्श्रोदंतिष्ठन्। सोध्वा दिक्। या विप्रुषो विपरापतन्। ताभ्योऽसुंरा रक्षा रेसि पिशाचाश्रोदंतिष्ठन्। तस्मात्ते पराभवन्। विप्रुङ्ग्रो हि ते समंभवन्। तदेषाऽभ्यनूंक्ता॥९६॥

आपों ह् यह्नंहृतीर्गर्भमायत्रं। दक्ष्वं दधांना जनयंन्तीः स्वयम्भुम्। ततं इमेध्यसृंज्यन्त् सर्गाः। अद्भो वा इदश् सम्भूत्। तस्मादिदश् सर्वं ब्रह्मं स्वयम्भिवतिं। तस्मादिदश् सर्वश् शिथिलम्वाऽध्रुवंमिवाभवत्। प्रजापंतिर्वाव तत्। आत्मनाऽऽत्मानं विधायं। तदेवानुप्राविशत्। तदेषाऽभ्यनूक्ता॥९७॥

विधायं लोकान् विधायं भूतानि। विधाय सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं। आत्मनाऽऽत्मानंम्भि संविवेशेति। सर्वमेवेदमा्ष्वा। सर्वमवरुद्धं। तदेवानुप्रविशति। य एवं वेदं॥९८॥

-[२३]

चतुंष्टय्य आपों गृह्णाति। चत्वारि वा अपाः रूपाणि। मेघों विद्युत्। स्तुन्यिब्रुर्वृष्टिः। तान्येवावंरुन्थे। आतपंति वर्ष्यां गृह्णाति। ताः पुरस्तादुपंदधाति। पृता वै ब्रह्मवर्चस्या आपंः। मुख्त एव ब्रह्मवर्च्समवंरुन्धे। तस्मान्मुख्तो ब्रह्मवर्च्सितंरः॥९९॥

कूप्यां गृह्णाति। ता दंक्षिण्त उपंदधाति। एता वै तेंज्ञस्विनीरापंः। तेजं एवास्यं दक्षिण्तो दंधाति। तस्माद्दक्षिणोऽधंस्तेज्ञस्वितंरः। स्थावरा गृंह्णाति। ताः पश्चादुपंदधाति। प्रतिष्ठिता वै स्थावराः। पश्चादेव प्रतितिष्ठति। वहंन्तीर्गृह्णाति॥१००॥

ता उत्तर्त उपंदधाति। ओर्जसा वा एता वहंन्तीरिवोद्गंतीरिव आकूर्जतीरिव धावंन्तीः। ओर्ज एवास्यौत्तर्तो दंधाति। तस्मादुत्तरोऽर्धं ओज्स्वितंरः। सम्भार्या गृंह्णाति। ता मध्य उपंदधाति। इयं वै संम्भार्याः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। पुल्वल्या गृंह्णाति। ता उपरिष्टादुपादंधाति॥१०१॥

असौ वै पंल्वयाः। अमुष्यांमेव प्रतितिष्ठति। दिक्षूपंदधाति। दिक्षु वा आपः। अत्रुं वा आपः। अन्द्र्यो वा अत्रं जायते। यदेवान्द्र्योऽत्रृं जायते। तदवंरुन्थे। तं वा एतमरुणाः केतवो वातंरश्ना ऋषयोऽचिन्वन्। तस्मांदारुणकेतुकः॥१०२॥

तदेषाऽभ्यनूँक्ता। केतवो अर्रुणासश्च। ऋष्यो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठा श्रात्यां हि। समाहितासो सहस्रधायंस्मिति। श्रातशि सहस्रंशश्च प्रतितिष्ठति। य एतम्भिं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०३॥

[૨૪]

जानुद्धीमुंत्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरयित। अपार संर्वत्वार्य। पुष्करपूर्णर रुकां पुरुषमित्युपंदधाति। तपो वै पुष्करपूर्णम्। सत्यर रुकाः। अमृतं पुरुषः। एतावृद्वा वाऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्ति॥१०४॥

तदवंरुन्थे। कूर्ममुपंदधाति। अपामेव मेधमवंरुन्थे। अथौं स्वर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्ये। आपंमापामपः सर्वाः। अस्मा-दस्मादितोऽमुतः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्क्ररिंधा इति। वाय्वश्वां रिमपत्यः। लोकं पृणच्छिद्रं पृण॥१०५॥

यास्तिस्रः पंरम्जाः। इन्द्रघोषा वो वसुंभिरेवाह्येवेतिं। पश्च-चित्रंय उपंदधाति। पाङ्कोऽग्निः। यावांनेवाग्निः। तं चिंनुते। लोकं पृणया द्वितीयामुपंदधाति। पश्चं पदा वै विराट्। तस्या वा इयं पादः। अन्तरिक्षं पादः। द्यौः पादः। दिशः पादः। प्रोरंजाः पादः। विराज्येव प्रतितिष्ठति। य पृतमृग्निं चिंनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०६॥

.[૨५]

अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। तम्भित पृता अबीष्टका उपंदधाति। अग्निहोत्रे दंर्शपूर्णमासयौः। पृशुब्न्धे चांतुर्मास्येषुं। अथो आहुः। सर्वेषु यज्ञकृतुष्वितिं। अथे ह स्माहारुणः स्वांयम्भुवंः। सावित्रः सर्वोऽग्निरित्यनंनुषङ्गं मन्यामहे। नाना वा पृतेषां वीर्याणि। कम्ग्निं चिनुते॥१०७॥ सत्त्रियम्ग्निं चिन्वानः। कम्ग्निं चिनुते। सावित्रम्गिं

चिन्वानः। कम्ग्निं चिन्ते। नाचिकेतम्ग्निं चिन्वानः। कम्ग्निं चिन्ते। चातुर्होत्रियम्ग्निं चिन्वानः। कम्ग्निं चिन्ते। वैश्वसृजम्ग्निं चिन्वानः। कम्ग्निं चिन्ते॥१०८॥

उपानुवाक्यंमाशुम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। इममारुणकेतुकम्भिं चिंन्वान इतिं। वृषा वा अभिः। वृषांणौ सङ्स्फालयेत्। ह्न्येतांस्य युज्ञः। तस्मान्नानुषज्यः। सोत्तरवेदिषुं ऋतुषुं चिन्वीत। उत्तरवेद्याङ् ह्यंभिश्चीयते। प्रजाकांमश्चिन्वीत॥१०९॥

प्राजापत्यो वा पृषौंऽग्निः। प्राजापत्याः प्रजाः। प्रजावांन् भवति। य पृवं वेदं। पृशुकांमश्चिन्वीत। संज्ञानं वा पृतत् पंशूनाम्। यदापंः। पृशूनामेव संज्ञानेऽग्निं चिन्ते। पृशुमान् भवति। य पृवं वेदं॥११०॥

वृष्टिंकामश्चिन्वीत। आपो वै वृष्टिः। पूर्जन्यो वर्ष्को भवति। य एवं वेदं। आमयावी चिन्वीत। आपो वै भेषजम्। भेषजमेवास्मैं करोति। सर्वमायुरिति। अभिचर श्रीक्षेन्वीत। वज्रो वा आपंः॥१११॥

वर्त्रमेव भ्रातृं व्येभ्यः प्रहं रित। स्तृणुत एनम्। तेर्जन्कामो यशंस्कामः। ब्रह्मवर्चसकामः स्वर्गकामश्चिन्वीत। एतावृद्वा वाँऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्ति। तदवंरुन्थे। तस्यैतद्वृतम्। वर्षित न धांवेत्॥११२॥

अमृतं वा आपंः। अमृत्स्यानंन्तरित्यै। नाफ्सु मूत्रंपुरीषं

कुर्यात्। न निष्ठीवेत्। न विवसनः स्नायात्। गृह्यो वा एषौऽग्निः। एतस्याग्नेरनंतिदाहाय। न पुंष्करपूर्णानि हिरंण्यं वाऽधितिष्ठैत्। एतस्याग्नेरनंभ्यारोहाय। न कूर्मस्याश्नीयात्। नोदकस्याघातुंकान्येनंमोदकानिं भवन्ति। अघातुंका आपः। य एतम्ग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥११३॥

.[૨૬]

ड्मानुंकं भुंबना सीषधेम। इन्द्रेश्च विश्वें च देवाः। यज्ञं चं नस्तन्वं चं प्रजां चं। आदित्यैरिन्द्रेः सह सीषधातु। आदित्यैरिन्द्रः सगंणो मुरुद्धिः। अस्माकं भूत्विवृता तनूनौम्। आप्नंबस्व प्रप्नंबस्व। आण्डीभंवज् मा मुहुः। सुखादीन्दुंःखनिधनाम्। प्रतिमुश्चस्व स्वां पुरम्॥११४॥

मरींचयः स्वायम्भुवाः। ये शंरीराण्यंकल्पयन्। ते ते देहं कंल्पयन्तु। मा चं ते ख्यास्मं तीरिषत्। उत्तिष्ठत् मा स्वंप्ता अग्निमिंच्छध्वं भारताः। राज्ञः सोमंस्य तृप्तासंः। सूर्येण स्युजोषसः। युवां सुवासाः। अष्टाचंक्रा नवंद्वारा॥११५॥

देवानां पूर्ययोध्या। तस्यार् हिरण्मयः कोशः। स्वर्गो लोको ज्योतिषाऽऽवृंतः। यो वै तां ब्रह्मणो वेद। अमृतेनाऽऽवृतां पुरीम्। तस्मै ब्रह्म चं ब्रह्मा च। आयुः कीर्तिं प्रजां दंदः। विभाजनानार् हरिणीम्। यशसां सम्परीवृंताम्। पुर्रं हिरण्मयीं ब्रह्मा॥११६॥

विवेशांऽपुराजिता। पराङेत्यंज्यामुयी। पराङेत्यंनाशुकी।

इह चांमुत्रं चान्वेति। विद्वान्देवासुरानुंभ्यान्। यत्कुंमा्री मन्द्रयंते। यद्योषिद्यत्पंतिव्रतां। अरिष्टं यत्किं चं क्रियतें। अग्निस्तदनुंवेधति। अशृतांसः शृंतासुश्च॥११७॥

युज्वानो येऽप्यंयुज्वनंः। स्वंर्यन्तो नापेंक्षन्ते। इन्द्रंमृग्निं चं ये विदुः। सिकंता इव संयन्ति। रिष्मिभिः समुदीरिताः। अस्माल्लोकादंमुष्माच। ऋषिभिरदात्पृश्निभिः। अपंत वीत वि चं सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अहोभिरद्भिर्त्तुरक्ति। भिर्व्यक्तम्॥११८॥

यमो दंदात्ववसानंमस्मै। नृ मुंणन्तु नृपात्वर्यः। अकृष्टा ये च कृष्टंजाः। कुमारीषु कनीनीषु। जारिणीषु च ये हिताः। रेतः पीता आण्डंपीताः। अङ्गारेषु च ये हुताः। उभयान् पुत्रंपौत्रकान्। युवेऽहं यमराजंगान्। शतमिन्नु श्ररदः॥११९॥

अदो यद्वर्ह्म विल्बम्। पितृणां चं यमस्यं च। वर्रुणस्याश्विनोर्ग्नेः। म्रुतां च विहायसाम्। कामुप्रयवणं मे अस्तु। स ह्येवास्मि स्नातनः। इति नाको ब्रह्मिश्रवो रायो धनम्। पुत्रानापो देवीरिहाऽऽहित॥१२०॥

-[२७]

विशींर्ष्णीं गृध्रंशीर्ष्णीं च। अपेतों निर्ऋति हैथः। परिबाध श्वेतकुक्षम्। निजङ्क श्रे शब्लोदेरम्। स् तान् वाच्यायया सह। अग्ने नाशंय सन्दर्शः। ईर्ष्यासूये बुंभुक्षाम्। मन्युं कृत्यां चे दीधिरे। रथेन किश्शुकावंता। अग्ने नाशंय

सन्दर्शः॥१२१॥

पूर्जन्यांय प्रगांयत। दिवस्पुत्रायं मीढुषें। स नों यवसंमिच्छतु। इदं वचंः पूर्जन्यांय स्वराजें। हृदो अस्त्वन्तंरन्तद्यंयोत। मयोभूर्वातों विश्वकृष्टयः सन्त्वस्मे। सुपिप्पला ओषंधीर्देवगोपाः। यो गर्भमोषंधीनाम्। गवांं

कृणोत्यर्वताम्। पर्जन्यः पुरुषीणांम्॥१२२॥

[૨९]

पुनर्मामैत्विन्द्रियम्। पुन्रायुः पुन्भर्गः। पुन्र्र्वाह्मणमेतु
मा। पुन्र्र्विणमेतु मा। यन्मेऽद्य रेतः पृथिवीमस्कान्।
यदोषंधीरप्यसंर्द्यदापः। इदं तत्पुन्रादंदे। दीर्घायुत्वाय
वर्चसे। यन्मे रेतः प्रसिच्यते। यन्म आजांयते पुनः। तेनं
माम्मृतं कुरु। तेनं सुप्रजसं कुरु॥१२३॥

₹0]

अद्यस्तिरोऽधाऽजांयत। तवं वैश्रवणः संदा। तिरोंऽधेहि सप्त्नान्नंः। ये अपोऽश्नन्तिं केचन। त्वाष्ट्रीं मायां वैंश्रवणः। रथ सहस्रवन्धुंरम्। पुरुश्चऋ सहस्राश्वम्। आस्थायायाहि नो बुलिम्। यस्मैं भूतानिं बुलिमावंहन्ति। धनं गावो हस्ति हिरंण्यमश्वानं॥१२४॥

असाम सुमृतौ युज्ञियंस्य। श्रियं बिभृतोऽन्नंमुखीं विराजम्। सुदर्शने च ऋौश्चे च। मैनागे च महागिरौ। शृतद्वाट्टारंगमुन्ता। सुरहार्यं नगरं तव। इति मन्नाः। कल्पोंऽत ऊर्ध्वम्। यदि बलि॰ हरेंत्। हिर्ण्यनाभयें वितुदयें कौबेरायायं बंलिः॥१२५॥

सर्वभूताधिपतये नंम इति। अथ बलि १ हत्वोपंतिष्ठेत। क्षुत्रं क्षुत्रं वैश्वणः। ब्राह्मणां वयु स्मः। नर्मस्ते अस्तु मा मां हि १ सीः। अस्मात्प्रविश्यान्नंमद्धीति। अथ तमग्निमांदधीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रंयु त्रीत। तिरोऽधा भूः। तिरोऽधा भुवंः॥१२६॥

तिरोऽधाः स्वंः। तिरोऽधा भूर्भुवः स्वंः। सर्वेषां लोकानामाधिपत्यं सीदेति। अथ तमग्निंमिन्धीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुश्चीत। तिरोऽधा भूः स्वाहाँ। तिरोऽधा भुवः स्वाहाँ। तिरोऽधाः स्वंः स्वाहाँ। तिरोऽधाः भूर्युः स्वाहाँ। यस्मिन्नस्य काले सर्वा आहुतीर्हुतां भवेयुः॥१२७॥

अपि ब्राह्मणंमुखीनाः। तस्मिन्नहः काले प्रंयुञ्जीत। परंः सुप्तजंनाद्वेपि। मास्म प्रमाद्यन्तंमाध्यापयेत्। सर्वार्थाः सिद्धान्ते। य एवं वेद। क्षुध्यन्निदंमजानताम्। सर्वार्थाः नं सिद्धान्ते। यस्ते विघातुंको भ्राता। ममान्तर्ह्हंदये श्रितः॥१२८॥

तस्मां इममग्रपिण्डं जुहोमि। स में ऽर्थान्मा विवंधीत्। मिय स्वाहाँ। राजाधिराजायं प्रसह्यसाहिनें। नमों वयं वैंश्रवणायं कुर्महे। स में कामान्कामकामाय मह्यम्। कामेश्वरो वैंश्रवणो दंदातु। कुबेरायं वैश्रवणायं। महाराजाय नर्मः। केतवो अरुणासश्च। ऋषयो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठाः श्तथां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप् ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥१२९॥

.[३१]

संवथ्सरमेतंद्वतं चरेत्। द्वौ वा मासौ। नियमः संमासेन। तस्मिन्नियमंविशेषाः। त्रिषवणमुदकोपस्पूर्शी। चतुर्थकालपानंभक्तः स्यात्। अहरहर्वा भैक्षंमश्रीयात्। औदुम्बरीभिः समिद्धिरिग्नं परिचरेत्। पुनर्मामैक्त्विन्द्रियमि-त्येतेनानुंवाकेन। उद्धृतपरिपूताभिरद्भिः कार्यं कुर्वीत॥१३०॥

अंसश्चयवान्। अग्नये वायवे सूर्याय। ब्रह्मणे प्रंजापृतये। चन्द्रमसे नेक्षत्रेभ्यः। ऋतुभ्यः संवंध्सराय। वरुणायारुणायेति व्रंतहोमाः। प्रवर्ग्यवंदादेशः। अरुणाः काण्डऋषयः। अरण्ये-ऽधीयीरन्। भद्रं कर्णेभिरिति द्वे जिपत्वा॥१३१॥

महानाम्रीभिरुदक र सं इस्पृश्यः। तमाचाँयाँ द्द्यात्। शिवा नः शन्तमेत्योषधीरालुभते। सुमृडीकंति भूमिम्। एवमंपवृगें। धेनुर्दक्षिणा। करसं वासंश्च क्षौमम्। अन्यंद्वा शुक्रम्। यंथाशक्ति वा। एव इस्वाध्यायंधर्मेण। अरण्यंऽधीयीत। तपस्वी पुण्यो भवति तपस्वी पुण्यो भवति॥१३२॥——[३२]

भुद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भुद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः।

स्थिरैरङ्गैंस्तुष्टुवा संस्तृनूभिः। व्यशेम देवहितं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिंदिधातु॥ ॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतये नमो विष्णंवे बृह्ते कंरोमि॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सह् वै देवानां चासुंराणां च युज्ञौ प्रतंतावास्तां वय स्वर्गं लोकमें ष्यामो वयमें ष्याम् इति तेऽसुंराः स्त्रह्य सहंसैवाचंरन् ब्रह्मचर्येण् तपंसैव देवास्तेऽसुंरा अमुह्य स्तं न प्राजांन इस्ते परांऽभवन्ते न स्वर्गं लोकमायन् प्रसृतेन वै युज्ञेनं देवाः स्वर्गं लोकमायन् प्रसृतेनासुंरान् परांभावयन् प्रसृतो ह् वै यंज्ञोपवीतिनों युज्ञोऽप्रंसृतोऽनुंपवीतिनो यत्किं चं ब्राह्मणो यंज्ञोपवीत्यधीते यज्ञंत एव तत्तस्मां द्यज्ञोपवीत्येवाधीयीत याजयेद्यजेत वा यज्ञस्य प्रसृत्या अजिनं वासों वा दक्षिण्त उपवीय दक्षिणं बाहुमुद्धंरतेऽवं धत्ते स्व्यमितिं यज्ञोपवीतमेतदेव विपंरीतं प्राचीनावीत स्वंवीतं मानुषम्॥१॥

[8]

रक्षा रेसि ह वां पुरोऽनुवाके तपोग्रंमितष्ठन्त तान् प्रजापंतिर्वरेणोपामंत्रयत् तानि वरंमवृणीताऽऽदित्यो नो योद्धा इति तान् प्रजापंतिरब्रवीद्योधंयध्वमिति तस्माद्तिष्ठन्तर् ह वा तानि रक्षा रंस्यादित्यं योधंयन्ति यावंदस्तमन्वंगात्तानिं ह वा एतानि रक्षा रेसि गायित्रया-ऽभिंमित्रितेनाम्भंसा शाम्यन्ति तदं ह वा एते ब्रंह्मवादिनेः पूर्वाभिमुखाः सन्ध्यायां गायित्रयाऽभिमित्रिता आपं ऊर्धं विक्षिपन्ति ता एता आपो वृज्ञीभूत्वा तानि रक्षारेसि मन्देहारुणे द्वीपे प्रक्षिपन्ति यत्प्रदक्षिणं प्रक्रमन्ति तेनं पाप्मानमवधून्वन्त्युद्यन्तंमस्तं यन्तंम् आदित्यमंभिध्यायन् कुर्वन् ब्राह्मणो विद्वान्ध्यकलं भुद्रमंश्रुतेऽसावांदित्यो ब्रह्मोति ब्रह्मेव सन् ब्रह्माप्येति य एवं वेदं॥२॥

[२]

यद्देवा देवहेळंनं देवांसश्चकृमा व्यम्। आदित्यास्तस्मांन्मा मुश्चत्तिस्युर्तेन् मामित। देवां जीवनकाम्या यद्वाचाऽनृंत-मूदिम। तस्मांन्न इह मुंश्चत् विश्वं देवाः स्जोषंसः। ऋतेनं द्यावापृथिवी ऋतेन् त्व॰ संरस्वति। कृतान्नंः पाह्येनंसो यत्किं चानृंतमूदिम। इन्द्राग्नी मित्रावर्रुणो सोमो धाता बृह्स्पतिः। ते नो मुश्चन्त्वेनंसो यद्न्यकृतमारिम। स्जात्श्रू॰सादुत जांमिश्रू॰साञ्च्यायंसः श॰सांदुत वा कनीयसः। अनांधृष्टं देवकृतं यदेनस्तस्मात् त्वमुस्माञ्जातवेदो मुमुग्धि॥३॥

यद्वाचा यन्मनंसा बाहुभ्यांमूरुभ्यांमछीवद्धा १ शिश्वेर्यदर्नृतं चकुमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु चकुम यानि दुष्कृता। येनं त्रितो अंर्णवान्निर्बभूव येन् सूर्यं तमंसो निर्मुमोचं। येनेन्द्रो विश्वा अर्जहादरांतीस्तेनाहं ज्योतिषा ज्योतिरानशान आक्षि। यत्कुसीद्मप्रंतीत्तं मयेह येनं यमस्यं निधिना चरांमि। एतत्तदंग्ने अनुणो भंवामि

जीवंत्रेव प्रति तत्ते दधामि। यन्मियं माता यदां पिपेष् यदन्तिरक्षं यदाशसातिंकामामि त्रिते देवा दिवि जाता यदापं इमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नो अग्ने स त्वं नो अग्ने त्वमंग्ने अयासि॥४॥

3

यददीं व्यन्नृणमहं बभूवादिं थ्यन्वा सञ्जगर जनें भ्यः। अग्निर्मा तस्मादिन्द्रेश्च संविदानौ प्रमुश्चताम्। यद्धस्तौभ्यां चकर किल्बिषाण्यक्षाणां वृग्नुमुपुजिघ्नमानः। उुग्नं पुश्या चं राष्ट्रभृच् तान्यंपस्रसावनुंदत्तामृणानिं। उग्रं पश्ये राष्ट्रंभृत्किल्बिषाणि यदक्षवृंत्तमनुंदत्तमेतत्। नेन्नं ऋणानृणव इथ्समानो युमस्य लोके अधिरज्जुरायं। अवं ते हेळ उद्तमिममं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नो अग्ने स त्वं नो अग्ने। सङ्कंसुको विकुंसुको निर्ऋथो यश्चं निस्वनः। तेऽ(१)स्मद्यक्ष्ममनांगसो दूरादूरमंचीचतम्। निर्यक्ष्ममचीचते कृत्यां निर्ऋतिं च। तेन योऽ(१)स्मथ्समृच्छातै तमस्मै प्रसुवामसि। दुःशुरुसानुशुरुसाभ्यां घणेनानुघणेन च। तेनान्योऽ(१)स्मथ्समृंच्छाते तमंस्मे प्रसुंवामसि। सं वर्चसा पर्यसा सन्तनूभिरगन्मिह मनंसा सर शिवेनं। त्वष्टां नो अत्र विदंधातु रायोऽनुंमार्षु तन्वो(१) यद्विलिंष्टम्॥५॥ [8]

आयुंष्टे विश्वतों दधद्यमुग्निर्वरैण्यः। पुनंस्ते प्राण

आयांति परायक्ष्म र सुवामि ते। आयुर्दा अंग्ने ह्विषों जुषाणो घृतप्रंतीको घृतयोनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गर्व्यं पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्। इममंग्न आयुंषे वर्चसे कृधि तिग्ममोजों वरुण सर्शिशाधि। मातेवाँस्मा अदिते शर्म यच्छ विश्वं देवा जरंदष्टिर्यथाऽसंत्। अग्न आयूर्धि पवस् आ सुवोर्ज्मिषं च नः। आरे बांधस्व दुच्छुनाँम्। अग्ने पवंस्व स्वपां अस्मे वर्चः सुवीर्यम्ं। दधंद्रियं मिये पोषम्ं॥६॥

अग्निर्ऋषिः पर्वमानः पार्श्वजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महाग्यम्। अग्ने जातान्प्रणुंदा नः सप्रतान्प्रत्यजाताञ्चातवेदो नुदस्व। अस्मे दीदिहि सुमना अहेळ्ञ्छर्मन्ते स्याम त्रिवरूथ उद्भौ। सहंसा जातान्प्रणुंदा नः सप्रतान्प्रत्यजाताञ्चातवेदो नुदस्व। अधि नो ब्रूहि सुमन्स्यमानो वयः स्याम् प्रणुंदा नः सप्रतान्। अग्ने यो नोऽभितो जनो वृको वारो जिघा सप्तान्। अग्ने यो नोऽभितो जनो वृको वारो जिघा सपित। ताः सत्वं वृत्रहं जिह् वस्वस्मभ्यमाभर। अग्ने यो नोऽभिदासंति समानो यश्च निष्ट्यः। तं वयः समिधं कृत्वा तुभ्यंमग्नेऽपि दध्मसि॥७॥

यो नः शपादशंपतो यश्चं नः शपंतः शपात्। उषाश्च तस्मैं निम्नुक्क सर्वं पाप समूहताम्। यो नः सपत्नो यो रणो मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतो मा तस्योच्छेषि किं चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदो यं चाहं द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वाङ्क्तानंग्ने सन्देह याङ्श्चाहं द्वेष्मि ये च माम्। यो अस्मभ्यंमरातीयाद्यश्चं नो द्वेषंते जनः। निन्दाद्यो अस्मान्दिफ्सांच सर्वाङ्क्तान्मंष्मषा कुरु। सर्शितं मे ब्रह्म सर्शितं वीर्या(१)म्बलम्ं। सर्शितं क्षत्रं में जिष्णु यस्याहमस्मिं पुरोहितः। उदेषां बाहू अतिरमुद्वर्चो अथो बलम्। क्षिणोमि ब्रह्मणाऽमित्रानुन्नंयामि स्वा(१)म् अहम्। पुनर्मनः पुनरायुंर्म् आगात्पुनश्चक्षः पुनः श्रोत्रं म् आगात्पुनः प्राणः पुनराकूतं म् आगात्पुनश्चित्तं पुनराधीतं म् आगात्। वैश्वानरो मेऽदंब्धस्तनूपा अवंबाधतां दुरितानि विश्वा॥८॥

वैश्वान्राय प्रतिवेदयामो यदीनृण स्मंङ्गरो देवतांस्। स प्तान्पाशांन प्रमुचन प्रवेद स नो मुश्चातु दुरितादवद्यात्। वैश्वान्रः पर्वयान्नः प्वित्रैर्यथ्मंङ्गरम्भिधावांम्याशाम्। अनांजान्नमनंसा याचंमानो यदत्रैनो अव तथ्मुंवामि। अमी ये सुभगे दिवि विचृतौ नाम तारंके। प्रेहामृतंस्य यच्छतामेतद्वंद्वक्रमोचंनम्। विजिहीर्ष्व लोकान्कृंधि बन्धान्मुंश्चासि बद्धंकम्। योनेरिव प्रच्युंतो गर्भः सर्वान् पथो अनुष्व। स प्रंजानन्प्रतिगृभ्णीत विद्वान्प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं। अस्माभिर्द्त्तं ज्ररसंः प्रस्तादिष्ठंत्रं तन्तुंमनुसश्चरेम॥९॥

ततं तन्तुमन्वेके अनु सर्श्वरन्ति येषां दत्तं पित्र्यमायंनवत्। अबन्ध्वेके दर्दतः प्रयच्छाद्वातुं चेच्छक्रवा एसः स्वर्ग एषाम्। आरंभेथामनु सर्रंभेथार समानं पन्थांमवथो घृतेनं। यद्वां पूर्तं परिविष्टं यदुग्नौ तस्मै गोत्रायेह जायांपती संररेभेथाम्। यदन्तरिक्षं पृथिवीमुत द्यां यन्मातरं पितरं वा जिहिश्सिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्य उन्नों नेषद्द्रिता यानिं चकुम। भूमिंमा्ताऽदिंतिनीं जनित्रं भ्राताऽन्तरिंक्षम्भिशंस्त एनः। द्यौर्नः पिता पितृयाच्छं भेवासि जामि मित्वा मा विविध्सि लोकात्। यत्रं सुहार्दः सुकृतो मदंन्ते विहाय रोगं तुन्वा(१) इ स्वायाम्। अस्रोणाङ्गेरह्रंताः स्वर्गे तत्रं पश्येम पितरं च पुत्रम्। यदन्नमद्यमृतेन देवा दास्यन्नदौस्यनुत वां करिष्यन्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चं प्रतिजग्राहमग्निर्मा तस्मादनृणं कृणोतु। यदन्नमिद्रां बहुधा विरूपं वासो हिरंण्यमुत गामुजामविम्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चे प्रतिजग्राहमग्निर्मा तस्मोदनृणं कृणोतु। यन्मयां मनसा वाचा कृतमेनेः कदाचन। सर्वस्मौत्तस्मौन्मेळितो मोग्धि त्व हे वेत्थे यथातथम्॥१०॥

वातंरशना हु वा ऋषंयः श्रमणा ऊर्ध्वमंन्थिनो बंभूवुस्तानृषंयोऽर्थमांयुङ्स्ते निलायंमचरुङ्स्तेऽनुंप्रविशुः कूश्माण्डानि ताङ्स्तेष्वन्वंविन्दञ्छूद्धयां च तपंसा च तानृषंयोऽब्रुवन्कथा निलायं चर्थेति त ऋषींनब्रुवृन्नमों वोऽस्तु भगवन्तोऽस्मिन्धाँम्नि केनं वः सपर्यामेति तानृषंयोऽब्रुवन्पवित्रं नो ब्रूत येनारेपसंः स्यामेति त एतानि सूक्तान्यंपश्यन् यद्देवा देवहेळेनं यददीं व्यन्नृणमहं बभूवाऽऽयुंष्टे विश्वतो दधदित्येतैराज्यं जुहुत वेश्वान्राय प्रतिवेदयाम् इत्युपंतिष्ठत् यद्वीचीन्मेनो भ्रूणहृत्याया-स्तस्मान्मोक्ष्यध्व इति त एतैरंजुहवुस्तेऽरेपसो-ऽभवन्कर्मादिष्वेतैर्जुहुयात्पूतो देवलोकान्थ्समंश्रुते॥११॥

कूश्माण्डेर्जुहुयाद्योऽपूंत इव मन्यंत यथाँ स्तेनो यथाँ भूण्हैवमेष भंवित योऽयोनो रेतः सिश्चित यदंवीचीनमेनों भूणहृत्यायास्तस्मांन्मुच्यते यावदेनो दीक्षामुपैति दीक्षित एतेः संतित जुंहोति संवथ्सरं दीक्षितो भंवित संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते मासं दीक्षितो भंवित यो मासः स संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते चतुर्विश्वतिर्धमासाः संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते द्वादंश रात्रीदीक्षितो भंवित चतुर्विश्वतिर्धमासाः संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते द्वादंश रात्रीदीक्षितो भंवित द्वादंश रात्रीदीक्षितो भंवित द्वादंश रात्रीदीक्षितो भंवित द्वादंश संवथ्सरः संवथ्यरः संवथ्यरयः संवथ्ययः संवथ्ययः संवथ्ययः संवथ्यय

संवध्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते तिस्रो रात्रींदीिक्षितो भंवति त्रिपदां गायत्री गांयत्रिया पुवाऽऽत्मानं पुनीते न मा समंश्रीयात्र स्त्रियमुपंयात्रोपर्यासीत् जुगुंपसेतानृंतात्पयौ ब्राह्मणस्यं वृतं यंवागू राजन्यंस्याऽऽिमक्षा वैश्यस्याथों सौम्येप्यंध्वर पुतद्वतं ब्रूयाद्यदि मन्येतोपदस्यामीत्योदनं धानाः सक्त्तं घृतमित्यनुंव्रतयेदात्मनोऽनुंपदासाय॥१२॥

[۷]<u>-</u>

अजान् ह् वै पृश्नी इंस्तप्स्यमानान् ब्रह्मं स्वयम्भ्वंभ्यानंर्ष्त ऋषंयोऽभवन्तद्दषीणामृषित्वं तां देवतामुपातिष्ठन्त यज्ञकांमास्त एतं ब्रह्मय्ज्ञमंपश्यन्तमाहंर्न्तेनांयजन्त् यद्द्योऽध्यगीषत् ताः पर्यआहृतयो देवानांमभवन् यद्यजू इंषि घृताहुंतयो यथ्सामानि सोमांहृतयो यद्दर्थवाङ्गिरसो मध्वाहृतयो यद्घाँह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गाथां नाराश् इसीर्मेदाहृतयो देवानांमभवन्ताभिः क्षुधं पाप्मान्म-पाँघन्नपहतपाप्मानो देवाः स्वर्गं लोकमायन् ब्रह्मणः सायुंज्यमृषयोऽगच्छन्॥१३॥

[3]

पश्च वा एते महायज्ञाः संतित प्रतांयन्ते सतित सन्तिष्ठन्ते देवयज्ञः पितृयज्ञो भूतयज्ञो मनुष्ययज्ञो ब्रह्मयज्ञ इति यद्ग्रौ जुहोत्यपि समिधं तद्देवयज्ञः सन्तिष्ठते यत्पतृभ्यः स्वधा करोत्यप्यपस्तित्पंतृयज्ञः सन्तिष्ठते यद्भूतेभ्यो बिलि॰ हरिति तद्भूतयज्ञः सन्तिष्ठते यद्भूतेभ्यो विलि॰ हरिति तद्भूतयज्ञः सन्तिष्ठते यद्भौह्मणेभ्योऽन्तं ददांति तन्मनुष्ययज्ञः

सन्तिष्ठते यथ्स्वौध्यायमधीयीतैकांमप्यृचं यजुः सामं वा तद्वंह्मयुज्ञः सन्तिष्ठते यद्द्योऽधीते पर्यसः कूल्यां अस्य पितृन्थ्स्वधा अभिवंहन्ति यद्यजूरंषि घृतस्यं कूल्या यथ्सामानि सोमं एभ्यः पवते यद्द्यंविक्षिरसो मधौः कूल्या यद्वौह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गाथां नाराश्र्द्रसीर्मेदंसः कूल्यां अस्य पितृन्थ्स्वधा अभिवंहन्ति यद्द्योऽधीते पर्यआहुतिभिरेव तद्देवाइस्तंप्यति यद्यजूरंषि घृताहुंतिभिर्यध्सामानि सोमांहुतिभिर्यदर्थविक्षिरसो मध्वा-हुतिभिर्यद्वौह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गाथां नाराश्र्द्रसीर्मेदाहुतिभिरेव तद्देवाइस्तंप्यति त एनं तृप्ता आयुषा तेजंसा वर्चसा श्रिया यशंसा ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन च तर्पयन्ति॥१४॥

ब्रह्मयज्ञेनं यक्ष्यमांणः प्राच्यां दिशि ग्रामादछंदिर्द्रश उदींच्यां प्रागुदीच्यां वोदितं आदित्ये देक्षिणत उपवीयोपविश्य हस्तांववनिज्य त्रिराचांमेद्दिः पंरिमृज्यं सकृदुंपस्पृश्य शिर्श्वक्षंषी नासिके श्रोत्रे हृदंयमालभ्य यत्रिराचामंति तेन ऋचंः प्रीणाति यद्दिः पंरिमृजंति तेन यजूरंषि यथ्सकृदुंपस्पृशंति तेन सामानि यथ्सव्यं पाणिं पादौ प्रोक्षति यच्छिरश्चक्षंषी नासिके श्रोत्रे हृदंयमालभंते तेनाथंवाङ्गिरसों ब्राह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गाथां नाराश्र्सीः प्रीणाति दर्भाणां मृहद्ंप्स्तीर्योपस्थं कृत्वा प्राङासीनः स्वाध्यायमधीयीतापां वा एष ओषंधीना्र रसो यद्भाः सरंसमेव ब्रह्मं कुरुते दक्षिणोत्तरौ पाणी पादौ कृत्वा सप्वित्रावोमिति प्रतिपद्यत एतद्वै यज्जंस्रयीं विद्यां प्रत्येषा वागेतत्परममृक्षरं तदेतदृचाऽभ्यंक्तमृचो अक्षरं परमे व्योमन् यस्मिन्देवा अधि विश्वं निषेदुर्यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति य इत्तद्विदुस्त इमे समासत् इति त्रीनेव प्रायंङ्कः भूर्भवः स्वरित्याहैतद्वै वाचः सत्यं यदेव वाचः सत्यं तत्प्रायुङ्कः थं सावित्रीं गांयत्रीं त्रिरन्वांह पच्छोंऽर्धर्चशोऽनवान संविता श्रियंः प्रसविता श्रियंमेवाऽऽप्रोत्यथौं प्रज्ञातंयैव प्रतिपदा छन्दा से प्रतिपद्यते॥१५॥

[88]-

ग्रामे मनंसा स्वाध्यायमधीयीत दिवा नक्तं वेति हं स्माऽऽह शौच आँह्रेय उतारंण्येऽबलं उत वाचोत तिष्ठंन्नुत व्रजन्तुताऽऽसीन उत शयांनोऽधीयीतैव स्वाध्यायं तपंस्वी पुण्यो भवति य एवं विद्वान्थ्स्वाध्यायमधीते नमो ब्रह्मणे नमो अस्त्वग्रये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमो वाचे नमो वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृहते कंरोमि॥१६॥

[१२]

मध्यन्दिने प्रबलमधीयीतासौ खलु वावैष आंदित्यो यद्ग्रौह्मणस्तस्मात्तर्हि तेऽक्ष्णिष्ठं तपति तदेषाऽभ्यंक्ता। चित्रं देवानामुदंगादनीकं चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावांपृथिवी अन्तिरिक्ष्ण सूर्य आत्मा जगंतस्तस्थुषश्चेति स वा एष यज्ञः सद्यः प्रतांयते सद्यः सन्तिष्ठते तस्य प्राक् सायमंवभृथो नमो ब्रह्मण इति परिधानीयां त्रिरन्वांहाप उंपस्पृश्यं गृहानेति ततो यत्किं च ददांति सा दक्षिणा॥१७॥

तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य मेघों हिव्धानं विद्युदिग्नर्वर्षः हिवः स्तंनियृत्वंषद्वारो यदंवस्फूर्जिति सोऽनुंवषद्वारो वायुरात्माऽमांवास्यां स्विष्टकृद्य एवं विद्वान्मेघे वर्षितं विद्योतंमाने स्तनयंत्यवस्फूर्जित् पर्वमाने वायावंमावास्यांयाः स्वाध्यायमधीते तपं एव तत्तंप्यते तपो हि स्वाध्याय इत्यंत्तमं नाकः रोहत्युत्तमः संमानानां भवति यावंन्तः ह वा इमां वित्तस्यं पूर्णां ददंथ्स्वर्गं लोकं जंयित् तावंन्तं लोकं जंयित् भूयाः सं चाक्ष्ययं चापं पुनर्मृत्यं जंयित् ब्रह्मंणः सायुंज्यं गच्छित॥१८॥

तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य द्वावंनध्यायो यदात्माऽश्चिर्यद्देशः समृंद्धिर्देवतानि य एवं विद्वान्मंहारात्र उषस्यदिते व्रज्ञङ्क्तिष्ठन्नासीनः शयानोऽरण्ये ग्रामे वा यावंत्तरसर्इं स्वाध्यायमधीते सर्वां ह्लोकाञ्चयिति सर्वां ह्लोकानंनृणोऽनु-सञ्चरित तदेषाभ्यंक्ता। अनृणा अस्मिन्नंनृणाः परिस्मङ्क्तितीयं लोके अनृणाः स्याम। ये देवयानां उत पितृयाणाः

सर्वान्यथो अनृणा आक्षीयेमेत्यग्निं वै जातं पाप्मा जंग्राह तं देवा आहुंतीभिः पाप्मानमपौघ्नत्राहुंतीनां यज्ञेनं यज्ञस्य दक्षिणाभिदक्षिणानां ब्राह्मणेन ब्राह्मणस्य छन्दोभिश्छन्दसा इ स्वाध्यायेनापंहतपाप्मा स्वाध्यायों देवपंवित्रं वा एतत्तं योऽनूष्मुजत्यभांगो वाचि भंवत्यभांगो नाके तदेषाऽभ्यंक्ता। यस्तित्यां न सखिविद सखायं न तस्यं वाच्यपिं भागो अस्ति। यदी १ शृणोत्यलक १ शृणोति न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामिति तस्मांथ्स्वाध्यायोऽध्येतव्यो यं यं ऋतुमधीते तेनं तेनास्येष्टं भंवत्यग्नेर्वायोरांदित्यस्य सायुंज्यं गच्छति तदेषाऽभ्यंक्ता। ये अवाङ्गत वां पुराणे वेदं विद्वा रसंम्भितों वदन्त्यादित्यमेव ते परिंवदन्ति सर्वे अग्निं द्वितीयं तृतीयंं च हर्समिति यावंतीवें देवतास्ताः सर्वा वेदविदिं ब्राह्मणे वंसन्ति तस्माद्भाह्मणेभ्यों वेदविद्धों दिवे दिवे नमस्कुर्यान्नाश्लीलं कीर्तयेदेता एव देवताः प्रीणाति॥१९॥

रिच्यंत इव वा एष प्रेव रिच्यते यो याजयंति प्रतिं वा गृह्णाति याजियंत्वा प्रतिगृह्य वाऽनंश्वित्रः स्वाध्यायं वेदमधीयीत त्रिरात्रं वां सावित्रीं गांयत्रीम्नवातिरेचयित वरो दक्षिणा वरेणैव वरई स्पृणोत्यात्मा हि वरः॥२०॥

-[१६]

दुहे हु वा एष छन्दा शस्ति यो याजयंति स येनं यज्ञकृतुनां याजयेथ्सोऽरंण्यं प्रेत्यं शुचौ देशे स्वाध्यायमेवेन्मधीयन्नासीत तस्यानशंनं दीक्षा स्थानमुंप्सद् आसंन स्त्या वाग्जुहूर्मनं उप्भृद्धृतिर्ध्रुवा प्राणो ह्विः सामाध्वर्यः स वा एष यज्ञः प्राणदंक्षिणोऽनंन्तदक्षिणः समृद्धतरः॥२१॥

[१७]

कतिधावंकीणीं प्रविशतिं चतुर्धेत्यां हुर्ब्रह्मवादिनों मुरुतः प्राणैरिन्द्रं बलेन बृहस्पतिं ब्रह्मवर्चसेनाग्निमेवेतंरेण सर्वेण तस्यैतां प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार सुदेवः काँश्यपो यो ब्रह्मचार्यविकरेदमावास्याया रात्र्यामिश्रं प्रणीयोपसमाधाय द्विराज्यंस्योपघातंं जुहोति कामावंकीर्णोऽस्म्यवंकीर्णोऽस्मि काम् कामाय स्वाहा कामाभिद्रुग्धोऽस्म्यभिद्रुग्धोऽस्मि काम कार्माय स्वाहेत्यमृतं वा आज्यंममृतंमेवाऽऽत्मन्धंत्ते प्रयंताञ्जलिः कवांतिर्यङ्काग्नमभिमंत्रयेत मांऽऽसिश्चन्तु मरुतः समिन्द्रः सं बृहस्पतिः। माऽयमग्निः सिश्चत्वायुंषा च बलेन चाऽऽयुंष्मन्तं करोत मेति प्रति हास्मै मरुतः प्राणान्दंधति प्रतीन्द्रो बलं प्रति बृहस्पतिं ब्रह्मवर्चसं प्रत्यग्निरितरथ्सर्व सर्वतनुर्भूत्वा सर्वमायुरिति त्रिरभिमंत्रयेत त्रिषंत्या हि देवा योऽपूत इव मन्येत स इत्थं जुंहुयादित्थम्भिमंत्रयेत पुनीत एवाऽऽत्मानमायुरेवाऽऽत्मन्धंत्ते वरो दक्षिणा वरेणैव वरई स्पृणोत्यात्मा हि वर्रः॥२२॥ [१८]

भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये स्वः प्रपंद्ये भूभुवः स्वः प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्मकोशं प्रपंद्येऽमृतं प्रपंद्येऽमृतकोशं प्रपंद्ये चतुर्जालं ब्रह्मकोशं यं मृत्युर्नावपश्यति तं प्रपंद्ये देवान् प्रपंद्ये देवपुरं प्रपंद्ये परीवृतो वरीवृतो ब्रह्मणा वर्मणा ८ हं तेर्जसा कश्यंपस्य यस्मै नम्स्तिच्छिरो धर्मो मूर्धानं ब्रह्मोत्तरा हर्नुर्युज्ञोऽधंरा विष्णुर्हृदेय र संवथ्सरः प्रजनंनमिश्वनौ पूर्वपादांवित्रर्मध्यं मित्रावरुणावपरपादांवग्निः पुच्छंस्य प्रथमं काण्डं तत इन्द्रस्ततः प्रजापितिरभेयं चतुर्थे स वा एष दिव्यः शाक्तरः शिशुंमार्स्त ह य एवं वेदापं पुनर्मृत्युं जयित जयित स्वर्गं लोकं नाध्वनि प्रमीयते नाफ्सु प्रमीयते नाग्नौ प्रमीयते नानपत्यः प्रमीयते लुघ्वान्नो भवति ध्रुवस्त्वमंसि ध्रुवस्य क्षितमसि त्वं भूतानामधिपतिरसि त्वं भूताना श्रेष्ठों ऽसि त्वां भूतान्युपं पूर्यावंर्तन्ते नमंस्ते नमः सर्वं ते नमो नमः शिश्कुमाराय नर्मः॥२३॥

[? ?]

नमः प्राच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो दक्षिंणाये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमः प्रतींच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नम् उदींच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमं ऊर्ध्वाये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽधंराये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽवान्त्रायें दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मध्ये ये वसन्ति ते मे प्रसन्नात्मानश्चिरं जीवितं वंधयन्ति नमो गङ्गायमुनयोर्मुनिभ्यश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मुनिभ्यश्च नमः॥२४॥

-[२०]

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतये नमो विष्णंवे बृह्ते कंरोमि॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

ॐ तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

चित्तिः स्रुक्। चित्तमाज्यम्। वाग्वेदिः। आधीतं ब्र्हिः। केतो अग्निः। विज्ञातम्ग्निः। वाक्पंतिर्होतां। मनं उपवृक्ता। प्राणो हृविः। सामाध्वर्युः। वाचंस्पते विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्स्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। आऽस्मासुं नृम्णन्थाथ्स्वाहां॥१॥

अुष्युर्यः पश्चं च॥______[१

पृथिवी होताँ। द्यौरंध्वर्युः। रुद्रौंऽग्नीत्। बृह्स्पतिंरुपवृक्ता। वार्चस्पते वाचो वीर्येण। सम्भृततमेनायंक्ष्यसे। यजमानाय वार्यम्। आसुवस्करंस्मे। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥

अग्निर्होताँ। अश्विनाँऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उंपवृक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। शुक्रः शुक्रस्यं पुरोगाः। श्रातास्तं इन्द्र सोमाः। वातांपेर्हवनश्रुतः स्वाहाँ॥३॥

अग्रिहोंताऽष्टो॥——[३]

सूर्यं ते चक्षुंः। वातं प्राणः। द्यां पृष्ठम्। अन्तरिक्षमात्मा। अङ्गैर्यज्ञम्। पृथिवी १ शरीरैः। वाचस्पतेऽच्छिंद्रया वाचा। अच्छिद्रया जुह्नाँ। दिवि देवावृध् होत्रा मेर्रयस्व स्वाहाँ॥४॥

महाहं विरहोतां। सृत्यहं विरध्वर्युः। अच्युंतपाजा अग्नीत्। अच्युंतमना उपवक्ता। अनाधृष्यश्चांप्रतिधृष्यश्चं यज्ञस्यां भिग्रो। अयास्यं उद्गाता। वाचंस्पते हृद्विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्स्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमं मपात्। मा दैव्यस्तन्तु रुछे दि मा मंनुष्यंः। नमों दिवे। नमंः पृथिव्ये स्वाहां॥५॥

अपात्रीणि च॥————[५]

वाग्घोताँ। दीक्षा पत्नीं। वातौंऽध्वर्युः। आपोंऽभिग्रः। मनों ह्विः। तपंसि जुहोमि। भूर्भृवः सुवेः। ब्रह्मं स्वयम्भु। ब्रह्मंणे स्वयम्भुवे स्वाहाँ॥६॥

स्पर्यन्तुप् स्पारु।॥६॥ बाग्योता नवं॥————[६]

ब्राह्मण एकंहोता। स यज्ञः। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशंः। यज्ञश्चं मे भूयात्। अग्निर्द्विहोता। स भूर्ता। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशंः। भूर्ता चं मे भूयात्। पृथिवी त्रिहोता। स प्रतिष्ठा॥७॥

स में ददातु प्रजां प्रशून्पृष्टिं यर्शः। प्रतिष्ठा चे मे भूयात्। अन्तिरिक्षं चतुरहोता। स विष्ठाः। स में ददातु प्रजां प्रशून्पृष्टिं यर्शः। विष्ठाश्चं मे भूयात्। वायुः पश्चंहोता। स प्राणः। स में ददातु प्रजां प्रशून्पृष्टिं यर्शः। प्राणश्चं मे भूयात्॥८॥

चुन्द्रमाः षड्ढोता। स ऋतून्केल्पयाति। स में ददातु प्रजां

पृशून्पृष्टिं यशेः। ऋतवेश्च मे कल्पन्ताम्। अन्नर्रं स्प्तहोता। स प्राणस्यं प्राणः। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशेः। प्राणस्यं च मे प्राणो भूयात्। द्यौरष्टहोता। सोऽनाधृष्यः॥९॥

स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। अनाधृष्यश्चं भूयासम्। आदित्यो नवंहोता। स तेंज्स्वी। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। तेज्स्वी चं भूयासम्। प्रजापंतिर्दशंहोता। स इदश् सर्वम्। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। सर्वं च मे भूयात्॥१०॥

अग्निर्यजुंभिः। स्विता स्तोमैः। इन्द्रं उक्थाम्दैः। मित्रावरुणावाशिषां। अङ्गिरसो धिष्णियैरग्निभिः। मुरुतः सदोहविर्धानाभ्याम्। आपः प्रोक्षणीभिः। ओषंधयो बुर्हिषां। अदितिर्वेद्यां। सोमो दीक्षयां॥११॥

त्वष्टेभेनं। विष्णुंर्यज्ञेनं। वसंव आज्येंन। आदित्या दक्षिणाभिः। विश्वें देवा ऊर्जा। पूषा स्वंगाकारेणं। बृह्स्पतिः पुरोधयां। प्रजापंतिरुद्गीथेनं। अन्तरिक्षं प्वित्रेण। वायुः पात्रैः। अहङ् श्रद्धयां॥१२॥

दीक्षया पात्रेरेक च॥—————[८]

सेनेन्द्रंस्य। धेना बृह्स्पतैः। पृत्थ्यां पूष्णः। वाग्वायोः। दीक्षा सोमंस्य। पृथिव्यंग्नेः। वसूनां गायत्री। रुद्राणां त्रिष्टुक्। आदित्यानां जगती। विष्णोरनुष्टुक्॥१३॥

वर्रणस्य विराट्। युज्ञस्यं पुङ्किः। प्रजापंतेरनुंमतिः।

मित्रस्यं श्रद्धा। स्वितुः प्रसूंतिः। सूर्यस्य मरीचिः। चन्द्रमंसो रोहिणी। ऋषीणामरुन्धती। पूर्जन्यस्य विद्युत्। चतंस्रो दिशः। चतंस्रोऽवान्तरिद्याः। अहंश्च रात्रिश्च। कृषिश्च वृष्टिश्च। त्विषिश्चापंचितिश्च। आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क सूनृतां च देवानां पत्नयः॥१४॥

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रसिवं। अश्विनौंर्बाहुभ्यांम्। पूष्णो हस्तौभ्यां प्रतिगृह्णामि। राजां त्वा वरुणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्नये हिरण्यम्। तेनांमृतत्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे। क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामों दाता॥१५॥

कार्मः प्रतिग्रहीता। काम् समुद्रमाविंश। कार्मन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्तें। एषा ते काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वांङ्गीर्सः प्रतिगृह्णातु। सोमाय वार्सः। रुद्राय गाम्। वरुणायाश्वम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१६॥

मनंवे तल्पम्। त्वष्ट्रेऽजाम्। पूष्णेऽविम्। निर्ऋंत्या अश्वतरगर्दभौ। हिमवंतो हुस्तिनम्। गुन्धुर्वाफ्स्राभ्यः स्नगलं कर्णे। विश्वभ्यो देवेभ्यो धान्यम्। वाचेऽन्नम्। ब्रह्मण ओदनम्। सुमुद्रायाऽऽपंः॥१७॥

उत्तानायाँङ्गीर्सायानेः। वैश्वानुराय रथम्। वैश्वानुरः प्रव्नथा नाकुमारुहत्। दिवः पृष्ठं भन्दंमानः सुमन्मंभिः। स पूर्ववञ्चनयंञ्चन्तवे धनम्। समानमंज्मा परियाति जागृंविः। राजां त्वा वरुणो नयतु देवि दक्षिणे वैश्वान्राय रथम्। तेनांमृत्त्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे॥१८॥

क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामों दाता। कामः प्रतिग्रहीता। काम समुद्रमा विंश। कामेन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्ते॥ एषा ते काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वौङ्गीर्सः प्रतिगृह्णातु॥१९॥

दाता पुरुषमणं प्रतिग्रहीत्रे नवं च॥______[१०

सुवर्णं घृमं परिवेद वेनम्। इन्द्रंस्याऽऽत्मानं दश्धा चरंन्तम्। अन्तः संमुद्रे मनंसा चरंन्तम्। ब्रह्मान्वंविन्द्द्दशंहोतार्मर्णं। अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनांनाम्। एकः सन्बंहुधा विचारः। श्रात श्रुकाणि यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे वेदा यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे होतांरो यत्रैकं भवंन्ति। समानंसीन आत्मा जनांनाम्॥२०॥

अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनांना सर्वांत्मा। सर्वाः प्रजा यत्रेकं भवंन्ति। चतुर्होतारो यत्रं सम्पदं गच्छंन्ति देवैः। समानंसीन आत्मा जनांनाम्। ब्रह्मेन्द्रं मृग्निं जगंतः प्रतिष्ठाम्। दिव आत्मान सवितारं बृह्स्पतिम्। चतुर्होतारं प्रदिशोऽनं क्रुप्तम्। वाचो वीर्यं तप्साऽन्वंविन्दत्। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारं मेतम्। त्वष्टांर रूपाणिं विकुर्वन्तं

विपश्चिम्॥२१॥

अमृतंस्य प्राणं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निर्चिक्युः। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारंमेतम्। देवानां बन्धु निहितं गुहांसु। अमृतेन क्रुप्तं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निर्चिक्युः। शृतं नियुतः परिवेद विश्वां विश्ववांरः। विश्वंमिदं वृंणाति। इन्द्रंस्याऽऽत्मा निहितः पश्चंहोता। अमृतं देवानामायुः प्रजानाम्॥२२॥

इन्द्रभ् राजांनभ् सिवतारंमेतम्। वायोरात्मानं कृवयो निर्चिक्युः। रिष्टमभ् रंश्मीनां मध्ये तपंन्तम्। ऋतस्य पदे कृवयो निर्पान्ति। य आण्डकोशे भुवंनं बिभर्ति। अनिर्मिण्णः सन्नर्थं लोकान् विचष्टें। यस्याऽऽण्डकोशभ् शुष्मंमाहुः प्राणमुल्बम्। तेनं क्रुप्तोऽमृतेनाहमंस्मि। सुवर्णं कोश्भ् रजसा परीवृतम्। देवानां वसुधानीं विराजम्॥२३॥

अमृतंस्य पूर्णान्ताम् कलां विचंक्षते। पाद् षड्ढोतुर्न किलांविविथ्से। येन्तवंः पञ्चधोत क्रुप्ताः। उत वां षड्वा मन्सोत क्रुप्ताः। त॰ षड्ढोतारमृतुभिः कल्पंमानम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपांन्ति। अन्तः प्रविष्टं कर्तारंमेतम्। अन्तश्चन्द्रमंसि मनसा चरन्तम्। सहैव सन्तं न विजानन्ति देवाः। इन्द्रंस्याऽऽत्मान शतुधा चरन्तम्॥२४॥

इन्द्रो राजा जगंतो य ईशैं। सप्तहोता सप्तधा विक्रृंप्तः।

परेण तन्तुं परिष्च्यमानम्। अन्तरादित्ये मनसा चरन्तम्। देवाना १ हृदंयं ब्रह्मान्वंविन्दत्। ब्रह्मेतद्वह्मण् उन्नंभार। अर्क १ श्चोतंन्त १ सरि्रस्य मध्ये। आ यस्मिन्थ्सप्त परेवः। मेहंन्ति बहुला १ श्रियम्। बृह्धश्वामिन्द्र गोमंतीम्॥ २५॥

अर्च्युतां बहुला १ श्रियम्। स हरिर्वसुवित्तंमः। प्रेरुरिन्द्रांय पिन्वते। बृह्धामिन्द्रं गोमंतीम्। अर्च्युतां बहुला १ श्रियम्। मह्यमिन्द्रो नियंच्छत्। शृत १ शृता अस्य युक्ता हरीणाम्। अर्वाङा यांतु वसुंभी रश्मिरिन्द्रः। प्रमश्हंमाणो बहुला १ श्रियम्। रश्मिरिन्द्रः सविता मे नियंच्छतु॥२६॥

घृतं तेजो मधुंमदिन्द्रियम्। मय्ययम्ग्निर्दधात्। हरिः पत्ङ्गः पंट्री सुंपूर्णः। दिविक्षयो नर्भसा य एति। स न इन्द्रेः कामवृरं देदातु। पञ्चारं चक्रं परिवर्तते पृथु। हिरंण्यज्योतिः सरि्रस्य मध्यै। अजंस्रं ज्योतिर्नभंसा सपंदेति। स न इन्द्रेः कामवृरं देदातु। सप्त युंञ्जन्ति रथमकेचक्रम्॥२७॥

एको अश्वो वहित सप्तनामा। त्रिनाभि चक्रम्जर्मनंवम्। येनेमा विश्वा भुवनानि तस्थुः। भुद्रं पश्यन्त उपसेदुरग्रें। तपो दीक्षामृषयः सुवर्विदंः। ततः क्षत्रं बल्मोजंश्च जातम्। तद्स्मै देवा अभि सन्नमन्तु। श्वेत र रिश्मं बोभुज्यमानम्। अपा नेतारं भुवनस्य गोपाम्। इन्द्रं निर्चिक्यः पर्मे व्योमन्॥२८॥

रोहिणीः पिङ्गला एकंरूपाः। क्षरंन्तीः पिङ्गला एकंरूपाः।

शृत स्महस्राणि प्रयुतांनि नाव्यांनाम्। अयं यः श्वेतो रिष्टमः। परि सर्विमिदं जगत्। प्रजां प्रशून्धनांनि। अस्माकं ददातु। श्वेतो रिष्टमः परि सर्वं बभूव। सुवन्मह्यं प्रशून् विश्वरूपान्। प्तङ्गमक्तमसुरस्य माययां॥२९॥

हृदा पंश्यन्ति मनंसा मनीषिणं। समुद्रे अन्तः क्वयो वि-चंक्षते। मरीचीनां प्दिमेच्छन्ति वेधसं। प्तङ्गो वाचं मनंसा बिभिति। तां गंन्ध्वींऽवदद्गर्भे अन्तः। तां द्योतंमानाः स्वर्यं मनीषाम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपान्ति। ये ग्राम्याः पृशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। अग्निस्ताः अग्रे प्रमुमोक्त देवः॥३०॥

प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। वीतः स्तुंकेस्तुके। युवम्स्मास् नियच्छतम्। प्र प्र यज्ञपंतिन्तिर। ये ग्राम्याः प्रश्नों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। तेषा स्सानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय। य आंर्ण्याः पृश्नवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। वायुस्ता अग्रे प्रमुमोक्तु देवः। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। इडाये सृप्तं घृतवंचराचरम्। देवा अन्वंविन्दन्गुहां हितम्। य आंर्ण्याः पृश्नवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। विर्वा प्रजापंतिः प्रज्ञां हितम्। य आंर्ण्याः पृश्नवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। तेषा स्मानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय॥३१॥ अल्ला जननं विश्वर्वनं विप्रकृत्वनं विप्रकृतं विप्रकृत्वनं विप्रकृत्वनं विप्रकृत्वनं विप्रकृतं विप्रकृतं विप्रकृत्वनं विप्रकृतं विप्रकृत्वनं विप्रकृत्वनं विप्रकृतं विप्रकृतं

एकंरूपा अष्टो चं॥————[११]

सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। स भूमिं विश्वतो वृत्वा। अत्यंतिष्ठद्दशाङ्गुलम्। पुरुष पुवेद सर्वम्। यद्भूतं यच् भव्यम्। उतामृत्त्वस्येशानः। यदन्नेनातिरोहंति। पुतावानस्य महिमा। अतो ज्याया १ श्रु पूरुषः॥३२॥

पादौँऽस्य विश्वां भूतानि। त्रिपादंस्यामृतं दिवि। त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः। पादौँऽस्येहाभवात्पुनः। ततो विष्वङ्कांक्रामत्। साशनान्शने अभि। तस्माद्विराडंजायत। विराजो अधि पूरुषः। स जातो अत्यंरिच्यत। पृश्वाद्भिमथो पुरः॥३३॥

यत्पुरुषेण ह्विषां। देवा यज्ञमतंन्वत। वसन्तो अस्यासी-दाज्यम्। ग्रीष्म इध्मः श्ररद्धविः। सप्तास्यांसन्पर्धियः। त्रिः सप्त स्मिधः कृताः। देवा यद्यज्ञं तंन्वानाः। अबंध्रन्पुरुषं पृशुम्। तं युज्ञं बुर्हिष्वि प्रौक्षन्। पुरुषं जातमंग्रतः॥३४॥

तेनं देवा अयंजन्त। साध्या ऋषंयश्च ये। तस्मौद्यज्ञार्थ्यवृहुतः।
सम्भृतं पृषदाज्यम्। पृशू इस्ता इश्चेके वायव्यान्।
आर्ण्यान्ग्राम्याश्च ये। तस्मौद्यज्ञार्थ्यवृहुतः। ऋचः
सामानि जज्ञिरे। छन्दा इसि जज्ञिरे तस्मौत्।
यजुस्तस्मादजायत॥३५॥

तस्मादश्वां अजायन्त। ये के चोभ्यादंतः। गावों ह जिज्ञेर् तस्मात्। तस्माजाता अंजावयः। यत्पुरुषं व्यंदधः। कृतिधा व्यंकल्पयन्। मुखं किमंस्य कौ बाहू। कावूरू पादांवुच्येते। ब्राह्मणौं उस्य मुखंमासीत्। बाहू रांजन्यः कृतः॥३६॥

ऊरू तदंस्य यद्वैश्यंः। पुद्धाः शूद्रो अंजायत। चुन्द्रमा मनंसो जातः। चक्षोः सूर्यो अजायत। मुखादिन्द्रंश्चाग्निश्चं। प्राणाद्वायुरंजायत। नाभ्यां आसीदन्तरिक्षम्। शीष्णी द्यौः समंवर्तत। पुद्धां भूमिर्दिशः श्रोत्रांत्। तथां लोकाः अंकल्पयन्॥३७॥

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवंणं तमंस्सतु पारे। सर्वाणि रूपाणि विचित्य धीरंः। नामांनि कृत्वाऽभिवद्न् यदास्तें। धाता पुरस्ताद्यमुंदाज्हारं। श्राक्तः प्रविद्वान्प्रदिश्रश्चतंस्रः। तमेवं विद्वान्मृतं इह भविति। नान्यः पन्था अयंनाय विद्यते। यज्ञेनं यज्ञमंयजन्त देवाः। तानि धर्माणि प्रथमान्यांसन्। ते हु नाकं महिमानंः सचन्ते। यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥३८॥

पूर्रुषः पुरोंऽम्रुतोंऽजायत कृतोंऽकल्पयन्नासुं हे चं (ज्यायानिध् पूर्रुषः। अन्यत्र पुरुषः॥)॥——[१२]

अद्धः सम्भूतः पृथिये रसाँ । विश्वकं मणः समंवर्तताधि। तस्य त्वष्टां विदधंद्रूपमेति। तत्पुरुंषस्य विश्वमाजां नमग्रें। वेदाहमेतं पुरुंषं महान्तम्। आदित्यवंणं तमंसः परंस्तात्। तमेवं विद्वानमृतं इह भंवति। नान्यः पन्थां विद्यतेऽयंनाय। प्रजापंतिश्चरित गर्भे अन्तः। अजायंमानो बहुधा विजायते॥३९॥

तस्य धीराः परिजानन्ति योनिम्। मरीचीनां पदिमच्छन्ति

वेधसंः। यो देवेभ्य आतंपित। यो देवानां पुरोहिंतः। पूर्वो यो देवेभ्यो जातः। नमो रुचाय ब्राह्मये। रुचं ब्राह्मं जनयंन्तः। देवा अग्रे तदंब्रुवन्। यस्त्वेवं ब्राह्मणो विद्यात्। तस्यं देवा अस्नवशें। हीश्चं ते लक्ष्मीश्च पल्यौं। अहोरात्रे पार्श्वे। नक्षंत्राणि रूपम्। अश्विनौ व्यात्तम्ं। इष्टं मंनिषाण। अमुं मंनिषाण। सर्वं मनिषाण॥४०॥

जायुते वर्शे सुप्त ची॥————[१३]

भूती सन्भ्रियमाणो बिभर्ति। एको देवो बहुधा निर्विष्टः। यदा भारं तुन्द्रयंते स भर्तुम्। निधायं भारं पुन्रस्तमिति। तमेव मृत्युममृतं तमाहुः। तं भूतीरं तम् गोप्तारमाहुः। स भृतो भ्रियमाणो बिभर्ति। य एनं वेदं सत्येन भर्तुम्। सद्यो जातमुत जहात्येषः। उतो जर्रन्तं न जहात्येकम्॥४१॥

उतो बहूनेकमहंर्जहार। अतंन्द्रो देवः सदंमेव प्रार्थः। यस्तद्वेद् यतं आब्भूवं। सन्धां च याः सन्द्धे ब्रह्मंणैषः। रमंते तस्मिन्नुत जीणें शयांने। नैनं जहात्यहंः सु पूर्व्येषुं। त्वामापो अनु सर्वा श्चरन्ति जानृतीः। वथ्सं पर्यसा पुनानाः। त्वमृग्निः हंव्यवाहः सिमैन्थ्से। त्वं भूतां मात्तिरश्वा प्रजानाम्॥४२॥

त्वं यज्ञस्त्वमुंवेवासि सोमः। तवं देवा हवमायंन्ति सर्वे। त्वमेकोऽसि बहूननुप्रविष्टः। नमंस्ते अस्तु सुहवों म एि। नमो वामस्तु शृणुत १ हवंं मे। प्राणांपानावजिर १ स्थरंन्तौ। ह्वयांमि वां ब्रह्मणा तूर्तमेतम्। यो मां द्वेष्टि तं जहितं युवाना। प्राणांपानौ संविदानौ जहितम्। अमुष्यासुनामा सङ्गंसाथाम्॥४३॥

तं में देवा ब्रह्मणा संविदानौ। वधार्य दत्तं तम्ह १ हंनामि। असंज्ञजान स्त आबंभूव। यं यं ज्जान स उं गोपो अस्य। यदा भारं तन्द्रयंते स भर्तुम्। प्रास्यं भारं पुन्रस्तमिति। तहै त्वं प्राणो अभवः। महान्भोगः प्रजापंतेः। भुजः करिष्यमाणः। यद्देवान्प्राणयो नवं॥४४॥

यह्वान्प्राणया नव॥४४ एकं प्रजानाङ्गसाथां नव॥—————

[88]

हिर् हर्रन्तमनुंयन्ति देवाः। विश्वस्येशांनं वृष्भं मंतीनाम्। ब्रह्म सरूपमनुंमेदमागांत्। अयंनं मा विवधीर्विक्रंमस्व। मा छिदो मृत्यो मा वधीः। मा मे बलं विवृंहो मा प्रमोषीः। प्रजां मा में रीरिष् आयुंरुग्र। नृचक्षंसं त्वा ह्विषां विधेम। सद्यश्चंकमानायं। प्रवेपानायं मृत्यवें॥४५॥

प्रास्मा आशां अशृण्वन्। कामेनाजनयन्पुनंः। कामेन मे काम आगाँत्। हृदंयाद्भृदंयं मृत्योः। यदमीषांमदः प्रियम्। तदैतूपमाम्भि। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थाँम्। यस्ते स्व इतरो देवयानाँत्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नंः प्रजाः रीरिषो मोत वीरान्। प्र पूर्वं मनसा वन्दंमानः। नार्थमानो वृष्मं चर्षणीनाम्। यः प्रजानांमेकराण्मानुंषीणाम्। मृत्युं यंजे प्रथमजामृतस्यं॥४६॥ मृत्यवें वीरारश्च्रत्वारिं च॥———————[१५]

त्रणिर्विश्वदंर्शतो ज्योतिष्कृदंसि सूर्य। विश्वमा भांसि रोचनम्। उपयामगृहीतोऽसि सूर्याय त्वा भ्राजंस्वत एष ते योनिः सूर्याय त्वा भ्राजंस्वते॥४७॥

[88]

आ प्यांयस्व मदिन्तम् सोम् विश्वांभिरूतिभिः। भवां नः सप्रथंस्तमः॥४८॥

-[१७]

ईयुष्टे ये पूर्वतरामपंश्यन् व्युच्छन्तीमुषसं मर्त्यासः। अस्माभिरू नु प्रतिचक्ष्यांऽभूदो ते यन्ति ये अंपरीषु पश्यान्॥४९॥

[१८]

ज्योतिष्मतीं त्वा सादयामि ज्योतिष्कृतं त्वा सादयामि ज्योतिर्विदं त्वा सादयामि भास्वतीं त्वा सादयामि ज्वलंन्तीं त्वा सादयामि मल्मलाभवंन्तीं त्वा सादयामि दीप्यंमानां त्वा सादयामि रोचंमानां त्वा सादयाम्यजंस्रां त्वा सादयामि बृहज्योतिषं त्वा सादयामि बोधयंन्तीं त्वा सादयामि जाग्रंतीं त्वा सादयामि॥५०॥

-[१९]

प्रयासाय स्वाहां ऽऽयासाय स्वाहां वियासाय स्वाहां संयासाय स्वाहों द्यासाय स्वाहां ऽवयासाय स्वाहां शुचे स्वाहा शोकांय स्वाहां तप्यत्वे स्वाहा तपंते स्वाहां

ब्रह्महुत्यायै स्वाहा सर्वस्मै स्वाहाँ॥५१॥

[२०]

तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः॥



॥चतुर्थः प्रश्नः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम ऋषिंभ्यो मन्नकृद्धो मन्नपितभ्यो मा मामृषंयो मन्नकृतो मन्नपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मन्नकृतो मन्नपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये सत्यं वंदिष्ये तस्मो अहमिदमुपस्तरणमुपस्तृण उपस्तरणं मे प्रजायै पश्नां भूयादुपस्तरणमहं प्रजायै पश्नां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योर्मा पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मध् मनिष्ये मध्र जिनष्ये मध्र वक्ष्यामि मध्र विदण्यामि मध्रमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास १ शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभायै पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंथे नम् ऋषिंभ्यो मञ्जकुद्धो मञ्जपितभ्यो मा मामृषंयो मञ्जकृतों मञ्जपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मञ्जकृतो मञ्जपतीन्परांदां वैश्वदेवीं वाचंमुद्धास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं विद्ये तेजों विद्ये यशों विद्ये तपों विद्ये ब्रह्मं विद्ये सत्यं विद्ये तस्मां अहमिदमुंपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजाये पशूनां भूयादुपस्तरंणमहं प्रजाये पशूनां भूयास् प्राणांपानौ मृत्योमां पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मिन्ये मधुं जिन्ये मधुं विद्यामि मधुं विद्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास शृश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभाये पितरोऽनुंमदन्तु॥१॥

१

युअते मनं उत युंअते धियंः। विप्रा विप्रंस्य बृह्तो विप्रिक्षतः। वि होत्रां दधे वयुनाविदेक इत्। मृही देवस्यं सिवृतुः परिष्टुतिः। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यामादंदे। अश्विरस्य नारिरसि। अध्वरकृद्देवभ्यः। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते॥२॥

देवयन्तंस्त्वेमहे। उप प्रयंन्तु मुरुतः सुदानंवः। इन्द्रं प्राशूर्भवा सचौ। प्रैतु ब्रह्मणस्पतिः। प्र देव्येतु सूनृतौ। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किराधसम्। देवा युज्ञं नयन्तु नः। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे म॰साथाम्। ऋष्ट्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥३॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। इयत्यग्रं आसीः। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। देवीवभीरुस्य भूतस्यं प्रथमजा ऋतावरीः।

ऋखासंमुद्य। मुखस्य शिरं:॥४॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। इन्द्रस्यौजोंऽसि। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। अग्निजा असि प्रजापंते रेतंः। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥५॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीष्णें। आयुंधेहि प्राणं धेहि। अपानं धेहि व्यानं धेहि। चक्षुंधेहि श्रोत्रं धेहि। मनों धेहि वाचं धेहि। आत्मानं धेहि प्रतिष्ठां धेहि। मां धेहि मिये धेहि। मधुं त्वा मधुला करोतु। मुखस्य शिरोंऽसि॥६॥

यज्ञस्यं पदे स्थंः। गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमि। त्रैष्टुंभेन त्वा छन्दंसा करोमि। जागंतेन त्वा छन्दंसा करोमि। मखस्य रास्नांऽसि। अदिंतिस्ते बिलंं गृह्णातु। पाङ्कंन छन्दंसा। सूर्यस्य हरंसा श्राय। मखोंऽसि॥७॥

पते शिरं ऋतावरीर्ऋद्धासंमुद्ध मुखस्य शिर्ः शिर्ः शिरोंऽसि नवं च॥———[२]

वृष्णो अश्वंस्य निष्पदंसि। वर्रणस्त्वा धृतव्रंत आधूंपयत्। मित्रावर्रणयोर्ध्रुवेण धर्मणा। अर्चिषै त्वा। शोचिषै त्वा। ज्योतिषे त्वा। तपंसे त्वा। अभीमं मंहिना दिवम्। मित्रो बंभूव सुप्रथाः। उत श्रवंसा पृथिवीम्॥८॥

मित्रस्यं चर्षणीधृतंः। श्रवो देवस्यं सान्सिम्। द्युम्नं चित्रश्रंवस्तमम्। सिध्यै त्वा। देवस्त्वां सिवतोद्वंपतु। सुपाणिः स्वंङ्गुरिः। सुबाहुरुत शक्त्यां। अपंद्यमानः पृथिव्याम्। आशा

दिश् आ पृंण। उत्तिष्ठ बृहन्भंव॥९॥

ऊर्ध्वस्तिष्ठद्भुवस्त्वम्। सूर्यंस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्षे। ऋजवै त्वा। साधवे त्वा। सुक्षित्ये त्वा भूत्यै त्वा। इदमहम्मुमां-मुप्यायणं विशा पृशुभिर्ष्रह्मवर्चसेन् पर्यूहामि। गायत्रणं त्वा छन्दसाऽऽच्छृंणिद्मे। त्रेष्टंभेन त्वा छन्दसाऽऽच्छृंणिद्मे। त्रागंतेन त्वा छन्दसाऽऽच्छृंणिद्मे। छृणत्तुं त्वा वाक्। छृणत्तुं त्वा क्विः। छृन्धे वाचम्। छृन्ध्यूर्जम्। छृन्धि हिवः। देवं पुरश्चर सुग्ध्यासं त्वा॥१०॥

पृथिवीं भंव वाख्यद्वं॥------[३]

ब्रह्मंन् प्रवर्ग्येण् प्रचेरिष्यामः। होतंर्घ्मम्भिष्टुंहि। अग्नीद्रौहिणौ पुरोडाशाविधिश्रय। प्रतिप्रस्थात्र्विहंर। प्रस्तोतः सामानि गाय। यजुंर्युक्त्रः सामंभिराक्तंखन्त्वा। विश्वैदिवैरनुंमतं म्रुद्धिः। दक्षिणाभिः प्रतंतं पारियष्णुम्। स्तुभो वहन्तु सुमन्स्यमानम्। स नो रुचं धेह्यहंणीयमानः। भूर्भुवः सुवंः। ओमिन्द्रंवन्तः प्रचंरत॥११॥

अहंणीयमानो द्वे चं॥———[४]

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामः। होतंर्घर्मम्भिष्टुंहि। यमायं त्वा मुखायं त्वा। सूर्यस्य हरंसे त्वा। प्राणाय स्वाहां व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहां। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहां। मनसे स्वाहां वाचे सरंस्वत्ये स्वाहां। दक्षांय स्वाहा ऋतंवे स्वाहां। ओजंसे स्वाहा बलांय स्वाहां। देवस्त्वां सिवता

मध्वांऽनक्तु॥१२॥

पृथिवीं तपंसस्रायस्व। अर्चिरंसि शोचिरंसि ज्योतिरसि तपोऽसि। स॰सींदस्व महा॰ असि। शोचंस्व देववीतंमः। विधूममंग्ने अरुषं मियेध्य। सृज प्रंशस्तदर्शतम्। अञ्जन्ति यं प्रथयंन्तो न विप्राः। वपावंन्तं नाग्निना तपंन्तः। पितुर्न पुत्र उपंसि प्रेष्ठः। आ घुर्मो अग्निमृतयंत्रसादीत्॥१३॥

अनाधृष्या पुरस्तांत्। अग्नेराधिपत्ये। आयुंर्मे दाः। पुत्रवंती दक्षिणृतः। इन्द्रस्याऽऽधिपत्ये। प्रजां में दाः। सुषदां पृश्चात्। देवस्यं सिवृतुराधिपत्ये। प्राणं में दाः। आश्रुंतिरुत्तरुतः॥१४॥

मित्रावर्रुणयोराधिपत्ये। श्रोत्रं मे दाः। विधृतिरुपरिष्टात्। बृह्स्पतेराधिपत्ये। ब्रह्मं मे दाः क्षत्रं में दाः। तेजों मे धा वर्चों मे धाः। यशों मे धास्तपों मे धाः। मनों मे धाः। मनोरश्वांऽसि भूरिपुत्रा। विश्वांभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पाहि॥१५॥

सूपसदां मे भूया मा मां हिश्सीः। तपोष्वंग्ने अन्तराश् अमित्रान्। तपाशश्संमर्रुषः परस्य। तपांवसो चिकितानो अचित्तान्। वि ते तिष्ठन्तामुजरां अयासः। चितः स्थ परिचितः। स्वाहां म्रुद्धिः परिश्रयस्व। मा असि। प्रमा असि। प्रतिमा असि॥१६॥

सम्मा असि। विमा असि। उन्मा असि। अन्तरिक्षस्यान्तर्धि-रेसि। दिवं तपंसस्रायस्व। आभिर्गीर्भिर्यदतों न ऊनम्। आप्यायय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं। भूयिष्टभाजो अर्थ ते स्याम। शुक्रं ते अन्यद्यंज्तं ते अन्यत्॥१७॥

विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा ते पूषित्रह रातिरंस्तु। अर्हंन्बभर्षि सायंकानि धन्वं। अर्हं निष्कं यंज्ञतं विश्वरूपम्। अर्हं निदन्दंयसे विश्वमञ्ज्ञंवम्। न वा ओजीयो रुद्र त्वदंस्ति। गायत्रमंसि। त्रैष्ट्रभमिस। जागंतमिस। मधु मधु मधु॥१८॥ अन्तक्त्रार्शेदुत्रुतः पहि प्रतिमा असि यज्ञतन्ते अन्यक्षागंतम्स्थेकं चा———[५]

दश् प्राचीर्दशं भासि दक्षिणा। दशं प्रतीचीर्दशं भास्युदीचीः। दशोध्वा भांसि सुमन्स्यमानः। स नो रुचं धेह्यहंणीयमानः। अग्निष्ट्वा वसंभिः पुरस्ताँद्रोचयतु गायत्रेण छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिणतो रोचयतु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। समं रुचितो रोचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पृश्चाद्रोचयतु जागंतेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय॥१९॥

द्युतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिरुत्तर्तो रोचयत्वाऽनुंष्टुभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। बृह्स्पतिंस्त्वा विश्वैद्वै-रुपरिष्टाद्रोचयतु पाङ्केन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसिं। रोचिषीयाहं मंनुष्येषु। सम्राह्मर्म रुचितस्त्वं देवेष्वायुंष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चस्यंसि। रुचितोऽहं मंनुष्येष्वायुंष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चसी भूयासम्।

रुगंसि। रुचं मियं धेहि॥२०॥

मिय रुक्। दर्श पुरस्ताँद्रोचसे। दर्श दक्षिणा। दर्श प्रत्यङ्घ। दशोदङ्घं। दशोध्वी भासि सुमनस्यमानः। स नः सम्राडिष्मूर्जं धेहि। वाजी वाजिने पवस्व। रोचितो घर्मी रुचीय॥२१॥

अपंश्यं गोपामनिपद्यमानम्। आ च परां च पृथिभिश्चरंन्तम्। स स्प्रीचीः स विषूचीर्वसानः। आ वंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीः। मधु माध्वींभ्यां मधु माधूचीभ्याम्। अनुं वां देववीतये। सम्ग्रिर्ग्निनां गत। सं देवेनं सवित्रा। स॰ सूर्येण रोचते॥२२॥

स्वाह्य सम्ग्रिस्तपंसा गत। सं देवेनं सिवता। सः सूर्यंणारोचिष्ट। धूर्ता दिवो विभांसि रजंसः। पृथिव्या धूर्ता। उरोर्न्तिरक्षस्य धूर्ता। धूर्ता देवो देवानाम्। अमर्त्यस्तपोजाः। हृदे त्वा मनंसे त्वा। दिवे त्वा सूर्याय त्वा॥२३॥

ऊर्ध्वमिममध्वरं कृषि। दिवि देवेषु होत्रां यच्छ। विश्वांसां भुवां पते। विश्वंस्य भुवनस्पते। विश्वंस्य मनसस्पते। विश्वंस्य वचसस्पते। विश्वंस्य तपसस्पते। विश्वंस्य ब्रह्मणस्पते। देवश्रूस्त्वं देव घर्म देवान्पांहि। तुपोजां वाचंम्स्मे नियंच्छ देवायुवम्॥२४॥

गर्भो देवानाम्। पिता मंतीनाम्। पतिः प्रजानाम्। मतिः

कर्वानाम्। सं देवो देवेनं सिवत्रा यंतिष्ट। स॰ सूर्येणारुक्त। आयुर्दास्त्वम्स्मभ्यं धर्म वर्चोदा असि। पिता नोंऽसि पिता नों बोध। आयुर्धास्तंनूधाः पंयोधाः। वर्चोदा वंरिवोदा द्रंविणोदाः॥२५॥

अन्तिरिक्षप्र उरोर्वरीयान्। अशीमिहं त्वा मा मां हिश्सीः। त्वमंग्ने गृहपंतिर्विशामंसि। विश्वांसां मानुंषीणाम्। श्वतं पूर्भिर्यविष्ठ पाह्यश्हंसः। समेद्धार्श् श्वतः हिमाः। तुन्द्राविण्शं हार्दिवानम्। इहैव रातयः सन्तु। त्वष्टींमती ते सपेय। सुरेता रेतो दर्धाना। वीरं विदेय तवं सुन्दिशं। माऽहः रायस्पोषंण् वि योषम्॥२६॥

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्वे। अश्विनौंर्बाहुभ्यांम्। पूष्णो हस्ताभ्यामादंदे। अदित्यै रास्नांसि। इड एहिं। अदित एहिं। सरस्वत्येहिं। असावेहिं। असावेहिं। असावेहिं॥२७॥

अदित्या उष्णीषंमिस। वायुरंस्यैडः। पूषा त्वोपावंसृजतु। अश्विभ्यां प्रदांपय। यस्ते स्तनंः शश्यो यो मंयोभूः। येन विश्वा पुष्यंसि वार्याणि। यो रंत्रधा वंसुविद्यः सुदर्त्रः। सरंस्वति तिमेह धातंवेकः। उस्रं घर्मः शिरंष। उस्रं घर्मं पाहि॥२८॥

घुर्मायं शि॰ष। बृहुस्पतिस्त्वोपंसीदतु। दानंवः स्थ पेरंवः। विष्वुग्वृतो लोहितेन। अश्विभ्यां पिन्वस्व। सरंस्वत्यै पिन्वस्व। पूष्णे पिन्वस्व। बृह्स्पतंये पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व॥२९॥

गायत्रोंऽसि। त्रैष्टुंभोऽसि। जागंतमिस। सहोर्जो भागे-नोपमेहिं। इन्द्रौश्विना मधुंनः सार्घस्यं। घुर्मं पांत वसवो यजंता वट्। स्वाहौ त्वा सूर्यस्य रूश्मये वृष्टिवनये जुहोमि। मधुं ह्विरंसि। सूर्यस्य तपंस्तप। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिगृह्णामि॥३०॥

अन्तिरिक्षेण त्वोपंयच्छामि। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो भर्तु शकेयम्। तेजोऽसि। तेजोऽनु प्रेहिं। दिविस्पृङ्गा मां हिश्सीः। अन्तिरिक्षस्पृङ्गा मां हिश्सीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीः। सुवंरिसे सुवंर्मे यच्छ। दिवं यच्छ दिवो मां पाहि॥३१॥

एहिं पाहि पिन्वस्व गृह्णाम् नवं च॥**______**[८]

समुद्रायं त्वा वातांय स्वाहाँ। सिल्लायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अनाधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अप्रतिधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अवस्यवेँ त्वा वातांय स्वाहाँ। दुवंस्वते त्वा वातांय स्वाहाँ। शिमिंद्वते त्वा वातांय स्वाहाँ। अग्नयेँ त्वा वसुंमते स्वाहाँ। सोमांय त्वा रुद्रवंते स्वाहाँ। वरुंणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहाँ॥३२॥

बृह्स्पतंये त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहां। स्वित्रे त्वंर्भुमतें विभुमतें प्रभुमते वाजंवते स्वाहां। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहाँ। विश्वा आशां दक्षिण्सत्। विश्वां देवानंयाडिह। स्वाहांकृतस्य घूर्मस्यं। मधौः पिबतमश्विना। स्वाहाऽग्नये युज्ञियांय। शं यजुंिभः। अश्विना घृमं पांत १ हार्दिवानम्॥३३॥

अहंर्दिवाभिंक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी मर्साताम्। स्वाहेन्द्राय। स्वाहेन्द्रावट्। घुर्ममंपातमिश्वना हार्दिवानम्। अहंर्दिवाभिंक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमरसाताम्। तं प्राव्यं यथा वट्। नमों दिवे। नमः पृथिव्यै॥३४॥

दिवि धां इमं यज्ञम्। यज्ञमिमं दिवि धाः। दिवं गच्छ। अन्तरिक्षं गच्छ। पृथिवीं गच्छ। पश्चं प्रदिशों गच्छ। देवान्धर्मपान्गंच्छ। पितृन्धर्मपान्गंच्छ॥३५॥
अवित्यवेत स्वाहं हार्विवानं पृथिया अशे चं॥—————[९]

ड्वं पींपिहि। ऊर्जे पींपिहि। ब्रह्मंणे पीपिहि। क्षुत्रायं पीपिहि। अ्द्यः पींपिहि। ओषंधीभ्यः पीपिहि। वन्स्पितंभ्यः पीपिहि। द्यावांपृथिवीभ्यां पीपिहि। सुभूतायं पीपिहि। ब्रह्मवर्चसायं पीपिहि॥३६॥

यजंमानाय पीपिहि। मह्यं ज्यैष्ठ्यांय पीपिहि। त्विष्यैं त्वा। द्युम्नायं त्वा। इन्द्रियायं त्वा भूत्यैं त्वा। धर्माऽसि सुधर्मा मैं न्यस्मे। ब्रह्मांणि धारय। क्षुत्राणिं धारय। विशंं धारय। नेत्त्वा वार्तः स्कन्दयांत्॥३७॥

अमुष्यं त्वा प्राणे सांदयामि। अमुनां सह निर्धं गंच्छ।

यों ऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। पूष्णे शरंसे स्वाहां। ग्रावंभ्यः स्वाहां। प्रतिरेभ्यः स्वाहां। द्यावांपृथिवीभ्याः स्वाहां। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहां। रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहां॥३८॥

अहुर्ज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिर्ज्योतिषा्ड् स्वाहाँ। रात्रिर्ज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिर्ज्योतिषा्ड् स्वाहाँ। अपीपरो माऽह्यो रात्रियै मा पाहि। पृषा तें अग्ने समित्। तया समिध्यस्व। आयुंर्मे दाः। वर्चसा माञ्जीः। अपीपरो मा रात्रिया अह्यों मा पाहि॥३९॥

पृषा ते अग्ने स्मित्। तया समिध्यस्व। आयुंर्मे दाः। वर्चसा माञ्जीः। अग्निज्यीतिज्यीतिपृग्निः स्वाहाँ। सूर्यो ज्योतिज्यीतिः सूर्यः स्वाहाँ। भूः स्वाहाँ। हुत हिवः। मधुं हिवः। इन्द्रंतमेऽग्नौ॥४०॥

पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीः। अश्यामं ते देवघर्म। मधुंमतो वार्जवतः पितुमतः। अङ्गिरस्वतः स्वधाविनः। अशीमहिं त्वा मा मां हिश्सीः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रिश्मिभ्यः। स्वाहाँ त्वा नक्षंत्रभ्यः॥४१॥
बृह्यवर्षमार्थं पीपिह स्कृत्यांद्वरारं कृदहाँ वाहाऽहां मा पाह्यग्रे सुम वं॥————[१०]

घर्म् या तें दिवि शुक्। या गांयत्रे छन्दंसि। या ब्राँह्मणे। या हंविधीनें। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां। घर्म् या तेऽन्तिरंक्षे शुक्। या त्रैष्टुंभे छन्दंसि। या रांजन्यें। याऽऽग्नींधे। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां॥४२॥ घर्म् या ते पृथिव्या १ शुक्। या जागंते छन्दंसि। या वैश्यै। या सदंसि। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहाँ। अनुंनोऽद्यानुंमितिः। अन्विदंनुमते त्वम्। दिवस्त्वां पर्स्पायाः। अन्तिरक्षस्य तुनुवंः पाहि। पृथिव्यास्त्वा धर्मणा॥४३॥

व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पायाः। क्ष्र्त्रस्यं तनुवंः पाहि। विशस्त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। प्राणस्यं त्वा पर्स्पायः। चक्षुंषस्तनुवंः पाहि। श्रोत्रंस्य त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। वृत्र्गुरंसि शुं युधायाः॥४४॥

शिशुर्जनंधायाः। शं च विश्वायुः शर्मं सप्रथाः। अप द्वेषो अप ह्वर्पाः। अप द्वेषो अप ह्वर्पाः। अप द्वेषो अप ह्वर्पाः। अप्यद्वंतस्य सिश्वमः। धर्मेतत्तेऽन्नंमेतत्पुरीषम्। तेन वर्धस्व चाऽऽ चं प्यायस्व। वृधिषीमिहिं च व्यम्। आचं प्यासिषीमिहिं॥४५॥

रित्तिर्नामांसि दिव्यो गंन्ध्वाः। तस्यं ते पृद्वद्वंविधानम्। अग्निरध्यंक्षाः। रुद्रोऽधिपतिः। सम्हमायुंषा। सं प्राणेनं। सं वर्चसा। सं पर्यसा। सं गौपत्येनं। स॰ रायस्पोषेण॥४६॥

व्यंसौ। यों ऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। अचिंऋदृहृषा हरिः। महान्मित्रो न दंर्शृतः। स॰ सूर्येण रोचते। चिदंसि समुद्रयोनिः। इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावां। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुंरुण्युः। महान्थ्स्थस्थै ध्रुव आनिषंत्तः॥४७॥

नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। विश्वावंसुश् सोम गन्ध्वंम्। आपो दृहशुषीः। तृहतेनाव्यायन्। तृद्ववैत्। इन्द्रो रारहाण आसाम्। परि सूर्यस्य परिधीश रंपश्यत्। विश्वावंसुर्भि तन्नो गृणातु। दिव्यो गन्धवा रजसो विमानः। यद्वां घा सृत्यमुत यन्न विद्या ४८॥

धियों हिन्वानो धिय इन्नो अव्यात्। सिम्नेमिवन्द् चरणे नदीनाम्। अपांवृणोद्दुरो अश्मंत्रजानाम्। प्रासांन्यान्ध्वीं अमृतांनि वोचत्। इन्द्रो दक्षं परिजानाद्दीनम्। एतत्त्वं देव धर्म देवो देवानुपांगाः। इदम्हं मंनुष्यों मनुष्यान्। सोमंपीथानुमेहि। सह प्रजयां सह रायस्पोषंण। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु॥४९॥

दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः। यो उस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। उद्वयं तमंस्परिं। उदुत्यं चित्रम्। इममूषुत्यम्स्मभ्य र् सिनम्। गायत्रं नवीया रसम्। अग्ने देवेषु प्रवोचः॥५०॥ वाऽऽग्रींग्रे तान्तं पुतेनावं यक्ने स्वाह्य धर्मणा श्रं युधायाः प्यासिषीमहि पोषेणु निषंत्तो विद्य सन्त्वशै॥[११]

महीनां पयोऽसि विहितं देवत्रा। ज्योतिर्भा असि वनस्पतीनामोषधीनाः रसंः। वाजिनं त्वा वाजिनोऽवं नयामः। ऊर्ध्वं मनंः सुवर्गम्॥५१॥

-[१२]

अस्कान्द्यौः पृथिवीम्। अस्कानृष्मो युवागाः। स्कन्नेमा

विश्वा भुवंना। स्कन्नो युज्ञः प्रजंनयतु। अस्कानजंनि प्राजंनि। आ स्कन्नाज्ञांयते वृषां। स्कन्नात् प्रजंनिषीमहि॥५२॥

या पुरस्तां द्विद्युदापंतत्। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहां। या दंक्षिणतः। या पृश्चात्। योत्तंर्तः। योपरिष्टाद्विद्युदापंतत्। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां॥५३॥

−[88]

प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहाँ। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहाँ। मनंसे स्वाहां वाचे सरंस्वत्ये स्वाहाँ॥५४॥

[१५]

पूष्णे स्वाहां पूष्णे शरंसे स्वाहां। पूष्णे प्रंपुत्थ्यांय स्वाहां पूष्णे नरन्धिषाय स्वाहां। पूष्णेऽङ्गृंणये स्वाहां पूष्णे नरुणांय स्वाहां। पूष्णे सांकेताय स्वाहां॥५५॥

[१६]

उदंस्य शुष्माँद्भानुर्नात् बिभंति। भारं पृथिवी न भूमं। प्र शुक्रैतं देवी मंनीषा। अस्मथ्सुतंष्टो रथो न वाजी। अर्चन्त एके मिंह सामंमन्वत। तेन सूर्यमधारयन्। तेन सूर्यमरोचयन्। धर्मः शिर्स्तद्यमुग्निः। पुरीषमिस सं प्रियं प्रजयां पृशुभिंभ्वत्। प्रजापितंस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥५६॥

[१७]

यास्ते अग्न आर्द्रा योनयो याः कुंलायिनीः। ये तें अग्न इन्देवो या उ नाभयः। यास्ते अग्ने तनुव ऊर्जो नाम। ताभिस्त्वमुभयीभिः संविदानः। प्रजाभिरग्ने द्रविणेह सीद। प्रजापितस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५७॥

-[86]

अग्निरंसि वैश्वान्तेंऽसि। संवथ्सरोंऽसि परिवथ्सरोंऽसि। इदाव्यस्तेंऽसीद्वथ्सरोंऽसि। इद्वथ्सरोंऽसि वथ्सरोंऽसि। तस्यं ते वस्नतः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। श्ररदुत्तंरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितंयः। अपूरपृक्षाः पृरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। तस्यं ते मासांश्चार्थमासाश्चं कल्पन्ताम्। ऋतवंस्ते कल्पन्ताम्। संवथ्सरस्ते कल्पताम्। अहोरात्राणि ते कल्पन्ताम्। एति प्रेति वीति समित्युदिति। पृजापतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवः सीद॥५८॥

भूर्भृवः सुवंः। ऊर्ध्व ऊ षु णं ऊतयें। ऊर्ध्वो नंः पाह्यश्हंसः। विधुन्दंद्राणश् समंने बहूनाम्। युवांनुश् सन्तंं पितृतो जंगार। देवस्यं पश्य काव्यं मिहृत्वाद्या मुमारं। सह्यः समान। यदृते चिंदिभिश्लिषंः। पुरा जुर्तृभ्यं आतृदंः। सन्धांता सन्धिं मघवां पुरोवसुंः॥५९॥

निष्केर्ता विह्नुंतं पुनः। पुनंरूर्जा सह र्य्या। मा नों

घर्म व्यथितो विव्यथो नः। मा नः पर्मधरं मा रजोऽनैः। मोष्वंस्मा इस्तमंस्यन्तरा धाः। मा रुद्रियांसो अभिगुंर्वृधानः। मा नः ऋतुंभिर्हीडितेभिर्स्मान्। द्विषांसुनीते मा परा दाः। मा नो रुद्रो निर्ऋतिर्मा नो अस्ताः। मा द्यावांपृथिवी हीडिषाताम्॥६०॥

उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिह नंः सखाया। आदित्यानां प्रसितिरहेतिः। उग्रा शतापांष्ठा घविषा परि णो वृणक्तु। इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वं नो अग्ने स त्वं नो अग्ने। त्वमंग्ने अयासिं। उद्वयं तमंस्परिं। उदुत्यं चित्रम्। वयः सुपूर्णाः॥६१॥

पुरोवसुंरहीडिपातार सुपर्णाः॥______[२०]

भूर्भुवः सुवंः। मिय् त्यिदिन्द्रियं महत्। मिय् दक्षो मिय् ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो विभांतु मे। आकूँत्या मनसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। ब्रह्मणा तेजंसा सह। क्षत्रेण यशंसा सह। सत्येन तपंसा सह। तस्य दोहंमशीमिह। तस्यं सुम्रमंशीमिह। तस्यं भूक्षमंशीमिह। तस्यं त इन्द्रेण पीतस्य मध्मतः। उपंहूतस्योपंहूतो भक्षयामि॥६२॥

यशंसा सह पद्गं।——[२१

यास्ते अग्ने घोरास्तनुवंः। क्षुच् तृष्णां च। अस्नुक्वानांहुतिश्च। अशनया चं पिपासा चं। सेदिश्चामंतिश्च। एतास्ते अग्ने घोरास्तनुवंः। ताभिरमुं गंच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं

| \sim | |
|-----------|-----|
| द्विष्मः। | ६३॥ |

.[૨૨]

स्निक् स्नीहिंतिश्च स्निहिंतिश्च। उष्णा चे शीता चे। उग्रा चे भीमा चे। सदाम्नी सेदिरिनेरा। एतास्ते अग्ने घोरास्तनुवेः। ताभिरमुं गेच्छ। योऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चे व्यं द्विष्मः॥६४॥

धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनयईश्च। निलिम्पश्चं विलिम्पश्चं विक्षिपः॥६५॥

—[૨૪]

उग्रश्च धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनय ईश्च। सह्सह्वा इश्च सहंमानश्च सहंस्वा इश्च सहीया इश्च। एत्य प्रेत्यं विक्षिपः॥६६॥

_[२५]

अहोरात्रे त्वोदीरयताम्। अर्धमासास्त्वोदीं जयन्तु। मासौस्त्वा श्रपयन्तु। ऋतवसत्वा पचन्तु। संवथ्सरस्त्वां हन्त्वसौ॥६७॥

-[२६]

खट् फड् जिहि। छिन्धी भिन्धी हुन्धी कट्। इति वार्चः कूराणि॥६८॥

[૨૭]

विगा इंन्द्र विचरंन्थ्स्पाशयस्व। स्वपन्तंमिन्द्र पशुमन्तंमिच्छ। वज्रेणामुं बोधय दुर्विदत्रम्। स्वपतौंऽस्य प्रहंर भोजनेभ्यः। अग्ने अग्निना संवदस्व। मृत्यो मृत्युना संवदस्व। नमंस्ते अस्तु भगवः। सुकृत्ते अग्ने नमंः। द्विस्ते

-[३३]

| नमंः। त्रिस्ते नमंः। चतुस्ते नमंः। पृश्चकृत्वंस्ते दृश्कृत्वंस्ते नमंः। शृतकृत्वंस्ते नमंः। आसहस्र नमंः। अपरिमितकृत्वंस्ते नमंः। नमंस्ते अस्तु हि॰सीः॥६९॥ | कृत्वंस्ते |
|--|-------------------|
| | -[२८] |
| असृंन्मुखो रुधिरेणाव्यंक्तः। यमस्यं दूतः श्वपाद्धिः | |
| गृध्रंः सुपूर्णः कुणप्ं निषेवसे। यमस्यं दूतः प्रहितो चोभयौः॥७०॥ | मुबस्य |
| _ | — [२९] |
| यदेतर्हृकुसो भूत्वा। वाग्दें व्यभिरायंसि। | द्विषन्तं |
| मेऽभिरांय। तं मृत्यो मृत्यवे नय। स आर्त्यार्तिमार्च्छत् | १७॥] -[३०] |
| यदींषितो यदि वा स्वकामी। भयेडंको | वदंति |
| वाचंमेताम्। तामिंन्द्राग्नी ब्रह्मंणा संविदानौ। शिवा कृणुतं गृहेषुं॥७२॥ | <u>म</u> ुस्मभ्यं |
| | — [३१] |
| दीर्घमुखि दुर्हणु। मा स्मं दक्षिण्तो वंदः। यदि द | क्षिण्तो |
| वदौद्दिषन्तुं मेऽवं बाधासै॥७३॥ | _[३२] |
| इत्थादुर्लूक आपंप्तत्। हिर्ण्याक्षो अयोमुखः। रक्ष | |
| आगंतः। तमितो नांशयाग्रे॥७४॥ | <i>ē</i> .∵ |

यदेतद्भूतान्यंन्वाविश्यं। दैवीं वार्चं वृदसिं। द्विषतीं नः परावद। तान्मृत्यो मृत्यवें नय। त आर्त्याऽऽर्तिमार्च्छंन्तु। अग्निनाऽग्निः संवंदताम्॥७५॥

.[३૪]

प्रसार्यं सुक्थ्यौ पतंसि। सुव्यमक्षिं निपेपिं च। मेहकंस्य चुनामंमत्॥७६॥

-[३५]

अत्रिणा त्वा क्रिमे हन्मि। कण्वेन ज्मदेग्निना। विश्वावंसोक्रह्मणा हृतः। क्रिमीणा् राजाः। अप्येषाः स्थपितंरहृतः। अथो माताऽथो पिता। अथो स्थूरा अथौ श्रुद्राः। अथो कृष्णा अथौ श्रेताः। अथो आशाितंका हृताः। श्रेतािमेः सह सर्वे हताः॥७७॥

-[३६]

आह्रावंद्य। शृतस्यं ह्विषो यथां। तथ्मत्यम्। यद्मुं यमस्य जम्भंयोः। आदंधामि तथा हि तत्। खण्फण्म्रसिं॥७८॥

[シょ]-

ब्रह्मणा त्वा शपामि। ब्रह्मणस्त्वा शपथेन शपामि। घोरेणं त्वा भृगूणां चक्षुंषा प्रेक्षें। रौद्रेण त्वाङ्गिरसां मनसा ध्यायामि। अघस्यं त्वा धारंया विद्धामि। अधंरो मत्पंद्यस्वासौ॥७९॥ —————[3८]

उत्तंद शिमिजावरि। तल्पेंजे तल्प उत्तंद। गिरी॰ रनु

प्रवेशय। मरीचीरुप सन्नुद। यावंदितः पुरस्तांदुदयांति सूर्यः। तावंदितोऽमुं नांशय। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः॥८०॥ ————[३९]

भूर्भुवः सुवो भूर्भुवः सुवो भूर्भुवः सुवंः। भुवो उद्घायि भुवो उद्घायि। नृम्णायि नृम्णम्। निधाय्यो वायि निधाय्यो वायि। ए अस्मे अस्मे। सुवर्न ज्योतीः॥८१॥

पृथिवी समित्। ताम्गिः सिनन्धे। साऽग्निः सिनन्धे। ताम्हः सिनन्धे। सा मा सिनद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन् सिनन्ताः स्वाहां। अन्तरिक्षः सिन्॥८२॥

तां वायुः सिनन्धे। सा वायु सिनन्धे। ताम्ह सिन्धे। सा मा सिनंद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चंसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन सिनन्ता स्वाहाँ। द्यौः सिन्त। तामांदित्यः सिनन्धे॥८३॥

साऽऽदित्य सिन्धे। तामह सिन्धे। सा मा सिनंद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चंसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन सिनंन्ता स्वाहाँ। प्राजापत्या में सिनदिस सपत्रक्षयंणी। भ्रातृब्यहा मेंऽसि स्वाहाँ। अग्नै ब्रतपते ब्रतं चेरिष्यामि॥८४॥ तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। वायों व्रतपत् आदित्य व्रतपते। व्रतानां व्रतपते व्रतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। द्यौः समित्। तामांदित्यः समिन्धे। साऽऽदित्य समिन्धे। तामह समिन्धे। सा मा समिद्धा। आयुंषा तेर्जसा॥८५॥

वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन् सिनंताः स्वाहां। अन्तरिक्षः समित्। तां वायुः सिनंधे। सा वायुः सिनंधे। सा वायुः सिनंधे। तामृहः सिन्धे। सा मा सिनंद्या। आयुंषा तेर्जसा। वर्चसा श्रिया॥८६॥

यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन सिमन्ता हु स्वाहाँ। पृथिवी समित्। तामृग्निः सिमन्धे। साऽग्निः सिमन्धे। तामृहः सिमन्धे। सा मा सिमद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं॥८७॥

अन्नाद्यंन् सिमंन्ता इस्वाहाँ। प्राजापत्या में सिमदंसि सपत्नक्षयंणी। भ्रातृ व्यहा में ऽसि स्वाहाँ। आदित्य व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्में ऽराधि। वायौं व्रतपते उग्ने व्रतपते। व्रतानां व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्में ऽराधि॥८८॥

सुमिथ्सर्मिन्थे ब्रुतं चेरिष्याम्यायुषा तेजसा वर्चसा श्रिया यशसा ब्रह्मवर्चुसेनाृष्टौ चे॥————[४१]

शं नो वार्तः पवतां मात् रिश्वा शं नंस्तपतु सूर्यः। अहां निशं भवन्तु नः श॰ रात्रिः प्रतिधीयताम्। शमुषा नो व्युच्छतु शमां दित्य उदेतु नः। शिवा नः शन्तंमा भव सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सुन्हिशी। इडांयै वास्त्विसि वास्तुमद्वांस्तुमन्तों भूयास्म मा वास्तोंश्छिथ्स्मह्यवास्तुः स भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। प्रतिष्ठासि प्रतिष्ठावंन्तो भूयास्म मा प्रतिष्ठायांश्छिथ्स्मह्यप्रतिष्ठः स भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। आ वांत वाहि भेषजं वि वांत वाहि यद्रपंः। त्वः हि विश्वभेषजो देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमो वातौ वात आ सिन्धोरा पंरावतः॥८९॥

दक्षं मे अन्य आवातु परान्यो वांतु यद्रपंः। यद्दो वांतते गृहें ऽमृतंस्य निधिर्हितः। ततों नो देहि जीवसे ततों नो धेहि भेषजम्। ततों नो मह आवंह वात आवांतु भेषुजम्। शुम्भूर्मयोभूर्नो हृदे प्र णु आयू ५ेषि तारिषत्। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तं त्वा प्रपंद्ये सगुः सार्थः। सृह यन्मे अस्ति तेने। भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये सुवः प्रपंद्ये भूर्भुवः सुवः प्रपंद्ये वायुं प्रपद्येऽनातां देवतां प्रपद्येऽश्मानमाख्णं प्रपंदो प्रजापंतेर्ब्रह्मकोशं ब्रह्म प्रपंद्य ओं प्रपंदो। अन्तरिक्षं म उर्वन्तरं बृहद्ग्रयः पर्वताश्च यया वातः स्वस्त्या स्वंस्तिमान्तयां स्वस्त्या स्वंस्तिमानंसानि। प्राणांपानौ मृत्योमां पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मियं मेथां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेधां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेधां मियं प्रजां मिय सूर्यो भ्राजों दधातु॥९०॥

द्युभिरक्तुभिः परिपातम्स्मानिरष्टिभिरिश्वना सौभंगेभिः। तन्नो मित्रो वर्रुणो मामहन्तामिदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः। कयां निश्चित्र आ भ्वदूती सदावृधः सखाँ। कया शिचेष्ठया वृता। कस्त्वां सत्यो मदानां मर्हिष्ठो मध्सदन्धंसः। दृढाचिदारुजे वस्ं। अभी षुणः सखींनामिवता जीरितृणाम्। शृतं भवास्यूतिभिः। वयः सुपूर्णा उपसेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधंमानाः। अपं ध्वान्तमूणुंहि पूर्धि चक्षुंर्मुगुष्धंस्मान्निधयेव बद्धान्॥९१॥

शं नो देवीर्भिष्टंय आपों भवन्तु पीतयें। शं योर्भिस्नंवन्तु नः। ईशाना वार्याणां क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्। अपो यांचामि भेषजम्। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्मैं भूयासुर्यों ऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन। महे रणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रस्स्तस्यं भाजयतेह नंः। उश्तीरिंव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ॥९२॥

आपो जनयंथा च नः। पृथिवी शान्ता साऽग्निनां शान्ता सा में शान्ता शुच शमयत्। अन्तरिक्ष श शान्तं तद्वायुनां शान्तं तन्में शान्त शुच शमयत्। द्योः शान्ता साऽऽदित्येनं शान्ता सा में शान्ता शुच श शमयत्। पृथिवी शान्तिं रन्तरिक्ष शान्तिर्द्याः शान्तिर्दिशः शान्तिरवान्तरिद्शाः शान्तिर्पाः शान्तिर्वायः शान्तिरादित्यः शान्तिश्चन्द्रमाः शान्तिर्नक्षेत्राणि शान्तिरापः शान्तिरोषंधयः शान्तिर्वनस्पतंयः शान्तिर्गौः शान्तिरं जा शान्तिरश्वः शान्तिः पुरुषः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिं र्ब्राह्मणः शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः शान्तिंमें अस्तु शान्तिः। तयाहर शान्त्या सर्वशान्त्या मह्यं द्विपदे चतुंष्पदे च शान्तिं करोमि शान्तिंर्मे अस्तु शान्तिः। एह श्रीश्च हीश्च धृतिंश्च तपों मेधा प्रतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चेतानि मोत्तिष्ठन्तुमनूत्तिष्ठन्तु मा मा्ड् श्रीश्च हीश्च धृतिश्च तपो मेधा प्रंतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चैतानि मा मा हांसिषुः। उदायुंषा स्वायुषोदोषंधीना रसेनोत्पर्जन्यंस्य शुष्मेणोदंस्थाममृता १ अनु। तचक्षुंदेविहेतं पुरस्तौच्छुऋमुचरत्। पश्येम श्रारदेः शतं जीवेम शरदेः शतं नन्दाम शरदेः शतं मोदाम श्रुरदेः शतं भवीम श्रुरदेः श्रुत १ श्रुणवीम श्रुरदेः श्रुतं प्रब्रंवाम श्ररदेः शतमजीताः स्याम शरदेः शतं ज्योक्र सूर्यं दृशे। य उदंगान्महतोऽर्णवाँद्विभ्राजंमानः सरि्रस्य मध्याथ्स मां वृषभो लोहिताक्षः सूर्यो विपश्चिन्मनंसा पुनातु। ब्रह्मणश्चोतंन्यसि ब्रह्मण आणी स्थो ब्रह्मण आवपंनमसि धारितेयं पृथिवी ब्रह्मणा मही धारितमेनेन मृहद्न्तरिक्षं दिवं दाधार पृथिवी सदेवां यदहं वेद तदहं धारयाणि मा मद्वेदोऽधिविस्रंसत्। मेधामनीषे माविंशता समीची भूतस्य भव्यस्यावंरुध्यै सर्वमायुरयाणि सर्वमायुरयाणि। आभिर्गीर्भिर्यदतों न ऊनमाप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। ब्रह्म प्रावादिष्म तन्नो मा हांसीत्॥९३॥

परावतों दधातु बद्धां जिन्वंथ दशे सप्त चं॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम ऋषिंभ्यो मन्नकृद्धो मन्नपतिभ्यो मा मामृषंयो मञ्रकृतो मञ्रपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मञ्रकृतो मन्नपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये सत्यं विदिष्ये तस्मा अहमिदमुप्स्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजायै पशूनां भूयादुपस्तरणमहं प्रजायै पशूनां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योर्मा पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विदष्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वार्चमुद्यास र शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभायै पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥पञ्चमः प्रश्नः॥

ॐ शं नस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥ देवा वै सन्नमांसत। ऋद्धिंपरिमितं यशंस्कामाः। तेंंऽब्रुवन्। यन्नेः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषां नस्तथ्सहासदितिं। तेषां कुरुक्षेत्रं वेदिरासीत्। तस्यै खाण्ड्वो देक्षिणार्ध आंसीत्। तूर्प्रमृत्तरार्थः। पुरीणज्ञंघनार्थः। मुरवं उत्करः॥१॥

तेषां मुखं वैष्णुवं यशं आर्च्छत्। तत्र्यंकामयत। तेनापांकामत्। तं देवा अन्वायन्। यशोऽव्रुरुंध्समानाः। तस्यान्वागंतस्य। सृव्याद्धनुरजांयत। दक्षिणादिषंवः। तस्मादिषुधन्वं पुण्यंजन्म। युज्ञजंन्मा हि॥२॥

तमेक् सन्तम्। बहवो नाभ्यंधृष्णुवन्। तस्मादेकंमिषुधन्वि-नम्। बहवो ऽनिषुधन्वा नाभिधृंष्णुवन्ति। सो ऽस्मयत। एकं मा सन्तं बहवो नाभ्यंधर्षिषुरितिं। तस्यं सिष्मियाणस्य तेजोऽपाँकामत्। तद्देवा ओषंधीषु न्यंमृजुः। ते श्यामाकां अभवन्। स्मुयाका वै नामैते॥३॥

तथ्स्मयाकांना इस्मयाकृत्वम्। तस्माँ द्वीक्षितेनां पिगृह्यं स्मेत्व्यम्। तेजंसो धृत्यैं। सधनुः प्रतिष्कभ्यां तिष्ठत्। ता उंपदीकां अब्रुवन्वरं वृणामहै। अर्थं व इम इर्ययाम। यत्र कं च खनांम। तद्पों ऽभितृंणदामेतिं। तस्मां दुपदीका यत्र कं च खनंन्ति। तदपों ऽभितृंनदन्ति॥४॥

वारेवृत्ड् ह्यांसाम्। तस्य ज्यामप्यांदन्। तस्य

धनुंर्विप्रवंमाण् १ शिर् उदंवर्तयत्। तद्यावांपृथिवी अनुप्रावंर्तत। यत्प्रावंर्तत। तत्प्रंवर्ग्यस्य प्रवर्ग्यत्वम्। यद्धाँ(४)इत्यपंतत्। तद्धमस्यं धर्मत्वम्। मृह्तो वीर्यमपप्तदितिं। तन्मंहावीरस्यं महावीरत्वम्॥५॥

यदस्याः स्मर्भरन्। तथ्सम्राज्ञाः सम्राद्वम्। तक्ष् स्तृतं देवतां स्त्रोधा व्यंगृह्णत्। अग्निः प्रांतः सवनम्। इन्द्रो माध्यं दिन् सवनम्। विश्वेदेवास्तृतीयसवनम्। तेनापंशीष्णां यज्ञेन् यजमानाः। नाशिषोऽवारुन्धतः। न सुवर्गं लोकम्भ्यंजयन्। ते देवा अश्विनांवब्रुवन्॥६॥

भिषजौ वै स्थंः। इदं यज्ञस्य शिरः प्रतिधत्तमिति। तावंबूतां वरं वृणावहै। ग्रहं एव नावत्रापि गृह्यतामिति। ताभ्यामेतमांश्विनमंगृह्णन्। तावेतद्यज्ञस्य शिरः प्रत्यंधत्ताम्। यत्प्रंवर्ग्यः। तेन सशींष्णा यज्ञेन यजंमानाः। अवाशिषो- ऽर्रुन्थत। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। यत्प्रंवर्ग्यं प्रवृणिति। यज्ञस्यैव तच्छिरः प्रतिदधाति। तेन सशींष्णा यज्ञेन यजंमानः। अवाशिषों रुन्थे। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। तस्मादेष आश्विनप्रंवया इव। यत्प्रंवर्ग्यः॥७॥ उत्करो होते तुंचित महावीप्रवर्मव्यवम् वा वा यत्प्रंवर्ग्यः॥७॥

सावित्रं जुंहोति प्रसूँत्यै। चतुर्गृहीतेनं जुहोति। चतुंष्पादः पृशवंः। पृश्नेवावंरुन्थे। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वंव प्रतिंतिष्ठति। छन्दार्ंसि देवेभ्योऽपाँकामन्। न वोऽभागानि हव्यं वंक्ष्याम् इतिं। तेभ्यं पृतचंतुर्गृहीतमंधारयन्। पुरोनुवाक्यांयै याज्यांयै॥८॥

देवतांयै वषद्क्षारायं। यचंतुर्गृहीतं जुहोतिं। छन्दाईस्येव तत् प्रीणाति। तान्यंस्य प्रीतानि देवेभ्यों हृव्यं वंहन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यं दीक्षितस्यं गृहा(३)इ न होत्व्या(३)मितिं। ह्विर्वे दीक्षितः। यज्जंहुयात्। ह्विष्कृंतं यजमानमुग्नौ प्रदंध्यात्। यन्न जुंहुयात्॥९॥

यज्ञपुरुरुन्तरियात्। यजुरेव वंदेत्। न हुविष्कृतं यज्ञमानमुग्नौ प्रदर्धाति। न यंज्ञपुरुरुन्तरेति। गायुत्री छन्दा इस्यत्यंमन्यत। तस्यै वषद्वारौं ऽभ्यय्य शिरौं ऽच्छिनत्। तस्यै द्वेधा रसः परापतत्। पृथिवीमुर्धः प्राविंशत्। पृशूनुर्धः। यः पृथिवीं प्राविंशत्॥१०॥

स खंदिरों ऽभवत्। यः पृशून्। सों ऽजाम्। यत्खांदिर्यभिर्भ-वंति। छन्दंसामेव रसेन यज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यदौदुंम्बरी। ऊर्ग्वा उंदुम्बरः। ऊर्जेव यज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यद्वैण्वी। तेजो वै वेणुः॥११॥

तेजंसैव यज्ञस्य शिरः सम्भेरित। यद्वैकंङ्कती। भा एवावंरुन्थे। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इत्यभ्रिमादंते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांहु यत्यै। वज्रं इव वा एषा।

यदभ्रिः। अभ्रिरिस नारिरुसीत्यांह शान्त्यै॥१२॥

अध्वर्कृद्देवेभ्य इत्यांह। यज्ञो वा अध्वरः। यज्ञकृद्देवेभ्य इति वावैतदांह। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पत् इत्यांह। ब्रह्मणेव यज्ञस्य शिरोऽच्छैति। प्रेतु ब्रह्मणस्पतिरित्यांह। प्रेत्येव यज्ञस्य शिरोऽच्छैति। प्र देव्येतु सूनृतेत्यांह। यज्ञो वे सूनृतां। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किरांधस्मित्यांह॥१३॥

पाङ्को हि युज्ञः। देवा युज्ञं नंयन्तु न इत्यांह। देवानेव यंज्ञिनयः कुरुते। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथामित्यांह। आभ्यामेवानुंमतो युज्ञस्य शिरः सम्भंरित। ऋद्धासंमुद्य मुखस्य शिर् इत्यांह। युज्ञो वै मुखः। ऋद्धासंमुद्य युज्ञस्य शिर् इति वावैतदांह। मुखायं त्वा मुखस्यं त्वा शीर्ष्णं इत्यांह। निर्दिश्यैवैनंद्धरित॥१४॥

त्रिर्हरित। त्रयं इमे लोकाः। पृभ्य पृव लोकेभ्यों यज्ञस्य शिरः सम्भरित। तूष्णीं चंतुर्थः हरित। अपिरिमितादेव यज्ञस्य शिरः सम्भरित। मृत्खनादग्रे हरित। तस्मान्मृत्खनः करुण्यंतरः। इयत्यग्रं आसीरित्यांह। अस्यामेवाछंम्बद्धारं यज्ञस्य शिरः सम्भरित। ऊर्जं वा एतः रसं पृथिव्या उपदीका उद्दिहन्ति॥१५॥

यद्वल्मीकम्"। यद्वल्मीकवृपा संम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवंरुन्धे। अथो श्रोत्रमेव। श्रोत्रुड् होतत्पृथिव्याः। यद्वल्मीकः। अवंधिरो भवति। य एवं वेदे। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदेयच्छत्। स यत्रे यत्र परार्क्रमत॥१६॥

तन्नाद्धियत। स पूंतीकस्तम्बे परांत्रमत। सोंऽद्धियत। सोंऽब्रवीत्। ऊतिं वे में धा इतिं। तदूतीकांनामूतीकृत्वम्। यदूतीका भवन्ति। यज्ञायैवोतिं दंधति। अग्निजा असि प्रजापंते रेत इत्यांह। य एव रसंः पृशून्प्राविंशत्॥१७॥

तमेवावंरुन्थे। पश्चैते संम्भारा भेवन्ति। पाङ्को यज्ञः। यावांनेव यज्ञः। तस्य शिरः सम्भरित। यद्ग्राम्याणाँ पश्नां चर्मणा सम्भरैत्। ग्राम्यान्पश्र्ञ्जुचाऽपेयेत्। कृष्णाजिनेन सम्भरित। आर्ण्यानेव पृश्र्ञ्जुचार्पयित। तस्माध्समावंत्पश्नां प्रजायंमानानाम्॥१८॥

आर्ण्याः पृशवः कनीयाः सः। शुचा ह्यंताः। लोमतः सम्भरित। अतो ह्यंस्य मेध्यम्। पृरिगृह्या यन्ति। रक्षंसामपंहत्ये। बहवो हरन्ति। अपंचितिमेवास्मिन्दधित। उद्धंते सिकंतोपोप्ते परिश्रिते निदंधित शान्त्यै। मदंन्तीभिरुपं सृजित॥१९॥

तेजं प्रवास्मिन्दधाति। मधुं त्वा मधुला कंरोत्वित्यांह। ब्रह्मणैवास्मिन्तेजों दधाति। यद्ग्राम्याणां पात्रांणां कृपालैंः सश्सृजेत्। ग्राम्याणि पात्रांणि शुचाऽर्पयेत्। अर्मकृपालैः सश्सृजिति। पुतानि वा अनुपजीवनीयानिं। तान्येव शुचार्पयिति। शर्कराभिः सश्मृंजिति धृत्यैं। अथो शन्त्वायं। अज्ञलोमेः सश्मृंजिति। एषा वा अग्नेः प्रिया तृनूः। यद्जा। प्रिययैवैनं तृनुवा सश्मृंजिति। अथो तेजंसा। कृष्णाजिनस्य लोमंभिः सश्मृंजिति। युज्ञो वै कृष्णाजिनम्। युज्ञेनैव युज्ञश् सश्मृंजिति॥२०॥

परिश्रिते करोति। ब्रह्मवर्चसस्य परिगृहीत्यै। न कुर्वन्नभि प्राण्यात्। यत्कुर्वन्नभि प्राण्यात्। प्राणाञ्छुचार्पयेत्। अपहाय् प्राणिति। प्राणानां गोपीथायं। न प्रवग्यं चाऽऽदित्यं चान्तरेयात्। यदंन्तरेयात्। दुश्चर्मां स्यात्॥२१॥

तस्मान्नान्तराय्यम्। आत्मनो गोपीथायं। वेणुंना करोति। तेजो वै वेणुंः। तेजंः प्रवर्ग्यः। तेजंसैव तेजः समर्धयति। मखस्य शिरोऽसीत्यांह। यज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्प्रवर्ग्यः॥२२॥

तस्मदिवमाह। यज्ञस्यं पदे स्थ इत्यांह। यज्ञस्य ह्यंते पदे। अथो प्रतिष्ठित्यै। गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमीत्यांह। छन्दोंभिरेवैनं करोति। त्र्यंद्धं करोति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यैं। छन्दोंभिः करोति॥२३॥

वीर्यं वै छन्दा रेसि। वीर्येणैवैनं करोति। यजुंषा बिलं करोति व्यावृत्यै। इयंं तं करोति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयं तं करोति। युज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयं तं करोति। पुताबुद्दै पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥२४॥

अपिरिमितं करोति। अपिरिमित्स्यावंरुद्धै। पृरिग्रीवं करोति धृत्यै। सूर्यस्य हरसा श्रायेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अश्वश्केनं धूपयति। प्राजापत्यो वा अर्श्वः सयोनित्वायं। वृष्णो अश्वस्य निष्पदसीत्यांह। असौ वा आंदित्यो वृषाऽश्वंः। तस्य छन्दार्शस निष्पत्॥२५॥

छन्दोंभिरेवैनं धूपयति। अर्चिषं त्वा शोचिषे त्वेत्यांह। तेजं प्वास्मिन्दधाति। वारुणोंऽभीद्धंः। मैत्रियोपैति शान्त्यैं। सिद्धौ त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। देवस्त्वां सिव्तेतोद्वंपत्वित्यांह। सिवितृप्रंसूत पुवैनं ब्रह्मंणा देवतांभिरुद्वंपति। अपंद्यमानः पृथिव्यामाशा दिश् आपृणेत्यांह॥२६॥

तस्मांद्गिः सर्वा दिशोऽनु विभाति। उत्तिष्ठ बृहन्भवोध्वस्तिष्ठ ध्रुवस्त्वमित्यांह् प्रतिष्ठित्यै। ईश्वरो वा एषौंऽन्धो भवितोः। यः प्रवृग्यम्नवीक्षेते। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्ष् इत्यांह। चक्षुषो गोपीथायं। ऋजवै त्वा साधवै त्वा सुक्षित्यै त्वा भूत्यै त्वेत्यांह। इयं वा ऋजुः। अन्तरिक्ष साधा असौ सुक्षितिः॥२७॥

दिशो भूतिः। इमानेवास्मैं लोकान्कंल्पयति। अथो प्रतिष्ठित्ये। इदमहम्मुमामुष्यायणं विशा पृशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन् पर्यूह्मित्यांह। विशेवनं प्शुभिर्ब्रह्मवर्चसेन् पर्यूहित। विशेतिं राज्नन्यंस्य ब्रूयात्। विशेवनं पर्यूहित। प्शुभिरिति वैश्यंस्य। प्शुभिरेवेनं पर्यूहित। असुर्यं पात्रमनांच्छृण्णम्॥२८॥

आच्छृंणत्ति। देवत्राकंः। अजक्षीरेणाऽऽच्छृंणत्ति। प्रमं वा एतत्पयंः। यदंजक्षीरम्। प्रमेणैवैनं पयसाऽऽच्छृंणत्ति। यजुंषा व्यावृंत्त्ये। छन्दोंभिराच्छृंणत्ति। छन्दोंभिर्वा एष क्रियते। छन्दोंभिरेव छन्दाङ्स्याच्छृंणत्ति। छन्धे वाच्मित्यांह। वाचंमेवावंरुन्धे। छन्ध्यूर्ज्मित्यांह। उर्ज्यमेवावंरुन्धे। छन्ध्यूर्ज्मित्यांह। उर्ज्यमेवावंरुन्धे। छन्धि ह्विरित्यांह। ह्विरेवाकंः। देवं पुरश्चर सघ्यासन्त्वेत्यांह। यथायजुरेवेतत्॥२९॥ स्याद्यतंत्रं कर्ताः कर्ताः कर्ताः विष्वाव्यांह स्थितिरांच्छण्यक्त्वाः स्थान्यकं वा [३]

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामो होतंर्धर्मम्भिष्टुहीत्यांह। एष वा एतर्राहु बृहुस्पतिः। यद्घृह्मा। तस्मां एव प्रतिप्रोच्य प्रचंरति। आत्मनोऽनाँत्ये। यमायं त्वा मुखाय त्वेत्यांह। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरेवेन् समर्धयति। मदन्तीभिः प्रोक्षंति। तेजं एवास्मिन्दधाति॥३०॥

अभिपूर्वं प्रोक्षंति। अभिपूर्वमेवास्मिन्तेजों दधाति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथो मेध्यत्वायं। होताऽन्वांह। रक्षंसामपंहत्ये। अनंवानम्। प्राणानाः सन्तंत्ये। त्रिष्टुभंः स्तीर्गायुत्रीरिवान्वांह॥३१॥

गायत्रो हि प्राणः। प्राणमेव यजमाने दधाति।

सन्तंतमन्वांह। प्राणानांमुन्नाद्यंस्य सन्तंत्यै। अथो रक्षंसामपंहत्यै। यत्परिंमिता अनुब्रूयात्। परिंमित्मवंरुन्धीत। अपंरिमिता अन्वांह। अपंरिमित्स्यावंरुद्धौ। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं॥३२॥

यत्प्रंवर्ग्यः। ऊर्ङ्गुआः। यन्मौओ वेदो भवंति। ऊर्जैव यज्ञस्य शिरः समर्धयति। प्राणाहुतीर्जुहोति। प्राणानेव यजमाने दधाति। सप्त जुहोति। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। देवस्त्वां सविता मध्वाऽनुक्तित्यांह॥३३॥

तेजंसैवैनंमनिक्त। पृथिवीं तपंसस्रायस्वेति हिरंण्यमुपाँ-स्यित। अस्या अनंतिदाहाय। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवुर्ग्यः। अग्निः सर्वा देवताः। प्रल्वानादीप्योपाँस्यित। देवतां स्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति। अप्रंतिशीणांग्रं भवति। एतद्वंरहिर्ह्यंषः॥३४॥

अर्चिरंसि शोचिर्सीत्यांह। तेर्ज एवास्मिन्ब्रह्मवर्चसं दंधाति। स॰सींदस्व महा॰ असीत्यांह। महान् ह्यंषः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। एते वाव त ऋत्विर्जः। ये दंरशपूर्णमासयौंः। अर्थ कथा होता यर्जमानायाऽऽशिषो नाशौस्त इतिं। पुरस्तांदाशीः खलु वा अन्यो यज्ञः। उपरिष्टादाशीरन्यः॥३५॥

अनाधृष्या पुरस्तादिति यदेतानि यजू्र्ष्याहं।

शीर्षत एव यज्ञस्य यजंमान आशिषोऽवंरुन्थे। आयुंः पुरस्तांदाह। प्रजां दक्षिणतः। प्राणं पृश्चात्। श्रोत्रंमुत्तर्तः। विधृतिमुपरिष्टात्। प्राणानेवास्में समीचों दधाति। ईश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति॥३६॥

मनोरश्वांसि भूरिंपुत्रेतीमाम्भिमृंशित। इयं वै मनोरश्वा भूरिंपुत्रा। अस्यामेव प्रतिंतिष्ठत्यनुंन्मादाय। सूपसदां मे भूया मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। चितंः स्थ परिचित् इत्यांह। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तस्यं मुरुतो रुश्मयंः॥३७॥

स्वाहां मुरुद्धिः परिश्रयस्वेत्यांह। अमुमेवाऽऽदित्यश्रयस्मिमिः पर्यूहित। तस्मांदसावांदित्योंऽमुष्मिं छोके रिष्मिमिः पर्यूढः। तस्माद्राजां विशा पर्यूढः। तस्माद्रामणीः संजातैः पर्यूढः। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आँच्छत्। यद्वैकंङ्कताः परिधयो भवन्ति। भा एवावंरुन्धे। द्वादंश भवन्ति॥३८॥

द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरमेवावंरुन्थे। अस्ति त्रयोदशो मास् इत्यांहुः। यत्रयोदशः पंरिधिर्भवंति। तेनैव त्रयोदशं मासमवंरुन्थे। अन्तरिक्षस्यान्तर्धिर्सीत्यांह् व्यावृत्त्ये। दिवं तपंसस्रायस्वत्युपरिष्टाद्धिरंण्यमिध निदंधाति। अमुष्या अनंतिदाहाय। अथो आभ्यामेवनंमुभ्यतः परिगृह्णाति। अर्हन् बिभर्षि सायंकान् धन्वत्यांह॥३९॥ स्तौत्येवैनंमेतत्। गायत्रमंसि त्रैष्टुंभमसि जागंतम्सीतिं धवित्राण्यादंत्ते। छन्दोंभिरेवैनान्यादंत्ते। मधु मध्वितिं धूनोति। प्राणो वै मधुं। प्राणमेव यर्जमाने दधाति। त्रिः परियन्ति। त्रिवृद्धि प्राणः। त्रिः परियन्ति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः॥४०॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुष्वेव प्रतितिष्ठन्ति। यो वै घुर्मस्यं प्रियां तनुवंमाक्रामंति। दुश्चर्मा वै स भवति। एष ह् वा अस्य प्रियां तनुवमाक्रांमति। यित्रेः प्रीत्यं चतुर्थं पर्येति। एता १ ह् वा अस्योग्रदेवो राजंनिराचंक्राम॥४१॥

ततो वै स दुश्चर्मां ऽभवत्। तस्मात्रिः प्रीत्य न चंतुर्थं परीयात्। आत्मनों गोपीथायं। प्राणा वै ध्वित्रांणि। अव्यंतिषङ्गं धून्वन्ति। प्राणानामव्यंतिषङ्गाय क्रुप्त्यैं। विनिषद्यं धून्वन्ति। दिक्ष्वेव प्रतितिष्ठन्ति। ऊर्ध्वं धून्वन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ठ्ये। सर्वतों धून्वन्ति। तस्मांद्य सर्वतंः पवते॥४२॥

दुर्थातीवान्बांह युज्ञस्योहुँप उपरिष्टादाशीर्न्यो व्यास्थापयन्ति रुष्मयो भवन्ति धन्वेत्यांह युज्ञश्चंकाम् समध्ये द्वे चं॥ 👸

अग्निष्ट्वा वसुंभिः पुरस्तांद्रोचयत् गायत्रेण् छन्द्सेत्यांह। अग्निरेवैनं वसुंभिः पुरस्तांद्रोचयति गायत्रेण् छन्दंसा। स मां रुचितो रांच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिण्तो रांचयत् त्रैष्टुंभेन् छन्द्सेत्यांह। इन्द्रं एवैन र रुद्रैदंक्षिण्तो रांचयत् त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोच्येत्याह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। वर्रणस्त्वाऽऽदित्यैः पृश्चाद्रोचयतु जागंतेन छन्द्सेत्याह। वर्रण एवैनमादित्यैः पृश्चाद्रोचयति जागंतेन छन्दंसा॥४३॥

स मां रुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। द्युतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिंरुत्तर्तो रोंच्यत्वानुंष्टुभेन् छन्दसेत्यांह। द्युतान एवैनं मारुतो मुरुद्धिंरुत्तर्तो रोंच्यत्यानुंष्टुभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। बृहुस्पतिंस्त्वा विश्वैर्देवैरुपरिंष्टा-द्रोचयत् पाङ्केन् छन्दसेत्यांह। बृहुस्पतिंरेवैनं विश्वैर्देवै-रुपरिंष्टाद्रोचयति पाङ्केन् छन्दसेत्यांह। स मां रुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते॥४४॥

रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसीत्यांह। रोचितो ह्येष देवेषुं।
रोचिषीयाहं मंनुष्येष्वित्याह। रोचंत एवेष मंनुष्येषु। सम्राह्ममं रुचितस्त्वं देवेष्वायुष्मा इस्ते ज्ञस्वी ब्रह्मवर्चस्यं सीत्यांह। रुचितो ह्येष देवेष्वायुष्मा इस्ते ज्ञस्वी ब्रह्मवर्चसी। रुचितो इहं मंनुष्येष्वायुष्मा इस्ते ज्ञस्वी ब्रह्मवर्चसी। रूचितो इहं मंनुष्येष्वायुष्मा इस्ते ज्ञस्वी ब्रह्मवर्चसी भूयास्मित्यांह। रुचित एवेष मंनुष्येष्वायुष्मा इस्ते ज्ञस्वी ब्रह्मवर्चसी भंवति। रुगसि रुचं मिये धेहि मिये रुगित्यांह। आशिषंमेवैतामा शास्ते। तं यदेतैर्यर्जुर्भिररोचियत्वा। रुचितो धर्म इति प्रब्रूयात्। अरोचुको ऽध्वर्युः स्यात्। अरोचुको यर्जमानः। अथ यदेनमेतैर्यर्जुर्भी रोचियत्वा। रुचितो धर्म इति प्राहं।

रोचुकोऽध्वर्युर्भविति। रोचुको यजमानः॥४५॥ पृश्चाद्रोचयति जागंतेन छन्दंसा पाङ्कैन छन्दंसा स मा रुचितो रोच्येत्यांहाशिषंमेयेतामाशांस्त शास्तेऽष्टौ चा।[५]

शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। ग्रीवा उपसर्दः। पुरस्तांदुपसदां प्रवर्ग्यं प्रवृणिक्ति। ग्रीवास्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिदधाति। त्रिः प्रवृणिक्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकभ्यो यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥४६॥

ऋतुभ्यं पुव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। द्वादंशकृत्वः प्रवृंणिति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरादेव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। चतुंविंश्शितः सम्पंद्यन्ते। चतुंविंश्शितरर्धमासाः। अर्धमासेभ्यं पुव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। अथो खलुं। सकृदेव प्रवृज्यः। एक्श् हि शिरंः॥४७॥

अग्निष्टोमे प्रवृंणिक्ति। एतावान् वै यज्ञः। यावानिग्निष्टोमः। यावानेव यज्ञः। तस्य शिरः प्रतिदधाति। नोक्थ्ये प्रवृंज्यात्। प्रजा वै प्शवं उक्थानि। यदुक्थ्ये प्रवृज्यात्। प्रजां प्शूनंस्य निर्दहेत्। विश्वजिति सर्वपृष्ठे प्रवृंणिक्ति॥४८॥

पृष्ठानि वा अच्युंतं च्यावयन्ति। पृष्ठेरेवास्मा अच्युंतं च्यावियत्वाऽवंरुन्थे। अपंश्यं गोपामित्यांह। प्राणो वै गोपाः। प्राणमेव प्रजासु वियातयित। अपंश्यं गोपामित्यांह। असौ वा आंदित्यो गोपाः। स हीमाः प्रजा गोपायितं। तमेव प्रजानां गोपारं कुरुते। अनिपद्यमान्मित्यांह॥४९॥ न ह्यंष निपद्यंते। आ च पर्रा च पृथिभिश्चरंन्त्मित्यांह। आ च ह्यंष पर्रा च पृथिभिश्चरंति। स स्प्रीचीः स विषूचीर्वसान् इत्यांह। स्प्रीचींश्च ह्यंष विषूचीश्च वसानः प्रजा अभि विपश्यंति। आवंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तरित्यांह। आ ह्यंष वंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीर्मधु माध्वींभ्यां मधु माधूचीभ्यामित्यांह। वासंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंत्पयति। समग्निरग्निनां गतेत्यांह॥५०॥

ग्रैष्मविवास्मां ऋतू केल्पयति। सम्ग्रिरग्निनां गृतेत्यांह। अग्निर्ह्यविषाँऽग्निनां सङ्गच्छंते। स्वाहा समृग्निस्तपंसा गृतेत्यांह। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृणाति। धूर्ता दिवो विभासि रजंसः पृथिव्या इत्यांह। शारदावेवास्मां ऋतू कंल्पयति॥५१॥

दिवि देवेषु होत्रां युच्छेत्यांह। होत्रांभिरेवेमाँ ह्योकान्थ्सन्दं-धाति। विश्वासां भुवां पत् इत्यांह। हैमंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। देवश्रस्त्वं देव धर्म देवान्पाहीत्यांह। शेशिरावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। तुपोजां वार्चमस्मे नियंच्छ देवायुव्मित्यांह। या वै मेध्या वाक्। सा तंपोजाः। तामेवावंरुन्थे॥५२॥

गर्भो देवानामित्यांह। गर्भो ह्यंष देवानांम्। पिता मंतीनामित्यांह। प्रजा वै मृतयः। तासांमेष एव पिता। यत्प्रवर्ग्यः। तस्मांदेवमांह। पतिः प्रजानामित्यांह। पतिर्ह्योष

प्रजानांम्। मितः कवीनामित्याह॥५३॥

मितृह्येष केवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवत्रा यंतिष्ट सर् सूर्येणारुक्तेत्यांह। अमुं चैवाऽऽदित्यं प्रवर्णं च सरशांस्ति। आयुर्दास्त्वम्स्मर्भ्यं घर्म वर्चोदा असीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। पिता नोंऽसि पिता नों बोधेत्यांह। बोधयंत्येवैनम्। न वै तेंऽवकाशा भेवन्ति। पित्रिये दश्मः। नव् वै पुरुषे प्राणाः॥५४॥

नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यर्जमाने दधाति। अथो दशाँक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्धे। यज्ञस्य शिरौंऽच्छिद्यत। तद्देवा होत्रांभिः प्रत्यंदधः। ऋत्विजोऽवेंक्षन्ते। एता वै होत्राः। होत्रांभिरेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति॥५५॥

रुचितमवें क्षन्ते। रुचिताद्वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजाना सृष्ट्यां। रुचितमवें क्षन्ते। रुचिताद्वे पर्जन्यो वर्षित। वर्षुंकः पर्जन्यो भवति। सं प्रजा एंधन्ते। रुचितमवें क्षन्ते। रुचितं वै ब्रह्मवर्चसम्। ब्रह्मवर्चसिनो भवन्ति॥५६॥

अधीयन्तोऽवेंक्षन्ते। सर्वमायुंर्यन्ति। न पत्यवेंक्षेत। यत्पत्यवेक्षेत। प्रजांयेत। प्रजां त्वंस्यै निर्दहेत्। यन्नावेक्षेत। न प्रजांयेत। नास्यैं प्रजां निर्दहेत्। तिर्स्कृत्य यर्जुर्वाचयित। प्रजांयते। नास्यैं प्रजां निर्दहित। त्वष्टींमती ते सप्येत्यांह। सपाद्धि प्रजाः प्रजायंन्ते॥५७॥ देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इति रश्नामादेते प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्यै। आद्देऽदित्यै रास्राऽसीत्यांह यजुंष्कृत्यै। इड एह्यदिंत एहि सर्रस्वत्येहीत्यांह। एतानि वा अस्यै देवनामानि। देवनामेरेवेनामाह्वंयति। असावह्यसावह्यसावह्यसावहीत्यांह। एतानि वा अस्यै मनुष्यनामानि॥५८॥

मनुष्यनामेरेवेनामाह्वंयति। षट्थ्सम्पंचन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवेनामाह्वंयति। अदित्या उष्णीषंमसीत्यांह। यथायजुरेवेतत्। वायुरंस्यैड इत्यांह। वायुदेवत्यों वे वथ्सः। पूषा त्वोपावंसृज्तित्यांह। पौष्णा वे देवतंया पृशवंः॥५९॥

स्वयैवैनं देवतंयोपावंसृजित। अश्विभ्यां प्रदांपयेत्यांह। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्में भेषजं कंरोति। यस्ते स्तनः शश्य इत्यांह। स्तौत्येवैनांम्। उस्रं धर्मश् शिश्षोस्रं धर्मं पाहि धर्मायं शिश्षेत्यांह। यथां ब्रूयादमुष्में देहीतिं। तादगेव तत्। बृहुस्पितस्त्वोपं सीदित्वत्याह॥६०॥

ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवैनामुपंसीदति। दानंवः स्थ पेरव इत्याह। मेध्यानेवैनान्करोति। विष्वुग्वृतो लोहितेनेत्यांह व्यावृत्त्यै। अश्विभ्यां पिन्वस्व सरस्वत्यै पिन्वस्व पूष्णे पिन्वस्व बृह्स्पतंये पिन्वस्वेत्यांह। एताभ्यो ह्यंषा देवतांभ्यः पिन्वंते। इन्द्रांय पिन्वस्वेन्द्रांय पिन्वस्वेत्यांह। इन्द्रंमेव भागधेयेन समर्धयति। द्विरिन्द्रायेत्यांह॥६१॥

तस्मादिन्द्रों देवतांनां भूयिष्ठभाक्तंमः। गायत्रोंऽसि त्रैष्टुंभोऽसि जागंतम्सीतिं शफोपयमानादंत्ते। छन्दोंभि-रेवैनानादंत्ते। सहोर्जो भागेनोपमेहीत्यांह। ऊर्ज एवैनं भागमंकः। अश्विनौ वा पृतद्यज्ञस्य शिरंः प्रतिदर्धतावब्रूताम्। आवाभ्यांमेव पूर्वांभ्यां वर्षद्वियाता इतिं। इन्द्रांश्विना मधुंनः सार्घस्येत्यांह। अश्विभ्यांमेव पूर्वांभ्यां वर्षद्वरोति। अथों अश्विनांवेव भाग्धेयेन समर्धयति॥६२॥

घुर्मं पात वसवो यजंता विहत्यांह। वसूनेव भागधेयेंन् समर्धयित। यद्वंषद्भुर्यात्। यातयांमाऽस्य वषद्भारः स्यांत्। यन्न वंषद्भुर्यात्। रक्षा १सि यज्ञ १ हंन्युः। विहत्यांह। प्रोक्षंमेव वषंद्भरोति। नास्यं यातयांमा वषद्भारो भवंति। न यज्ञ १ रक्षा १सि घ्रन्ति॥६३॥

स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य र्ष्मयं वृष्टिवनंये जुहोमीत्यांह। यो वा अस्य पुण्यो र्ष्मिः। स वृष्टिवनिः। तस्मां एवैनं जुहोति। मधुं हिवर्सीत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्ं। सूर्यस्य तपंस्तपेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिगृह्णामीत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं परिगृह्णाति॥६४॥ अन्तिरिक्षेण त्वोपंयच्छामीत्यांह। अन्तिरिक्षेणैवैन्मुपंयच्छित। न वा एतं मंनुष्यों भर्तुमरहित। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो भर्तु शकेयमित्यांह। देवैरेवैनं पितृभिरनुंमत् आदंत्ते। वि वा एनमेतदर्धयन्ति। यत्पश्चात्प्रवृज्यं पुरो जुह्वंति। तेजोऽसि तेजोऽनु प्रेहीत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाति। दिविस्पृङ्गा मां हिश्सीरन्तिरिक्षस्पृङ्गा मां हिश्सीः पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीरित्याहाहिर्श्सायै॥६५॥

सुवंरसि सुवंर्मे यच्छ दिवं यच्छ दिवो मां पाहीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। आत्मा वायुः। उद्यत्यं वातनामान्यांह। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रतिदधाति। अनंवानम्। प्राणानाक् सन्तंत्यै। पश्चाह॥६६॥

पाङ्को यज्ञः। यावानेव यज्ञः। तस्य शिरः प्रतिंदधाति। अग्नये त्वा वसुमते स्वाहेत्यांह। असौ वा आदित्योंऽग्निर्वसुं-मान्। तस्मां एवैनं जुहोति। सोमाय त्वा रुद्रवंते स्वाहेत्यांह। चन्द्रमा वै सोमों रुद्रवान्। तस्मां एवैनं जुहोति। वर्रुणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहेत्यांह॥६७॥

अपसु वै वर्रण आदित्यवान्। तस्मां पृवैनं जुहोति। बृह्स्पतंये त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहेत्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिंः। ब्रह्मंणैवैनं जुहोति। सुवित्रे त्वर्भुमतें विभुमते प्रभुमते वाजंवते स्वाहेत्यांह। संवृथ्सरो वै संवितर्भुमान् विभुमान्प्रभुमान् वाजंवान्। तस्मां एवैनं जुहोति। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहेत्यांह। प्राणो वै यमोऽङ्गिरस्वान्पितृमान्॥६८॥

तस्मां पुवैनं जुहोति। पुताभ्यं पुवैनं देवताभ्यो जुहोति। दश् सम्पंद्यन्ते। दशाँक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराज्ञेवात्राद्यमवंरुन्थे। रौहिणाभ्यां वै देवाः सुवर्गं लोकमांयन्। तद्रौहिणयों रौहिणत्वम्। यद्रौहिणौ भवंतः। रौहिणाभ्यांमेव तद्यजमानः सुवर्गं लोकमेति। अहुर्ज्योतिः केतुनां जुषता सुज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहा रात्रिर्ज्योतिः केतुनां जुषता सुज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहत्यांह। आदित्यमेव तदम् पिं लोकेऽह्नां प्रस्तौद्दाधार। रात्रिया अवस्तौत्। तस्माद्सावादित्योऽमु पिं लोकेऽहां प्रस्तौद्दाधार। रात्रिया अवस्तौत्। तस्माद्सावादित्योऽमु पिं लोके प्रहालकि प्रवाहत्वके स्वहत्वकं प्रवाहत्वके प्

विश्वा आशां दक्षिण्सिदत्यांह। विश्वांनेव देवान्प्रीणाति। अथो दिर्श्वा एवैनं पाति। विश्वां देवान्याडिहेत्यांह। विश्वांनेव देवान्यांग्रधेयेंन समर्धयति। स्वाहांकृतस्य घर्मस्य मधौः पिबतमिश्वनेत्यांह। अश्विनांवेव भांग्रधेयेंन समर्धयति। स्वाहाऽग्रयें यिज्ञयांय शं यर्जुर्भिरित्यांह। अभ्येवैनं घारयति। अथों हिवरेवाकः॥७०॥

अश्विना घुमं पांत १ हार्दिवानमहंदिवाभिंक्तिभिरित्यांह। अश्विनांवेव भांगधेयेन समर्धयति। अनुं वां द्यावांपृथिवी म १ सातामित्याहानुंमत्यै। स्वाहेन्द्रांय स्वाहेन्द्राविहत्यांह। इन्द्रांय हि पुरो हूयतें। आश्राव्यांह घुमस्य यजेति। वषंद्रुते जुहोति। रक्षंसामपंहत्यै। अनुंयजित स्वगाकृंत्यै। धर्ममंपातमश्विनेत्यांह॥ ७१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृंणाति। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमश्सातामित्याहानुंमत्यै। तं प्राव्यं यथावण्णमों दिवे नर्मः पृथिव्या इत्याह। यथायजुरेवेतत्। दिविधां इमं यज्ञं यज्ञमिमं दिविधा इत्याह। सुवर्गमेवेनं लोकं गंमयति। दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गच्छेत्याह। पृष्वेवेनं लोकेषु प्रतिष्ठापयति। पश्चं प्रदिशों गुच्छेत्यांह॥७२॥

दिक्ष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। देवान्धंर्म्पानांच्छ पितॄन्धंर्म्-पान्गच्छेत्यांह। उभयेंष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। यत्पिन्वंते। वर्षुकः पूर्जन्यों भवति। तस्मात्पिन्वंमानः पुण्यः। यत्प्राङ्घिन्वंते। तद्देवानांम्। यद्दंक्षिणा। तत्पितृणाम्॥७३॥

यत्प्रत्यक्। तन्मंनुष्यांणाम्। यदुदङ्कं। तद्रुद्राणांम्। प्राश्चमुदंश्चं पिन्वयति। देवृत्राकंः। अथो खलुं। सर्वा अनु दिशंः पिन्वयति। सर्वा दिशः समेधन्ते। अन्तःप्रिधि पिन्वयति॥७४॥

तेजुसोऽस्कंन्दाय। इषे पींपिह्यूर्जे पींपि्हीत्यांह।

इषंमेवोर्जं यजंमाने दधाति। यजंमानाय पीपिहीत्यांह। यजंमानायैवैतामाशिषमा शाँस्ते। मह्यं ज्यैष्ठ्यांय पीपिहीत्यांह। आत्मनं पृवैतामाशिषमा शाँस्ते। त्विष्यैं त्वा द्युम्नायं त्वेन्द्रियायं त्वा भूत्यै त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। धर्मास सुधर्मा में न्यस्मे ब्रह्मांणि धार्येत्यांह॥७५॥

ब्रह्मंत्रेवैनं प्रतिष्ठापयति। नेत्त्वा वार्तः स्कन्दयादिति यद्यंभिचरैत्। अमुष्यं त्वा प्राणे सादयाम्यमुनां सह निर्धं गच्छेतिं ब्र्याद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तेनैन सह निर्धं गमयति। पूष्णे शरसे स्वाहेत्याह। या एव देवतां हुतभांगाः। ताभ्यं एवैनं जुहोति। ग्रावंभ्यः स्वाहेत्यांह। या एवान्तरिक्षे वार्चः॥७६॥

ताभ्यं एवैनं जुहोति। प्रतिरेभ्यः स्वाहेत्यांह। प्राणा वै देवाः प्रतिराः। तेभ्यं एवैनं जुहोति। द्यावांपृथिवीभ्याः स्वाहेत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं जुहोति। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहेत्यांह। ये वै यज्वांनः। ते पितरों धर्मपाः। तेभ्यं एवैनं जुहोति॥७७॥

रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहेत्यांह। रुद्रमेव भांग्धेयेंन् समर्थयति। सुर्वतः समनिक्ति। सुर्वतं एव रुद्रं निरवंदयते। उद्रेश्चं निर्रस्यति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। अप उपस्पृशित मेध्यत्वायं। नान्वींक्षेत। यदन्वीक्षेत॥७८॥ चक्षुंरस्य प्रमायुंक इस्यात्। तस्मान्नान्वीक्ष्यंः। अपीपरो माऽह्यो रात्रिये मा पाह्येषा ते अग्ने स्मित्तया सिमध्यस्वायुंमें दा वर्चसा माऽऽश्चीरित्यांह। आयुरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अपीपरो मा रात्रिया अह्यो मा पाह्येषा ते अग्ने स्मित्तया सिमध्यस्वाऽऽयुंमें दा वर्चसा माऽऽश्चीरित्यांह। आयुरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अग्निज्योतिंज्योतिंर्गिः स्वाह्य सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्रा(३)न्न होतव्या(३)मिति॥७९॥

यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। यन्न जुंहुयात्। अग्निः परांभवेत्। भूः स्वाहेत्येव होंत्व्यम्। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। हुतः ह्विर्मधुं ह्विरित्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। इन्द्रंतमेऽग्नावित्यांह॥८०॥

प्राणो वा इन्द्रंतमोऽग्निः। प्राण एवैन्मिन्द्रंतमेऽग्नौ जुंहोति। पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। अश्यामं ते देव धर्म मधुंमतो वाजंवतः पितुमत् इत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। स्वधाविनोंऽशीमिहं त्वा मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। तेजंसा वा एते व्यृध्यन्ते। ये प्रवृग्येण चरन्ति। प्राश्ञंन्ति। तेजं एवात्मन्दंधते॥८१॥

संवथ्सरं न मार्समंश्जीयात्। न रामामुपंयात्। न

घर्म या तें दिवि शुगितिं तिस्र आहुंतीर्जुहोति। छन्दोंभिरेवास्यैभ्यो लोकेभ्यः शुचमवं यजते। इयत्यग्रें जुहोति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। अनुं नोऽद्यानुं-मतिरित्याहानुंमत्ये। दिवस्त्वां पर्स्पाया इत्याह। दिव एवेमाँ लोकान्दांधार। ब्रह्मणस्त्वा परस्पाया इत्याह॥८३॥

पृष्वेव लोकेषुं प्रजा दांधार। प्राणस्यं त्वा पर्स्पाया इत्याह। प्रजास्वेव प्राणान्दांधार। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तं यद्दंक्षिणा प्रत्यश्रमुदंश्रमुद्वासर्यंत्। जिह्नां यज्ञस्य शिरो हरेत्। प्राश्रमुद्वांसयति। पुरस्तांदेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति॥८४॥

प्राश्चमुद्वांसयति। तस्मांद्सावांदित्यः पुरस्तादुदेति। शफोपयमान्धवित्रांणि धृष्टी इत्यन्ववंहरन्ति। सात्मांनमेवैन् ९ सर्तनुं करोति। सात्माऽमुष्मिँ श्लोके भविति। य एवं वेदी। औदुंम्बराणि भवन्ति। ऊर्ग्वा उंदुम्बरः। ऊर्जमेवावंरुन्धे। वर्त्मना वा अन्वित्यं॥८५॥

युज्ञ रक्षा रेसि जिघा रसन्ति। साम्ना प्रस्तोताऽन्ववैति। साम् वै रेक्षोहा। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिर्निधन्मुपैति। त्रयं इमे लोकाः। पुभ्य पुव लोकेभ्यो रक्षा इस्यपहन्ति। पुरुषः पुरुषो निधनमुपैति। पुरुषः पुरुषो हि रेक्षस्वी। रक्षंसामपंहत्यै॥८६॥

यत्पृंथिव्यामुंद्वासयेत्। पृथिवी शुचाऽर्पयेत्। यद्पस्। अपः शुचार्पयेत्। यदोषंधीषु। ओषंधीः शुचाऽर्पयेत्। यद्वन्स्पतिषु। वन्स्पतीं ञ्छुचार्पयेत्। हिरंण्यं निधायोद्वांसयति। अमृतुं वै हिरंण्यम्॥८७॥

अमृतं प्वैनं प्रतिष्ठापयति। वृल्गुरंसि शं युधाया इति त्रिः पंरिषिश्चन्पर्येति। त्रिवृद्वा अग्निः। यावांनेवाग्निः। तस्य शुचर्र शमयति। त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवास्य शुचर्र शमयति। चतुंः स्रक्तिर्नाभिर्ऋतस्येत्यांह॥८८॥

ड्यं वा ऋतम्। तस्यां एष एव नाभिः। यत्प्रंवर्ग्यः। तस्मादेवमाह। सदो विश्वायुरित्याह। सदो हीयम्। अप द्वेषो अप ह्वर् इत्याह् भ्रातृंव्यापनुत्त्यै। घर्मेतत्तेऽन्नंमेतत्पुरीषमितिं द्रभा मधुमिश्रेणं पूरयति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे।

ऊर्जैवेनमन्नाद्येन समेध्यति॥८९॥

अनेशनायुको भवति। य एवं वेदे। रन्तिर्नामांसि दिव्यो गंन्ध्रवं इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्महिमान् रन्तिं बन्धुतां व्याचेष्टे। समहमायुषा सं प्राणेनेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। व्यंसौ यांऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्म इत्यांह। अभिचार एवास्यैषः। अचिक्रदृदृषा हरिरित्यांह। वृषा ह्यंषः॥९०॥

वृषा हरिः। महान्मित्रो न देर्श्वत इत्यांह। स्तौत्येवैनंमेतत्। चिदंसि समुद्रयोनिरित्यांह। स्वामेवैनं योनिं गमयति। नमंस्ते अस्तु मा मां हि॰सीरित्याहाहि॰सायै। विश्वावंसु॰ सोम गन्ध्वंमित्यांह। यदेवास्यं क्रियमांण-स्यान्त्यंन्तिं। तदेवास्यैतेना प्यांययति। विश्वावंसुर्भे तन्नों गृणात्वित्यांह॥९१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। धियों हिन्वानो धिय इन्नों अव्यादित्यांह। ऋतूनेवास्मैं कल्पयति। प्राऽऽसां गन्धर्वो अमृतांनि वोच्चित्त्यांह। प्राणा वा अमृताः। प्राणानेवास्मैं कल्पयति। पृतत्त्वं देव घर्म देवो देवानुपांगा इत्यांह। देवो ह्येष सं देवानुपैतिं। इदमहं मंनुष्यों मनुष्यांनित्यांह॥९२॥

म्नुष्यों हि। एष सन्मंनुष्यांनुपैतिं। ईश्वरो वै प्रंवर्ग्यमुद्वासयन्। प्रजां पृशून्थ्सोमपीथमंनूद्वासुः सोमं पीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषेणेत्यांह। प्रजामेव पश्न्थसोंमपीथमात्मन्धंते। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्त्वत्यांह। आशिषंमेवेतामा शांस्ते। दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्यों उस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्म इत्यांह। अभिचार एवास्यैषः। प्र वा एषों उस्मालोकाच्यंवते। यः प्रवर्ण्यमुद्वासयितं। उदुत्यं चित्रमितिं सौरीभ्यांमृग्भ्यां पुनरेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। अयं वे लोको गार्हंपत्यः। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। असौ खलु वा आदित्यः सुंवर्गो लोकः। यथ्सौरी भवंतः। तेनैव सुंवर्गाक्षोकान्नेतिं॥९३॥ ब्रह्मं पर्माया इत्यांह द्यात्वित्यं रक्षमा प्रसाम्मदृत्ये वे हिर्ण्यमाहार्थयित् ह्यं गृणावित्यांह मनुष्यांनित्यांहास्थ्रेगेंऽहो वं॥ [१]

प्रजापंतिं वै देवाः शुक्रं पयोऽदुह्नन्। तदैभ्यो न व्यंभवत्। तद्ग्निर्व्यंकरोत्। तानि शुक्रियाणि सामान्यभवन्। तेषां यो रसोऽत्यक्षंरत्। तानि शुक्रयजूङ्ष्यंभवन्। शुक्रियाणां वा पृतानि शुक्रियाणि। सामप्यसं वा पृतयोर्न्यत्। देवानामन्यत्पयंः। यद्गोः पयंः॥९४॥

तथ्साम्नः पर्यः। यद्जाये पर्यः। तद्देवानां पर्यः। तस्माद्यत्रैतैर्यजुंर्भिश्चरंन्ति। तत्पर्यसा चरन्ति। प्रजापंतिमेव तत्पर्यसाऽन्नाद्यंन समर्धयन्ति। एष ह त्वै साक्षात्प्रंवर्ग्यं भक्षयति। यस्यैवं विदुषंः प्रवर्ग्यः प्रवृज्यते। उत्तर्वेद्यामुद्धांस-येत्तेजंस्कामस्य। तेजो वा उत्तरवेदिः॥१५॥

तेजंः प्रवर्ग्यः। तेजंसैव तेजः समर्धयित। उत्तर्वेद्यामुद्वांसये-दन्नंकामस्य। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। मुखंमुत्तरवेदिः। शीर्ष्णेव मुख्र सन्दंधात्यन्नाद्यांय। अन्नाद एव भंवति। यत्र खलु वा एतमुद्वांसितं वयार्श्स पूर्यासंते। परि वै तार समां प्रजा वयार्श्स्यासते॥९६॥

तस्मांदुत्तरवेद्यामेवोद्वांसयेत्। प्रजानां गोपीथायं। पुरो वां पृश्चाद्वोद्वांसयेत्। पुरस्ताद्वा एतज्ञ्योतिरुदेति। तत्पृश्चान्निम्नोचिति। स्वामेवैनं योनिमनूद्वांसयित। अपां मध्य उद्वांसयेत्। अपां वा एतन्मध्याज्ञ्योतिरजायत। ज्योतिः प्रवृग्यः। स्वयैवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति॥९७॥

यं द्विष्यात्। यत्रं स स्यात्। तस्यां दिश्युद्वांसयेत्। एष वा अग्निवेश्वानरः। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निनैवेनं वैश्वानरेणाभि प्रवंतयित। औद्मबर्याष्ट्रं शाखायामुद्वांसयेत्। ऊर्ग्वा उंदुम्बरेः। अन्नं प्राणः। शुग्धर्मः॥९८॥

ड्दम्हम्मुष्यांमुष्यायणस्यं शुचा प्राणमपिं दहामीत्यांह। शुचैवास्यं प्राणमपिं दहित। ताजगार्तिमार्च्छति। यत्रं दर्भा उपदीकंसन्तताः स्यः। तदुद्वांसयेद्वृष्टिंकामस्य। एता वा अपामनूज्झावंर्यो नामं। यद्दर्भाः। असौ खलु वा आंदित्य इतो वृष्टिमुदींरयति। असावेवास्मां आदित्यो वृष्टिं नियंच्छति। ता आपो नियंता धन्वंना यन्ति॥९९॥ गोः पर्य उत्तरवेदिरांसते स्थापयित घुर्मो यंन्ति॥———[१०]

प्रजापंतिः सिम्भ्रियमाणः। सम्राद्थ्सम्भृतः। घृमः प्रवृंक्तः। महावीर उद्वांसितः। असौ खलु वावैष आंदित्यः। यत्प्रंवर्ग्यः। स एतानि नामान्यकुरुत। य एवं वेदं। विदुरेनं नाम्ना। ब्रह्मवादिनो वदन्ति॥१००॥

यो वै वसीया १ सं यथाना ममुप्चरित। पुण्याँ ति वै स तस्मैं कामयते। पुण्याँ तिमस्मै कामयन्ते। य पृवं वेदं। तस्मदिवं विद्वान्। घर्म इति दिवाऽऽचं क्षीत। सम्माडिति नक्तम्। पृते वा पृतस्यं प्रिये तनुवौं। पृते अस्य प्रिये नामंनी। प्रिययैवैनं तनुवौं॥१०१॥

प्रियेण नाम्ना समेर्धयति। कीर्तिरेस्य पूर्वागेच्छति जनतांमायतः। गायत्री देवेभ्योऽपांकामत्। तां देवाः प्रवर्ग्येणैवानु व्यंभवन्। प्रवर्ग्येणाऽऽप्रुवन्। यचंतुर्वि श्वतिकृत्वंः प्रवर्ग्यं प्रवृणक्तिं। गायत्रीमेव तदनु विभवति। गायत्रीमाप्रोति। पूर्वाऽस्य जनं यतः कीर्तिर्गच्छति। वैश्वदेवः सर्संन्नः॥१०२॥

वसंवः प्रवृंक्तः। सोमोऽभिकीयमाणः। आश्विनः पर्यस्यानीयमाने। मारुतः क्वथन्। पौष्ण उदंन्तः। सारुस्वतो विष्यन्दंमानः। मैत्रः शरो गृहीतः। तेज उद्यंतः। वायुर्ह्वियमाणः। प्रजापंतिर्ह्यमानो वाग्युतः॥१०३॥

असौ खलु वावैष आंदित्यः। यत्प्रंवर्ग्यः। स पुतानि

नामाँन्यकुरुत। य एवं वेदं। विदुरेनं नाम्नाँ। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यन्मृन्मयमाहुंतिं नाश्जुतेऽथं। कस्मांदेषौंऽश्जुत इतिं। वागेष इतिं ब्रूयात्। वाच्येव वाचं दधाति॥१०४॥

तस्मादश्ज्ते। प्रजापंतिर्वा एष द्वांदश्धा विहितः। यत्प्रविग्यः। यत्प्रागंवकाशेभ्यः। तेनं प्रजा अंसृजत। अवकाशेर्देवासुरानंसृजत। यदूर्ध्वमंवकाशेभ्यः। तेनान्नंम-सृजत। अन्नं प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावैषः॥१०५॥ वृद्वि वृत्वण् सरसंग्रे हृपमंत्रे वाण्युते देवाल्येषः॥——[११]

स्विता भूत्वा प्रंथमेऽह्न्प्रवृंज्यते। तेन् कामा १ एति। यद्वितीयेऽहंन्प्रवृज्यतें। अग्निर्भूत्वा देवानेति। यत्तृतीयेऽहंन्प्र-वृज्यतें। वायुर्भूत्वा प्राणानेति। यत्तंतुर्थेऽहंन्प्रवृज्यतें। आदित्यो भूत्वा रश्मीनेति। यत्पंश्चमेऽहंन्प्रवृज्यतें। चन्द्रमां भूत्वा नक्षंत्राण्येति॥१०६॥

यत्ष्षेऽहंन्प्रवृज्यतें। ऋतुर्भूत्वा संवथ्स्रमेति। यथ्संप्तमेऽहंन्प्रवृज्यतें। धाता भूत्वा शक्वंरीमेति। यदंष्ट्रमेऽहंन्प्रवृज्यतें। बृह्स्पतिंर्भूत्वा गांयत्रीमेति। यत्नंवमेऽहंन्प्रवृज्यतें। मित्रो भूत्वा त्रिवृतं इमाँ छोकानेति। यदंश्मेऽहंन्प्रवृज्यतें। वर्रुणो भूत्वा विराजमिति॥१०७॥

यदेंकाद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। इन्द्रों भूत्वा त्रिष्टुभंमेति। यद्वांद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। सोमों भूत्वा सुत्यामेति। यत्पुरस्तांदुप्सदां प्रवृज्यतें। तस्मांदितः परांङ्मूँ ह्लोका ॥ स्तपंत्रेति। यदुपरिष्टादुप्सदां प्रवृज्यतें। तस्मांदुमुतोऽर्वा-ङिमाँ ह्लोका ॥ स्तपंत्रेति। य पृवं वेदे। ऐव तपति॥१०८॥ व्यक्ति व्यक्ति॥ व्

ॐ शं नुस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥

॥षष्ठः प्रश्नः॥

ॐ सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

प्रेयुवारसं प्रवतों महीरनं बहुभ्यः पन्थांमनपस्पशानम्। वैवस्वतर सङ्गमंनं जनांनां यमर राजांनर हृविषां दुवस्यत। इदं त्वा वस्त्रं प्रथमन्वागृत्रपैतदूंह यदिहाबिंभः पुरा। इष्टापूर्तमनु सम्पंश्य दक्षिंणां यथां ते दत्तं बंहुधा विबन्धुष्। इमौ युंनज्मि ते वृह्णी असुंनीथाय वोढवें। याभ्यां यमस्य सादंनर सुकृतां चापि गच्छतात्। पूषा त्वेतश्यांवयतु प्रविद्वाननंष्टपशुर्भुवंनस्य गोपाः। स त्वैतेभ्यः परिददात्पितृभ्योऽग्निर्देवेभ्यः सुविदत्रेंभ्यः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः सो अस्मार अभयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अधृंणिः सर्ववीरोऽप्रयुच्छन्पुर एतु प्रविद्वान्॥१॥

आयुंर्विश्वायुः परिपासित त्वा पूषा त्वां पातु प्रपंथे पुरस्तांत्। यत्राऽऽसंते सुकृतो यत्र ते ययुस्तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। भुवंनस्य पत इद॰ ह्विः। अग्नयं रियमते स्वाहां। पुरुषस्य सयावर्यपेद्घानि मृज्महे। यथां नो अत्र नापंरः पुरा जरस् आयंति। पुरुषस्य सयाविर् वि ते प्राणमंसि स्रसम्। शरीरेण महीमिहि स्वधयेहि पितृनुपं प्रजयाऽस्मानिहावंह। मैवं मा्ड् स्ता प्रियेऽहं देवी स्ती

पिंतृलोकं यदैषिं। विश्ववारा नर्भसा संव्ययन्त्युमौ नो लोकौ पर्यसाऽभ्यावंवृथ्स्व॥२॥

इयं नारी पतिलोकं वृंणाना निपंद्यत् उपं त्वा मर्त्य् प्रेतम्। विश्वं पुराणमन् पालयंन्ती तस्यै प्रजां द्रविणं चेह धेहि। उदींष्वं नार्यभि जींवलोकमितासुंमेतमुपंशेष एहिं। ह्स्तुग्राभस्यं दिधिषोस्त्वमेतत्पत्युंर्जनित्वम्भि सम्बंभूव। सुवर्ण् हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये ब्रह्मणे तेजंसे बलाय। अत्रैव त्वमिह वय स्श्रेवा विश्वाः स्पृधों अभिमांतीर्जयम। धनुर्हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये क्षुत्रायोजंसे बलाय। अत्रैव त्वमिह वय स्श्रेवा विश्वाः स्पृधों अभिमांतीर्जयम। मणि ह हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये विशे पृष्ट्ये बलाय। अत्रैव त्वमिह वय स्श्रेवा विश्वाः स्पृधों अभिमांतीर्जयम॥३॥

ड्रममंग्ने चम्सं मा विजीहरः प्रियो देवानांमुत सोम्यानांम्। एष यश्चमसो देवपान्स्तस्मिन्देवा अमृतां मादयन्ताम्। अग्नेर्वर्म् परि गोभिर्व्ययस्व सं प्रोणुंष्व मेदंसा पीवंसा च। नेत्त्वां धृष्णुरहरंसा जरहंषाणो दधंद्विधक्ष्यन्पर्यङ्खयांते। मैनंमग्ने विदहो माऽभिशोंचो माऽस्य त्वचं चिक्षिपो मा शरीरम्। यदा शृतं क्रवों जातवेदोऽथेंमेनं प्रहिणुतात्पितृभ्यः। शृतं यदा क्रसिं जातवेदोऽथेंमेनं परिदत्तात्पितृभ्यः। यदा गच्छात्यसुनीतिमेतामथां देवानां वश्नीर्भवाति। सूर्यं ते चक्षुंर्गच्छत् वातंमात्मा द्यां च् गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छ् यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। अजो भागस्तपंसा तं तंपस्व तं ते शोचिस्तंपत् तं ते अर्चिः। यास्ते शिवास्तन्वो जातवेदस्ताभिविहेम स्मृकृतां यत्रं लोकाः। अयं वै त्वमस्मादिध त्वमेतद्यं वै तदंस्य योनिरसि। वैश्वानरः पुत्रः पित्रे लोककृञ्जांतवेदो वहंम स्मृकृतां यत्रं लोकाः॥४॥

य पुतस्यं पृथो गोप्तार्स्तेभ्यः स्वाह्य य पुतस्यं पृथो रिक्षितार्स्तेभ्यः स्वाह्य य पुतस्यं पृथोभिऽरिक्षितार्स्तेभ्यः स्वाहांऽऽख्यात्रे स्वाहांऽपाख्यात्रे स्वाहांऽभिलालंपते स्वाहांऽपुलालंपते स्वाहाऽग्नयं कर्मकृते स्वाह्य यमत्र् नाधीमस्तस्मै स्वाहां। यस्तं इध्मं जुभरिक्षिष्वदानो मूर्धानं वात् तपंते त्वाया। दिवो विश्वंस्माथ्सीमघायत उरुष्यः। अस्मात्त्वमिधं जातोऽसि त्वद्यं जांयतां पुनः। अग्नयं वैश्वान्त्रायं सुवर्गायं लोकाय स्वाहां॥५॥

प्र केतुनां बृह्ता भाँत्यग्निराविर्विश्वांनि वृष्भो रोरवीति। दिवश्चिदन्तादुप मामुदानंडपामुपस्थे महिषो वंवर्ध। इदं त एकं प्र ऊत् एकं तृतीयेन ज्योतिषा संविंशस्व। संवेशनस्तनुवै चारुरेधि प्रियो देवानां पर्मे स्थस्थे। नाके सुपूर्णमुप् यत्पतंन्तर हृदा वेनंन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वरुणस्य दूतं यमस्य योनौ शकुनं भुंर्ण्युम्। अतिंद्रव सारमेयौ श्वानौ चतुरक्षौ श्वलौ साधुनां पृथा। अथां पितृन्थ्सुंविदत्रार् अपीहि यमेन ये संधुमादं मदंन्ति। यो ते श्वानौ यमरिक्षितारौ चतुरक्षौ पंथिरक्षी नृचक्षंसा। ताभ्यार् राज्ञन्परि देह्येन इस्विस्त चास्मा अनमीवं चं धेहि॥६॥

उरुणसार्वसुतृपांवुलुम्बलौ यमस्यं दूतौ चरतो वशा क्ष्यां अन्। ताव्समभ्यं दृशये सूर्याय पुनर्दत्ता वसुंमुद्येह भूद्रम्। सोम् एकैंभ्यः पवते घृतमेक उपांसते। येभ्यो मधुं प्रधावंति ताक्ष्रिंदेवापिं गच्छतात्। ये युध्यंन्ते प्रधनेषु शूरांसो ये तंनुत्यजः। ये वां सहस्रंदक्षिणास्ताक्ष्रिंदेवापिं गच्छतात्। तपेसा ये अनाधृष्यास्तपंसा ये सुवंर्गताः। तपो ये चित्रिरे महत्ताक्ष्रिंदेवापिं गच्छतात्। अश्मंन्वती रेवतीः सक् रंभध्वमुत्तिंष्ठत् प्रतंरता सखायः। अत्रां जहाम् ये असन्नशेवाः शिवान् वयम्भि वाजानुत्तरेम॥७॥

यहै देवस्यं सिवतः पवित्र सहस्रंधारं वितंतम्नतिरक्षे। येनापुनादिन्द्रमनातिमार्त्ये तेनाहं मा स्वितंनं पुनामि। या राष्ट्रात्पन्नादप् यन्ति शाखां अभिमृता नृपतिमिच्छमानाः। धातुस्ताः सर्वाः पर्वनेन पूताः प्रजयास्मात्र्य्या वर्चसा संस्मृजाथ। उद्वयं तमसस्पिर् पश्यंन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगंन्म ज्योतिंरुत्मम्। धाता पुनातु सविता पुनातु। अग्नेस्तेजंसा सूर्यस्य वर्चसा॥८॥

यन्ते अग्निममंन्थाम वृष्भायेव पक्तेव। इमन्तर शंमयामिस क्षीरेणं चोद्केनं च। यन्त्वमंग्ने समदंहस्त्वमु निर्वापया पुनः। क्याम्बूरत्रं जायतां पाकदूर्वा व्यंत्कशा। शीतिके शीतिकावित ह्रादुंके ह्रादुंकावित। मण्डूक्यां सुसङ्गमयेम स्वंग्निर श्वमयं। शं ते धन्वन्या आपः शम्ं ते सन्त्वनूक्याः। शं ते समुद्रिया आपः शम्ं ते सन्त्व वर्ष्याः। शं ते स्वन्तीस्तुन्वे शम्ं ते सन्तु कूप्याः। शन्ते नीहारो वंर्षतु शम् पृष्वाऽवंशीयताम्॥९॥

अवं सृज पुनंरग्ने पितृभ्यो यस्त आहुंत्श्चरंति स्वधाभिः। आयुर्वसान् उपं यातु शेष्ट्र सङ्गंच्छतां तन्वां जातवेदः। सङ्गंच्छस्व पितृभिः सङ् स्वधाभिः सिमष्टापूर्तेनं पर्मे व्योमन्। यत्र भूम्ये वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। यत्तं कृष्णः शंकुन आंतृतोदं पिपीलः सूर्प उत वा श्वापंदः। अग्निष्टद्विश्वांदनृणं कृणोतु सोमश्च यो ब्राह्मणमांविवेशं। उत्तिष्ठातंस्तनुव्र सम्भंरस्व मेह गात्रमवंहा मा शरीरम्। यत्र भूम्ये वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। इदं त एकं प्र ऊत एकं तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशनस्तनुवै चारुरिध

प्रियो देवानां परमे सधस्थै। उत्तिष्ठ प्रेहि प्रद्रवौकः कृणुष्व परमे व्योमन्। यमेन त्वं यम्यां संविदानोत्तमं नाकमिधं रोहेमम्। अश्मंन्वती रेवतीर्यद्वै देवस्यं सवितुः पवित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंसस्परिं धाता पुंनातु। अस्मात्त्वमधिं जातौंऽस्ययं त्वदधिजायताम्। अग्नये वैश्वानरायं सुवर्गायं

आयांतु देवः सुमनांभिरूतिभिर्यमो हंवेह प्रयंताभिर्क्ता। आसींदता सुप्रयतेह बर्हिष्यूर्जाय जात्ये ममं शत्रुहत्यै। यमे इंव यतमाने यदैतं प्रवाम्भरन्मानुषा देवयन्तः। आसींदत इस्वमुं लोकं विदाने स्वासस्थे भंवतिमन्देवे नः। यमाय सोमर् सुनुत यमायं जुहुता हविः। यमर हं युज्ञो गंच्छत्युग्निदूतो अरंङ्कतः। युमायं घृतवंद्वविर्जुहोत प्र चं तिष्ठत। स नों देवेष्वायंमद्दीर्घमायुः प्र जीवसें। यमाय मधुमत्तम् राज्ञे हव्यं जुहोतन। इदं नम ऋषिभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वेभ्यः पथिकुन्धः॥११॥

योऽस्य कौष्ठ्य जगंतः पार्थिवस्यैकं इद्वशी। युमं भंज्ञाश्रवो गांय यो राजानपरोध्यः। यमङ्गार्य भङ्गाश्रवो यो राजानपरोध्यः। येनाऽऽपो नद्यो धन्वानि येन द्यौः पृंथिवी दृढा। हिर्ण्यकक्ष्यान् सुधुरान् हिर्ण्याक्षानयः शफान्। अश्वाननश्यंतो दानं यमो राजाऽभि तिष्ठंति। यमो दांधार पृथिवीं यमो विश्वमिदं जर्गत्। यमाय सर्वमित्रंस्थे यत्प्राणद्वायुरिक्षितम्। यथा पश्च यथा षड्यथा पश्चं दशर्षयः। यमं यो विद्यार्थस ब्रूंयाद्यथैक ऋषिर्विजानते॥१२॥

त्रिकंद्रुकेिमः पतंति षडुर्वीरेकिमिद्धृहत्। गायत्री त्रिष्ठुप्छन्दा रेस् सर्वा ता यम आहिता। अहंरहर्नयंमानो गामश्वं पुरुषं जगंत्। वैवंस्वतो न तृंप्यति पश्चंभिर्मानंवैर्यमः। वैवंस्वते विविंच्यन्ते यमे राजंनि ते जनाः। ये चेह सत्येनेच्छंन्ते य उ चानृंतवादिनः। ते रांजिन्निह विविंच्यन्तेऽथा यंन्ति त्वामुपं। देवा इश्च ये नंमस्यन्ति ब्राह्मंणा इश्चापचित्यंति। यस्मिन्वृक्षे सुंपलाशे देवैः सम्पिबंते यमः। अत्रां नो विश्पतिः पिता पुराणा अनुंवेनित॥१३॥ पृष्कृष्यं विज्ञान्तेऽतं वेनित॥

वैश्वान्ते ह्विरिदं जुंहोमि साह्स्रमुथ्स श्रातधारमेतम्।
तिस्मंत्रेष पितरं पितामहं प्रिपंतामहं बिभरित्यन्वंमाने।
द्रुप्सश्चंस्कन्द पृथिवीमनु द्यामिमं च योनिमनु यश्च पूर्वः।
तृतीयं योनिमनुं स्श्चरंन्तं द्रुप्सं जुंहोम्यनुं स्प्त होत्राः।
इमश् संमुद्रश् श्रातधारमुथ्संव्यच्यमानं भुवंनस्य मध्ये।
घृतं दुहानामिदितिं जनायाग्रे मा हिश्सीः पर्मे व्योमन्।
अपंत वीत वि चं सर्पतातो येऽत्र स्थ पुराणा ये च
नूतंनाः। अहोभिरद्भिरक्तुभिर्व्यक्तं यमो दंदात्ववसानमस्मै।
स्वितैतानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदंधे।

तेभिर्युज्यन्तामघ्नियाः॥१४॥

शुनं वाहाः शुनं नाराः शुनं कृषतु लाङ्गंलम्। शुनं वर्त्रा बंध्यन्ता शुनमष्ट्रामुदिङ्गय शुनांसीरा शुनम्स्मासुं धत्तम्। शुनांसीराविमां वाचं यद्दिवि चंक्रथुः पर्यः। तेनेमामुपं सिश्चतम्। सीते वन्दांमहे त्वाऽर्वाचीं सुभगे भव। यथां नः सुभगा संसि यथां नः सुफला संसि। सवितेतानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदंधे। तेभिरदिते शं भंव। विमुंच्यध्वमिष्ट्रिया देवयाना अतांरिष्म तमंसस्पारम्स्य। ज्योतिरापाम सुवंरगन्म॥१५॥

प्र वाता वान्तिं प्तयंन्ति विद्युत् उदोषंधीर्जिहते पिन्वंते सुवंः। इरा विश्वंस्मै भुवंनाय जायते यत्पर्जन्यः पृथिवी रित्साऽवंति। यथां यमायं हार्म्यमवप्न्पश्चं मानवाः। एवं वंपामि हार्म्यं यथासाम जीवलोके भूर्रयः। चितः स्थ परिचितं ऊर्ध्वचितः श्रयध्वं पितरो देवतां। प्रजापंतिवः सादयतु तयां देवतया। आप्यांयस्व सन्ते॥१६॥

ुष्टिया अंगन्म सुप्त चं॥—______[६]

उत्ते तभ्नोमि पृथिवीं त्वत्परीमं लोकं निदधन्मो अहर रिषम्। एताइ स्थूणौं पितरों धारयन्तु तेऽत्रां यमः सादेनात्ते मिनोतु। उपंसर्प मातर् भूमिमेतामुंरुव्यचंसं पृथिवीर सुशेवौम्। ऊर्णम्रदा युवतिर्दक्षिणावत्येषा त्वां पातु निर्ऋत्या उपस्थैं। उङ्ग्रेश्चस्व पृथिवि मा विबांधिथाः सूपायनास्में भव सूपवश्चना। माता पुत्रं यथां सिचाभ्येनं भूमि वृण्। उष्मश्चमाना पृथिवी हि तिष्ठंसि सहस्रं मित् उप हि श्रयंन्ताम्। ते गृहासो मधुश्चतो विश्वाहाँस्मै शर्णाः सन्त्वत्रं। एणींर्धाना हरिणीरर्जुनीः सन्तु धेनवंः। तिलंबथ्सा ऊर्जमस्मै दुहांना विश्वाहां सन्त्वनपंस्फुरन्तीः॥१७॥

पुषा तें यमसादंने स्वधा निधीयते गृहे। अक्षितिर्नामं ते असौ। इदं पितृभ्यः प्रभेरेम ब्रहिर्देवेभ्यो जीवन्त उत्तरं भरेम। तत्त्वंमारोहासो मेघ्यो भवं यमेन त्वं यम्यां संविदानः। मा त्वां वृक्षौ सम्बाधिष्टां मा माता पृथिवि त्वम्। पितृन् हि यत्र गच्छास्येधांसं यमराज्यें। मा त्वां वृक्षौ सम्बाधिथां मा माता पृथिवी मही। वैवस्वत हि गच्छांसि यमराज्ये विराजिस। नळं प्रवमारोहैतं नळेनं पृथोऽन्विहि। स त्वं नळप्रंवो भूत्वा सन्तर् प्रतरोत्तर॥१८॥

स्वितैतानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरूपस्थ आदंधे। तेभ्यंः पृथिवि शं भंव। षड्ढांता सूर्यं ते चक्षुंर्गच्छतु वातंमात्मा द्यां च गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। परं मृत्यो अनुपरेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नंः प्रजा रीरिषो मोत वीरान्। शं वातः श हि ते घृणिः शमुं ते सन्त्वोषंधीः। कल्पंन्तां मे दिशंः श्गमाः। पृथिव्यास्त्वां

लोके सांदयाम्यमुष्य शर्मासि पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया। अन्तरिक्षस्य त्वा दिवस्त्वां दिशां त्वा नाकंस्य त्वा पृष्ठे ब्रध्नस्यं त्वा विष्टपं सादयाम्यमुष्य शर्मासि पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥१९॥

अपूपवाँन्धृतवा ईश्चरुरेह सींदतूत्तभुवन् पृंथिवीं द्यामुतोपरि। योनिकृतः पथिकृतः सपर्यत् ये देवानां घृतभागा इह स्थ। एषा ते यमुसादेने स्वधा निधीयते गृहें उसौ। दशाँक्षरा ता रंक्षस्व तां गोंपायस्व तां ते परिंददामि तस्यां त्वा मा दंभन्पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया। अपूपवांञ्छृतवांन् क्षीरवान्दिधवान्मधुंमा इश्वरुरेह सींदतूत्तभ्रुवन् पृंथिवीं द्यामुतोपरिं। योनिकृतंः पथिकृतंः सपर्यत् ये देवाना ई शृतमांगाः क्षीरभांगा दिधेभागा मधुंभागा इह स्थ। एषा ते यमसादेने स्वधा निधीयते गृहें ऽसौ। शताक्षंरा सहस्रौक्षराऽयुतौक्षराऽच्युताक्षरा ता १ रक्षस्व तां गोपायस्व तां ते परिंददामि तस्यां त्वा मा दंभन्पितरों देवता। प्रजापितिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥२०॥

अनंपस्फुरन्तीरुत्तंर देवतंया हे चं॥______[9]

पुतास्तें स्वधा अमृताः करोमि यास्ते धानाः परिकिराम्यत्रे। तास्ते यमः पितृभिः संविदानोऽत्रं धेनूः कामदुष्याः करोतु। त्वामर्जुनौषंधीनां पर्यो ब्रह्माण इद्विदुः। तासाँ त्वा मध्यादादंदे चरुभ्यो अपिधातवे। दूर्वाणाई स्तम्बमाहंरैतां प्रियतंमां ममं। इमां दिशं मनुष्याणां भूयिष्ठानु वि रोहतु। काशांनाइ स्तम्बमाहंर रक्षंसामपंहत्यै। य एतस्यै दिशः प्राभंवन्नघायवो यथा तेनाभंवान्पुनंः। दर्भाणाई स्तम्बमाहंर पितृणामोषंधीं प्रियाम्। अन्वस्यै मूलं जीवादनु काण्डमथो फलम्॥२१॥

लोकं पृंण ता अस्य सूदंदोहसः। शं वातः शर हि ते घृणिः शर्म ते सन्त्वोषंधीः। कल्पन्तां ते दिशः सर्वाः। इदमेव मेतोऽपंरामार्तिमाराम् काश्चन। तथा तदिश्वभ्यां कृतं मित्रेण वर्रणेन च। वर्णो वारयादिदं देवो वनस्पतिः। आर्र्ये निर्ऋत्ये द्वेषांच वनस्पतिः। विधृतिरिस विधारयास्मद्घा द्वेषां से श्वाम श्वमयास्मद्घा द्वेषां से यव यवयास्मद्घा द्वेषां सि। पृथिवीं गंच्छान्तिरक्षं गच्छ दिवं गच्छ दिशों गच्छ सुवंगंच्छ सुवंगंच्छ दिशों गच्छ दिवं गच्छान्तिरक्षं गच्छ पृथिवीं गंच्छाऽऽपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरः। अश्मन्वती रेवतीर्यद्वे देवस्यं सिवतुः प्वित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंसस्परि धाता पुनातु॥२२॥

आ रोह्ताऽऽयुंर्ज्रसं गृणाना अनुपूर्वं यतंमाना यतिष्ट। इह त्वष्टां सुजनिमा सुरत्नों दीर्घमायुंः करतु जीवसें वः। यथाऽहाँन्यनुपूर्वं भवंन्ति यथर्तवं ऋतुभिर्यन्तिं क्रुप्ताः। यथा न पूर्वमपेरो जहाँत्येवा धांत्रायू ५ षि कल्पयैषाम्। न हिं ते अग्ने तुनुवैं कूरं चकार् मर्त्यः। कृपिर्बभिस्ति तेजंनं पुनंर्ज्रायु गौरिव। अपं नः शोशंचद्घमग्ने शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोशंचद्घमग्ने शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोशंचद्घं मृत्यवे स्वाहाँ। अनुङ्वाहंमन्वारंभामहे स्वस्तयै। स न इन्द्रं इव देवेभ्यो विह्रंः सुम्पारंणो भव॥२३॥

इमे जीवा विं मृतैरावंवर्तिन्नभूँद्भद्रा देवहंतिं नो अद्य। प्राञ्जोगामानृतये हसाय द्राघीय आर्युः प्रतरां दर्धानाः। मृत्योः पदं योपयंन्तो यदैम द्राघीय आयुंः प्रतरां दर्धानाः। आप्यायंमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भेवथ यज्ञियासः। इमं जीवेभ्यः परिधिं दंधामि मा नोऽनुंगादपंरो अर्धमेतम्। शतं जीवन्तु शरदेः पुरूचीस्तिरो मृत्युं देद्महे पर्वतेन। इमा नारीरविधवाः सुपत्नीराञ्जनेन सर्पिषा सम्मृंशन्ताम्। अनश्रवों अनमीवाः सुशेवा आरोहन्तु जनयो योनिमग्रैं। यदार्अनं त्रैककुदं जातः हिमवतस्परि। तेनामृतस्य मूलेनारांतीर्जम्भयामसि। यथा त्वमुंद्भिनथ्स्योंषधे पृथिव्या अधि। पुविम्म उद्घिन्दन्तु कीर्त्या यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अजों ऽस्यजास्मदघा द्वेषा ५ सि यवों ऽसि यवयास्मदघा द्वेषा ५स॥ २४॥

अपं नः शोशंचद्घमग्ने शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोशंचद्घम्। सुक्षेत्रिया सुंगातुया वंसूया चं यजामहे। अपं नः शोश्चंवद्घम्। प्रयद्भन्दिष्ठ एषां प्रास्माकांसश्च सूर्यः। अपं नः शोश्चंवद्घम्। प्रयद्ग्नेः सहंस्वतो विश्वतो यन्तिं सूर्यः। अपं नः शोश्चंवद्घम्। प्रयत्ते अग्ने सूरयो जायेमहि प्र ते वयम्। अपं नः शोश्चंवदघम्॥२५॥

त्व ह विश्वतोमुख विश्वतः परिभूरसिं। अपं नः शोश्चंचद्घम्। द्विषों नो विश्वतोमुखाऽतिं नावेवं पारय। अपं नः शोश्चंचद्घम्। स नः सिन्धंमिव नावयातिं पर्षा स्वस्तयें। अपं नः शोश्चंचद्घम्। आपंः प्रवणादिंव यतीरपास्मथ्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोश्चंचद्घम्। अपं नः शोश्चंचद्घम्। उद्वनादुंदकानीवापास्मथ्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोश्चंचद्घम्। आनन्दायं प्रमोदाय पुनरागाङ् स्वान्गृहान्। अपं नः शोश्चंचद्घम्। आनन्दायं प्रमोदाय पुनरागाङ् स्वान्गृहान्। अपं नः शोश्चंचद्घम्। न व तत्र प्रमीयते गौरश्वः पुरुषः पशुः। यत्रेदं ब्रह्मं क्रियतें परिधिर्जीवनायकमपं नः शोश्चंचदघम्॥२६॥

अुषमुषं चुत्वारि च॥————[१०]

अपंश्याम युवृतिमाचरंन्तीं मृतायं जीवां पंरिणीयमांनाम्। अन्थेन या तमसा प्रावृंताऽसि प्राचीमवांचीमवयन्नरिष्ट्ये। मयेतां मा्र्स्तां भ्रियमाणा देवी सती पितृलोकं यदैषिं। विश्ववांरा नभंसा संव्यंयन्त्युभौ नों लोकौ पयसाऽऽवृंणीहि। रियष्ठामृग्निं मधुंमन्तमूर्मिणमूर्जः सन्तं त्वा पयसोप सश्संदेम। सश्र्य्या समु वर्चसा सचंस्वा नः स्वस्तयें। ये जीवा ये चं मृता ये जाता ये च जन्त्याः। तेभ्यों घृतस्यं

धारियतुं मधुंधारा व्युन्दती। माता रुद्राणां दुहिता वसूंना इ स्वसांऽऽदित्यानां मृतंस्य नाभिः। प्रणुवोचं चिकितुषे जनाय मागामनां गामिदंतिं विधष्ट। पिबंतूदकं तृणां न्यत्तु। ओमुथ्मुजत॥२७॥

विधिष्ट हे चं॥_______[११]

सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सुमङ्गलीरियं वधूरिमा संमेत पश्यंत। सौभाँग्यम्स्यै द्त्त्वायाथास्तं वि परेतन। इमां त्विमिन्द्र मीद्वः सुपुत्रा स्मुभगां कुरु। दशाँस्यां पुत्राना धेहि पतिमेकाद्शं कृषि॥ आवहंन्ती वितन्वाना। कुर्वाणा चीरमात्मनंः। वासा सि मम् गावंश्व। अन्नपाने चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥ सप्तमः प्रश्नः — शीक्षावल्ली॥

शं नो मित्रः शं वर्रणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुंरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मं विद्यामि। ऋतं विदिष्यामि। सत्यं विदिष्यामि। तन्मामंवतु। तद्वक्तारंमवतु। अवंतु माम्। अवंतु वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥१॥ स्त्यं विद्यामि पर्वं वा

शीक्षां व्यांख्यास्यामः। वर्णः स्वरः। मात्रा बलम्। सामे सन्तानः। इत्युक्तः शीक्षाध्यायः॥२॥

सह नो यशः। सह नो ब्रंह्मवर्चसम्। अथातः सर्श्हताया उपनिषदं व्यांख्यास्यामः। पश्चस्वधिकंरणेषु। अधिलोकमधिज्यौतिषमधिविद्यमधिप्रजंमध्यात्मम्। ता महासर्श्हता इंत्याचृक्षते। अथांधिलोकम्। पृथिवी पूर्वरूपम्। द्यौरुत्तंररूपम्। आकांशः सुन्धिः॥३॥

वार्युः सन्धानम्। इत्यंधिलोकम्। अथांधिज्यौतिषम्। अग्निः पूर्वरूपम्। आदित्य उत्तररूपम्। आपः सन्धिः। वैद्युतंः सन्धानम्। इत्यंधिज्यौतिषम्। अथांधिविद्यम्। आचार्यः पूर्वरूपम्॥४॥

अन्तेवास्युत्तंररूपम्। विंद्या सुन्धिः। प्रवचनर्रं सन्धानम्। इत्यंधिविद्यम्। अथाधिप्रजम्। माता पूर्व-रूपम्। पितोत्तंररूपम्। प्रंजा सुन्धिः। प्रजननर्रं सन्धानम्। इत्यधिप्रजम्॥५॥

अथाध्यात्मम्। अधराहनुः पूर्विक्पम्। उत्तराहनुरुत्तर-क्पम्। वाख्यन्धिः। जिह्वां सन्धानम्। इत्यध्यात्मम्। इतीमा महास्रहिताः। य एवमेता महास्रहिता व्याख्यांता वेद। सन्धीयते प्रजया पृश्भिः। ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन सुवर्ग्यणं लोकेन॥६॥

सुन्धिराचार्यः पूँर्वरूपमित्यध्रिप्रजं लोंकेन॥————[3]

यश्छन्दंसामृष्भो विश्वरूपः। छन्दोभ्योऽध्यमृताँध्सम्बभूवं। स मेन्द्रो मेधयाँ स्पृणोतु। अमृतंस्य देव धारंणो भूयासम्। शरीरं मे विचंर्षणम्। जिह्वा मे मधुंमत्तमा। कर्णांभ्यां भूरि विश्रुंवम्। ब्रह्मंणः कोशोंऽसि मेधयाऽपिंहितः। श्रुतं मे गोपाय। आवहंन्ती वितन्वाना॥७॥

कुर्वाणा चीरंमात्मनंः। वासारंसि मम् गावंश्च। अन्नपानं चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह। लोम्शां पृश्भिः सह स्वाहाँ। आ मां यन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। वि मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। प्र मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। दमायन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। शमायन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ॥८॥

यशो जर्नेऽसानि स्वाहाँ। श्रेयान् वस्यंसोऽसानि स्वाहाँ। तं त्वां भग् प्रविशानि स्वाहाँ। स मां भग् प्रविश् स्वाहाँ। तस्मिन्थ्सहस्रंशाखे। निभंगाहं त्वियं मृजे स्वाहाँ। यथाऽऽपः प्रवंता यन्ति। यथा मासां अहर्ज्रम्। एवं मां ब्रंह्मचारिणः। धात्रायंन्तु सुर्वतः स्वाहाँ। प्रतिवेशोऽसि प्र मां भाहि प्र मां

पद्यस्व॥९॥

[8]

भूर्भुवः सुवृरिति वा एतास्तिस्रो व्याह्रंतयः। तासांमुहस्मै तां चंतुर्थीम्। माहांचमस्यः प्रवंदयते। मह् इतिं। तद्क्रह्मं। स आत्मा। अङ्गांन्यन्या देवताः। भूरिति वा अयं लोकः। भुव इत्यन्तरिक्षम्। सुवृरित्यसौ लोकः॥१०॥

मह् इत्यांदित्यः। आदित्येन् वाव सर्वे लोका महीयन्ते। भूरिति वा अग्निः। भुव इति वायुः। सुव्रित्यांदित्यः। मह् इति चन्द्रमाः। चन्द्रमंसा वाव सर्वाणि ज्योती १षि महीयन्ते। भूरिति वा ऋचः। भुव इति सामानि। सुव्रिति यजू १षि॥११॥

मह् इति ब्रह्मं। ब्रह्मंणा वाव सर्वे वेदा महीयन्ते। भूरिति वे प्राणः। भुव इत्यंपानः। सुवरितिं व्यानः। मह् इत्यन्नम्। अन्नेन वाव सर्वे प्राणा महीयन्ते। ता वा पृताश्चतंस्रश्चतुर्धा। चतंस्रश्चतस्रो व्याहृतयः। ता यो वेदे। स वेद ब्रह्मं। सर्वेऽस्मै देवा बुलिमावंहन्ति॥१२॥

असौ लोको यज्ञूरेषि वेद हे चं॥————[५]

स य एषों ऽन्तर्ह्हंदय आकाशः। तस्मिन्नयं पुरुषो मनोमयः। अमृतो हिर्ण्मयः। अन्तरेण तालुंके। य एष स्तनं इवावलम्बंते। सेन्द्रयोनिः। यत्रासौ केशान्तो विवर्तते। व्यपोह्यं शीर्षकपाले। भूरित्युग्नौ प्रतितिष्ठति। भुव इतिं

वायौ॥१३॥

सुवरित्यांदित्ये। मह् इति ब्रह्मंणि। आप्नोति स्वारांज्यम्। आप्नोति मनंस्पितिम्। वाक्पंतिश्वक्षंष्पितिः। श्रोत्रंपतिर्वि-ज्ञानंपितिः। पुतत्ततों भवति। आकाशशंरीरं ब्रह्मं। स्त्यात्मंप्राणारांमं मनं आनन्दम्। शान्तिंसमृद्धम्मृतम्। इतिं प्राचीनयोग्योपांस्व॥१४॥

पृथिव्यंन्तिरेक्षं द्यौर्दिशोंऽवान्तरिद्याः। अग्निर्वायुरांदित्य-श्चन्द्रमा नक्षंत्राणि। आप ओषंधयो वनस्पतंय आकाश आत्मा। इत्यंधिभूतम्। अथाध्यात्मम्। प्राणो व्यानोंऽपान उंदानः संमानः। चक्षुः श्रोत्रं मनो वाक्तक्। चर्म मार्स्स स्नावास्थिं मृज्ञा। एतदंधि विधायर्षिरवोंचत्। पाङ्कं वा इदर सर्वम्। पाङ्कंनैव पाङ्कः स्पृणोतीति॥१५॥

ओमिति ब्रह्मं। ओमितीद सर्वम्ं। ओमित्येतदंनुकृति ह स्म वा अप्योश्रांवयेत्याश्रांवयन्ति। ओमिति सामांनि गायन्ति। ओश्शोमितिं शुस्त्राणिं शश्सन्ति। ओमित्यंध्वर्युः प्रंतिगृरं प्रतिंगृणाति। ओमिति ब्रह्मा प्रसौति। ओमित्यंग्निहोत्रमनुंजानाति। ओमितिं ब्राह्मणः प्रंवृक्ष्यन्नांहु ब्रह्मोपांप्रवानीतिं। ब्रह्मैवोपांप्रोति॥१६॥

ओन्दर्श॥_____[८]

ऋतं च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यं च स्वाध्यायप्रवंचने च।

तपश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। दमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। शमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्नयश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवंचने च। अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। मानुषं च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजनश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यमिति सत्यवचां राथीतरः। तप इति तपोनित्यः पौरुशिष्टिः। स्वाध्यायप्रवचने एवेति नाकों मौद्गल्यः। तिद्धि तपंस्तिद्धि तपः॥१७॥

अहं वृक्षस्य रेरिवा। कीर्तिः पृष्ठं गिरेरिव। ऊर्ध्वपंवित्रो वाजिनीव स्वमृतंमस्मि। द्रविण् सवर्चसम्। सुमेधा अमृतोक्षितः। इति त्रिशङ्कोर्वेदांनुव्चनम्॥१८॥

वेदमनूच्याऽऽचार्योऽन्तेवासिनमंनुशास्ति। सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायाँन्मा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यंवच्छेथ्सीः। सत्यान्न प्रमंदित्व्यम्। धर्मान्न प्रमंदित्व्यम्। कुशलान्न प्रमंदित्व्यम्। भूत्ये न प्रमंदित्व्यम्। स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमंदितव्यम्॥१९॥

देविपतृकार्याभ्यां न प्रमंदित्व्यम्। मातृंदेवो भव। पितृंदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिंदेवो भव। यान्यनवद्यानिं कर्माणि। तानि सेविंतव्यानि। नो इंतराणि। यान्यस्माकश् सुचंरितानि। तानि त्वयोपास्यानि॥२०॥ नो इंतराणि। ये के चास्मच्छ्रेया स्मो ब्राह्मणाः। तेषां त्वयाऽऽसनेन प्रश्वंसित्व्यम्। श्रद्धंया देयम्। अश्रद्धंयाऽदेयम्। श्रिया देयम्। ह्विया देयम्। भिया देयम्। संविंदा देयम्। अथ यदि ते कर्मविचिकिथ्सा वा वृत्तविचिकिथ्सा वा स्यात्॥२१॥

ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा ते तत्रं वर्तेरन्। तथा तत्रं वर्तेथाः। अथाभ्यांख्यातेषु। ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा ते तेषुं वर्तेरन्। तथा तेषुं वर्तेथाः। एषं आदेशः। एष उंपदेशः। एषा वेदोपनिषत्। एतदंनुशासनम्। एवमुपांसित्व्यम्। एवमु चैतंदुपास्यम्॥२२॥

स्वाध्यायप्रवचनाभ्यात्र प्रमंदित्व्यं तानि त्वयोपास्यानि स्यात्तेषुं वर्तेरन्थ्सप्त चं॥————[११]

शं नों मित्रः शं वर्रणः। शं नों भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मावांदिषम्। ऋतमंवादिषम्। सृत्यमंवादिषम्। तन्मामांवीत्। तद्वक्तारंमावीत्। आवीन्माम्। आवींद्वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥२३॥

स्त्यमंवादिषुं पश्चं च॥______[१२

॥अष्टमः प्रश्नः — ब्रह्मानन्दवल्ली॥

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

ब्रह्मविदाँप्रोति परम्। तदेषाभ्यंक्ता। सृत्यं ज्ञानमंनन्तं ब्रह्मं। यो वेद निहिंतं गुहांयां पर्मे व्योमन्। सौंऽश्जृते सर्वान्कामांन्थ्सह। ब्रह्मंणा विपश्चितेतिं। तस्माद्वा एतस्मां-दात्मनं आकाशः सम्भूतः। आकाशाद्वायः। वायोर्ग्निः। अग्नेरापः। अन्न्यः पृथिवी। पृथिव्या ओषंधयः। ओषंधीभ्योऽन्त्रम्। अन्नात्पुरुषः। स वा एष पुरुषोऽन्नरस्मयः। तस्येदंमेव शिरः। अयं दक्षिणः पृक्षः। अयमुत्तंरः पृक्षः। अयमात्मां। इदं पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥१॥

अत्राद्वै प्रजाः प्रजायंन्ते। याः काश्चं पृथिवी १ श्रिताः। अथो अत्रेनेव जीवन्ति। अथैन्दिपं यन्त्यन्ततः। अत्र १ हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मांथ्सर्वीष्धमुंच्यते। सर्वं वे तेऽत्रंमाप्रुवन्ति। येऽत्रं ब्रह्मोपासंते। अत्र १ हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मांथ्सर्वीष्धमुंच्यते। अत्राद्भूतानि जायंन्ते। जातान्यन्नेन वर्धन्ते। अद्यतेऽत्ति चं भूतानि। तस्मादन्नं तद्च्यंत इति। तस्माद्वा एतस्मादन्नंरस्मयात्। अन्योऽन्तर आत्मां प्राण्मयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्राणं एव

शिरः। व्यानो दक्षिणः पृक्षः। अपान उत्तरः पृक्षः। आकांश आत्मा। पृथिवी पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भुवति॥२॥

प्राणं देवा अनु प्राणंन्ति। मनुष्याः पृशवंश्च ये। प्राणो हि भूतानामायुः। तस्मांध्सर्वायुषमंच्यते। सर्वमेव त् आयुंर्यन्ति। ये प्राणं ब्रह्मोपासंते। प्राणो हि भूतानामायुः। तस्माध्सर्वायुषमुच्यंत इति। तस्येष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मांत् प्राणमयात्। अन्योऽन्तर आत्मां मनोमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य यज्ञंरेव शिरः। ऋग्दक्षिणः पृक्षः। सामोत्तरः पृक्षः। आदेश आत्मा। अथर्वाङ्गिरसः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥३॥

यतो वाचो निवंतन्ते। अप्रांप्य मनंसा सह। आनन्दं ब्रह्मंणो विद्वान्। न बिभेति कदांचनेति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मांन्मनोमयात्। अन्योऽन्तर आत्मा विज्ञानमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविंध एव। तस्य पुरुषविंधताम्। अन्वयं पुरुषविंधः। तस्य श्रंद्धेव शिरः। ऋतं दक्षिणः पृक्षः। सत्यमुत्तरः पृक्षः। योग आत्मा। महः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥४॥

विज्ञानं युज्ञं तंनुते। कर्माणि तनुतेऽपि च। विज्ञानं देवाः

सर्वे। ब्रह्म ज्येष्ठमुपांसते। विज्ञानं ब्रह्म चेद्वेदं। तस्माचेन्न प्रमाद्यंति। शरीरे पाप्मंनो हित्वा। सर्वान्कामान्थ्समश्जेत इति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्माद्विज्ञान्मयात्। अन्योऽन्तर आत्मांऽऽनन्द्मयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्रियंमेव शिरः। मोदो दक्षिणः पृक्षः। प्रमोद उत्तरः पृक्षः। आनंन्द आत्मा। ब्रह्म पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥५॥

असंत्रेव सं भवति। अस्द्वह्मेति वेद चेत्। अस्ति ब्रह्मेतिं चेद्वेद। सन्तमेनं ततो विदुरिति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। अथातोऽनुप्रश्ञाः। उता विद्वानुमुं लोकं प्रेत्यं। कश्चन गंच्छ्ती(३)॥ आहों विद्वानुमुं लोकं प्रेत्यं। कश्चिम्मंश्जुता(३) उ। सोऽकामयत। बहु स्यां प्रजांयेयेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तृष्ट्वा। इद॰ सर्वमसृजत। यदिदं किं चं। तथ्सृष्ट्वा। तदेवानु प्राविंशत्। तदंनुप्रविश्यं। सच्च त्यचांभवत्। निरुक्तं चानिंरुक्तं च। निल्यनं चानिंरुत्यनं च। विज्ञानं चाविंज्ञानं च। सत्यं चानृतं च संत्यम्भवत्। यदिदं किं च। तथ्सत्यमिंत्याचक्षते। तदप्येष श्लोंको भवति॥६॥

असुद्वा इदमग्रं आसीत्। ततो वै सदंजायत। तदात्मानः स्वयंमकुरुत। तस्मात्तथ्सुकृतमुच्यंत इति। यद्वै तथ्सुकृतम्। रंसो वै सः। रसः ह्येवायं लब्ध्वाऽऽनंन्दी
भवति। को ह्येवान्याँत्कः प्राण्यात्। यदेष आकाश
आनंन्दो न स्यात्। एष ह्येवानंन्दयाति। यदा ह्येवैष्
एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां
विन्दते। अथ सोऽभयं गंतो भवति। यदा ह्येवैष्
एतस्मिन्नदृरमन्तरं कुरुते। अथ तस्य भयं भवति। तत्त्वेव
भयं विदुषोऽमंन्वानस्य। तदप्येष श्लोंको भवति॥७॥

भीषाऽस्माद्वातंः पवते। भीषोदंति सूर्यः। भीषाऽस्मादग्नि-श्चेन्द्रश्च। मृत्युर्धावति पश्चेम इति। सैषाऽऽनन्दस्य मीमा रंसा भवति। युवा स्याथ्साधु युंवाऽध्यायकः। आशिष्ठो दिष्ठष्ठो बलिष्ठः। तस्येयं पृथिवी सर्वा वित्तस्यं पूर्णा स्यात्। स एको मानुषं आनन्दः। ते ये शतं मानुषं आनन्दाः।

स एको मनुष्यगन्धर्वाणांमान्नन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य। ते ये शतं मनुष्यगन्धर्वाणांमानन्दाः।

स एको देवगन्धर्वाणामान्नदः। श्रोत्रियस्य चाकामहत्स्य। ते ये शतं देवगन्धर्वाणामानन्दाः।

स एकः पितृणां चिरलोकलोकानांमानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहत्स्य। ते ये शतं पितृणां चिरलोकलोकानांमानुन्दाः।

स एक आजानजानां देवानांमान्नन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य। ते ये शतमाजानजानां देवानांमानन्दाः।

स एकः कर्मदेवानां देवानांमानुन्दः। ये कर्मणा

देवानंपियन्ति। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। ते ये शतं कर्मदेवानां देवानांमानन्दाः।

स एको देवानामान्नन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहत्स्य। ते ये शतं देवानामानन्दाः।

स एक इन्द्रंस्याऽऽन्न्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। ते ये शतमिन्द्रंस्याऽऽनन्दाः।

स एको बृहस्पतेंरान्न्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। ते ये शतं बृहस्पतेंरानन्दाः।

स एकः प्रजापतेरान्न्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। ते ये शतं प्रजापतेरानन्दाः।

स एको ब्रह्मणं आनुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। स यश्चांयं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकः। स यं एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतं मनोमयमात्मानमुपं-सङ्कामित। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतमानन्द-मयमात्मानमुपंसङ्कामित। तदप्येष श्लोको भ्वति॥८॥

यतो वाचो निवंतन्ते। अप्रांप्य मनंसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति कुतंश्चनेति। एत ह वावं न तपति। किमह साधुं नाक् रवम्। किमहं पापमक रविमिति। स य एवं विद्वानेते आत्मांन स्पृणुते। उभे ह्यें वैष् एते आत्मांन स्पृणुते। य एवं वेदं। इत्युंपनिषंत्॥ ९॥

सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥नवमः प्रश्नः — भृगुवल्ली॥

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृगुर्वे वांरुणिः। वर्रणं पितंरमुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। तस्मां एतत्प्रोवाच। अन्नं प्राणं चक्षुः श्रोत्रं मनो वाचमितिं। त॰ होवाच। यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते। येन जातांनि जीवंन्ति। यत्प्रयंन्त्यभि संविंशन्ति। तद्विजिंज्ञासस्व। तद्वह्मेतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥१॥

अत्रं ब्रह्मेति व्यंजानात्। अन्नाद्धेव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। अन्नेन जातांनि जीवंन्ति। अन्नं प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। तिद्वज्ञायं। पुनरेव वरुणं पितर्मुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥२॥

प्राणो ब्रह्मेति व्यंजानात्। प्राणास्येव खल्विमानि भूतांनि जायन्ते। प्राणेन जातांनि जीवंन्ति। प्राणं प्रयंन्त्यभि संविश्वन्तीतिं। तद्विज्ञायं। पुनेरेव वर्रणं पितर्मुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥३॥

मनो ब्रह्मेति व्यंजानात्। मनंसो ह्यंव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। मनंसा जातांनि जीवंन्ति। मनः प्रयंन्त्यभि संविंशन्तीतिं। तिंद्वज्ञायं। पुनंरेव वरुणं पितर्मुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥४॥

विज्ञानं ब्रह्मेति व्यंजानात्। विज्ञाना्द्धेव खिल्वमानि भूतानि जायन्ते। विज्ञानंन जातानि जीवंन्ति। विज्ञानं प्रयंन्त्यभि संविंशन्तीतिं। तद्विज्ञायं। पुनेरेव वर्रणं पितंरमुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥५॥

आन्नन्दो ब्रह्मेति व्यंजानात्। आनन्दान्धेव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। आन्नन्देन जातांनि जीवंन्ति। आन्नन्दं प्रयंन्त्यभि संविश्वन्तीति। सैषा भाग्वी वांरुणी विद्या। प्रमे व्योम्न् प्रतिष्ठिता। य एवं वेद् प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवति प्रजयां प्शुभिर्ब्रह्मवर्च्सने। महान्कीर्त्या॥६॥ अत्रं न निंन्द्यात्। तद्दूतम्। प्राणो वा अन्नम्ं। शरीरमन्नादम्। प्राणे शरीरं प्रतिष्ठितम्। शरीरे प्राणः प्रतिष्ठितः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नंवानन्नादो भंवति। महान्भवित प्रजयां प्रशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥७॥

अत्रं न परिचक्षीत। तद्वतम्। आपो वा अन्नम्। ज्योतिरन्नादम्। अपसु ज्योतिः प्रतिष्ठितम्। ज्योतिष्यापः प्रतिष्ठिताः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवित प्रजयां प्रशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥८॥

अन्नं बहु कुंवीत। तद्वतम्। पृथिवी वा अन्नम्। आकाशौँऽन्नादः। पृथिव्यामांकाशः प्रतिष्ठितः। आकाशे पृथिवी प्रतिष्ठिता। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य प्तदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नंवानन्नादो भंवति। महान्भंवति प्रजयां पृशुभिर्ब्रह्मवर्चसने। महान्कीर्त्या॥९॥

न कश्चन वसतौ प्रत्यांचक्षीत। तद्वृतम्। तस्माद्यया कया च विधया बह्वंत्रं प्राप्नुयात्। अराध्यस्मा अन्नमित्याचक्षते। एतद्वे मुखतौंऽन्नश्र राद्धम्। मुखतोऽस्मा अन्नश्र राध्यते। एतद्वे मध्यतौंऽन्नश्र राद्धम्। मध्यतोऽस्मा अन्नश्र राध्यते। एतद्वा अन्ततौंऽन्नश्र राद्धम्। अन्ततोऽस्मा अन्नश्र राध्यते। य एवं वेद। क्षेम इंति वाचि। योगक्षेम इति प्रांणापानयोः। कर्मेति हस्तयोः। गतिरिति पादयोः। विमुक्तिरिति पायौ। इति मानुषीः समाज्ञाः। अथ दैवीः। तृप्तिरिंति वृष्टौ। बलमिति विद्युति। यश इति पशुषु। ज्योतिरिति नेक्षत्रेषु। प्रजातिरमृतमानन्द इंत्युपस्थे। सर्वमिंत्याकाशे। तत्प्रतिष्ठेत्युंपासीत। प्रतिष्ठांवान्भवति। तन्मह इत्युंपासीत। मंहान्भवति। तन्मन इत्युंपासीत। मानंवान्भवति। तन्नम इत्युंपासीत। नम्यन्तें उस्मै कामाः। तद्वह्मेत्युंपासीत। ब्रह्मवान्भवति। तद्भह्मणः परिमर इत्युपासीत। पर्येणं म्रियन्ते द्विषन्तंः सपल्नाः। परि येंऽप्रियां भ्रातृव्याः। स यश्चीयं पुरुषे। यश्चासावादित्ये। स एकः। स य एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं प्राण-मयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं मनोमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतमानन्दमय-मात्मानमुपंसङ्कम्य। इमाँ होकान्कामात्री कामरूप्यंनु-स्थरन्। एतथ्साम गांयन्नास्ते। हा(३) वु हा(३) वु हा(३) व्। अहमन्नमहमन्नम्। अहमन्नादो(२)ऽहमन्नादो(२)-ऽहमन्नादः। अहङ् श्लोकुकृद्हङ् श्लोकुकृद्हङ् श्लोकुकृत्। अहमस्मि प्रथमजा ऋता(३) स्य। पूर्वं देवेभ्यो अमृतस्य ना(३) भाइ। यो मा ददाति स इदेव मा(३) वाः। अहमन्नमन्नमदन्तमा(३) द्मि। अहं विश्वं भुवंनमभ्यंभवाम्। सुवर्न ज्योतीः। य एवं वेदं। इत्युपनिषंत्॥१०॥

सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥द्शमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत्॥

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥अम्भस्य पारे॥

अम्भस्य पारे भुवंनस्य मध्ये नाकंस्य पृष्ठे मंहुतो महीयान्। शुक्रेण ज्योती १ षि समनुप्रविष्टः प्रजापंतिश्चरित् गर्भे अन्तः॥ यस्मिन्निद्दः सं च विचैति सर्वं यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः। तदेव भूतं तदु भव्यंमा इदं तद्क्षरे पर्मे व्योमन्॥ येनांऽऽवृतं खं च दिवं महीं च येनांऽऽदित्यस्तपंति तेजंसा भ्राजंसा च। यमन्तः समुद्रे क्वयो वयंन्ति यद्क्षरे पर्मे प्रजाः॥ यतः प्रसूता ज्गतः प्रसूती तोयंन जीवान् व्यसंसर्ज् भूम्याम्। यदोषंधीभिः पुरुषान्पशूङ्श्च विवेश भूतानिं चराचराणि॥ अतः परं नान्यदणीयसः हि परात्परं यन्महंतो महान्तम्॥ यदेकम्व्यक्तमनंन्तरूपं विश्वं पुराणं तमंसः परंस्तात्॥१॥

तदेवर्तं तदुं स्त्यमांहुस्तदेव ब्रह्मं पर्मं केवीनाम्। इष्टापूर्तं बंहुधा जातं जायंमानं विश्वं बिंभर्ति भुवंनस्य नाभिः॥ तदेवाग्निस्तद्वायुस्तथ्सूर्यस्तदुं चन्द्रमाः। तदेव शुक्रम्मृतं तद्वह्म तदापः स प्रजापंतिः॥ सर्वे निमेषा ज्ञिरे विद्युतः पुरुषादिधे। कुला मृंहूर्ताः काष्ठांश्वाहोरात्राश्चं सर्वशः॥ अर्धमासा मासां ऋतवः संवथ्सरश्चं कल्पन्ताम्। स आपः प्रदुघे उभे इमे अन्तरिक्षमथो सुवः॥ नैनंमूर्धं न तिर्यश्चं न मध्ये परिजग्रभत्। न तस्येशे कश्चन तस्यं नाम महद्यशः॥२॥

न स्न्हशे तिष्ठति रूपंमस्य न चक्षुंषा पश्यति कश्चनैनम्ं। ह्दा मंनीषा मनंसाऽभिक्नृंप्तो य एंनं विदुरमृंतास्ते भवन्ति॥ अद्भः सम्भूंतो हिरण्यग्भं इत्यृष्टौ॥ एष हि देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो हि जातः स उ गर्भे अन्तः। स विजायंमानः स जिन्ष्यमाणः प्रत्यङ्गुःखाँस्तिष्ठति विश्वतोमुखः॥ विश्वतंश्वक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोहस्त उत विश्वतंस्पात्। सं बाहुभ्यां नमति सं पतंत्रैर्द्यावांपृथिवी जनयंन्देव एकः॥ वेनस्तत्पश्यन्विश्वा भुवंनानि विद्वान् यत्र विश्वं भवत्येकंनीळम्। यस्मित्रिदः सं च विचैकः स ओतः प्रोतंश्व विभुः प्रजासुं। प्र तद्वोचे अमृतं नु विद्वान्गंन्थ्वी नाम निहितं गुहांसु॥३॥

त्रीणि पदा निर्हिता गुहांसु यस्तद्वेदं सिवतुः पिताऽसंत्। स नो बन्धुंर्जनिता स विंधाता धामांनि वेद भुवंनानि विश्वां। यत्रं देवा अमृतंमानशानास्तृतीये धामांन्यभ्यैरंयन्त। परि द्यावांपृथिवी यंन्ति सद्यः परि लोकान् परि दिशः परि सुवंः। ऋतस्य तन्तुं विततं

विचृत्य तदंपश्यत्तदंभवत् प्रजासुं। परीत्यं लोकान्परीत्यं भूतानि पुरीत्य सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथमजा ऋतस्याऽऽत्मनाऽऽत्मानंमभिसम्बंभूव। सदंसस्पतिमद्भंतं प्रियमिन्द्रंस्य काम्यम्। सनिं मेधामंयासिषम्। उद्दींप्यस्व जातवेदोऽपघ्नित्रऋतिं मम्॥४॥

पशू इश्च मह्यमावंह जीवंनं च दिशों दिश। मा नों - ूर्-हिर्सीज्ञातवेदो गामश्वं पुरुषं जगत्। अबिभ्रदम् आगहि श्रिया मा परिपातय।

॥ गायत्रीमन्त्राः ॥

पुरुषस्य विद्म सहस्राक्षस्यं महादेवस्यं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्महें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयात्। तत्पुरुषाय विदाहे वऋतुण्डायं धीमहि। तन्नो दन्तिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विदाहे चऋतुण्डायं धीमहि॥५॥

तन्नो नन्दिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुंषाय विद्महें महासेनायं धीमहि। तन्नंः षण्मुखः प्रचोदयाँत्। तत्प्रंषाय विदाहे स्वर्णपक्षायं धीमहि। तन्नों गरुडः प्रचोदयाँत्। वेदात्मनायं विदाहे हिरण्यगर्भायं धीमहि। तन्नौ ब्रह्मं प्रचोदयात्। नारायणायं विद्महें वासुदेवायं धीमहि। तन्नों विष्णुः प्रचोदयात्। वज्रनखायं विदाहं तीक्ष्णदङ्ष्ट्रायं धीमहि॥६॥

तन्नो नारसि १ हः प्रचोदयात्। भास्करायं विदाहें

महद्युतिक्रायं धीमहि। तन्नों आदित्यः प्रचोदयाँत्। वैश्वान्रायं विद्महें लालीलायं धीमहि। तन्नों अग्निः प्रचोदयाँत्। कात्यायनायं विद्महें कन्यकुमारिं धीमहि। तन्नों दुर्गिः प्रचोदयाँत्।

॥ दूर्वासूक्तम्॥

सहस्रपरंमा देवी शतमूला शताङ्करा। सर्वर् हरतुं मे पापं दूर्वा दुःस्वप्ननाशंनी। काण्डांत्काण्डात् प्ररोहंन्ती परुषः परुषः परि॥७॥

पुवानों दूर्वे प्रतंनु सहस्रेण श्तेनं च। या श्तेनं प्रत्नोषिं सहस्रेण विरोहंसि। तस्यांस्ते देवीष्टके विधेमं ह्विषां व्यम्। अश्वंकान्ते रंथकान्ते विष्णुकांन्ते वसुन्धंरा। शिरसां धारंयिष्यामि रक्षस्व मां पदे पदे।

॥ मृत्तिकासूक्तम्॥

भूमिर्धेनुर्धरणी लोकधारिणी। उद्धृतांऽसि वंराहेण कृष्णेन शंतबाहुना। मृत्तिके हर्न मे पापं यन्मया देष्कृतं कृतम्। मृत्तिके ब्रह्मंदत्ताऽसि काश्यपेनाभिमन्त्रिता। मृत्तिके देहिं मे पुष्टिं त्वियि संवै प्रतिष्ठितम्॥८॥

मृत्तिकै प्रतिष्ठिते सुर्वं तुन्मे निर्णुद् मृत्तिके। तयां हुतेने पापेन गुच्छामि पंरमां गतिम्।

॥ रात्रुजयमन्त्राः ॥

यतं इन्द्र भयांमहे ततों नो अभयं कृषि। मघंवन्छ्ग्धि तव् तन्नं ऊतये विद्विषो विमृधों जिहि। स्वस्तिदा विशस्पतिर्वृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अभयङ्करः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः स्वस्ति नंः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। आपान्तमन्युस्तृपलेप्रभर्मा धुनिः शिमीवाञ्छ्ररुमा स्रजीषी। सोमो विश्वान्यत्सावनानि नार्वागिन्द्रं प्रतिमानानिदेभुः॥९॥

ब्रह्मंजज्ञानं प्रंथमं पुरस्ताद्विसीमृतः सुरुचो वेन आंवः। सबुध्नियां उपमा अस्य विष्ठाः सृतश्च योनिमसंतश्च विवंः। स्योना पृंथिवि भवांऽनृक्षरा निवेशंनी। यच्छांनः शर्म सृप्रथाः। गृन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपृष्टां करीषिणीम्। ईश्वरी सर्वभूतानां तामिहोपंह्वये श्रियम्। श्रीमें भूजतु। अलक्ष्मीमें नृश्यतु। विष्णुमुखा वै देवाश्छन्दोंभिरिमाँ श्लोकानंनप-ज्ययम्भ्यंजयन्। मृहा इन्द्रो वर्ज्रबाहुः षोड्शी शर्म यच्छतु॥१०॥

स्वस्ति नों मुघवां करोतु हन्तुं पाप्मानं योंऽस्मान् द्वेष्टिं। सोमान् स्वरंणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते। कुक्षीवन्तं य औशिजम्। शरीरं यज्ञशम्लं कुसीदं तस्मिन्थ्सीदतु योंऽस्मान् द्वेष्टिं। चरंणं पुवित्रं वितंतं पुराणं येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं प्वित्रेण शुद्धेनं पूता अतिं पाप्मान्मरांतिं तरेम। स्जोषां इन्द्र सगणो म्रुद्धः सोमं पिब वृत्रहञ्छूर विद्वान्। ज्रिह शत्रूर् रप मृधो नुद्स्वाथाभयं कृणुहि विश्वतो नः। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्यौऽस्मान् द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मंयो भुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन॥११॥

महेरणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रसस्तस्यं भाजयतेह नंः। उशतीरिंव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ। आपों जनयंथा च नः।

॥ अघमर्षणसूक्तम्॥

हिरंण्यशृङ्गं वर्रुणं प्रपंद्ये तीर्थं में देहि याचितः। यन्मयां भुक्तम्साधूनां पापेभ्यंश्च प्रतिग्रंहः। यन्मे मनंसा वाचा कर्मणा वा दुष्कृतं कृतम्। तन्न इन्द्रो वर्रुणो बृह्स्पतिः सिवृता चं पुनन्तु पुनः पुनः। नमोऽग्नयेंऽपस्मुमते नम् इन्द्रांय नमो वर्रुणाय नमो वारुण्यें नमोऽज्ञ्यः॥१२॥

यद्पां ऋूरं यदंमेध्यं यदंशान्तं तदपंगच्छतात्। अत्याशनादंतीपानाद्यच उग्रात् प्रतिग्रहात्। तन्नो वर्रणो राजा पाणिनां ह्यवमर्शतु। सोऽहमपापो विरजो निर्मुक्तो मुक्तिकिल्बषः। नाकस्य पृष्ठमारुह्य गच्छेद्वह्मंसलोकताम्। यश्चापसु वर्रणः स पुनात्वंघमर्षणः। इमं में गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुंद्रि स्तोम र् सचता परुष्णिया। असिक्रिया मंरुद्वृधे वितस्त्याऽऽर्जीकीये शृणुह्या सुषोमया। ऋतं चे सत्यं चाभीं द्वात्तप्सोऽध्यं जायत। ततो रात्रिरजायत् ततः समुद्रो अर्णुवः॥१३॥

स्मुद्रादंर्णवादिधं संवथ्सरो अंजायत। अहोरात्राणिं विदधिक्षंस्य मिष्तो वृशी। सूर्याचन्द्रमसौं धाता यंथापूर्वमंकल्पयत्। दिवंं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो सुवंः। यत्पृथिव्याः रजः स्वमान्तरिक्षे विरोदंसी। इमाइस्तदापो वंरुणः पुनात्वंघमर्षणः। पुनन्तु वसंवः पुनातु वर्रुणः पुनात्वंघमर्षणः। पुनन्तु वसंवः पुनातु वर्रुणः पुनात्वंघमर्षणः। एष भूतस्यं मध्ये भुवंनस्य गोप्ता। एष पुण्यकृतां लोकानेष मृत्योर्हिर्ण्मयम्। द्यावांपृथिव्योर्हिर्ण्मयः सङ्श्रितः सुवंः॥१४॥

स नः सुवः स॰ शिंशाधि। आर्द्रं ज्वलंति ज्योतिंर्हमंस्मि। ज्योतिर्ज्वलंति ब्रह्माहमंस्मि। योऽहमंस्मि ब्रह्माहमंस्मि। अहमंस्मि ब्रह्माहमंस्मि। अहमेवाहं मां जुंहोमि स्वाहाँ। अकार्यकार्यवकीणीं स्तेनो भ्रूणहा गुंरुतल्पगः। वर्रुणोऽपामघमर्षणस्तस्माल्पापात् प्रमुंच्यते। रजो भूमिंस्त्वमा॰ रोदंयस्व प्रवंदन्ति धीराः। आऋाँन्थ्समुद्रः प्रथमे विधमा जनयन्प्रजा भुवनस्य राजाः। वृषां प्रवित्रे अधि सानो अव्ये बृहथ्सोमो वावृधे सुवान इन्दुः॥१५॥

॥दुर्गासूक्तम्॥

जातवेदसे सुनवाम सोमंमरातीयतो निदंहाति वेदः। स नंः पर्षदितं दुर्गाणि विश्वां नावेव सिन्धुं दुरिताऽत्यग्निः। तामग्निवंणां तपंसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कर्मफुलेषु जुष्टांम्। दुर्गां देवी र शरणमहं प्रपद्ये सुतरंसि तरसे नर्मः। अग्ने त्वं पारया नव्यो अस्मान्थ्स्वस्तिभिरति दुर्गाणि विश्वां। पूर्श्व पृथ्वी बहुला नं उर्वी भवां तोकाय तनयाय शं योः। विश्वानि नो दुर्गहा जातवेदः सिन्धं न नावा दुरिताति पर्षि। अग्ने अत्रिवन्मनंसा गृणानों ऽस्माकं बोध्यविता तनूनांम्। पृत्नाजित् र सहंमानम् ग्रिमुग्र र हुंवेम पर्माथ्सधस्थात्। स नंः पर्षदितं दुर्गाणि विश्वा क्षामंद्देवो अति दुरिताऽत्यग्निः। प्रत्नोषिं कमीड्यों अध्वरेषुं सुनाच्च होता नव्यंश्च सिथ्सं। स्वाश्रीग्रे तनुवं पिप्रयंस्वास्मभ्यं च सौभंगमायंजस्व। गोभिर्जुष्टमयुजो निषिक्तं तवैन्द्र विष्णोरनुसश्चरेम। नाकस्य पृष्ठमि संवसानो वैष्णवीं लोक इह मादयन्ताम्॥१६॥

॥ व्याहृतिहोमन्त्राः॥

भूरत्रंमग्रयं पृथिव्ये स्वाहा भुवोऽत्रं वायवेऽन्तरिक्षाय् स्वाहा सुव्रत्रंमादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुव्रत्रं चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमो देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुव्रत्रमोम्॥१७॥

-[३]

भूरग्नयें पृथिव्यै स्वाहा भुवों वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुवंरादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुव्रग्न ओम्॥१८॥

भूरग्नयें च पृथिव्यै चं मह्ते च स्वाहा भुवों वायवें चान्तरिक्षाय च मह्ते च स्वाहा सुवंरादित्यायं च दिवे चं मह्ते च स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्चन्द्रमंसे च नक्षंत्रेभ्यश्च दिग्भ्यश्चं मह्ते च स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवर्महरोम्॥१९॥

.[५]

॥ ज्ञानप्राप्त्यर्थहोममन्त्राः॥

पाहि नो अग्न एनंसे स्वाहा। पाहि नो विश्ववेदंसे स्वाहा। यज्ञं पाहि विभावंसो स्वाहा। सर्वं पाहि शतर्ऋतो स्वाहा॥२०॥

-[દ્

पाहि नों अग्न एकंया। पाह्युंत द्वितीयंया। पाह्यूजंं तृतीयंया। पाहि गीर्भिश्चं तुस्भिवंसो स्वाहाँ॥२१॥

[인]

॥वेदविस्मरणाय जपमन्त्राः॥

यश्छन्दंसामृष्भो विश्वरूप्श्छन्दौभ्यश्छन्दा ईस्याविवेशं। सता १ शिक्यः पुरोवाचोपिन्षिदिन्द्रौ ज्येष्ठ इंन्द्रियाय ऋषिंभ्यो नमों देवेभ्यंः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवृश्छन्द ओम्॥२२॥

[८]

नमो ब्रह्मणे धारणं मे अस्त्वनिराकरणं धारयिता भूयासं कर्णयोः श्रुतं मा च्यौंबुं ममामुष्य ओम्॥२३॥ ————[९]

॥तपः प्रशंसा॥

ऋतं तपेः सृत्यं तपेः श्रुतं तपेः शान्तं तपो दम्स्तपः शम्स्तपो दानं तपो यज्ञं तपो भूर्भुवः सुवर्ब्रह्मैतदुपौस्यैतत्तपेः॥२४॥

[80]

॥ विहिताचरणप्रशंसा निषिद्धाचरणनिन्दा च॥

यथां वृक्षस्यं सम्पुष्पितस्य दूराद्गन्धो वाँत्येवं पुण्यंस्य कुर्मणों दूराद्गन्धो वांति यथांऽसिधारां कुर्तेऽवंहितामवृक्तामे यद्युवे युवे ह वां विह्वयिष्यामि कुर्तं पंतिष्यामीत्येवमृनृतांदात्मानं जुगुफ्सेंत्॥२५॥

[{ } }]

॥ दहरविद्या॥

अणोरणीयान्मह्तो महीयानात्मा गुहायां निहितोऽस्य जन्तोः। तमंक्रतुं पश्यति वीतशोको धातुः प्रसादौन्महिमानं-मीशम्। सप्त प्राणाः प्रभवंन्ति तस्मौथ्सप्तार्चिषंः समिधंः सप्त जिह्वाः। सप्त इमे लोका येषु चरंन्ति प्राणा गुहाशंयां निहिंताः सप्त संप्त। अतः समुद्रा गि्रयंश्च सर्वेऽस्माथ्स्यन्दंन्ते सिन्धंवः सर्वरूपाः। अतंश्च विश्वा ओषंधयो रसाँच येनैंष भूतस्तिष्ठत्यन्तरात्मा। ब्रह्मा देवानां पद्वीः कंवीनामृषिर्विप्नांणां महिषो मृगाणांम्। श्येनो गृध्रांणाः स्विधितिर्वनांनाः सोमः प्वित्रमत्येति रेभन्। अजामेकां लोहितशुक्ककृष्णां बह्वीं प्रजां जनयंन्तीः सरूपाम्। अजो ह्येको जुषमांणोऽनुशेते जहाँत्येनां भृक्तभोगामजौंऽन्यः॥२६॥

ह् सः शुंचिषद्वसुं रन्तिरक्षसद्धोतां वेदिषदितिथिर्दुरोण्सत्।
नृषद्वरसद्देत्सद्धोमसद्बा गोजा ऋतंजा अंद्रिजा ऋतं
बृहत्। घृतं मिमिक्षिरे घृतमस्य योनिर्धृते श्रितो घृतमुंवस्य धामं। अनुष्वधमावंह मादयंस्व स्वाहांकृतं वृषभ विक्षे ह्व्यम्। समुद्रादूर्मिर्मधुंमा उदांरदुपा शुना सममृतत्वमानट्। घृतस्य नाम् गृह्यं यदस्तिं जिह्वा देवानां मृतंस्य नाभिः। वयं नाम् प्रब्रंवामा घृतेनास्मिन् यज्ञे धारयामा नमोभिः। उपं ब्रह्मा शृंणवच्छ्रस्यमां चं चतुः शृङ्गोऽवमीद्भौर पृतत्। च्त्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तां सो अस्य। त्रिधां बद्धो वृष्भो रोरवीति महो देवो मर्त्या आविवेश॥२७॥

त्रिधां हितं पणिभिंगुंह्यमांनं गविं देवासों घृतमन्वंविन्दन्। इन्द्र एक्र् सूर्य एकंं जजान वेनादेक एक्र्

निष्टंतक्षुः। यो देवानां प्रथमं पुरस्ताद्विश्वाधियों रुद्रो मृहर्षिः। हिरुण्युगर्भं पंश्यत जायंमानः स नो देवः शुभया स्मृत्या संयुनक्तु। यस्मात्परं नापरमस्ति किश्चिद्यस्मान्नाणीयो न ज्यायौऽस्ति कश्चित्। वृक्ष इंव स्तब्धो दिवि तिष्ठत्येकुस्तेनेदं पूर्णं पुरुषेण सर्वम्। न कर्मणा न प्रजया धर्नेन त्यागेनैके अमृतत्वमानशुः। परेण नाकं निहितं गुहांयां विभ्राजंते यद्यतंयो विशन्ति। वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्थाः सन्यासयोगाद्यतंयः शुद्धसत्त्वाः। ते ब्रह्मलोके तु पराँन्तकाले परांमृतात्परिंमुच्यन्ति सर्वे। दहं विपापं परमें शमभूतं यत्पुंण्डरीकं पुरमेध्यस इस्थम्। तत्रापि दहं गगनं विशोकस्तस्मिन् यदन्तस्तदुपांसितव्यम्। यो वेदादौ स्वंरः प्रोक्तो वेदान्तं च प्रतिष्ठिंतः। तस्यं प्रकृतिंलीनस्य यः परंः स महेश्वंरः॥२८॥

-[१२]

॥ नारायणसूक्तम् ॥

सहस्रशीर्षं देवं विश्वाक्षं विश्वशंम्भुवम्। विश्वं नारायणं देवमृक्षरं पर्मं प्दम्। विश्वतः परंमान्नित्यं विश्वं नारायणः हरिम्। विश्वमेवेदं पुरुषस्तद्विश्वमुपंजीवति। पतिं विश्वंस्याऽऽत्मेश्वंरः शाश्वंतः शिवमंच्युतम्। नारायणं महाज्ञेयं विश्वात्मानं प्रायणम्। नारायणपंरो ज्योतिरात्मा नारायणः परः। नारायण परं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः पेरः। नारायणपेरो ध्याता ध्यानं नारायणः पेरः। यचे किञ्जिज्ञेगथ्सर्वं दृश्यते श्रूयतेऽपि वा॥ अन्तर्बिहिश्चं तथ्सर्वं व्याप्य नारायणः स्थितः॥२९॥

अनेन्तुमव्येयं कुवि॰ संमुद्रेऽन्तंं विश्वशंम्भुवम्। पद्मकोश प्रतीकाश्र् हृदयं चाप्यधोमुंखम्। अधो निष्ट्या विंतस्त्यान्ते नाभ्यामुंपरि तिष्ठंति। ज्वालमालाकुंलं भाती विश्वस्यांऽऽयतनं मंहत्। सन्तंतः शिलाभिंस्तु-लम्बंत्याकोशसन्निभम्। तस्यान्तें सुष्टिर सूक्ष्मं तस्मिन्थ्सुर्वं प्रतिष्ठितम्। तस्य मध्ये महानिभ्निर्विश्वाचिंविश्वतोमुखः। सोऽग्रंभुग्विभंजन्तिष्ठन्नाहारमज्रः कविः। तिर्यगूर्ध्वमधः शायी र्श्मयंस्तस्य सन्तंता। सन्तापयंति स्वं देहमापादतल-मस्तंकः। तस्य मध्ये वह्निंशिखा अणीयोध्वा व्यवस्थितः। नीलतोयदंमध्यस्थाद्विद्युष्ठेखेव भास्वरा। नीवारशूकंवत्तन्वी पीता भौस्वत्यणूर्पमा। तस्यौः शिखाया मध्ये पुरमौत्मा व्यवस्थितः। स ब्रह्म स शिवः स हरिः सेन्द्रः सोऽक्षरः परेमः स्वराट्॥३०॥ नारायणः स्थितो व्यवस्थितश्चत्वारिं च॥

॥ आदित्यमण्डले परब्रह्मोपासनम्॥

आदित्यो वा एष एतन्मण्डलं तपंति तत्र ता ऋचस्तद्रचा मण्डलु स ऋचां लोकोऽथ य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिदीप्यते तानि सामानि स साम्नां मण्डलु स साम्नां लोकोऽथ य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिषि पुरुषस्तानि यजूर्षेषि स यजुंषा मण्डल्र स यजुंषां लोकः सैषा त्र्ययेवं विद्या तंपित् य एषों उन्तरांदित्ये हिंर्ण्मयः पुरुषः॥३१॥

-[88]

॥ आदित्यपुरुषस्य सर्वात्मकत्वप्रदर्शनम्॥

आदित्यो वै तेज ओजो बलं यश्श्वक्षुः श्रोत्रंमात्मा मनों मन्युर्मनुंमृत्युः सत्यो मित्रो वायुरांकाशः प्राणो लोंकपालः कः किं कं तथ्सत्यमन्नंममृतों जीवो विश्वः कत्मः स्वंयम्भु ब्रह्मैतदमृत एष पुरुष एष भूतानामधिपतिर्ब्रह्मणः सायुंज्य सलोकतांमाप्रोत्येतासांमेव देवतांना सायुंज्य समानलोकतांमाप्रोति य एवं वेदैंत्युपनिषत्॥ ३२॥

-[१५]

॥ शिवोपासनमन्त्राः॥

निधंनपतये नमः। निधंनपतान्तिकाय नमः। ऊर्ध्वाय् नमः। ऊर्ध्वालङ्गाय् नमः। हिरण्यात् नमः। हिरण्यातिङ्गाय् नमः। हिरण्यातिङ्गाय् नमः। दिव्याय् नमः। दिव्याय् नमः। दिव्यातिङ्गाय् नमः। भवाय् नमः। भविलङ्गाय् नमः। शर्वातिङ्गाय् नमः। शर्वातिङ्गाय् नमः। शर्वातिङ्गाय् नमः। शर्वातिङ्गाय् नमः। शर्वातिङ्गाय् नमः। उवलाय् नमः। उवलिङ्गाय् नमः। आत्माय् नमः। आत्मालङ्गाय् नमः। परमाय् नमः। परमलङ्गाय् नमः। एतथ्सोमस्यं सूर्यस्य सर्वलिङ्गः स्थाप्यति पाणिमन्नं पवित्रम्॥३३॥

[१६]

॥ पश्चिमवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

स्द्योजातं प्रंपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नर्मः। भवे भंवे नार्ति भवे भवस्व माम्। भवोद्भवाय नर्मः॥३४॥ —————[१७]

॥ उत्तरवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

वामदेवाय नमों ज्येष्ठाय नमें श्रेष्ठाय नमों रुद्राय नमः कालाय नमः कलंविकरणाय नमो बलंविकरणाय नमो बलाय नमो बलंप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः॥३५॥
[१८]

॥ दक्षिणवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

अघोरैभ्योऽथ घोरैभ्यो घोरघोरंतरेभ्यः। सर्वैभ्यः सर्वशर्वैभ्यो नर्मस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥३६॥ ————[१९]

॥ प्राग्वऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

तत्पुरुषाय विदाहें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयात्॥३७॥

॥ ऊर्ध्ववऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणो-ऽधिपतिर्ब्रह्मां शिवो में अस्तु सदाशिवोम्॥३८॥

.[૨૧]

.[૨૦]

॥ नमस्कारमन्त्राः॥

| नमो हिरण्यबाहवे हिरण्यवर्णाय हिरण्यरूप हिरण्यपतयेऽम्बिकापतय उमापतये पशुपतये न नमः॥३९॥ | मो |
|--|----------------------|
| ———[२ ऋतः सत्यं पेरं ब्रह्म पुरुषं कृष्णपिङ्गलम्। ऊर्ध्व विरूपाक्षुं विश्वरूपाय वै नमो नमः॥४०॥ | रेतं |
| ———————————————————[२ सर्वो वै रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु। पुरुषो वै रु सन्महो नमो नमेः। विश्वं भूतं भुवंनं चित्रं बंहुधा ज जायंमानं च यत्। सर्वो ह्यंष रुद्रस्तस्मै रुद्राय न अस्तु॥४१॥ ————[२ | हुड़: गुतं गमो |
| ————। २ कद्रुद्राय प्रचेतसे मी॒ढुष्टंमाय तव्यंसे। वो चेम् शन्तंम् हृदे। सर्वो ह्येष रुद्रस्तस्मैं रुद्राय नमों अस्तु॥४२॥ ————[२ | म |
| । अग्निहोत्रहवण्याः उपयुक्तस्य वृक्षविशेषस्याभिधानम् | |
| यस्य वैकंङ्कत्यग्निहोत्रहवंणी भवति प्रत्येवास्याऽऽहुंत स्तिष्ठन्त्यथो प्रतिष्ठित्यै॥४३॥ ——————————————————————————————————— | ाय- (६] |
| कृणुष्व पाज् इति पश्चं॥४४॥ —————————————————————————————————— | |

॥ भूदेवताकमन्त्रः ॥

अदितिर्देवा गंन्ध्वां मंनुष्याः पितरोऽसुंरास्तेषाः सर्वभूतानां माता मेदिनीं मह्ता मही सांवित्री गांयत्री जगंत्युवीं पृथ्वी बंहुला विश्वां भूता कंत्मा का या सा सत्येत्यमृतेतिं वसिष्ठः॥४५॥

-[२८]

॥ सर्वदेवता आपः॥

आपो वा इद सर्वं विश्वां भूतान्यापः प्राणा वा आपः प्रशव आपोऽन्नमापोऽमृतमापः सम्राडापो विराडापः स्वराडाप्रछन्दा इस्यापो ज्योती इष्यापो यजू इष्यापः सत्यमापः सर्वा देवता आपो भूर्भवः स्वराप् ओम्॥४६॥————[२९]

॥सन्ध्यावन्दनमन्त्राः॥

आपंः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम्। पुनन्तु ब्रह्मण्स्पति ब्रह्मपूता पुनातु माम्। यदुच्छिष्ट्रमभौज्यं यद्वी दुश्चितं ममं। सर्वं पुनन्तु मामापोऽस्तां चे प्रतिग्रह्ड् स्वाहां॥४७॥

-[३०

अग्निश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षन्ताम्। यदह्रा पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्मामुदरेण शि्षञा। अह्स्तदेवलुम्पत्। यत्किं चं दुरि्तं मिये। इदमहं माममृतयोनौ। सत्ये ज्योतिषि जुहोंमि स्वाहा॥४८॥

.[३१]

सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षन्ताम्। यद्रात्रिया पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्धामुदरंण शि्ष्ञा। रात्रिस्तदंवलुम्पतु। यत्किं चं दुरितं मियं। इदमहं माममृतयोनौ। सूर्ये ज्योतिषि जुहोंमि स्वाहा॥४९॥

[३२]

॥प्रणवस्य ऋष्यादिविवरणम्॥

ओमित्येकाक्षेरं ब्रह्म। अग्निर्देवता ब्रह्मं इत्यार्षम्। गायत्रं छन्दं परमात्मं सरूपम्। सायुज्यं विनियोगम्॥५०॥
———[३३]

॥गायत्र्यावाहनमन्त्राः॥

आयांतु वरंदा देवी अक्षरं ब्रह्मसम्मितम्। गायत्रीं छन्दंसां मातेदं ब्रह्म जुषस्वं मे। यदह्रांत्कुरुते पापं तदह्रांत्प्रतिमुच्यंते। यद्रात्रियांत्कुरुते पापं तद्रात्रियांत्प्रतिमुच्यंते। सर्वं वर्णे महादेवि सन्ध्याविद्ये स्रस्वंति॥५१॥

-[३४]

ओजोंऽसि सहोंऽसि बलंमसि भ्राजोंऽसि देवानां धाम नामांसि विश्वंमसि विश्वायुः सर्वंमसि सर्वायुरभिभूरों गायत्रीमावांहयामि सावित्रीमावांहयामि सरस्वतीमावांह- यामि छन्दऋषीनावंहियामि श्रियमावंहियामि गायत्रिया गायत्रीच्छन्दो विश्वामित्र ऋषिः सविता देवताऽग्निर्मुखं ब्रह्मा शिरो विष्णुर्हृदयः रुद्रः शिखा पृथिवी योनिः प्राणापानव्यानोदानसमाना सप्राणा श्वेतवर्णा साङ्क्यायनसगोत्रा गायत्री चतुर्विःशत्यक्षरा त्रिपदां षद्भुक्षिः पश्चशीर्षोपनयने विनियोग् ओं भूः। ओं भुवः। ओः सुवः। ओः महः। ओं जनः। ओं तपः। ओः सृत्यम्। ओं तथ्मंवितुर्वरेणयं भर्गां देवस्यं धीमहि। धियो यो नंः प्रचोदयात्। ओमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम्॥५२॥

[34]

॥ गायत्री उपस्थानमन्त्राः॥

उत्तमें शिखंरे जाते भूम्यां पंवतमूर्धनि। ब्राह्मणैभ्योऽभ्यंनु-ज्ञाता गुच्छ देवि यथासुंखम्। स्तुतो मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्ती पवने द्विजाता। आयुः पृथिव्यां द्रविणं ब्रह्मवर्चसं मह्यं दत्त्वा प्रजातुं ब्रह्मलोकम्॥५३॥

[3६]

॥ आदित्यदेवतामन्त्रः॥

घृणिः सूर्यं आदित्यो न प्रभां वात्यक्षंरम्। मधुं क्षरिन्ति तद्रंसम्। सत्यं वै तद्रसमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम्॥५४॥

.[३७]

॥ त्रिसुपर्णमन्त्राः ॥

ब्रह्मंमेतु माम्। मधुंमेतु माम्। ब्रह्मंमेव मधुंमेतु माम्। यास्ते सोम प्रजावृथ्सोभि सो अहम्। दुःस्वंप्रहन्दुंरुष्यह। यास्ते सोम प्राणाः स्तां जुंहोमि। त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। ब्रह्महृत्यां वा पृते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठन्ति। ते सोमं प्राप्नुवन्ति। आसहस्रात्पङ्किं पुनंन्ति। ओम्॥५५॥

ब्रह्मं मेधयाँ। मधुं मेधयाँ। ब्रह्मंमेव मधुं मेधयाँ। अद्या नों देव सिवतः प्रजावंथ्सावीः सौभंगम्। परां दुःष्वप्रियः सुव। विश्वांनि देव सिवतर्दुरितानि परां सुव। यद्भद्रं तन्म आ सुंव। मधु वातां ऋतायते मधुं क्षरन्ति सिन्धंवः। माध्वींर्नः सन्त्वोषंधीः। मधु नक्तंमुतोषिस मधुंमत्पार्थिवः रजः। मधु द्यौरंस्तु नः पिता। मधुंमान्नो वनस्पित्मधुंमाः अस्तु सूर्यः। मध्वीर्गावो भवन्तु नः। य इमं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। भ्रूणहृत्यां वा एते प्रंनित। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठन्ति। ते सोमं प्राप्नुवन्ति। आस्तुस्त्रात्पङ्कः पुनन्ति। ओम्॥५६॥

ब्रह्मं मेधवाँ। मधुं मेधवाँ। ब्रह्मंमेव मधुं मेधवाँ। ब्रह्मा देवानां पद्वीः कंवीनामृषिर्विप्रांणां मिह्षो मृगाणांम्। श्येनो गृध्रांणा हु स्विधितिर्वनांना स् सोमंः पवित्रमत्येति रेभन्। हुस्सः शुंचिषद्वस्रं रन्तिरक्षसद्धोतां वेदिषदितिथिर्दरोणसत्।

नृषद्वं रसदंत्सद्योम्सद्जा गोजा ऋत्जा अंद्रिजा ऋतं बृहत्। ऋचे त्वां रुचे त्वा सिमथ्स्रंविन्त स्रितो न धेनाः। अन्तर्हृदा मनंसा पूयमानाः। घृतस्य धारां अभिचांकशीमि। हिर्ण्ययो वेत्सो मध्यं आसाम्। तिस्मन्ध्सपूर्णो मंधुकृत्कुंलायी भजंन्नास्ते मधुंदेवतांभ्यः। तस्यां ऽऽसते हर्रयः सप्ततीरे स्वधां दहांना अमृतंस्य धारांम्। य इदं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। वीर्हत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठंन्ति। ते सोमं प्राप्नंविन्तः। आसहस्रात्पङ्किः पुनन्ति। ओम्॥५७॥

[80]

॥ मेधासूक्तम्॥

मेधा देवी जुषमांणा न आगाँ द्विश्वाची भूद्रा सुमन्स्यमाना। त्वया जुष्टां जुषमांणा दुरुक्तांन्बृहद्वंदेम विदथें सुवीराः॥ त्वया जुष्टं ऋषिभंवति देवि त्वया ब्रह्मां ऽऽगृतश्रींरुत त्वयां। त्वया जुष्टंश्चित्रं विन्दते वसु सा नों जुषस्व द्रविंणो न मेधे॥५८॥

[88]

मेधां म् इन्द्रों ददातु मेधां देवी सरंस्वती। मेधां में अश्विनांवुभावार्धत्तां पुष्कंरस्रजा। अपस्रासुं च या मेधा गंन्ध्वेषुं च यन्मनः। देवीं मेधा सरंस्वती सा मां मेधा सुरभिर्जुषता इ स्वाहां॥५९॥

[४२]

आ माँ मेधा सुरभिर्विश्वरूपा हिरंण्यवर्णा जगंती जगम्या। ऊर्जस्वती पर्यसा पिन्वंमाना सा माँ मेधा सुप्रतीका जुषन्ताम्॥६०॥

-[४३]

मियं मेथां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेधां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेधां मियं प्रजां मियं सूर्यो भ्राजों दधातु॥६१॥

[88]-

॥ मृत्युनिवारणमन्त्राः॥

अपैतु मृत्युर्मृतं न् आगंन्वैवस्वतो नो अभंयं कृणोतु। पूर्णं वनस्पतेरिवाभिनः शीयता र्योः स च तान्नः शचीपतिः॥६२॥

–[૪५]

परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नः प्रजार रीरिषो मोत वीरान्॥६३॥

-[४६]

वार्तं प्राणं मनंसाऽन्वा रंभामहे प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नों मृत्योस्नायतां पात्वश्हंसो ज्योग्जीवा जरामंशीमहि॥६४॥

[とる]

अमुत्र भूयादध यद्यमस्य बृहंस्पते अभिशंस्तेरम्ंश्रः।

| प्रत्यौंहतामृश्विनां मृत्युमंस्माद्देवानांमग्ने भिषजा शचींभिः॥६५॥ |
|---|
| हिर्दे हर्गन्तमनुयन्ति देवा विश्वस्येशानं वृष्मं मेतीनाम्। ब्रह्म सरूपमनुमेदमागादयनं मा विविधीर्विक्रमस्व॥६६॥ —————[४९] |
| शल्कैर्ग्निमिन्धान उभौ लोकौ संनेम्हम्। उभयौर्लोकयोर्- ऋध्वाऽति मृत्युं तराम्यहम्॥६७॥ ——————————————————————————————————— |
| मा छिंदो मृत्यो मा वंधीमां मे बलं विवृंहो मा प्रमोषीः। प्रजां मा में रीरिष आयुंरुग्र नृचक्षंसं त्वा ह्विषां विधेम॥६८॥ |
| मा नों महान्तंमुत मा नों अर्भुकं मा न उक्षंन्तमुत मा ने उक्षितम्। मा नोंऽवधीः पितरं मोत मातरं प्रिया मा नंस्तुनवों रुद्र रीरिषः॥६९॥ |
| मा नंस्तोके तनंये मा न आयंषि मा नो गोषु मा नो अश्वंष रीरिषः। वीरान्मा नो रुद्र भामितोऽवंधीर्ह्विष्मंन्तो नर्मसा विधेम ते॥७०॥ [५३] |

॥ प्रजापतिप्रार्थनामन्त्रः॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वां जातानि परिता बंभूव। यत्कांमास्ते जुहुमस्तन्नों अस्तु वयः स्याम् पत्यो

रयीुणाम्॥७१॥

[५૪]

-[५५]

॥ इन्द्रप्रार्थनामन्त्रः॥

स्वस्तिदा विशस्पतिंवृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अंभयङ्करः॥७२॥

॥ मृत्युञ्जयमन्त्राः ॥

त्र्यंम्बकं यजामहे सुगृन्धिं पृष्टिवर्धनम्। उर्वारुकिमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतांत्॥७३॥

ये ते सहस्रम्युतं पाशा मृत्यो मर्त्याय हन्तंवे। तान् यज्ञस्यं मायया सर्वानवं यजामहे॥७४॥

मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहां॥७५॥

-[५८]

-[५७]

॥ पापनिवारक-मन्त्राः॥

देवकृतस्यैनंसोऽवयजंनमसि स्वाहाँ। मृनुष्यंकृतस्यैनंसो-ऽवयजंनमसि स्वाहाँ। पितृकृतस्यैनंसोऽवयजंन-मसि स्वाहाँ। आत्मकृतस्यैनंसोऽवयजंनमसि स्वाहाँ। अन्यकृतस्यैनंसोऽवयजंनमसि स्वाहाँ। अस्मत्कृतस्यैनंसो-ऽवयजंनमसि स्वाहाँ। यद्दिवा च नक्तं चैनंश्चकृम तस्यांवयजंनमसि स्वाहाँ। यथ्स्वपन्तंश्च जाग्रंतश्चैनंश्चकृम तस्यांवयजंनमस् स्वाहाँ। यथ्सुषुप्तश्च जाग्रंतश्चेनंश्चकृम तस्यांवयजंनमस् स्वाहाँ। यद्विद्वा १ सश्चाविद्वा १ सश्चेनंश्चकृम तस्यांवयजंनमस् स्वाहाँ। एनस एनसोऽवयजनमंसि स्वाहा॥ ७६॥

[५९]

॥ वसुप्रार्थनामन्त्रः॥

यद्वो देवाश्चकृम जिह्नयां गुरुमनंसो वा प्रयंती देव हेर्डनम्। अरांवा यो नो अभि दंच्छुनायते तस्मिन्तदेनो वसवो निधेतन् स्वाहाँ॥७७॥

[६०]

॥ कामोऽकार्षीत्-मन्युरकार्षीत् मन्त्रः॥

कामोऽकार्षींत्रमो नमः। कामोऽकार्षीत्कामः करोति नाहं करोमि कामः कर्ता नाहं कर्ता कामः कार्यिता नाहं कार्यिता एष ते काम कामांय स्वाहा॥७८॥

[६१]

मन्युरकार्षीन्नमो नमः। मन्युरकार्षीन्मन्युः करोति नाहं करोमि मन्युः कर्ता नाहं कर्ता मन्युः कार्यिता नाहं कार्यिता एष ते मन्यो मन्यंवे स्वाहा॥७९॥

-[६२]

॥ विराजहोममन्त्राः॥

तिलाञ्जहोमि सरसा सिपष्टान् गन्धार मम चित्ते रमन्तु स्वाहा। गावो हिरण्यं धनमन्नपान सर्वेषा श्रिये स्वाहा। श्रियं च लक्ष्मीं च पुष्टिं च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रजाः सन्ददांतु स्वाहा॥८०॥ ————[६३]

तिलाः कृष्णास्तिलाः श्वेतास्तिलाः सौम्या वंशानुगाः। तिलाः पुनन्तुं मे पापं यत्किश्चिद्द्रितं मीय स्वाहा। चोर्स्यान्नं नेवश्राद्धं ब्रह्महा गुरुत्त्पगः। गोस्तेय स्पुरापानं भ्रूणहत्या तिला शान्ति शमयन्तु स्वाहा। श्रीश्च लक्ष्मीश्च पृष्टीश्च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रज्ञा तु जातवेदः सन्दर्दातु स्वाहा॥८१॥

[ξδ].

प्राणापानव्यानोदानसमाना में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। वाङ्गनश्चक्षःश्रोत्रजिह्वाघ्राणरेतो- बुद्धाकूतिःसङ्कल्पा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। त्वक्रममा स्मरुधिरमेदोमञ्जास्रायवो- उस्थीनि में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। शिरःपाणिपादपार्श्वपृष्ठोरूदरजङ्घशिश्ञोपस्थपायवो में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। उत्तिष्ठ पुरुष हरित पिङ्गल लोहिताक्षि देहि देहि ददापयिता में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। भूयास् स्वाहाँ॥८२॥

-[६५]

पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशा में शुद्ध्यन्तां ज्योतिंरहं

विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहां। शब्दस्पर्शरूपरसगन्धा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयास इस्वाहाँ। मनोवाक्कायकर्माणि में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरज्जां विपाप्ना भूयासः स्वाहां। अव्यक्तभावैरहङ्कारैज्यीतिरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ। आत्मा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयास् इ स्वाहां। अन्तरात्मा में श्खान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ। परमात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास स्वाहाँ। क्षुधे स्वाहाँ। क्षुत्पिपासाय स्वाहाँ। विविद्यै स्वाहाँ। ऋग्विधानाय स्वाहाँ। कर्षांत्काय स्वाहाँ। क्षुत्पिपासामेलं ज्येष्ठामलक्ष्मीर्नाशयाम्यहम्। अभूतिमसंमृद्धिं च सर्वान्निर्णुद मे पाप्मान् स्वाहा। अन्नमय-प्राणमय-मनोमय-विज्ञानमय-मानन्दमय-मात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ॥८३॥

[६६]

॥ वैश्वदेवमन्त्राः॥

अग्नये स्वाहाँ। विश्वेंभ्यो देवेभ्यः स्वाहाँ। ध्रुवायं भूमाय स्वाहाँ। ध्रुवक्षितंये स्वाहाँ। अच्युतक्षितंये स्वाहाँ। अग्नयें स्विष्टकृते स्वाहाँ॥ धर्माय स्वाहाँ। अधर्माय स्वाहाँ। अन्न्यः स्वाहाँ। ओषधिवनस्पतिभ्यः स्वाहाँ॥८४॥

रुक्षोदेवजनेभ्यः स्वाहाँ। गृह्याँभ्यः स्वाहाँ। अवसानेँभ्यः

स्वाहाँ। अवसानंपतिभ्यः स्वाहाँ। सूर्वभूतेभ्यः स्वाहाँ। कामाय स्वाहाँ। अन्तरिक्षाय स्वाहाँ। यदेजति जगति यच् चेष्टति नाम्नो भागोऽयं नाम्ने स्वाहाँ। पृथिव्ये स्वाहाँ। अन्तरिक्षाय स्वाहाँ॥८५॥

दिवे स्वाहाँ। सूर्याय स्वाहाँ। चन्द्रमंसे स्वाहाँ। नक्षंत्रेभ्यः स्वाहाँ। इन्द्रांय स्वाहाँ। बृह्स्पतंये स्वाहाँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। ब्रह्मणे स्वाहाँ। स्वधा पितृभ्यः स्वाहाँ। नमो रुद्रायं पशुपतंये स्वाहाँ॥८६॥

देवेभ्यः स्वाहाँ। पितृभ्यः स्वधाऽस्तुं। भूतेभ्यो नर्मः।
मनुष्यँभ्यो हन्ताँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। प्रमेष्ठिने स्वाहाँ। यथा
कूपः शतधारः सहस्रंधारो अक्षितः। एवा में अस्तु धान्यः
सहस्रंधारमिक्षितम्। धनंधान्ये स्वाहाँ। ये भूताः प्रचरन्ति
दिवानक्तं बिलिमिच्छन्तों वितुदंस्य प्रेष्याः। तेभ्यो बिले
पृष्टिकामो हरामि मिय पृष्टिं पृष्टिंपतिर्दधातु स्वाहाँ॥८७॥
————[६७]

ओं तद्घ्रह्म। ओं तद्घ्रायुः। ओं तद्गत्मा। ओं तथ्सत्यम्। ओं तथ्सर्वम्। ओं तत्पुरोर्नमः॥ अन्तश्चरति भूतेषु गुहायां विश्वमूर्तिष्। त्वं यज्ञस्त्वं वषद्कारस्त्वमिन्द्रस्त्वः रुद्रस्त्वं विष्णुस्त्वं ब्रह्म त्वं प्रजापितः। त्वं तंदाप् आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवस्सुवरोम्॥८८॥

.[६८]

॥ प्राणाहुतिमन्त्राः ॥

श्रद्धायां प्राणे निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायांमपाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। श्रद्धायां व्याने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धार्यामुदाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धार्यार् समाने निविंष्टोऽमृतंं जुहोमि। ब्रह्मणि म आत्माऽमृंतत्वायं॥ अमृतोपस्तरंणमसि॥ श्रद्धायां प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। प्राणाय स्वाहां॥ श्रद्धायां-मपाने निविष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। अपानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायाँ व्याने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। व्यानाय स्वाहाँ॥ श्रृद्धायां-मुदाने निविष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। उदानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धाया ५ समाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। समानाय स्वाहाँ॥ ब्रह्मणि म आत्माऽमृतत्वायं। अमृतापिधानमंसि॥८९॥

-[६९]

॥ भुक्तान्नाभिमन्त्रणमन्त्राः॥

श्रृद्धायां प्राणे निविषयामृत हुतम्। प्राणमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायां मपाने निविषयामृत हुतम्। अपानमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायां व्याने निविषयामृत हुतम्। व्यानमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायां मुदाने निविषयामृत हुतम। उदानमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धायार् समाने निर्विषयामृतर् हुतम्। समानमन्नेनाप्या-यस्व॥९०॥

[*・*の].

॥भोजनान्ते आत्मानुसन्धानमन्त्राः॥

अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषोऽङ्गुष्ठं चं समाश्रितः। ईशः सर्वस्य जगतः प्रभुः प्रीणातिं विश्वभुक्॥॥९१॥

.[७१]

॥ अवयवस्वस्थता-प्रार्थनामन्त्रः॥

वाङ्कं आसन्। नृसोः प्राणः। अक्ष्योश्वर्क्षुः। कर्णयोः श्रोत्रम्। बाहुवोर्बलम्। ऊरुवोरोजः। अरिष्टा विश्वान्यङ्गानि तृनूः। तृन्वां मे सह नर्मस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः॥९२॥
[७२]

॥ इन्द्रसप्तर्षि-संवादमन्त्रः॥

॥ हृदयालम्भनमन्त्रः॥

प्राणानां ग्रन्थिरसि रुद्रो मां विशान्तकः। तेनान्नेनांप्या-यस्व॥९३॥

[り8]

॥ देवताप्राणनिरूपणमन्त्रः॥

नमो रुद्राय विष्णवे मृत्युंर्मे पाहि॥९४॥

[७ ५]

॥ अग्निस्तुतिमन्त्रः॥

त्वमंग्रे द्यभिस्त्वमांशुशुक्षणिस्त्वमुद्धस्त्वमश्मंनस्परि। त्वं वनेभ्यस्त्वमोषंधीभ्यस्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिः॥९५॥ —————[७६]

॥ अभीष्टयाचनामन्त्राः॥

शिवेनं में सन्तिष्ठस्व स्योनेनं में सन्तिष्ठस्व सुभूतेनं में सन्तिष्ठस्व ब्रह्मवर्चसेनं में सन्तिष्ठस्व यज्ञस्यर्धिमनु सन्तिष्ठस्वोपं ते यज्ञ नम् उपं ते नम् उपं ते नमः॥९६॥ ————[७७]

॥ परतत्त्व-निरूपणम्॥

सृत्यं परं परं सृत्यः सृत्येन न सृवगिक्षोकाच्यंवन्ते कृदाचन सृताः हि सृत्यं तस्मां थ्यत्ये रंमन्ते । तप् इति तपो नानश्नात्परं यिद्धे परं तप्स्तद्दर्धर्षं तद्दरांधर्षं तस्मात्तपंसि रमन्ते । दम् इति नियंतं ब्रह्मचारिणस्तस्माद्दमें रमन्ते । शम् इत्यरंण्ये मुनयस्तस्माच्छमें रमन्ते । दानिमिति सर्वाणि भूतानि प्रशः सन्ति दानान्नाति दुष्करं तस्माद्दाने रंमन्ते । धर्म इति धर्मेण सर्वमिदं परिगृहीतं धर्मान्नाति दुष्करं तस्माद्द्ययेष्ठाः प्रजायन्ते तस्माद्द्यिष्ठाः प्रजायन्ते तस्माद्द्यिष्ठाः प्रजायन्ते तस्माद्द्यिष्ठाः प्रजानने रमन्तेऽग्रय । इत्याह तस्माद्रग्रय आधातव्या अग्निहोत्रमित्याह तस्मादिग्नहोत्रे रंमन्ते । यज्ञ इति यज्ञो हि देवास्तस्माद्व्जे रंमन्ते ।

मान्समितिं विद्वाश्सस्तस्मांद्विद्वाश्सं एव मान्से रंमन्ते व्यास इति ब्रह्मा ब्रह्मा हि परः परो हि ब्रह्मा तानि वा एतान्यवंराणि पराश्सि न्यास एवात्यरेचयुद्य एवं वेदेंत्युपनिषत्॥९७॥

-[りc]

॥ ज्ञानसाधन-निरूपणम्॥

प्राजापत्यो हारुंणिः सुपर्णेयः प्रजापंतिं पितरमुपंससार किं भंगवन्तः परमं वंदन्तीति तस्मै प्रोवाच ॰ सत्येन वायुरावांति सत्येनांऽऽदित्यो रोचते दिवि सत्यं वाचः प्रतिष्ठा सत्ये सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माध्सत्यं परमं वदन्ति । तपसा देवा देवतामग्रं आयन्तपसर्षयः सुवरन्वंविन्दन् तपंसा सपतान् प्रणुदामारातीस्तपंसि सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मात्तपंः परमं वदंन्ति 。 दमेन दान्ताः किल्बिषंमवधून्वन्ति दमेन ब्रह्मचारिणः सुवेरगच्छन्दमो भूतानाँ दुराधर्षं दमें सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माद्दमेः परमं वदंन्ति ॰ शमेन शान्ताः शिवमाचरंन्ति शमेन नाकं मुनयोऽन्वविन्दञ्छमो भूतानां दुराधर्षञ्छमे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माच्छमेः पर्मं वदन्ति ॰ दानं यज्ञानां वरूथं दक्षिणा लोके दातार ई सर्वभूतान्युंपजीवन्तिं दानेनारांतीरपांनुदन्त दानेनं द्विषन्तो मित्रा भेवन्ति दाने सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्दानं पेरमं वदंन्ति ॰ धर्मो विश्वंस्य जगंतः प्रतिष्ठा लोके धर्मिष्ठं प्रजा उपसपेन्ति धर्मेणं पापमंपनुदंति धर्मे सर्वं प्रतिष्ठितं

तस्मौद्धर्मं पेरमं वदेन्ति 🌣 प्रजनेनं वै प्रतिष्ठा लोके साधु प्रजायाँस्तुन्तुं तन्वानः पितृणामनृणो भवंति तदेव तस्यानृणं तस्मौत् प्रजनेनं परमं वदेन्त्यग्नयो वै त्रयी विद्या देवयानः पन्थां गार्हपत्य ऋक्पृंथिवी रथन्तरमन्वाहार्यपर्चनं यजुरन्तरिक्षं वामदेव्यमाहवनीयः सामं सुवर्गो लोको बृहत्तरमाद्ग्रीन्पर्मं वदन्त्यग्निहोत्र सायं प्रातर्गृहाणां निष्कृतिः स्विष्टः सुहुतं यज्ञकतूनां प्रायणः सुवर्गस्य लोकस्य ज्योतिस्तस्मादिग्निहोत्रं पर्मं वदन्ति । युज्ञ इति यज्ञेन हि देवा दिवंं गता यज्ञेनासुंरानपांनुदन्त यज्ञेनं द्विषन्तो मित्रा भंवन्ति यज्ञे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माँ द्यज्ञं पंरमं वदंन्ति ॰ मानसं वै प्रांजापत्यं पवित्रं मानसेन मनेसा साधु पंश्यति मानसा ऋषेयः प्रजा अंसृजन्ते मानुसे सुर्वं प्रतिष्ठितं तस्मान्मानुसं पर्मं वदन्ति ॰ न्यास इत्याहुंर्मनीषिणौं ब्रह्माणं ब्रह्मा विश्वः कत्मः स्वंयुम्भुः प्रजापंतिः संवथ्सर इति संवथ्सरोऽसावांदित्यो य एष अंदित्ये पुरुषः स पंरमेष्ठी ब्रह्मात्मा । याभिरादित्यस्तपंति रश्मिभिस्ताभिः पर्जन्यो वर्षित पूर्जन्येनौषधिवनस्पृतयः प्रजांयन्त ओषधिवनस्पतिभिरन्नं भवत्यन्नेन प्राणाः प्राणैर्बलं बलेन तपस्तपंसा श्रद्धा श्रद्धयां मेधा मेधयां मनीषा मंनीषया मनो मनंसा शान्तिः शान्त्यां चित्तं चित्तेन स्मृति इ स्मृत्या स्मार् स्मारेण विज्ञानं विज्ञानंनाऽऽत्मानं वेदयति

तस्मादन्नं ददन्थ्सर्वाण्येतानि ददात्यन्नौत् प्राणा भवन्ति ० भूतानां प्राणैर्मनो मनसश्च विज्ञानं विज्ञानांदानन्दो ब्रंह्मयोनिः स वा एष पुरुषः पश्चधा पश्चात्मा येन सर्विमिदं प्रोतं पृथिवी चान्तरिक्षं च द्यौश्च दिशंश्चावान्तरदिशाश्च स वै सर्विमिदं जगथ्स च भूत र स भव्यं जिज्ञासकूप्त ऋतजा रियष्ठा अद्धा सत्यो महंस्वान्तपसो वरिष्ठाद्भात्वा तमेवं मनंसा हुदा च भूयों न मृत्युमुपंयाहि विद्वान्तस्मौन्यासमेषां तपंसामतिरिक्तमाहुंर्वसुरण्वों विभूरंसि प्राणे त्वमसिं सन्धाता 。 ब्रह्मंन् त्वमिसं विश्वधृत्तं जोदास्त्वमंस्यग्निरंसि वर्चोदास्त्वमंसि सूर्यस्य द्युम्नोदास्त्वमंसि चन्द्रमंस उपयामगृहीतोऽसि ब्रह्मणै त्वा ॰ महस् ओमित्यात्मानं यु औतेत हैं महोपनिषदं देवानां गृह्यं य एवं वेद ब्रह्मणों महिमानंमाप्नोति तस्माँद्वह्मणों महिमानंमित्युपनिषत्॥ ९८॥

॥ ज्ञानयज्ञः॥

तस्यैवं विदुषों युज्ञस्याऽऽत्मा यर्जमानः श्रुद्धा पत्नी शरीरमिध्ममुरो वेदिलीमानि बुर्हिर्वेदः शिखा हृदयं यूपः काम आर्ज्यं मृन्युः पृशुस्तपोऽग्निर्दमः शमयिता दक्षिणा वाग्घोतां प्राण उद्गाता चक्षुंरध्वर्युर्मनो ब्रह्मा व्शोत्रमग्नीद्यावद्भियंते सा दीक्षा यदश्वाति तद्धवियित्पर्वति तदंस्य सोमपानं यद्रमंते तदुंप्सदो

यथ्मश्चरंत्युप्विशंत्युत्तिष्ठंते च स प्रवर्गों यन्मुखं तदांहवनीयो या व्याहंतिराहुतिर्यदंस्य विज्ञानं तज्जुहोति यथ्सायं प्रातरंत्ति तथ्समिधं यत्प्रातर्मध्यं दिन सायं च तानि सर्वनानि ये अहोरात्रे ते दंर्शपूर्णमासौ यें ऽर्धमासाश्च मासाँश्च ते चांतुर्मास्यानि य ऋतवस्ते पंशुबन्धा ये संवथ्सराश्चं परिवथ्सराश्च तेऽहंर्गणाः संववेद्सं वा 。 एतथ्सत्रं यन्मरंणं तदंवभृथं एतद्वै जंरामर्यमग्निहोत्र । सत्रं य एवं विद्वानुंदगयंने प्रमीयंते देवानांमेव मंहिमानं गत्वाऽऽदित्यस्य सायुंज्यं गच्छत्यथ ॰ यो दंक्षिणे प्रमीयंते पितृणामेव मंहिमानं गुत्वा चन्द्रमंसः सायुंज्य १ सलोकतामाप्रोत्येतौ वै सूर्याचन्द्रमसौमिहिमानौ ब्राह्मणो विद्वानभिजंयति तस्माँद्वह्मणों महिमानंमाप्नोति तस्माँद्वह्मणों महिमानंमित्युपनिषत्॥९९॥

[٥٥]

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥ कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

स्ंज्ञानं विज्ञानं प्रज्ञानं जानदंभिजानत्। सङ्कल्पंमानं प्रकल्पंमानमुपंकल्पंमानमुपंक्कृतं क्रुप्तम्। श्रेयो वसीय आयथसम्भूतं भूतम्। चित्रः केतुः प्रभानाभान्थसम्भान्। ज्योतिष्मा इस्तेजस्वानातप इस्तपंत्रभितपन्। रोचनो रोचमानः शोभनः शोभमानः कल्याणः। दर्शां दृष्टा दर्शता विश्वरूपा सुदर्शना। आप्यायंमाना प्यायंमाना प्यायं सूनृतेरां। आपूर्यमाणा पूर्यमाणा पूर्यन्ती पूर्णा पौर्णमासी। दाता प्रदाताऽऽनन्दो मोदः प्रमोदः॥१॥

आवेशयंत्रिवेशयंन्थ्संवेशंनः स॰शांन्तः शान्तः। आभवेन्प्रभवंन्थ्सम्भवन्थ्सम्भूतो भूतः। प्रस्तुंतं विष्टुंत्॰ सङ्स्तुंतं कृत्याणं विश्वरूपम्। शुक्रम्मृतं तेज्ञस्वि तेजः समिद्धम्। अरुणं भानुमन्मरीचिमदभितपृत्तपंस्वत्। स्विता प्रंसविता दीप्तो दीपयन्दीप्यंमानः। ज्वलंञ्चलिता तपंन्वितपंन्थ्सन्तपन्। रोचनो रोचंमानः शुम्भूः शुम्भंमानो वामः। सुता सुन्वती प्रसुंता सूयमानाऽभिषूयमाणा। पीतीं प्रपा सम्पा तृप्तिंस्तुप्यंन्ती॥२॥

कान्ता काम्या कामजाताऽऽयुष्मती कामृदुघाँ। अभिशास्ताऽनुंमन्ताऽऽनन्दो मोदः प्रमोदः। आसादयन्निषा-दयंन्थ्सु सादंनः स॰संन्नः सन्नः। आभूर्विभूः प्रभूः शम्भूर्भुवंः। प्वित्रं पवियुष्यन्पूतो मेध्यंः। यशो यशंस्वानायुर्मृतंः। जीवो जीविष्यन्थस्वर्गो लोकः। सहंस्वान्थ्सहीयानोजंस्वान्थ्सहंमानः। जयेन्नभिजयंन्थ्सु-द्रविणो द्रविणोदाः। आर्द्रपंवित्रो हरिकेशो मोर्दः प्रमोदः॥३॥ अरुणों ऽरुणरंजाः पुण्डरीको विश्वजिदंभिजित्। आर्द्रः पिन्वमानोऽन्नवात्रसंवानिरावान्। सर्वौष्धः संम्भुरो महंस्वान्। पुजत्का जोवत्काः। क्षुष्ठकाः शिपिविष्टकाः। सरिस्रराः सुशेरंवः। अजिरासों गमिष्णवंः। इदानीं तदानींमेतर्हिं क्षिप्रमंजिरम्। आशुर्निंमेषः फणो द्रवंत्रतिद्रवन्। त्वर्ङ्स्त्वरमाण आशुराशीयाञ्जवः। अग्निष्टोम उक्थ्योऽतिरात्रो द्विरात्रस्त्रिरात्रश्चेतूरात्रः। अग्निर्ऋतुः सूर्य ऋतुश्चन्द्रमां ऋतुः। प्रजापंतिः संवथ्सरो महान्कः॥४॥

भूरिम्नं चं पृथिवीं च मां चं। त्री इश्चं लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। भवों वायुं चान्तिरक्षं च मां चं। त्री इश्चं लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। स्वंरादित्यं च दिवं च मां चं। त्री इश्चं लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। भूर्भवः स्वंश्चन्द्रमंसं च दिशंश्च मां चं। त्री इश्चं लोकान्थ्संवथ्सरं लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। भूर्भवः स्वंश्चन्द्रमंसं च दिशंश्च मां चं। त्री इश्चं लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां

देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥५॥

.[૨]

त्वमेव त्वां वैत्थ योऽसि सोऽसिं। त्वमेव त्वामेचैषीः। चितश्चासि सिश्चेतश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। यते अग्ने न्यूनं यद् तेऽतिरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गिरस-श्चिन्वन्तु। विश्वे ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चेतश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। मा ते अग्ने च येन माऽति च येनाऽऽयुरावृक्षि। सर्वेषां ज्योतिषां ज्योतिर्यद्वावुदेति। तपंसो जातमिनभृष्टमोर्जः। तत्ते ज्योतिरिष्टके। तेनं मे तप। तेनं मे ज्वल। तेनं मे दीदिहि। यावंद्वाः। यावदसांति सूर्यः। यावंदुतापि ब्रह्मं॥६॥

₹]

संवथ्सरोऽसि परिवथ्सरोऽसि। इदाव्थ्सरोऽसीद्वथ्सरो-ऽसि। इद्वथ्सरोऽसि वथ्सरोऽसि। तस्यं ते वस्नतः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पक्षः। वर्षाः पुच्छम्। शरदुत्तंरः पक्षः। हेम्नतो मध्यम्। पूर्वपक्षाश्चितंयः। अपुरपक्षाः पुरीषम्॥७॥

अहोरात्राणीष्टंकाः। ऋषभोऽसि स्वर्गो लोकः। यस्याँ दिशि महीयंसे। ततो नो मह् आवंह। वायुर्भूत्वा सर्वा दिश् आवांहि। सर्वा दिशोऽनुविवांहि। सर्वा दिशोऽनुसंवांहि। चित्त्या चितिमापृंण। अचित्त्या चितिमापृंण। चिदंसि समुद्रयोंनिः॥८॥ इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावाँ। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुर्ण्युः।
महान्थ्स्थस्थै ध्रुव आनिषंत्तः। नमस्ते अस्तु मा मां हि॰सीः।
एति प्रेति वीति समित्युदितिं। दिवं मे यच्छ। अन्तरिक्षं मे
यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। अन्तरिक्षं मे
यच्छ। दिवं मे यच्छ। अह्य प्रसारय। रात्र्या समेच। रात्र्या
प्रसारय। अह्य समेच। काम् प्रसारय। काम् समेच॥९॥

भूर्भृवः स्वंः। ओजो बलम्ं। ब्रह्मं क्ष्र्त्रम्। यशो महत्। सत्यं तपो नामं। रूपमृमृतम्ं। चक्षुः श्रोत्रम्ं। मन् आयुंः। विश्वं यशो मृहः। समं तपो हरो भाः। जातवेदा यदि वा पावकोऽसिं। वैश्वानरो यदि वा वैद्युतोऽसिं। शं प्रजाभ्यो यजमानाय लोकम्। ऊर्जं पृष्टिं ददंद्भ्यावंवृथ्स्व॥१०॥

राज्ञी विराज्ञी। सम्माज्ञी स्वराज्ञी। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निरिन्द्रो बृह्स्पतिः। विश्वे देवा भुवंनस्य गोपाः। ते मा सर्वे यशंसा स॰सृंजन्तु॥११॥

_[६]

असंवे स्वाहा वसंवे स्वाहाँ। विभुंवे स्वाहा विवंस्वते स्वाहाँ। अभिभुवे स्वाहाऽधिपतये स्वाहाँ। दिवां पत्ये स्वाहाऽईहस्पत्याय स्वाहाँ। चाक्षुष्मत्याय स्वाहाँ। ज्योतिष्मत्याय स्वाहाँ। राज्ञे स्वाहां विराज्ञे स्वाहाँ। सम्राज्ञे स्वाहाँ स्वराज्ञे स्वाहाँ। सूर्याय

स्वाहाँ। चन्द्रमंसे स्वाहा ज्योतिषे स्वाहाँ। स्र स्पर्णय स्वाहां कल्याणांय स्वाहाँ। अर्जुनाय स्वाहाँ॥१२॥

विपश्चिते पर्वमानाय गायत। मृही न धाराऽत्यन्धीं अर्षित। अहिंर्ह जीणीमितिंसपिति त्वचमैं। अत्यो न क्रीडंन्नसरृद्धृषा हिरेः। उपयामगृंहीतोऽसि मृत्यवै त्वा जुष्टं गृह्णामि। एष ते योनिंमृत्यवै त्वा। अपमृत्युमपृक्षुधमैं। अपेतः शपथं जिहा अधी नो अग्र आवंह। रायस्पोष सहिम्नणमैं॥१३॥

ये ते सहस्रंम्युतं पाशाः। मृत्यो मर्त्यायं हन्तेवे। तान् यज्ञस्यं माययाः। सर्वानवयजामहे। भृक्षाःऽस्यमृतभृक्षः। तस्यं ते मृत्युपीतस्यामृतंवतः। स्वगाकृतस्य मधुंमतः। उपहूतस्योपहूतो भक्षयामि। मृन्द्राऽभिभूतिः केतुर्यज्ञानां वाक्। असावेहिं॥१४॥

अन्थो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बिधिर आंक्रन्दयितरपान। असावेहिं। अहुस्तोस्त्वा चक्षुः। असावेहिं। अपादाशो मर्नः। असावेहिं। कवे विप्रंचित्ते श्रोत्रं। असावेहिं॥१५॥

सुह्स्तः सुंवासाः। शूषो नामाँस्यमृतो मर्त्येषु। तं त्वाऽहं तथा वेदं। असावेहिं। अग्निर्मे वाचि श्रितः। वाग्धृदंये। हृदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। वायुर्मे प्राणे श्रितः॥१६॥ प्राणो हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। सूर्यो मे चक्षुंषि श्रितः। चक्षुर्हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। चन्द्रमां मे मनसि श्रितः॥१७॥

मनो हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। दिशों मे श्रोत्रें श्रिताः। श्रोत्र हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। आपों मे रेतिस श्रिताः॥१८॥

रेतो हदये। हदयं मिया। अहममृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पृथिवी मे शरीरे श्रिता। शरीर्ट्हदये। हदयं मिया। अहममृतें। अमृतं ब्रह्मणि। ओष्धिवनस्पतयों मे लोमंसु श्रिताः॥१९॥

लोमांनि हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। इन्द्रों मे बलें श्रितः। बल् १ हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पूर्जन्यों मे मूर्प्नि श्रितः॥२०॥

मूर्धा हृदंये। हृदंयं मियं। अहम्मृतंं। अमृतं ब्रह्मंणि। ईशांनो मे मृन्यौ श्रितः। मृन्युर्हृदंये। हृदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मंणि। आत्मा मे आत्मिनं श्रितः॥२१॥

आत्मा हृदंये। हृदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पुनर्म आत्मा पुन्रायुरागौत्। पुनंः प्राणः पुनराकृतमागौत्। वैश्वानरो रिश्मिभवविधानः। अन्तस्तिष्ठत्वमृतंस्य गोपाः॥२२॥

·[乙]

प्रजापंतिर्देवानंसृजत। ते पाप्मना सन्दिता अजायन्त।

तान्व्यंद्यत्। यद्यद्यत्। तस्माँद्विद्युत्। तमंवृश्चत्। यदवृंश्चत्। तस्माद्वृष्टिंः। तस्माद्यत्रैते देवते अभिप्राप्नृंतः। वि चं हैवास्य तत्रं पाप्मानं द्यतः॥२३॥

वृश्चतंश्च। सैषा मीमा स्साऽग्निहोत्र एव संम्पन्ना। अथों आहुः। सर्वेषु यज्ञकृतुष्वितिं। होष्यंत्रप उपंस्पृशेत्। विद्यंदिस् विद्यं मे पाप्मान्मितिं। अथं हुत्वोपंस्पृशेत्। वृष्टिंरिस् वृश्चं मे पाप्मान्मितिं। यक्ष्यमांणो वेष्ट्वा वां। वि चं हैवास्यैते देवतें पाप्मानं द्यतः॥२४॥

वृश्चतंश्च। अत्युर्हो हाऽऽर्रुणः। ब्रह्मचारिणे प्रश्नान्प्रोच्यु प्रजिघाय। परेहि। प्रक्षं दय्याम्पातिं पृच्छ। वेत्थं सावित्रा(३)त्र वेत्था(३) इति। तमागत्यं पप्रच्छ। आचार्यो मा प्राहैषीत्। वेत्थं सावित्रा(३)त्र वेत्था(३) इति। सहोवाच वेदेति॥२५॥

स कस्मिन्प्रतिष्ठित इति। प्रोरंज्सीति। कस्तद्यत्परोरंजा इति। एष वाव स प्रोरंजा इति होवाच। य एष तपित। एषौंऽर्वाग्रंजा इति। स कस्मिन्त्वेष इति। सत्य इति। किं तथ्सत्यमिति। तप इति॥२६॥

कस्मिन्नु तप् इति। बलु इति। किं तद्वल्मिति। प्राण इति। मा स्मे प्राणमितिपृच्छु इति माऽऽचार्यौऽब्रवीदिति होवाच ब्रह्मचारी। स होवाच प्रुक्षो दय्याँम्पातिः। यद्वै ब्रह्मचारिन्प्राणमत्यंप्रक्ष्यः। मूर्धा ते व्यपंतिष्यत्। अहमुंत आचार्याच्छ्रेयाँ-भविष्यामि। यो मां सावित्रे समवांदिष्टेतिं॥२७॥

तस्माँथ्सावित्रे न संवंदेत। स यो हु वै सांवित्रं विदुषां सावित्रे संवदंते। सहाँस्मिञ्छ्यं दधाति। अनुं हु वा अस्मा असौ तपृञ्छियं मन्यते। अन्वंस्मै श्रीस्तपों मन्यते। अन्वंस्मै तपो बलं मन्यते। अन्वंस्मै वलं प्राणं मन्यते। स यदाहं। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेतिं। एष एव तत्॥२८॥

अथ यदाहै। प्रस्तुंतं विष्टुंत र सुता सुन्वतीति। एष एव तत्। एष ह्येव तान्यहानि। एष रात्रयः। अथ यदाहै। चित्रः केतुर्दाता प्रदाता संविता प्रसिवताऽभिशास्ताऽनुंमन्तेति। एष एव तत्। एष ह्येव तेऽह्नों मुहूर्ताः। एष रात्रैः॥२९॥

अथ यदाहं। प्वित्रं पविषयन्थ्सहंस्वान्थ्सहीयानरुणीं-ऽरुणरंजा इति। एष एव तत्। एष ह्यंव तेंऽर्धमासाः। एष मासाः। अथ यदाहं। अग्निष्टोम उक्थ्योंऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवथ्सर इति। एष एव तत्। एष ह्यंव ते यज्ञकृतवंः। एष ऋतवंः॥३०॥

पुष संवथ्सरः। अथ यदाहं। इदानीं तदानीमितिं। एष एव तत्। एष ह्यंव ते मृंहूर्तानां मृहूर्ताः। जनको ह वैदेहः। अहोरात्रेः समाजंगाम। त॰ होचुः। यो वा अस्मान् वेदं। विजहत्याप्मानंमेति॥३१॥ सर्वमायुरिति। अभि स्वर्गं लोकं जयिति। नास्यामुष्मिं छोके-ऽन्नं क्षीयत् इति। विजहंद्ध वै पाप्मानंमेति। सर्वमायुरिति। अभि स्वर्गं लोकं जयिति। नास्यामुष्मिं छोकेऽन्नं क्षीयते। य एवं वेदं। अहीना हाऽऽश्वंथ्यः। सावित्रं विदां चंकार॥३२॥

स हं हुर्सो हिर्ण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकिमियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। हुर्सो हु वै हिर्ण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं वेदं। देवभागो हं श्रौतर्षः। सावित्रं विदां चंकार। तर हु वागदृश्यमानाऽभ्युंवाच॥३३॥

सर्वं बत गौतमो वेदं। यः सांवित्रं वेदेतिं। स होवाच। कैषा वाग्सीतिं। अयमहरू सांवित्रः। देवानांमुत्तमो लोकः। गृह्यं महो बिभ्रदितिं। पृतावंति ह गौतमः। युज्ञोपवीतं कृत्वाऽधो निपंपात। नमो नम इतिं॥३४॥

स होवाच। मा भैषीर्गीतम। जितो वै ते लोक इति। तस्माद्ये के चे सावित्रं विदुः। सर्वे ते जितलोकाः। स यो हु वै सावित्रस्याष्टाक्षरं पुदक्ष श्रियाऽभिषिक्तं वेदं। श्रिया हैवाभिषिच्यते। घृणिरिति द्वे अक्षरें। सूर्य इति त्रीणि। आदित्य इति त्रीणि॥३५॥

एतद्वै सांवित्रस्याष्टाक्षेरं पदः श्रियाऽभिषिक्तम्। य एवं वेदं। श्रिया हैवाभिषिंच्यते। तदेतदृचाऽभ्यंक्तम्। ऋचो अक्षरे पर्मे व्योमन्। यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदः। यस्तं न वेद् किमृचा केरिष्यति। य इत्तद्विदुस्त इमे समांसत् इतिं। न ह् वा एतस्युर्चा न यजुंषा न साम्राऽर्थोंऽस्ति। यः सांवित्रं वेदं॥३६॥

तदेतत्पंरि यद्देवच्क्रम्। आर्द्रं पिन्वंमानः स्वर्गे लोक एंति। विजहिद्धश्वां भूतानिं सम्पश्यंत्। आर्द्रो ह वै पिन्वंमानः स्वर्गे लोक एंति। विजहिन्वश्वां भूतानिं सम्पश्यन्। य एवं वेदं। शूषो ह वै वार्ष्ण्यः। आदित्येनं समाजंगाम। तः होवाच। एहिं सावित्रं विद्धि। अयं वै स्वर्ग्योऽग्निः पारियष्णुरमृताथ्सम्भूत इति। एष वाव स सावित्रः। य एष तपंति। एहि मां विद्धि। इतिं हैवेनं तद्वाच॥३७॥

इयं वाव सुरघाँ। तस्यां अग्निरेव सार्घं मधुं। या एताः पूर्वपक्षापरपक्षयो रात्रयः। ता मधुकृतः। यान्यहांनि। ते

मंधुवृषाः। स यो ह् वा एता मंधुकृतंश्च मधुवृषाङ्श्च वेदं। कुर्वन्तिं हास्यैता अग्नौ मधुं। नास्यैष्टापूर्तं धंयन्ति। अथ् यो न वेदं॥३८॥

न हाँस्यैता अग्नौ मधुं कुर्वन्ति। धयंन्त्यस्येष्टापूर्तम्। यो ह् वा अंहोरात्राणां नामधेयांनि वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेतिं। एतावंनुवाकौ पूर्वपक्षस्यां-होरात्राणां नामधेयांनि। प्रस्तुतं विष्टुंत स्तुता सुन्वतीतिं। एतावंनुवाकावंपरपक्षस्यांहोरात्राणां नाम्-धेयांनि। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं॥३९॥

यो हु वै मुंहूर्तानां नामधेयांनि वदं। न मुंहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। चित्रः केतुर्दाता प्रदाता संविता प्रसिवताऽभिंशास्ताऽनुं-मन्तेतिं। एतंऽनुवाका मुंहूर्तानां नामधेयांनि। न मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं। यो हु वा अर्धमासानां च मासानां च नामधेयांनि वेदं। नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छंति। प्रवित्रं पवियुष्यन्थ्यहं-स्वान्थ्यहीयानरुणोऽरुणरंजा इतिं। एतंऽनुवाका अर्धमासानां च मासानां च नामधेयांनि॥४०॥

नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो ह वै यंज्ञकतूनां चंतूनां चं संवथ्सरस्यं च नाम्धेयांनि वेदं। न यंज्ञकृतुषु नर्तुषु न संवथ्सर आर्तिमार्च्छति। अग्निष्टोम उक्थ्यौऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवथ्सर इति। एतेऽनुवाका यंज्ञकतूनां चंतूनां चं संवथ्सरस्यं च नाम्धेयांनि॥४१॥

न यंज्ञऋतुषु नर्तुषु न संवथ्सर आर्तिमार्च्छिति। य एवं वेदं। यो हु वै मुंहूर्तानां मुहूर्तान् वेदं। न मुंहूर्तानां मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छिति। इदानीं तदानीमितिं। एते वै मृंहूर्तानां मृहूर्ताः। न मृंहूर्तानां मृहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं। अथो यथां क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुंप्रविश्यात्रमितं। एवमेवैतान्क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुंप्रविश्यात्रमित्त। स एतेषांमेव संलोकता सायुंज्यमश्रुते। अपं पुनर्मृत्युं जंयित। य एवं वेदं॥४२॥

[१०]

कश्चिंद्ध वा अस्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयमहम्स्मीतिं। कश्चिथ्स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अग्निम्ंग्धो हैव धूमतान्तः। स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अथ् यो हैवैतमृग्निः सांवित्रं वेदं। स एवास्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयमहम्स्मीतिं॥४३॥

स स्वं लोकं प्रतिप्रजानाति। एष उं वेवैनं तथ्सांवित्रः। स्वर्गं लोकम्भिवंहति। अहोरात्रेवां इदः स्युग्भिः क्रियते। इतिरात्रायांदीक्षिषत। इतिरात्रायं व्रतमुपांगुरितिं। तानिहानेवं विदुषः। अमुष्मिं लोके शेव्धिं ध्यन्ति। धीतः हैव स शेव्धिमनु परैति। अथु यो हैवैत्मग्निः सांवित्रं वेदं॥४४॥

तस्यं हैवाहोंरात्राणिं। अमुष्मिं छोके शेंवधिं न धंयन्ति। अधींतः हैव स शेंवधिमनु परैति। भ्रद्धांजो ह त्रिभिरायुं भिर्ब्रह्मचर्यमुवास। तः ह जीर्णिः स्थविंरः शयांनम्। इन्द्रं उपव्रज्योंवाच। भरंद्वाज। यत्ते

चतुर्थमायुंर्दद्याम्। किमेनेन कुर्या इति। ब्रह्मचर्यमेवैनेन चरेयमिति होवाच॥४५॥

त १ ह् त्रीन्गिरिरूपानविज्ञातानिव दर्श्यां चंकार। तेषा १ है कैंकस्मान्मुष्टिनाऽऽदंदे। स होवाच। भरंद्वाजेत्यामन्त्र्यं। वेदा वा एते। अनुन्ता वै वेदौं। एतद्वा एतेस्त्रिभिरायंर्भिरन्वं-वोचथाः। अर्थ त इतंर्दनंनूक्तमेव। एहीमं विद्धि। अ्यं वै संविवद्येति॥४६॥

तस्मैं हैतम्ग्निश्स सांवित्रमुंवाच। तश्स विदित्वा। अमृतों भूत्वा। स्वर्गं लोकिमियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। अमृतों हैव भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं वेदे। एषो एव त्रयीं विद्या॥४७॥

यार्वन्तर हु वै त्रय्या विद्ययां लोकं जयित। तार्वन्तं लोकं जयित। य एवं वेदं। अग्नेर्वा एतानि नाम्धेयांनि। अग्नेर्व सार्युज्यर सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। वायोर्वा एतानि नाम्धेयांनि। वायोर्व सार्युज्यर सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वा एतानि नामधेयांनि॥४८॥

इन्द्रंस्यैव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। बृह्स्पतेवा एतानि नामधेयांनि। बृह्स्पतेंरेव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। प्रजापंतेवा एतानि नाम-धेयांनि। प्रजापंतेरेव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। ब्रह्मणो वा एतानि नामधेयांनि। ब्रह्मण एव सायुंज्य स सलोकतांमाप्नोति। य पृवं वेदं। स वा पृषोंऽग्निरंपक्षपुच्छो वायुरेव। तस्याग्निर्मुखम्। असावांदित्यः शिरंः। स यदेते देवते अन्तरेण। तथ्सर्वर् सीव्यति। तस्मांथ्सावित्रः॥४९॥

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके प्रथमः प्रश्नः समाप्तः॥१॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

लोकोंऽसि स्वर्गोंऽसि। अनुन्तौंऽस्यपारोंऽसि। अक्षितो-ऽस्यक्षय्योंऽसि। तपंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१॥

तपोंऽसि लोके श्रितम्। तेजंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनयितृ। तत्त्वोपंदधे काम्दुघ्मक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥२॥

तेजोंऽसि तपंसि श्रितम्। समुद्रस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सभूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनियत्। तत्त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिरुस्बद्धवा सींद॥३॥

स्मुद्रोऽसि तेजंसि श्रितः। अपां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्म्भूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥४॥

आपंः स्थ समुद्रे श्रिताः। पृथिव्याः प्रतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूत्रों विश्वंस्य जनियत्र्यः। ता व उपंदधे काम्दुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५॥

पृथिव्यंस्यप्सु श्रिता। अग्नेः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनियत्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥६॥

अग्निरंसि पृथिव्याः श्रितः। अन्तरिक्षस्य प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥७॥

अन्तरिक्षमस्यग्नौ श्रितम्। वायोः प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनयितृ। तत्त्वोपंदधे कामृदुघमिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरुस्बद्धुवा सींद॥८॥

वायुरंस्यन्तिरंक्षे श्रितः। दिवः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघ्मक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥९॥

द्यौरंसि वायौ श्रिता। आदित्यस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्म्भूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनियत्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१०॥

आदित्योऽसि दिवि श्रितः। चन्द्रमंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥११॥

चन्द्रमां अस्यादित्ये श्रितः। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१२॥

नक्षंत्राणि स्थ चन्द्रमंसि श्रितानिं। संवथ्सरस्यं प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भृतॄंणि विश्वंस्य जनियृतॄणिं। तानिं व उपंदधे कामदुघान्यक्षितानि। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१३॥

संव्थ्सरोऽसि नक्षेत्रेषु श्रितः। ऋतूनां प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१४॥

ऋतवंः स्थ संवथ्सरे श्रिताः। मासांनां प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनयितारः। तान् व उपंदधे काम्दुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥१५॥

मासाः स्थतंषुं श्रिताः। अर्धमासानां प्रतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनयितारंः। तान् व उपंदधे काम्दुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१६॥ अर्धमासाः स्थं मासु श्रिताः। अहोरात्रयोः प्रतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः स्भूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनयितारः। तान् व उपंदधे कामृद्धानिक्षंतान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्धवा सींद॥१७॥

अहोरात्रे स्थौंऽर्धमासेषुं श्रिते। भूतस्यं प्रतिष्ठे भव्यंस्य प्रतिष्ठे। युवयोरिदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूर्यो विश्वंस्य जनिय्त्र्यौ। ते वामुपंदधे काम्दुधे अक्षिते। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१८॥

पौर्णमास्यष्टंकाऽमावास्यां। अन्नादाः स्थांन्नद्घो युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भून्यों विश्वंस्य जनियन्नः। ता व उपंदधे काम्दुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्धवा सीद॥१९॥

राडंसि बृह्ती श्रीर्सीन्द्रंपत्नी धर्मपत्नी। विश्वं भूतमनुप्रभूता। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥२०॥ ओजोंऽसि सहोंऽसि। बलंमसि भ्राजोंऽसि। देवानां धामामृतम्। अमर्त्यस्तपोजाः। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥२१॥

[१]

त्वमंग्ने रुद्रो असुरो महो दिवः। त्व शर्धो मारुतं पृक्ष ईशिषे। त्वं वातैररुणैर्यास शङ्ग्यः। त्वं पूषा विधृतः पासि न त्मनां। देवां देवेषुं श्रयध्वम्। प्रथमा द्वितीयेषु श्रयध्वम्। द्वितीयास्तृतीयेषु श्रयध्वम्। तृतीयाश्चतुर्थेषुं श्रयध्वम्। चृतुर्थाः पश्चमेषुं श्रयध्वम्। पृश्चमाः षृष्ठेषुं श्रयध्वम्॥२२॥

षष्ठाः संप्तमेषुं श्रयध्वम्। सप्तमा अष्टमेषुं श्रयध्वम्। अष्टमा नंवमेषुं श्रयध्वम्। नृवमा दंशमेषुं श्रयध्वम्। दृशमा एकादृशेषुं श्रयध्वम्। एकादृशा द्वांदृशेषुं श्रयध्वम्। द्वादृशास्त्रयोदृशेषुं श्रयध्वम्। त्रयोदृशाश्चंतुर्दृशेषुं श्रयध्वम्। चृतुर्दृशाः पंश्चदृशेषुं श्रयध्वम्। पृश्चदृशाः षोडुशेषुं श्रयध्वम्॥२३॥

षोड्शाः संप्तद्रशेषुं श्रयध्वम्। स्प्तद्रशा अंष्टाद्रशेषुं श्रयध्वम्। अष्टाद्रशा एंकान्नविश्रोषुं श्रयध्वम्। एकान्नविश्रा विश्रोषुं श्रयध्वम्। विश्रा एंकविश्रोषुं श्रयध्वम्। एकविश्रा द्वांविश्रोषुं श्रयध्वम्। द्वाविश्रास्त्रंयोविश्रोषु श्रयध्वम्। त्रयोविश्राश्चंतुर्विश्रोषुं श्रयध्वम्। चतुर्विश्राः पंश्ववि रशेषुं श्रयध्वम्। पृश्ववि रशाः षंड्वि रशेषुं श्रयध्वम्॥२४॥

षित्रु शाः संप्ति देशेषुं श्रयध्वम्। स्प्ति वि श्रोषुं श्रयध्वम्। अष्टावि देशेषुं श्रयध्वम्। अष्टावि देशो एकान्नि देशेषुं श्रयध्वम्। पृकान्नि देशोषुं श्रयध्वम्। त्रि देशोषुं श्रयध्वम्। त्रि देशोषुं श्रयध्वम्। त्रि देशोषुं श्रयध्वम्। देवौ स्त्रि देशोषुं श्रयध्वम्। द्वौ त्रि देशोषुं श्रयध्वम्। देवौ स्त्रि देशोषुं श्रयध्वम्। देवौ स्त्रि देशोषुं श्रयध्वम्। देवौ स्त्रि देशोषुं श्रयध्वम्। स्त्रि देशोषुं श्रयध्वम्। देवौ स्त्रोषुं श्रयध्वम्। देवौ स्त्री पत्रि देशोषुं श्रयध्वम्। देवौ स्त्रोषुं श्रयध्वम्। देवौ स्त्रोषुं श्रयध्वम्। देवौ स्त्री पत्रि स्त्रोणाम्। भूर्युवः स्वैः स्वाहौ॥२५॥

_[२]

अग्नंविष्णू स्जोषंसा। इमा वंधन्तु वां गिरंः। चुम्नेवांजेंभिरागंतम्। राज्ञीं विराज्ञीं। सम्माज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निः सोमो बृह्स्पतिः। विश्वें देवा भुवंनस्य गोपाः। ते सर्वे सङ्गत्यं। इदं मे प्रावंता वर्चः। वयः स्यांम् पत्यो रयीणाम्। भूभृंवः स्वंः स्वाहां॥२६॥

अन्नप्तेऽन्नंस्य नो देहि। अनुमीवस्यं शुष्मिणः। प्र प्रंदातारं तारिषः। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अग्ने पृथिवीपते। सोमं वीरुधां पते। त्वष्टंः समिधां पते। विष्णंवाशानां पते। मित्रं सत्यानां पते। वरुण धर्मणां पते॥२७॥

मुरुतो गणानां पतयः। रुद्रं पशूनां पते। इन्द्रौजसां पते। बृहंस्पते ब्रह्मणस्पते। आ रुचा रोचेऽह इस्वयम्। रुचा रुंरुचे रोचंमानः। अतीत्यादः स्वंराभंरेह। तस्मिन् योनौँ प्रजनौ प्रजायेय। वय स्याम् पतंयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहा॥२८॥

[8]

सप्त ते अग्ने स्मिधंः स्प्त जिह्वाः। स्प्तर्षयः स्प्त धामं प्रियाणिं। स्प्त होत्रां अनुविद्वान्। स्प्त योनीरापृंणस्वा घृतेनं। प्राची दिक्। अग्निर्देवतां। अग्निः स दिशां देवं देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यै दिशोंऽभिदासंति। दक्षिणा दिक्। इन्द्रों देवतां॥२९॥

इन्द्रभ् स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यें दिशोंऽभिदासंति। प्रतीची दिक्। सोमों देवतां। सोम्भ स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यें दिशोंऽभिदासंति। उदींची दिक्। मित्रावर्रुणो देवतां। मित्रावर्रुणो स दिशां देवो देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यें दिशोंऽभिदासंति॥३०॥

ऊर्ध्वा दिक्। बृह्स्पतिर्देवतां। बृह्स्पति स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यें दिशों ऽभिदासंति। इयं दिक्। अदितिर्देवतां। अदिति स दिशां देवीं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यें दिशों ऽभिदासंति। पुरुषो दिक्। पुरुषो मे कामान्थ्समंध्यत्॥ ३१॥

अन्धो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बिधिर आंक्रन्दियतरपान। असावेहिं। उषसंमुषसमशीय। अहमसो ज्योतिंरशीय। अहमसोऽपोऽशीय। वयः स्यांम् पतंयो रयीणाम्। भूर्भुवः

स्वंः स्वाहां॥३२॥

[الع

यत्तेऽचितं यदं चितं ते अग्ने। यत्तं ऊनं यद् तेऽतिरिक्तम्। आदित्यास्तदङ्गिरसिश्चन्वन्तु। विश्वं ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चंतश्चास्यग्ने। एतावाङ्श्चासि भूयांङ्श्चास्यग्ने। लोकं पृण च्छिद्रं पृण। अथों सीद शिवा त्वम्। इन्द्राग्नी त्वा बृहस्पतिः। अस्मिन् योनांवसीषदन्॥३३॥

तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। ता अस्य सूदंदोहसः। सोमई श्रीणन्ति पृश्नंयः। जन्मं देवानां विशः। त्रिष्वा रोचने दिवः। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। अग्ने देवाः इहाऽऽवंह। जज्ञानो वृक्तबंर्हिषे। असि होतां न ईड्यः। अगन्म महा मनसा यविष्ठम्॥३४॥

यो दीदाय सिमंद्ध स्वे दुंरोणे। चित्रभांनू रोदंसी अन्तरुवीं। स्वांहुतं विश्वतः प्रत्यश्चम्। मेधाकारं विदर्थस्य प्रसाधंनम्। अग्निश् होतांरं परिभूतंमं मृतिम्। त्वामर्भस्य हृविषंः समानमित्। त्वां महो वृंणते नरो नान्यं त्वत्। मृनुष्वत्त्वा निधीमहि। मृनुष्वथ्समिधीमहि। अग्ने मनुष्वदंङ्गिरः॥३५॥

देवान्देवायते यंज। अग्निर्हि वाजिनं विशे। ददांति विश्वचंर्षणिः। अग्नी राये स्वाभुवम्। स प्रीतो यांति वार्यम्। इष र्रं स्तोतृभ्य आभेर। पृष्टो दिवि पृष्टो अग्निः पृथिव्याम्। पृष्टो विश्वा ओषंधीराविवेश। वैश्वानुरः सहंसा पृष्टो अग्निः।

स नो दिवा स रिषः पांतु नक्तम्॥३६॥

.[દ્

अयं वाव यः पवंते। सौंऽग्निर्नाचिकेतः। स यत्प्राङ् पवंते। तदंस्य शिरंः। अथ् यदंक्षिणा। स दक्षिणः पृक्षः। अथ् यत्प्रत्यक्। तत्पुच्छम्। यदुदङ्ङ्। स उत्तरः पक्षः॥३७॥

अथ यथ्संवाति। तदेस्य समर्श्वनं च प्रसारेणं च। अथो सम्पदेवास्य सा। स॰ हु वा अस्मै स कार्मः पद्यते। यत्कांमो यजेते। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। यो हु वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतेनं प्रतिष्ठां वेदं। आयतेनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्॥३८॥

हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतंनं प्रतिष्ठा। य एवं वेदं। आयतंनवान्भवति। गर्च्छति प्रतिष्ठाम्। यो हृ वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरं वेदं। सशंरीर एव स्वर्गं लोकमेंति। हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरम्। य एवं वेदं। सशंरीर एव स्वर्गं लोकमेंति। अथो यथां रुका उत्तंप्तो भाय्यात्॥३९॥

पुवमेव स तेर्जसा यशंसा। अस्मिङ्श्चं लोकेंऽमुष्मिईश्च भाति। उरवों हु वै नामैते लोकाः। येऽवरेणाऽऽदित्यम्। अथं हैते वरीया स्सो लोकाः। ये परेणाऽऽदित्यम्। अन्तंवन्त स् हु वा एष क्ष्ययं लोकं जंयति। योऽवरेणाऽऽदित्यम्। अथं हैषोऽनुन्तमंपारमंक्षय्यं लोकं जंयति। यः

परेणाऽऽदित्यम्॥४०॥

अनुन्त १ हु वा अपारमेक्ष्ययं लोकं जीयित। यो ऽग्निं नाचिकेतं चिनुते। य उ चैनमेवं वेदे। अथो यथा रथे तिष्ठन्पक्षंसी पर्यावर्तमाने प्रत्यपेक्षते। एवमहोरात्रे प्रत्यपेक्षते। नास्याहोरात्रे लोकमाप्तुतः। यो ऽग्निं नाचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदे॥४१॥

[O

उशन् हु वै वांजश्रव्सः संविवेद्सं दंदौ। तस्यं हु निर्विकेता नामं पुत्र आंस। त॰ हं कुमार॰ सन्तम्। दक्षिणासु नीयमानासु श्रृद्धाऽऽविवेश। स होवाच। तत् कस्मै मां दांस्यसीति। द्वितीयं तृतीयम्। त॰ हु परीत उवाच। मृत्यवैं त्वा ददामीति। त॰ हु स्मोत्थितं वागुभिवंदति॥४२॥

गौतंम कुमारिमिति। स होवाच। परेहि मृत्योर्गृहान्। मृत्यवे वे त्वांऽदामिति। तं वे प्रवसंन्तं गुन्तासीति होवाच। तस्यं स्म तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृहे वंसतात्। स यिदं त्वा पृच्छेत्। कुमांर् कित् रात्रीरवाथ्सीरिति। तिस्र इति प्रतिंब्रतात्। किं प्रथमा रात्रिमाश्रा इति॥४३॥

प्रजां त इतिं। किं द्वितीयामितिं। प्रशू इतिं। किं तृतीयामितिं। साधुकृत्यां त इतिं। तं वै प्रवसन्तं जगाम। तस्यं ह तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृह उंवास। तमागत्यं पप्रच्छ। कुमांर कित रात्रीरवाथ्सीरिति। तिस्र इति प्रत्युंवाच॥४४॥

किं प्रथमा रात्रिमाश्रा इति। प्रजां त इति। किं द्वितीयामिति। पृश्क्रस्त इति। किं तृतीयामिति। साधुकृत्यां त इति। नमस्ते अस्तु भगव इति होवाच। वरं वृणीष्वेति। पितरमेव जीवन्नयानीति। द्वितीयं वृणीष्वेति॥४५॥

ड्रष्टापूर्तयोर्मेऽक्षिंतिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतमृग्निं नांचिकेतम्ंवाच। ततो वै तस्येंष्टापूर्ते ना क्षीयेते। नास्येंष्टापूर्ते क्षीयेते। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। तृतीयंं वृणीष्वेतिं। पुनुर्मृत्योर्मेऽपंचितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतमृग्निं नांचिकेतम्ंवाच। ततो वै सोऽपं पुनर्मृत्युमंजयत्॥४६॥

अपं पुनर्मृत्युं जंयित। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। प्रजापंतिर्वे प्रजाकांम्स्तपोंऽतप्यत। स हिरण्यमुदांस्यत्। तद्ग्नौ प्रास्यत्। तदंस्मै नाच्छंदयत्। तद्वितीयं प्रास्यंत्। तदंस्मै नैवाच्छंदयत्। तत्तृतीयं प्रास्यंत्॥४७॥

तदंस्मे नैवाच्छंदयत्। तदात्मन्नेव हंद्य्येंऽग्नो वैश्वान्रे प्रास्यंत्। तदंस्मा अच्छदयत्। तस्माद्धिरंण्यं किनेष्ठं धनानाम्। भुञ्जत्प्रियतंमम्। हृद्युज हि। स व तमेव नाविंन्दत्। यस्मे तां दक्षिणामनेष्यत्। ता इस्वायेव हस्तांयु दक्षिणायानयत्। तां प्रत्यंगृह्णात्॥४८॥

दक्षांय त्वा दक्षिंणां प्रतिंगृह्णामीतिं। सोंऽदक्षत् दक्षिंणां

प्रतिगृह्यं। दक्षंते हु वै दक्षिणां प्रतिगृह्यं। य एवं वेदं। एतद्धं स्म वै तिद्वद्वा रसों वाजश्रवसा गोतंमाः। अप्यंनूदेश्यांं दिक्षंणां प्रतिगृह्णन्ति। उभयेन वयं दिक्षेष्यामह एव दिक्षंणां प्रतिगृह्येतिं। तेंऽदक्षन्त दिक्षंणां प्रतिगृह्यं। दक्षंते हु वै दिक्षंणां प्रतिगृह्यं। य एवं वेदं। प्र हान्यं क्षीनाति॥४९॥

[2]

त॰ हैतमेके पशुबन्ध एवोत्तंरवेद्यां चिन्वते।
उत्तर्वेदिसंम्मित एषों ऽग्निरिति वदंन्तः। तन्न तथां
कुर्यात्। एतमृग्निं कामेन व्यर्धयेत्। स एनं कामेन व्यृद्धः।
कामेन व्यर्धयेत्। सौम्ये वावैनंमध्वरे चिन्वीत। यत्रं वा
भूयिष्ठा आहुंतयो हूयेरन्। एतमृग्निं कामेन समर्धयित। स
एनं कामेन समृद्धः॥५०॥

कामेन समर्धयति। अर्थ हैनं पुरर्षयः। उत्तर्वेद्यामेव सित्रियमिचिन्वत। ततो वै तेऽविन्दन्त प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकमंजयन्। विन्दतं एव प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकं जंयति। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं वायुर्ऋद्धिंकामः॥५१॥

यथान्युप्तमेवोपंदधे। ततो वै स एतामृद्धिंमार्भ्रोत्। यामिदं वायुर्ऋद्धः। एतामृद्धिंमृश्नोति। यामिदं वायुर्ऋद्धः। यौऽग्निं नाचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं गोबलो वार्ष्णः पशुकांमः। पाङ्कंमेव चिक्ये। पश्चं पुरस्तौत्॥५२॥ पश्चं दक्षिण्तः। पश्चं पृश्चात्। पश्चोंत्तर्तः। एकां मध्यें। ततो वै स सहस्रं पृश्चन्प्राप्नौत्। प्र सहस्रं पृश्चनाप्नोति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैनं प्रजापंति ज्यें ष्ठ्यंकामो यशंस्कामः प्रजनंनकामः। त्रिवृतं मेव चिक्ये॥५३॥

स्प्त पुरस्तांत्। तिस्रो दंक्षिणतः। स्प्त पृश्चात्। तिस्र उत्तर्तः। एकां मध्यें। ततो वे स प्र यशो ज्यैष्ठ्यंमाप्नोत्। एतां प्रजांतिं प्राजांयत। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। त्रिवृद्धे ज्यैष्ठ्यम्। माता पिता पुत्रः॥५४॥

त्रिवृत्प्रजनंनम्। उपस्थो योनिर्मध्यमा। प्र यशो ज्यैष्ठ्यंमाप्नोति। एतां प्रजांतिं प्रजांयते। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैन्मिन्द्रो ज्यैष्ठ्यंकामः। ऊर्ध्वा एवोपंदधे। ततो वै स ज्यैष्ठ्यंमगच्छत्॥५५॥

ज्येष्ठ्यं गच्छति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैनम्सावांदित्यः स्वर्गकांमः। प्राचीरेवोपंदधे। ततो वै सोंऽभि स्वर्गं लोकमंजयत्। अभि स्वर्गं लोकं जयति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। स यदीच्छेत्॥५६॥

तेज्स्वी येशस्वी ब्रह्मवर्चसी स्यामिति। प्राङाहोतुर्धिष्णया-दुर्थ्सर्पेत्। येयं प्रागाद्यशंस्वती। सा मा प्रोर्णोत्। तेजंसा यशंसा ब्रह्मवर्चसेनेति। तेज्रस्येव यंशस्वी ब्रह्मवर्चसी भंवति। अथ यदीच्छेत्। भूयिष्ठं मे श्रद्दंधीरन्। भूयिष्ठा दक्षिणा नयेयुरिति। दक्षिणासु नीयमानासु प्राच्येहि प्राच्येहीति प्राची जुषाणा वेत्वाऽऽज्यंस्य स्वाहेति सुवेणोपहत्यांऽऽहवनीये जुहुयात्॥५७॥

भूयिष्ठमेवास्मै श्रद्दंधते। भूयिष्ठा दक्षिणा नयन्ति। पुरीषमुप्धायं। चितिक्कृप्तिभिर्राभृष्यं। अग्निं प्रणीयोप-समाधायं। चतंस्र एता आहुंतीर्जुहोति। त्वमंग्ने रुद्र इतिं शतरुद्रीयंस्य रूपम्। अग्नांविष्णू इतिं वसोर्धारांयाः। अन्नपत् इत्यंत्रहोमः। सप्त ते अग्ने स्मिधंः सप्त जिह्वा इतिं विश्वप्रीः॥५८॥

[8]

यां प्रंथमामिष्टंकामुप्दधांति। इमं तयां लोकम्भिजंयति। अथो या अस्मिँ छोके देवताः। तासार् सायुंज्यर सलोकतांमाप्रोति। यां द्वितीयांमुप्दधांति। अन्तिरक्षिलोकं तयाऽभिजंयति। अथो या अन्तिरक्षिलोके देवताः। तासार् सायुंज्यर सलोकतांमाप्रोति। यां तृतीयांमुप्दधांति। अमुं तयां लोकमभिजंयति॥५९॥

अथो या अमुष्मिं होके देवताः। तासार सायुंज्यर सलोकतामाप्नोति। अथो या अमूरितंरा अष्टादंश। य एवामी उरवश्च वरीयारसश्च लोकाः। तानेव ताभिर्भिजंयति॥ कामचारों हु वा अंस्योरुषुं च वरीयःसु च लोकेषुं भवति। यों ऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। संवथ्सरो वा अग्निर्नाचिकेतः। तस्यं वसन्तः शिरंः॥६०॥

ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षा उत्तरः। श्रारत्पुच्छम्। मासाः कर्मकाराः। अहोरात्रे शंतरुद्रीयम्। पूर्जन्यो वसोर्धारां। यथा व पूर्जन्यः सुवृष्टं वृष्ट्वा। प्रजाभ्यः सर्वान्कामांन्थ्सम्पूरयंति। प्वमेव स तस्य सर्वान्कामान्थ्सम्पूरयति। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते॥६१॥

य उं चैनमेवं वेदे। संवथ्सरो वा अग्निर्नाचिकेतः। तस्ये वसन्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पृच्छम्। शरदुत्तंरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितंयः। अपरपृक्षाः पृरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। एष वाव सौंऽग्निरंग्निमयंः पुनर्णवः। अग्निमयो ह वै पुनर्णवो भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। यौंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदे॥६२॥

[१०]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तितरीयकाठके द्वितीयः प्रश्नः समाप्तः॥२॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

तुभ्यं ता अङ्गिरस्तमाऽश्याम् तं कार्ममग्ने। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। अनुं नोऽद्यानुंमित्रिरन्विदंनुमते त्वम्। कामो भूतस्य कामस्तदग्रें। ब्रह्मं जज्ञानं पिता विराजांम्। यज्ञो रायोऽयं यज्ञः। आपो भुद्रा आदित्पंश्यामि। तुभ्यं भरन्ति यो देह्यः। पूर्वं देवा अपंरेण प्राणापानौ। हृव्यवाह् इ स्विष्टम्॥१॥ ————[१]

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोंऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोंऽभूत्। तमन्विच्छेतिं। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तमिष्टिंभिरन्वैच्छत्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तदिष्टींनामिष्टि-त्वम्। एष्टंयो हु वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥२॥

तमाशाँऽब्रवीत्। प्रजांपत आशया वै श्राँम्यसि। अहमु वा आशाँऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सृत्याऽऽशां भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। आशाये चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्याऽऽशांऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सृत्या हु वा अस्याऽऽशां भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहाऽऽशाये स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥३॥

तं कामों ऽब्रवीत्। प्रजांपते कामेंन् वै श्रांम्यसि। अहमु वै कामों ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सुत्यः कामों भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामाय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। कामाय चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वे तस्यं सत्यः कामोंऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्यो हु वा अस्य कामों भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामाय स्वाहा कामाय स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥४॥

तं ब्रह्माँऽब्रवीत्। प्रजांपते ब्रह्मंणा वै श्राँम्यसि। अहमु वै ब्रह्माँऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते ब्रह्मण्वान् युज्ञो भंविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम् प्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। ब्रह्मंणे चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं ब्रह्मण्वान् युज्ञों ऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। ब्रह्मण्वान् हु वा अस्य युज्ञो भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहा ब्रह्मणे स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥५॥

तं युज्ञों ऽब्रवीत्। प्रजांपते युज्ञेन् वै श्रांम्यसि। अहमु वै युज्ञों ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्यो युज्ञो भंविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। युज्ञायं चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्यो युज्ञोऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्यो हु वा अस्य युज्ञो भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दित। य एतेनं हिविषा यज्ञते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहां युज्ञाय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥६॥

तमापों ऽब्रुवन्। प्रजांपते ऽफ्सु वै सर्वे कामाः श्रिताः। वयमु वा आपः स्मः। अस्मान्नु यंजस्व। अथ् त्विय् सर्वे कामाः श्रियिष्यन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं वेथस्यसीति। स एतम् ग्रये कामांय पुरोडाशं मृष्टाकंपालं निरंवपत्। अन्धश्चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वै तस्मिन्थ्सर्वे कामां अश्रयन्त। अनुं स्वर्गं लोकमं विन्दत्। सर्वे ह वा अस्मिन्कामाः श्रयन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहाऽन्धः स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रये स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥७॥

तम्ग्निबंलिमानंब्रवीत्। प्रजांपतेऽग्नये वै बंलिमते सर्वाणि भूतानिं बुलि॰ हंरन्ति। अहमु वा अग्निबंलिमानंस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सर्वाणि भूतानिं बुलि॰ हंरिष्यन्ति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपत्। अग्नयें बिल्मतें च्रम्। अनुंमत्ये च्रम्। ततो वे तस्मै सर्वाणि भूतानिं बिलिमंहरन्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सर्वाणि हु वा अस्मै भूतानिं बिलिश् हंरन्ति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दित। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नयें कामांय स्वाहाऽग्नयें बिल्मते स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥८॥

तमनुंवित्तिरब्रवीत्। प्रजांपते स्वर्गं वै लोकमनुंविविथ्मसि। अहमु वा अनुंवित्तिरस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते स्त्याऽनुंवित्तिर्भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम् ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। अनुंवित्त्ये चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वे तस्य सत्याऽनुंवित्तिरभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्या हु वा अस्यानुंवित्तिर्भवति। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहाऽनुंवित्त्ये स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रये स्वष्टकृते स्वाहेति॥९॥

ता वा एताः सप्त स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। दिवःश्येनयोऽनुंवित्तयो नामं। आशाँ प्रथमाः रक्षिति। कामों द्वितीयाँम्। ब्रह्मं तृतीयाँम्। युज्ञश्चंतुर्थीम्। आपंः पश्चमीम्। अग्निर्बिल्मान्थ्यष्ठीम्। अनुंवित्तिः सप्तमीम्। अनुं ह् वै स्वर्गं लोकं विन्दिति। कामचारौंऽस्य स्वर्गे लोकं भवति। य एताभिरिष्टिभिर्यजंते। य उं चैना एवं वेदे। तास्वंन्विष्टि। पृष्ठौही्व्रां दद्यात्कुर्सं चं। स्नियै चाऽऽभारर समृंद्धौ॥१०॥

[२]

तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्। तपसर्षयः स्वंरन्वंविन्दन्। तपंसा सपत्नान्त्रणुंदामारांतीः। येनेदं विश्वं परिभूतं यदस्ति। प्रथमजं देव हिवषां विधेम। स्वयम्भु ब्रह्मं पर्मं तपो यत्। स एव पुत्रः स पिता स माता। तपो ह यक्षं प्रथम सम्बंभूव। श्रद्धया देवो देवत्वमंश्रुते। श्रद्धा प्रतिष्ठा लोकस्यं देवी॥११॥

सा नों जुषाणोपं युज्ञमागाँत्। कामंवथ्साऽमृतं दुहांना। श्रृद्धा देवी प्रथम्जा ऋतस्यं। विश्वंस्य भूत्री जगंतः प्रतिष्ठा। ता श्रृद्धा १ ह्विषां यजामहे। सा नों लोकम्मृतंं दधातु। ईशांना देवी भुवंनस्याधिपत्नी। आगाँथ्सत्य १ ह्विरिदं जुंषाणम्। यस्माँदेवा जंजिरे भुवंनं च विश्वें। तस्मै विधेम हविषां घृतेनं॥१२॥

यथां देवैः संधमादं मदेम। यस्यं प्रतिष्ठोर्वन्तिरिक्षम्। यस्माद्देवा जंजिरे भुवंनं च सर्वे। तथ्सत्यमर्चदुपं युज्ञं न आगाँत्। ब्रह्माऽऽहुंती्रुपमोदंमानम्। मनंसो वशे सर्विमिदं बंभूव। नान्यस्य मनो वश्मनिवंयाय। भीष्मो हि देवः सहंसः सहीयान्। स नो जुषाण उपं यज्ञमागाँत्। आकूंतीनामधिपतिं चेतंसां च॥१३॥

सङ्कल्पर्जूतिं देवं विपश्चिम्। मनो राजानिम्ह वर्धयन्तः। उपहुवेंऽस्य सुमृतौ स्याम। चरणं प्वित्रं वितंतं पुराणम्। येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं प्वित्रंण शुद्धेनं पूताः। अति पाप्मान्मरातिं तरेम। लोकस्य द्वारंमर्चिमत्पवित्रम्। ज्योतिष्मद्भाजमानं महंस्वत्। अमृतंस्य धारां बहुधा दोहंमानम्। चरणं नो लोके सुधितां दधातु। अग्निर्मूर्धा भुवंः। अनुं नोऽद्यानुंमति्रन्विदंनुमते त्वम्। हृव्यवाह्र्ड् स्विष्टम्॥१४॥

[३]

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोऽभूत्। तमन्विच्छेति। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तिमष्टिभिरन्वैच्छत्। तमिष्टिभिरन्वंविन्दत्। तदिष्टींनामिष्टित्वम्। एष्टंयो ह् वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥१५॥

तं तपौंऽब्रवीत्। प्रजांपते तपंसा वै श्राम्यिस। अहमु वै तपौंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यं तपों भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। तपंसे चुरुम्। अनुंमत्यै चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्यं तपोंऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्यः हु वा अस्य तपों भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा तपंसे स्वाहां। अनुंमत्यै स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१६॥

तः श्रद्धाऽब्रंवीत्। प्रजांपते श्रद्धया वै श्रांम्यसि। अहमु वै श्रद्धाऽस्मि। मां न यंजस्व। अथं ते सत्या श्रद्धा भंविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। श्रद्धायैं चुरुम्। अनुंमत्यै चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्या श्रद्धाऽभंवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्या हु वा अस्य श्रद्धा भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहाँ श्रद्धायै स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥१७॥

तर स्त्यमंब्रवीत्। प्रजापते स्त्येन् वै श्राम्यसि। अहमु वै स्त्यमंस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते स्त्यर स्त्यं भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमांग्रेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। स्त्यायं च्रुम्। अनुंमत्ये च्रुम्। ततो वै तस्यं स्त्यर स्त्यमंभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्यर हु वा अस्य स्त्यं भविति। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्यर हु वा अस्य स्त्यं भविति। अनुं स्वृगं

लोकं विन्दिति। य एतेनं हिविषा यजिते। य उं चैनदेवं वेदे। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहां सृत्याय स्वाहां। अनुमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१८॥

तं मनौंऽब्रवीत्। प्रजांपते मनंसा वै श्रांम्यसि। अहमु वै मनौंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते स्त्यं मनों भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमांग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। मनंसे चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्यं मनोंऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्य ह् वा अस्य मनों भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा मनंसे स्वाहा। अनुंमत्ये स्वाहा प्रजापंतये स्वाहा। स्वृगीयं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहति॥१९॥

तं चरणमब्रवीत्। प्रजापते चरणेन वै श्राम्यिस। अहमु वै चरणमिस्मा मां नु यंजस्व। अर्थं ते सृत्यं चरणं भविष्यति। अनुं स्वर्णं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। चरणाय चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वै तस्यं सृत्यं चरणमभवत्। अनुं स्वर्णं लोकमिविन्दत्। सृत्य हृ वा अस्य चरणं भवति। अनुं स्वर्णं लोकं विन्दित। य एतेन हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा चरणाय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंत्रये स्वाहां।

स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥२०॥

ता वा पृताः पश्चं स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। अपांघा अनुंवित्तयो नामं। तपंः प्रथमाः रक्षिति। श्रद्धा द्वितीयाँम्। सत्यं तृतीयाँम्। मनश्चतुर्थीम्। चरणं पश्चमीम्। अनुं हु वै स्वर्गं लोकं विन्दित। कामचारौंऽस्य स्वर्गे लोकं भंवति। य पृताभिरिष्टिभिर्यजंते। य उं चैना पृवं वेदं। तास्वंन्विष्टि। पृष्ठौही्वरां दंद्यात्कर्सं चं। स्नियै चाऽऽभारः समृंद्धौ॥२१॥

ब्रह्म वै चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽधिंयुज्ञो निर्मितः। नैन १ श्राप्तम्। नाभिचंरित्मागंच्छति। य एवं वेदं। यो ह् वै चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वं वेदं। अथो पश्चंहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशः कल्पन्ते। वाचस्पतिर्होता दशंहोतृणाम्। पृथिवी होता चतुंर्होतृणाम्॥२२॥

अग्निर्होता पश्चंहोतॄणाम्। वाग्घोता षड्ढोतॄणाम्। महाहंविर्होतां सप्तहोतॄणाम्। एतद्वे चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वम्। अथो पश्चंहोतृत्वम्। सर्वां हास्मै दिशंः कल्पन्ते। य एवं वेदं। एषा वै संविवद्या। एतद्वेषजम्। एषा पङ्किः स्वर्गस्यं लोकस्यांश्वसाऽयंनिः स्रुतिः॥२३॥

पुतान् योऽध्यैत्यछंदिर्द्र्शे यावंत्तरसम्। स्वंरेति। अनुपृब्रवः सर्वमायुंरेति। विन्दते प्रजाम्। रायस्पोषं गौपत्यम्। ब्रह्मवुर्चसी भेवति। पुतान् योऽध्यैतिं। स्पृणोत्यात्मानम्। प्रजां पितॄन्। एतान् वा अंरुण औपवेशिर्विदां चंकार॥२४॥

पृतैरंधिवादमपांजयत्। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंर्ययौ। पृतान्योऽध्यैतिं। अधिवादं जंयति। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंरेति। पृतैर्ग्निं चिन्वीत स्वृगंकांमः। पृतैरायुंष्कामः। प्रजापशुकांमो वा॥२५॥

पुरस्ताद्दर्शहोतार्मुदंश्चमुपंदधाति यावत्पदम्। हृदंयं यजुंषी पत्न्यौं च। दक्षिणतः प्राश्चं चतुर्होतारम्। पृश्चादुदंश्चं पश्चहोतारम्। उत्तर्तः प्राश्चन् षङ्कोतारम्। उपरिष्टात्प्राश्चन्ं सप्तहोतारम्। हृदंयं यजून्षेषि पत्न्यश्च। यथावकाशं ग्रहान्। यथावकाशं प्रतिग्रहाँ ह्रोंकं पृणाश्चं। सर्वा हास्यैता देवताः प्रीता अभीष्टां भवन्ति॥२६॥

सदेवम्भिं चिन्ते। रथसंम्मितश्चेत्व्यः। वज्रो वै रथः। वज्रेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्यः स्तृणुते। पृक्षः संम्मितश्चेत्व्यः। एतावान् वै रथः। यावंत्पृक्षः। रथसंम्मितमेव चिन्ते। इममेव लोकं पंशुबन्धेनाभिजंयति। अथो अग्निष्टोमेनं॥२७॥

अन्तरिक्षमुक्थ्येन। स्वरितरात्रेणं। सर्वौक्षोकानंहीनेनं। अथो स्त्रेणं। वरो दक्षिणा। वरेणैव वर स्पृणोति। आत्मा हि वर्रः। एकंविस्शतिर्दक्षिणा ददाति। एकविस्शो वा इतः स्वर्गो लोकः। प्र स्वर्गं लोकमाप्रोति॥२८॥

असावंदित्य एंकविष्शः। अमुमेवाऽऽदित्यमाँप्रोति।

शृतं ददांति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। सहस्रं ददाति। सहस्रंसिम्मतः स्वर्गो लोकः। स्वर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। अन्विष्ट्कं दक्षिणा ददाति। सर्वाणि वया रसि॥२९॥

सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धे। यदि न विन्देतं। मन्थानेतावतो दंद्यादोदनान् वाँ। अश्रुते तं कामम्ं। यस्मै कामायाग्निश्चीयतें। पृष्ठौहीं त्वन्तर्वतीं दद्यात्। सा हि सर्वाणि वयार्सस। सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धे॥३०॥

हिरंण्यं ददाति। हिरंण्यज्योतिरेव स्वर्गं लोकमंति। वासों ददाति। तेनाऽऽयुः प्रतिरते। वेदितृतीये यंजेत। त्रिषंत्या हि देवाः। स संत्यमृग्निं चिनुते। तदेतत्पंशुबन्धे ब्राह्मंणं ब्रूयात्। नेतंरेषु युज्ञेषुं। यो हु वै चतुरहोतॄननुसव्नं तंपीयत्व्यान् वेदं॥३१॥

तृप्यंति प्रजयां पृश्भिः। उपैन सोमपीथो नंमति। पृते वै चतुंर्होतारोऽनुसवनं तंपियत्व्याः। ये ब्राह्मणा बंहुविदः। तेभ्यो यद्दक्षिणा न नयैत्। दुरिष्ट स्यात्। अग्निमंस्य वृश्जीरन्। तेभ्यो यथाश्रद्धं दंद्यात्। स्विष्टमेवैतित्क्रियते। नास्याग्निं वृंञ्जते॥३२॥

हिर्ण्येष्टको भंवति। यावंदुत्तममंङ्गुलिकाण्डं यंज्ञप्रुषा सम्मितम्। तेजो हिर्ण्यम्। यदि हिर्ण्यं न विन्देत्। शर्करा अक्ता उपंदध्यात्। तेजो घृतम्। सर्तेजसमेवाग्निं चिनुते। अग्निं चित्वा सौन्नामण्या यंजेत मैत्रावरुण्या वाँ। वीर्येण वा एष व्यृध्यते। योँऽग्निं चिनुते॥३३॥

यावंदेव वीर्यम्। तदंस्मिन्दधाति। ब्रह्मणः सायुंज्यश् सलोकतामाप्नोति। एतासामेव देवतानाश् सायुंज्यम्। सार्ष्टिताश्रे समानलोकतामाप्नोति। य एतम्भ्रिं चिनुते। य उ चैनमेवं वेदं। एतदेव सांवित्रे ब्राह्मणम्। अथों नाचिकते॥३४॥

[الع

यचामृतं यच मर्त्यम्। यच प्राणिति यच न। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिरस्बद्ध्वा सीद। सर्वाः स्त्रियः सर्वांन्युर्सः। सर्वं न स्त्रीपुमं च यत्। सर्वास्ताः। यावंन्तः पार्सवो भूमैः॥३५॥

सङ्ख्यांता देवमाययाँ। सर्वास्ताः। यावंन्त ऊषाँः पश्नूनाम्। पृथिव्यां पृष्टिंर्हिताः। सर्वास्ताः। यावंतीः सिकंताः सर्वाः। अपस्वंन्तश्च याः श्रिताः। सर्वास्ताः। यावंतीः शर्करा धृत्यै। अस्यां पृथिव्यामधि॥३६॥

सर्वास्ताः। यावन्तोऽश्मांनोऽस्यां पृंथिव्याम्। प्रतिष्ठासु प्रतिष्ठिताः। सर्वास्ताः। यावंतीर्वीरुधः सर्वाः। विष्ठिंताः पृथिवीमन्। सर्वास्ताः। यावंतीरोषंधीः सर्वाः। विष्ठिंताः पृथिवीमन्। सर्वास्ताः॥३७॥ यावंन्तो वनस्पतंयः। अस्यां पृथिव्यामिषं। सर्वास्ताः। यावंन्तो ग्राम्याः पृशवः सर्वे। आरुण्याश्च ये। सर्वास्ताः। ये द्विपादश्चतुंष्पादः। अपादं उदरसपिणंः। सर्वास्ताः। यावदाञ्जनमुच्यते॥३८॥

देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। यावंत्कृष्णायंस् सर्वम्ं। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। यावं छोहायंस् सर्वम्ं। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्व सीस् सर्वं त्रपुं। देवत्रा यर्च मानुषम्॥३९॥

सर्वास्ताः। सर्व् १ हिरंण्य १ रज्तम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्व् १ सुर्वर्ण् १ हिरंतम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतयाऽङ्गिरस्बद्ध्वा सीद॥४०॥

[६]

सर्वा दिशों दिक्षु। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुर्घा दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। अन्तरिक्षं च केवंलम्। यचास्मिन्नंन्तराहितम्। सर्वास्ताः। आन्तरिक्ष्यंश्च याः प्रजाः॥४१॥

गुन्धुर्वाफ्सुरसंश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्थ्सिललान्। अन्तरिक्षे प्रतिष्ठितान्। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्थ्सिललान्। स्थावराः प्रोष्याश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वां धुनि<u>र</u>

सर्वान्ध्व रसान्। हिमो यचं शीयते॥४२॥

सर्वास्ताः। सर्वान्मरीचीन् वितंतान्। नीहारो यर्चं शीयतें। सर्वास्ताः। सर्वा विद्युतः सर्वान्थ्स्तनियृत्न्। ह्रादुनीर्यचं शीयतें। सर्वास्ताः। सर्वाः स्रवंन्तीः स्रितंः। सर्वमप्सुच्रं च् यत्। सर्वास्ताः॥४३॥

याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैश्वन्तीरुत प्रांस्चीर्याः। सर्वास्ताः। ये चोत्तिष्ठंन्ति जीमूताः। याश्च वर्षन्ति वृष्टयः। सर्वास्ताः। तप्स्तेजं आकाशम्। यचांऽऽकाशे प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। वायुं वयार्शस् सर्वाणि॥४४॥

अन्तिरिक्षचरं च यत्। सर्वास्ताः। अग्निश् सूर्यं चन्द्रम्। मित्रं वर्रुणं भगम्। सर्वास्ताः। सृत्यश् श्रृद्धां तपो दमम्। नामं रूपं च भूतानाम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृदुधां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥४५॥
[७]

सर्वान्दिव सर्वान्देवान्दिव। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। यावंतीस्तारंकाः सर्वाः। वितंता रोचने दिवि। सर्वास्ताः। ऋचो यजू १षे

सामांनि॥४६॥

अथर्वाङ्गिरसंश्च ये। सर्वास्ताः। इतिहासपुराणं चे। सप्देवजनाश्च ये। सर्वास्ताः। ये चे लोका ये चोलोकाः। अन्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। यच् ब्रह्म यचौब्रह्म। अन्तर्बुह्मन्प्रतिष्ठितम्॥४७॥

सर्वास्ताः। अहोरात्राणि सर्वाणि। अर्धमासाः श्च केवंलान्। सर्वास्ताः। सर्वानृतून्थ्सर्वान्मासान्। संवथ्सरं च केवंलम्। सर्वास्ताः। सर्वं भूत्र सर्वं भव्यम्। यचातोऽधिभविष्यति। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृदुर्घा दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥४८॥

[۷]

ऋचां प्राचीं मह्ती दिगुंच्यते। दक्षिंणामाहुर्यजुंषामपाराम्। अथंवणामङ्गिरसां प्रतीचीं। साम्नामुदींची मह्ती दिगुंच्यते। ऋग्भिः पूर्वाह्वे दिवि देव ईयते। यजुर्वेदे तिष्ठति मध्ये अहं। सामवेदेनां उस्तम्ये महीयते। वेदैरशूंन्यस्त्रिभिरेति सूर्यः। ऋग्भ्यो जाता सर्वेशो मूर्तिमाहुः। सर्वा गतिंर्याजुषी हैव शर्श्वत्॥४९॥

सर्वं तेर्जः सामरूप्यः हं शश्वत्। सर्वः हेदं ब्रह्मणा हैव सृष्टम्। ऋग्भ्यो जातं वैश्यं वर्णमाहः। युजुर्वेदं क्षंत्रियस्यांऽऽहुर्योनिम्। साम्वेदो ब्राह्मणानां प्रसूंतिः। पूर्वे पूर्वेभ्यो वर्च एतदूंचुः। आदर्शमृग्निं चिन्वानाः। पूर्वे विश्वसृजोऽमृताः। शृतं वर्षसहस्राणि। दीक्षिताः सत्रमांसत॥५०॥

तपं आसीद्गृहपंतिः। ब्रह्मं ब्रह्माऽभंवथ्स्वयम्। स्त्य ह् होतैंषामासींत्। यिद्वेश्वसृज् आसंत। अमृतंमेभ्य उदंगायत्। सहस्रं परिवथ्सरान्। भूत हं प्रस्तोतैषामासींत्। भविष्यत्प्रतिं चाहरत्। प्राणो अध्वर्युरंभवत्। इद सर्व हं सिषांसताम्॥५१॥

अपानो विद्वानावृतः। प्रतिप्रातिष्ठदध्वरे। आर्तवा उपगातारः। सदस्यां ऋतवोऽभवन्। अर्धमासाश्च मासाश्च। चमसाध्वर्यवोऽभवन्। अश्ररंसद्वह्मणस्तेजः। अच्छावाकोऽभवद्यशः। ऋतमेषां प्रशास्ताऽऽसीत्। यद्विश्वसृज् आसंत॥५२॥

ऊर्ग्राजांनमुदंवहत्। ध्रुवगोपः सहोऽभवत्। ओजोऽभ्यंष्टौ-द्वाव्यणंः। यद्विश्वसृज् आसंत। अपंचितिः पोत्रीयांमयजत्। नेष्ट्रीयांमयज्ञित्विषिः। आग्नींद्वाद्विदुषीं सत्यम्। श्रद्धा हैवायंज्ञथ्स्वयम्। इरा पत्नीं विश्वसृजांम्। आकूंतिरिपन-डुविः॥५३॥

इध्म १ हु क्षुचैभ्य उग्रे। तृष्णा चाऽऽवंहतामुभे। वागेषा १

सुब्रह्मण्याऽऽसींत्। छुन्दोयोगान् विजान्ती। कुल्पृत्त्राणिं तन्वानाऽहंः। सृङ्स्थाश्चं सर्वृशः। अहोरात्रे पंशुपाल्यौ। मुहूर्ताः प्रेष्यां अभवन्। मृत्युस्तदंभवद्धाता। शृमितोग्रो विशां पतिः॥५४॥

विश्वसृजंः प्रथमाः स्त्रमांसत। सहस्रंसम् प्रस्तेन् यन्तंः। ततो ह जज्ञे भवंनस्य गोपाः। हिर्ण्मयः शकुनिर्ब्रह्म नामं। येन सूर्यस्तपंति तेजंसेद्धः। पिता पुत्रेणं पितृमान् योनियोनौ। नावंदिविन्मनुते तं बृहन्तम्। सूर्वानुभुमात्मान र सम्पराये। एष नित्यो मंहिमा ब्राह्मणस्यं। न कर्मणा वर्धते नो कनीयान्॥५५॥

तस्यैवाऽऽत्मा पंद्वित्तं विदित्वा। न कर्मणा लिप्यते पापंकेन। पश्चंपश्चाशति संवथ्यराः। पश्चंपश्चाशतिः विश्वंस्तुः। विश्वंस्तुः सहस्रं संवथ्यरम्। पृतेन् वै विश्वंस्तुः। विश्वंसेनाननु प्रजांयते। ब्रह्मणः सायुंज्यश्यर्मादिश्वस्तुः। विश्वंसेनाननु प्रजांयते। ब्रह्मणः सायुंज्यश्यर्माकिताः यन्ति। पृतासांसेव देवतांनाः सायुंज्यम्। सार्षिताः समानलोकतां यन्ति। य पृतद्ंपयन्ति। ये चैन्त्प्राहुः। येभ्यंश्चेन्त्प्राहुः॥५६॥ ॐ॥

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके तृतीयः प्रश्नः

समाप्तः॥३॥ ॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठकं समाप्तम्॥ हरिः ॐ॥